https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

डॉ. प्रमोद कुमार अग्रवाल
पूर्व संयुक्त सचिव, कानून और न्याय मंत्रालय, भारत सरकार

भारत का संविधान

भूमिका

भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश

जस्टिस श्री वी.एन. खरे

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

भारत का संविधान

डॉ. प्रमोद कुमार अग्रवाल

भूमिका

जस्टिस वी.एन.खरे
(भारत के पूर्व मुख्य न्यायाधीश)

प्रभात प्रकाशन, दिल्ली
ISO 9001:2008 प्रकाशक

Subscribe

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

Justice V.N. Khare
(FORMER CHIEF JUSTICE OF INDIA)

दो शब्द

मैंने डॉ. प्रमोद कुमार अग्रवाल द्वारा प्रस्तुत 'भारत का संविधान' पुस्तक पर दृष्टिपात किया। सरल हिंदी में भारत के संविधान की परम आवश्यकता है। यहां तक कि 'भारत के संविधान' का हिंदी में प्राधिकृत स्वरूप भी सहजता से ग्राह्य नहीं हो सकता।

डॉ. प्रमोद कुमार अग्रवाल को मैं कई वर्षों से जानता हूँ। वे भारतीय प्रशासनिक सेवा के वरिष्ठ अधिकारी होने के साथ भारत के संविधान के विशेषज्ञ तथा हिंदी एवं अंग्रेजी भाषा के विद्वान हैं। अत: उनके द्वारा हिंदी में भारत के संविधान का सरल रूपांतरण एक उत्तम प्रयास है, जो विद्यार्थियों तथा प्रतियोगितात्मक परीक्षा में बैठने वालों के लिए उपयोगी होगा। साथ-साथ अन्य लोग भी भारत के संविधान को समझने के लिए इस पुस्तक की सहायता ले सकते हैं।

मैं डॉ. अग्रवाल के न्याय क्षेत्र में हिंदी को लोकप्रिय बनाने के प्रयास की सराहना करता हूँ।

विश्वनाथ नाथ खरे

(वी.एन.खरे)

भारत के प्राक्तन

मुख्य न्यायमूर्ति
नोएडा,

26 सितंबर, 2017

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

पुरोवाक्

यह एक विडंबना ही है कि हम प्रतिवर्ष बड़े जोर-शोर से गणतंत्र दिवस (26 जनवरी) को एक राष्ट्रीय पर्व के रूप में मनाते हैं और इस बात के लिए गौरवान्वित होते हैं कि सन् 1950 में इसी तारीख को देश का संविधान लागू हुआ था। साथ ही इस बात के लिए भी गौरव का अनुभव करते हैं कि हमारे देश में गणतंत्रीय शासन है, जिसे 'लोकतंत्र' के नाम से जाना जाता है; फिर भी देश की अधिसंख्य जनता को यह तक पता नहीं है कि इस गणतंत्र का स्वरूप क्या है? इसका विधान क्या है?

सामान्यत: संविधान को राजनीतिशास्त्र का एक अंग माना जाता है। विभिन्न प्रतियोगितात्मक परीक्षाओं में भी प्राय: संविधान से संबंधित कुछ प्रश्न पूछे जाते हैं और न्यायालयों में भी समय-समय पर संविधान का हवाला दिया जाता है। इनके अतिरिक्त विधि, लोक प्रशासन आदि के छात्रों के लिए भी संविधान की उपयोगिता असंदिग्ध है।

प्रस्तुत पुस्तक इसी दिशा में उठाया गया एक कदम है, जिसमें संविधान संबंधी विविध पक्षों पर सरल हिंदी में प्रकाश डाला गया है, ताकि सभी छात्र आसानी से संविधान के बारे में जान-समझ सकें। इसमें संविधान के प्रमुख विषयों का विवेचन अनुच्छेदों के आधार पर करने के अतिरिक्त संविधान के विषयों का अनुच्छेदवार उल्लेख भी है, ताकि पाठक सहज ही यह जान सकें कि संविधान के किस अनुच्छेद में किस विषय का प्रतिपादन किया गया है।

यहाँ गौरतलब है कि भारतीय संविधान की रचना के समय देश के शिक्षित वर्ग पर प्राय: अंग्रेजी का वर्चस्व था। इसलिए संविधान की रचना अंग्रेजी में ही की गई।

वर्षों बाद जब देश में हिंदी की लहर ने जोर पकड़ा, तब इसका हिंदी रूपांतर तैयार किया गया, जिसे देखकर लगता है कि इससे बेहतर तो संविधान का अंग्रेजी रूप ही है, क्योंकि अनुवादकों ने उसकी भाषा को इतना दुरूह बना दिया है कि आम पाठक तो क्या, हिंदी भाषा के विद्वान् भी उसे समझ पाने में असमर्थ हैं।

अत: प्रस्तुत पुस्तक की रचना इस दृष्टि से की गई है, ताकि छात्रों के साथ-साथ आम पाठक भी भारतीय संविधान के बारे में जान सकें कि उसमें है क्या। संविधान-रचना की पृष्ठभूमि, संविधान-सभा के गठन, संविधान के स्वरूप, राज्यक्षेत्र, नागरिकों के अधिकार एवं कर्तव्य, राज्यों के नीति-निदेशक तत्त्व, कार्यपालिका आदि का निरूपण किया गया है, ताकि यह स्पष्ट हो सके कि भारतीय संविधान की रचना क्यों, कब और किन परिस्थितियों में की गई और उसका स्वरूप क्या है। साथ-साथ पाठक संविधान के अनुरूप संचालित शासन व्यवस्था को भी ग्रहण कर सकें।

संघीय न्यायपालिका, राज्यों के विधानमंडल, पंचायतों, नगरपालिकाओं, राजभाषा हिंदी आदि के साथ-साथ परिशिष्ट के रूप में संविधान संबंधी अन्य ज्ञानवर्द्धक सामग्री भी दी गई है, जो निश्चय ही छात्रों, अध्यापकों, प्रतियोगितात्मक परीक्षाओं के परीक्षार्थियों आदि के लिए भी उपयोगी सिद्ध होगी। मूल विषय के प्रतिपादन में क्रमश: संविधान में निरूपित विषयों को ही रखा गया है। संविधान में अब तक हुए संशोधनों का समावेश करते हुए पुस्तक के अंत में परिशिष्टस्वरूप संविधान में प्रमुख विषयों का हिंदी रूपांतर भी दिया गया है।

अंत में संविधान-सभा के सदस्यों, संविधान के रचनाकारों और संविधान से जुड़े विभिन्न व्यक्तियों के प्रति आभार व्यक्त करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूँ।

साथ-साथ मैं श्री अनिल मिश्र जी के प्रति कृतज्ञता ज्ञापन करता हूँ जिन्होंने पुस्तक के इस स्वरूप में अपना सहर्ष सहयोग दिया।

आशा है कि प्रस्तुत कृति भारत की नई पीढ़ी को भारत का संविधान आत्मसात् करने में सहायक होगी।

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

—डॉ. प्रमोद कुमार अग्रवाल

Novels English & Hind

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

1. संविधान-रचना की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

किसी भी देश का संविधान उसकी राजनीतिक व्यवस्था का वह बुनियादी ढाँचा निर्धारित करता है, जिसके अंतर्गत उसकी जनता शासित होती है। यह राज्य की विधायिका, कार्यपालिका और न्यायपालिका जैसे प्रमुख अंगों की स्थापना करता है, उनकी शक्तियों की व्याख्या करता है, उनके दायित्वों का सीमांकन करता है और उनके पारस्परिक तथा जनता के साथ संबंधों का विनियमन करता है।

इस प्रकार किसी देश के संविधान को उसकी ऐसी 'आधार' विधि (मानक) कहा जा सकता है, जो उसकी राज्यव्यवस्था के मूल सिद्धांतों को निर्धारित करती है। वस्तुत: प्रत्येक संविधान उसके संस्थापकों एवं रचनाकारों के आदर्शों, सपनों तथा मूल्यों का दर्पण होता है। वह जनता की विशिष्ट व्यक्तिगत, सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक प्रकृति, आस्था एवं आकांक्षाओं पर आधारित होता है। भारत का संविधान भी इसका अपवाद नहीं है।

संसदीय लोकतंत्र की स्थापना

अंग्रेजों के चंगुल से भारत भले ही 15 अगस्त, 1947 को स्वतंत्र हुआ हो, किंतु यहां नए गणराज्य के संविधान का शुभारंभ 26 जनवरी, 1950 को हुआ और भारत अपने लंबे इतिहास में प्रथम बार एक आधुनिक संस्थागत ढांचे के साथ पूर्ण संसदीय लोकतंत्र बना।

26 नवंबर, 1949 को भारतीय संविधान-सभा द्वारा स्वीकृत 'भारत का संविधान' से पूर्व ब्रिटिश संसद् द्वारा कई ऐसे अधिनियम/चार्टर पारित किए गए थे, जिन्हें भारतीय संविधान का आधार कहा जा सकता है।

यहाँ यह प्रश्न उठना स्वाभाविक है कि इस संविधान-रचना की पृष्ठभूमि क्या थी? कब, क्यों और कैसे संविधान की रचना की आवश्यकता अनुभव की गई? उसे कार्यरूप में किस प्रकार परिणत किया गया? इन प्रश्नों के उत्तर तलाशने से पूर्व यह उचित प्रतीत होता है कि भारतीय संविधान-रचना की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर दृष्टिपात कर लिया जाए।

देश के वर्तमान भौगोलिक एवं राजनीतिक स्वरूप को देखते हुए इसके प्राचीन स्वरूप की कल्पना नहीं की जा सकती। प्राचीन काल में ही नहीं, स्वतंत्रता-प्राप्ति से ठीक पहले भी देश अनेक छोटी-छोटी रियासतों या राज्यों में बँटा हुआ था। राज्य-विस्तार की लालसा से अधिकतर राजा आपस में प्राय: लड़ते रहते थे। परिणामत: उनमें एकता का अभाव था। विदेशी आक्रांता इसका लाभ उठाते रहते थे। वे मुट्ठी भर सैनिक लेकर आते और यहां जमकर लूटमार करते, लाखों लोगों को गुलाम बनाते और अनुकूल वातावरण देखकर राज करते, अन्यथा अपने देश में लौट जाते। यही कारण है कि हमारे देश का बड़ा भू-भाग और उसके निवासी एक हजार से भी अधिक वर्षों तक गुलाम रहे। हमारे देश को गुलाम बनाने वाले शकों, हूणों, मंगोलों, मुगलों आदि की श्रृंखला में अंतिम शासक अंग्रेज थे, जो सत्रहवीं शताब्दी में व्यापारी बनकर देश के पूर्वी द्वार कलकत्ता (अब कोलकाता) से प्रविष्ट हुए और धीरे-धीरे लगभग संपूर्ण देश में फैल गए।

राजपत्र (रॉयल चार्टर, 1600)

सन् 1599 में पूर्वी देशों से व्यापार करने के उद्देश्य से कुछ अंग्रेज व्यापारियों ने एक रॉयल चार्टर के अधीन 'ईस्ट इंडिया कंपनी' की स्थापना की थी, जो तत्कालीन ग्रेट ब्रिटेन की प्रमुख अंतरराष्ट्रीय व्यापारिक कंपनी थी। कंपनी के संचालन के लिए दो गवर्नरों और चौबीस संचालकों का चयन कंपनी के हिस्सेदारों द्वारा इंग्लैंड में ही

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

किया जाता था।   31 दिसंबर, 1600 को इस कंपनी ने भारत में व्यापार करने के लिए ग्रेट ब्रिटेन की महारानी एलिजाबेथ से आज्ञापत्र प्राप्त कर लिया।

इस राजपत्र (रॉयल चार्टर) के अंतर्गत कंपनी के भारतीय शासन की समस्त शक्तियां गवर्नर और उसकी 24 सदस्यीय परिषद् को सौंप दी गईं।

सामान्यत: कंपनी का उद्देश्य भारत में अपने व्यापार का विस्तार करना था। साथ ही वह इसके लिए कारखाने और डिपो भी स्थापित कर सकती थी। उसने पहला कारखाना सन् 1600 में सूरत में स्थापित किया; तत्पश्चात् 1660 में मछलीपट्टनम में तथा मद्रास (अब चेन्नई) में और फिर 1690 में कलकत्ता (अब कोलकाता)में कारखाने स्थापित किए।

राजपत्र (रॉयल चार्टर, 1726)

आरंभ में ईस्ट इंडिया कंपनी का व्यापार पूर्वी सागर के तटवर्ती क्षेत्रों तक ही सीमित था; किंतु बाद में इसने देश के आंतरिक क्षेत्रों में भी अपने व्यापारिक कदम बढ़ाए और राजाओं के अंत:शासन में भी हस्तक्षेप आरंभ कर दिया। इसके लिए ईस्ट इंडिया कंपनी को फ्रांस, पुर्तगाल, हॉलैंड आदि देशों की व्यापारिक कंपनियों से भी संघर्ष करना पड़ा, जो पहले से ही यहां व्यापार कर रही थीं। धीरे-धीरे पूर्वी राज्यों पर ईस्ट इंडिया कंपनी का वर्चस्व बढ़ता गया। एक समय वह भी आया, जब कंपनी ने बंगाल, बिहार और उड़ीसा (ओडिशा) में अपना शासन स्थापित कर लिया।

संवैधानिक पृष्ठभूमि पर भारत में प्रथम

- बंगाल का प्रथम गवर्नर क्लाइव था, जबकि अंतिम गवर्नर वारेन हेस्टिंग्स था।
- बंगाल का प्रथम गवर्नर जनरल वारेन हेस्टिंग्स था, जबकि अंतिम गवर्नर जनरल लॉर्ड विलियम बैंटिक था।
- भारत का गवर्नर जनरल विलियम बैंटिक था, जबकि अंतिम गवर्नर जनरल लॉर्ड कैनिंगथा।
- भारत का प्रथम वाइसराय लॉर्ड कैनिंग था जबकि अंतिम वायसराय लॉर्ड माउंटबेटन था।
- स्वतंत्र भारत का प्रथम गवर्नर जनरल लॉर्ड माउंटबेटन था जबकि स्वतंत्र भारत के प्रथम भारतीय गवर्नर जनरल एवं वायसराय सी. राजगोपालाचारी थे।
- सन् 1958 के बाद से गवर्नर जनरल का पद वाइसराय के नाम से विभूषित हो गया।
- मद्रास में भारत के प्रथम नगर निगम का गठन सन् 1687 में किया गया।
- लॉर्ड वारेन हेस्टिंग्स ने पहली बार सन् 1772 में 'जिला कलेक्टर' के पद का सृजन किया।
- 1829 लॉर्ड विलियम बैंटिक द्वारा सन् 1829 में 'मंडलायुक्त' के पद का सृजन कियागया।
- लॉर्ड कैनिंग ने सन् 1859 में पोर्टफोलियो पद्धति प्रारंभ की।
- सन् 1860 में पहली बार बजट-प्रणाली लाई गई।
- सन् 1872 में लॉर्ड मेयो के समय में भारत की पहली जनगणना हुई।
- लॉर्ड रिपन के काल में सन् 1881 में भारत की पहली नियमित जनगणना हुई।
- सन् 1882 के लॉर्ड रिपन के प्रस्ताव को स्थानीय स्वशासन का अधिकृत आदिलेख या महाधिकार पत्र माना जाता है। लॉर्ड रिपन को 'भारत में स्थानीय स्वशासन का जनक' कहा जाता है।
- सन् 1905 में लॉर्ड कर्जन ने कार्यकाल की पद्धति आरंभ की थी।
- सन् 1921 में 'आम बजट' से 'रेल बजट' को अलग कर दिया गया।

Novels English & Hind

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

● कलकत्ता में सर्वोच्च न्यायालय की स्थापना सन् 1774 में हुई थी।

केंद्रीय विधायिका के एक अधिनियम के तहत भारतीय रिजर्व बैंक की स्थापना सन् 1935 में हुई थी।

सन् 1707 में मुगल सम्राट् औरंगजेब के देहांत के बाद मुगल साम्राज्य का धीरे-धीरे पतन होने लगा। देश के अनेक भागों में अशांति और अराजकता फैलने लगी। सन् 1757 के प्लासी युद्ध और 1764 के बक्सर युद्ध में अंग्रेजों की जीत के बाद बंगाल पर ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी के शासन का शिकंजा कसने लगा। ईस्ट इंडिया कंपनी ने इन परिस्थितियों का पूरा लाभ उठाते हुए सन् 1765 में मुगल सम्राट् शाहआलम द्वितीय से दीवानी का अधिकार प्राप्त कर लिया। दीवानी का अधिकार मिलते ही ईस्ट इंडिया कंपनी के स्वरूप एवं उसकी कार्यप्रणाली में बदलाव आ गया। अब ईस्ट इंडिया कंपनी ने व्यापार करने के साथ-साथ ही भारत के कुछ भू-भाग पर शासन करने का अधिकार भी प्राप्त कर लियाथा।

इसी शासन को अपने अनुकूल बनाए रखने के लिए अंग्रेजों ने समय-समय पर कई एक्ट पारित किए, जो भारतीय संविधान के विकास की सीढ़ियाँ बनीं।

रेगुलेटिंग एक्ट (1773)

बंगाल का शासन गवर्नर जनरल तथा चार सदस्यीय परिषद् में निहित किया गया। इस परिषद् में निर्णय बहुमत द्वारा लिए जाने की भी व्यवस्था की गई। इस अधिनियम द्वारा प्रशासक मंडल में वारेन हेस्टिंग्स को गवर्नर जनरल के रूप में तथा क्लैवरिंग, मॉनसन, बरवैल तथा फिलिप फ्रांसिस को परिषद् के सदस्य के रूप में नियुक्त किया गया। इन सभी का कार्यकाल पाँच वर्ष का था तथा निदेशक बोर्ड की सिफारिश पर केवल ब्रिटिश सम्राट् द्वारा ही इन्हें हटाया जा सकता था। इस अधिनियम की कुछ प्रमुखबातें इस प्रकार हैं—

● मद्रास तथा बंबई प्रेसीडेंसियों को बंगाल प्रेसीडेंसी के अधीन कर दिया गया तथा बंगाल के गवर्नर जनरल को तीनों प्रेसीडेंसियों का गवर्नर जनरल बना दिया गया। इस प्रकार वारेन हेस्टिंग्स को भारत का प्रथम गवर्नर जनरल कहा जाता है।

● सपरिषद् गवर्नर जनरल को भारतीय प्रशासन के लिए कानून बनाने का अधिकार प्रदान किया गया, किंतु इन कानूनों को लागू करने से पूर्व निदेशक बोर्ड की अनुमति प्राप्त करना अनिवार्य था।

● इस अधिनियम द्वारा बंगाल (कलकत्ता) में एक उच्चतम न्यायालय की स्थापना की गई। इसमें एक मुख्य न्यायाधीश तथा तीन अन्य न्यायाधीश थे। सर एलिजा इंपे को उच्चतम न्यायालय (सुप्रीम कोर्ट) का प्रथम मुख्य न्यायाधीश नियुक्त किया गया। इस न्यायालय को दीवानी, फौजदारी, जल सेना आदि मामलों में व्यापक अधिकार दिए गए। न्यायालय को यह भी अधिकार था कि वह कंपनी तथा सम्राट् की सेवा में लगे व्यक्तियों के विरुद्ध मामले की सुनवाई कर सकता था। इस न्यायालय के निर्णय के विरुद्ध इंग्लैंड स्थित प्रिवी कौंसिल में अपील की जा सकती थी।

● संचालक मंडल का कार्यकाल चार वर्ष कर दिया गया तथा अब 500 पौंड के स्थान पर 1000 पौंड के अंशधारियों को संचालक चुनने का अधिकार दिया गया।

इस प्रकार 1773 के एक्ट के द्वारा भारत में कंपनी के कार्यों में ब्रिटिश संसद् का हस्तक्षेप व नियंत्रण प्रारंभ हुआ तथा कंपनी के शासन के लिए पहली बार एक लिखित संविधान प्रस्तुत किया गया।

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

सन् 1781 का संशोधित अधिनियम

इस अधिनियम के द्वारा कलकत्ता की सरकार को बंगाल, बिहार और उड़ीसा के लिए भी कानून बनाने का अधिकार प्रदान किया गया। इस अधिनियम की कुछ प्रमुखबातें इस प्रकार हैं—

● इस अधिनियम द्वारा सर्वोच्च न्यायालय पर यह रोक लगा दी गई कि वह कंपनी के कर्मचारियों के विरुद्ध कार्यवाही नहीं कर सकता, जो उन्होंने एक सरकारी अधिकारी की हैसियत से किया हो।

● कानून बनाने तथा उसका क्रियान्वयन करते समय भारतीयों के सामाजिक रीति-रिवाजों का सम्मान करने का भी निर्देश दिया गया।

पिट्स इंडिया अधिनियम (1784)

इस संशोधित अधिनियम को कंपनी पर अधिकाधिक नियंत्रण स्थापित करने तथा भारत में कंपनी की गिरती साख को बचाने के उद्देश्य से पारित किया गया। इस अधिनियम की कुछ प्रमखबातें इस प्रकार हैं—

● भारत में गवर्नर जनरल की परिषद् की संख्या 4 से कम करके 3 कर दी गई। इस परिषद् को युद्ध, संधि, राजस्व, सैन्य शक्ति, देसी रियासतों आदि के अधीक्षण की शक्ति प्रदान की गई।

● कंपनी के भारतीय अधिकृत प्रदेशों को पहली बार 'ब्रिटिश अधिकृत प्रदेश' कहा गया।

● इंग्लैंड में 6 आयुक्तों (कमिश्नरों) के एक 'नियंत्रण बोर्ड' की स्थापना की गई, जिसे भारत में कंपनी अधिकृत क्षेत्र पर पूरा अधिकार दिया गया। इसे 'बोर्ड ऑफ कंट्रोल' के नाम से जाना गया। इसके सदस्यों की नियुक्ति सम्राट् द्वारा की जाती थी। इसके 6 सदस्यों में एक ब्रिटेन का अर्थमंत्री, दूसरा विदेश सचिव तथा चार अन्य सम्राट् द्वारा प्रिवी कौंसिल के सदस्यों द्वारा चुने जाते थे।

● इस 'बोर्ड ऑफ कंट्रोल' (नियंत्रण मंडल) को कंपनी के भारत सरकार के नाम आदेशों एवं निर्देशों को स्वीकृत अथवा अस्वीकृत करने का अधिकार प्रदान किया गया।

● गवर्नर जनरल को देसी राजाओं से युद्ध तथा संधि से पूर्व कंपनी के संचालकों से स्वीकृति लेना आवश्यक कर दिया गया।

● प्रांतीय परिषद् के सदस्यों की संख्या भी 4 से घटाकर 3 कर दी गई। प्रांतीय शासन को केंद्रीय आदेशों का अनुपालन आवश्यक कर दिया गया अर्थात् बंबई तथा मद्रास के गवर्नर पूर्णरूपेण गवर्नर जनरल के अधीन कर दिए गए।

● कंपनी के कर्मचारियों को उपहार लेने पर पूर्णत: प्रतिबंध लगा दिया गया।

● भारत में नियुक्त अंग्रेज अधिकारियों के मामलों में सुनवाई के लिए इंग्लैंड में एक कोर्ट की स्थापना की गई।

सन् 1786 का अधिनियम

इस अधिनियम के द्वारा गवर्नर जनरल को विशेष परिस्थितियों में अपनी परिषद् के निर्णयों को रद्द करने तथा अपने निर्णय लागू करने का अधिकार दिया गया। गवर्नर जनरल को मुख्य सेनापति की शक्तियाँ भी मिल गईं।

सन् 1793 का राजपत्र

कंपनी के कार्यों एवं संगठन में सुधार के लिए यह चार्टर पारित किया गया। इस चार्टर की प्रमुख विशेषता यह थी कि इसमें पूर्व के अधिनियमों के सभी महत्त्वपूर्ण प्रावधानों को शामिल किया गया था। इस अधिनियम की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार थीं—

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

● कंपनी के व्यापारिक अधिकार अगले 20 वर्षों के लिए बढ़ा दिए गए।
● विगत शासकों के व्यक्तिगत नियमों के स्थान पर ब्रिटिश भारत में लिखित विधि-विधानों द्वारा प्रशासन की आधारशिला रखी गई। इन लिखित विधियों एवं नियमों की व्याख्या न्यायालय द्वारा किया जाना निर्धारित की गई।
● गवर्नर जनरल एवं गवर्नरों की परिषदों की सदस्यता की योग्यता के लिए सदस्य को कम-से-कम 12 वर्षों तक भारत में रहने का अनुभव आवश्यक कर दिया गया।
● नियंत्रण मंडल के सदस्यों का वेतन अब भारतीय कोष से दिया जाना तय हुआ।

सन् 1813 का राजपत्र

कंपनी के एकाधिकार को समाप्त करने, ईसाई मिशनरियों द्वारा भारत में धार्मिक सुविधाओं की माँग, लॉर्ड वेलेजली की भारत में आक्रामक नीति तथा कंपनी की शोचनीय आर्थिक स्थिति के कारण सन् 1813 का चार्टर अधिनियम ब्रिटिश संसद् द्वारा पारित किया गया। इस एक्ट का एक महत्त्वपूर्ण पक्ष यह भी था कि इसके आधार पर ब्रिटिश सरकार ने भारत में साहित्य, संस्कृति, शिक्षा एवं विज्ञान के संरक्षण तथा प्रचार-प्रसार के लिए एक लाख रुपए वार्षिक खर्च करना स्वीकार कर लिया था। इस प्रकार शासकों ने शासितों के नैतिक एवं बौद्धिक विकास का दायित्व एक सीमा तक ले लिया था। इसके प्रमुख प्रावधान निम्नलिखित थे—
● कंपनी का भारतीय व्यापार पर एकाधिकार समाप्त कर दिया गया, यद्यपि उसका चाय और चीनी के व्यापार पर एकाधिकार बना रहा।
● ईसाई मिशनरियों को भारत में धर्म-प्रचार की अनुमति दी गई।
● कंपनी को अगले 20 वर्षों के लिए भारतीय प्रदेशों तथा राजस्व पर नियंत्रण का अधिकार दे दिया गया।
● नियंत्रण बोर्ड की शक्ति परिभाषित तथा उसका विस्तृत की गई।

सन् 1833 का राजपत्र

इस महत्त्वपूर्ण एक्ट के द्वारा ब्रिटिश शासन ने ईस्ट इंडिया कंपनी के व्यापारिक एकाधिकार को पूर्णत: समाप्त कर दिया था। अब अगले 20 वर्षों के लिए वह केवल प्रशासक-संस्था बनकर रह गई। इस एक्ट के द्वारा बंगाल के गवर्नर जनरल को गवर्नर के पद से मुक्त कर दिया गया था। उसकी कार्यकारिणी परिषद् में कानून बनाने के लिए एक विधि सदस्य नियुक्त कर दिया गया। इस प्रकार भारत में विधान परिषद् की व्यवस्था हुई। इतना ही नहीं, विभिन्न कानूनों को संहिताबद्ध करने के उद्देश्य से विधि आयोग (Law Commission) का गठन किया गया।

इस एक्ट के आधार पर भारत में दास-प्रथा समाप्त करने की घोषणा भी की गई। कंपनी के अधीन सेवाओं में योग्यता के आधार पर नियुक्तियाँ होना इस एक्ट का एक अन्य महत्त्वपूर्ण पक्ष था। सन् 1813 के अधिनियम के बाद भारत में कंपनी के साम्राज्य में काफी वृद्धि हुई तथा महाराष्ट्र, मध्य भारत, पंजाब, सिंध, ग्वालियर, इंदौर आदि पर अंग्रेजों का प्रभुत्व स्थापित हो गया। इसी प्रभुत्व को स्थायित्व प्रदान करने के लिए सन् 1833 का चार्टर अधिनियम पारित किया गया। इसके मुख्य प्रावधान निम्नलिखित थे—
● कंपनी के चाय एवं चीनी के व्यापार के एकाधिकार को समाप्त कर उसे पूर्णत: प्रशासनिक और राजनीतिक संस्था बना दिया गया।
● बंगाल के गवर्नर जनरल को संपूर्ण भारत का गवर्नर जनरल घोषित किया गया। संपूर्ण भारत का प्रथम गवर्नर जनरल लॉर्ड विलियम बैंटिक बना।
● भारत के प्रदेशों पर कंपनी के सैनिक तथा असैनिक शासन के निरीक्षण और नियंत्रण का अधिकार भारत के

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

गवर्नर जनरल को दिया गया। भारत के गवर्नर जनरल की परिषद् द्वारा पारित कानूनों को अधिनियम की संज्ञा दी गई।

- विधि के संहिताकरण के लिए आयोग के गठन का प्रावधान किया गया।
- भारत में दास-प्रथा को गैर-कानूनी घोषित किया गया। फलस्वरूप सन् 1843 में भारत में दास-प्रथा की समाप्ति की घोषणा हुई।
- इस अधिनियम द्वारा यह स्पष्ट कर दिया गया कि कंपनी के प्रदेशों में रहनेवाले किसी भी भारतीय को केवल धर्म, वंश, रंग या जन्मस्थान इत्यादि के आधार पर कंपनी के किसी पद से, जिसके वह योग्य हो, वंचित नहीं किया जाएगा।
- सपरिषद् गवर्नर जनरल को ही संपूर्ण भारत के लिए कानून बनाने का अधिकार प्रदान किया गया और मद्रास-बंबई की परिषदों के कानून बनाने के अधिकार समाप्त कर दिए गए।

इस अधिनियम द्वारा भारत में केंद्रीकरण प्रारंभ किया गया, जिसका सबसे प्रबल प्रमाण विधियों को संहिताबद्ध करने के लिए एक आयोग का गठन था। इस आयोग का प्रथम अध्यक्ष लॉर्ड मैकाले को नियुक्त किया गया।

सन् 1853 का राजपत्र

ईस्ट इंडिया कंपनी के अधिकार-पत्र को 20 वर्ष बाद सन् 1853 में पुनः लागू किया गया। संवैधानिक दृष्टि से महत्त्वपूर्ण यह अपनी तरह का अंतिम अधिनियम है। ब्रिटिश संसद् में जब सन् 1833 के अधिनियम पर वाद-विवाद चल रहा था, तब कंपनी को राजनीतिक शक्ति हस्तांतरित करने पर कई आपत्तियाँ उठाई गई थीं। जब सन् 1853 में पुनः आज्ञा-पत्र देने का समय आया, तब भारतीयों ने इसका विरोध किया। इसका मुख्य कारण था—सन् 1833 के अधिनियम की धाराएँ। इनके अनुसार, उच्च पदों पर योग्य भारतीयों को नियुक्त किया जा सकता था; किंतु बीस वर्षों में एक भी भारतीय की नियुक्ति उच्च पद पर नहीं की गई। तीनों प्रेसीडेंसियों (महाप्रांतों) के निवासियों ने भी आज्ञा-पत्र को जारी रखने के विरुद्ध एक आवेदन-पत्र दिया था। यह अधिनियम मुख्यतः भारतीयों की ओर से कंपनी के शासन की समाप्ति की माँग तथा तत्कालीन गवर्नर जनरल लॉर्ड डलहौजी की रिपोर्ट पर आधारित था। इसकी प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित थीं—

- ब्रिटिश संसद् को किसी भी समय कंपनी के भारतीय शासन को समाप्त करने का अधिकार प्रदान किया गया।
- कार्यकारिणी परिषद् के कानून द्वारा सदस्य को परिषद् के पूर्ण सदस्य का दर्जा प्रदान किया गया।
- बंगाल के लिए पृथक् गवर्नर की नियुक्ति की व्यवस्था की गई।
- गवर्नर जनरल को परिषद् के उपाध्यक्ष की नियुक्ति का अधिकार दिया गया।
- विधायी कार्यों को प्रशासनिक कार्यों से पृथक् करने की व्यवस्था की गई।
- निदेशक मंडल में सदस्यों की संख्या 24 से घटाकर 18 कर दी गई।
- कंपनी के कर्मचारियों की नियुक्ति के लिए प्रतियोगितात्मक परीक्षा की व्यवस्था की गई।
- भारतीय विधि आयोग की रिपोर्ट पर विचार करने के लिए इंग्लैंड में विधि आयोग के गठन का प्रावधान किया गया।

ब्रिटिश सरकार के अधीन

स्वतंत्रता के लिए भारत में सन् 1857 की क्रांति के पश्चात् ब्रिटिश सम्राट्/सम्राज्ञी ने भारत की शासन-व्यवस्था में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन करते हुए कुछ अधिनियम पारित किए; जैसे—

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

सन् 1858 का अधिनियम

'भारत सरकार का बेहतर अधिनियम' कहे जानेवाले इस अधिनियम के अंतर्गत भारत के शासन का उत्तरदायित्व ईस्ट इंडिया कंपनी से हटाकर सम्राट् (सम्राज्ञी) को हस्तांतरित कर दिया गया। यह भारतीय संविधान के विकास में एक क्रांतिकारी घटना थी। इससे ईस्ट इंडिया कंपनी के अधिकार-क्षेत्र में आनेवाले समस्त भारतीय क्षेत्र सम्राट् के क्षेत्राधिकार में आ गए। इस प्रकार उक्त अधिनियम से भारत के संवैधानिक विकास में एक युग समाप्त हो गया और दूसरे का श्रीगणेश हुआ।

महत्वपूर्ण तथ्य

- सन् 1786 में गवर्नर को अपनी परिषद् की राय ठुकरा देने का अधिकार दे दिया गया।
- गवर्नर जनरल द्वारा बनाए गए कानूनों को 'रेग्युलेशंस' कहा जाता था।
- मैकॉले गवर्नर जनरल की परिषद् का प्रथम कानूनी सदस्य था।
- सन् 1833 में विधि आयोग का गठन किया गया तथा उसे भारतीय कानूनों को संचित तथा संहिताबद्ध करने को कहा गया।
- विलियम बैंटिक भारत का प्रथम गवर्नर जनरल था। उसे ही बंगाल का अंतिम गवर्नर जनरल होने को श्रेय प्राप्त है।
- सन् 1858 के भारत सरकार अधिनियम के तहत गवर्नर जनरल को वाइसराय का नाम दिया गया।
- सत्येंद्र प्रसाद सिन्हा गवर्नर जनरल की कार्यकारी परिषद् के लिए चुने वाले प्रथम भारतीय थे। उन्हें विधि सदस्य बनाया गया था।
- सन् 1919 के मांटेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधारों के तहत सर्वप्रथम प्रत्यक्ष चुनाव प्रारंभ हुए तथा पृथक सामुदायिक प्रतिनिधित्व की स्थापना 1909 मार्ले-मिंटो सुधारों में की गई थी।
- लार्ड मिंटो को 'सांप्रदायिक निर्वाचक मंडल' का जनक माना जाता है।
- प्रांतों में द्वैध शासन व्यवस्था सन् 1919 के भारत सरकार अधिनियम या मांटेग्यू-चेम्सफोर्ड सुधारों के तहत लागू हुई थी।

सिख, एंग्लो इंडियन, ईसाइयों तथा यूरोपियों को सन् 1935 में पृथक् सामुदायिक प्रतिनिधित्व मिला था।

यद्यपि इस अधिनियम से सत्ता में परिवर्तन आया, तथापि वास्तविक शक्ति के स्वरूप में कोई परिवर्तन नहीं आया। इसने सम्राट् को भारत-मंत्री की नियुक्ति का अधिकार दिया, जिसे संचालक मंडल एवं नियंत्रण संघ की समस्त शक्तियां हस्तांतरित कर दी गईं। अब भारत-मंत्री के लिए यह अनिवार्य हो गया था कि वह ब्रिटिश संसद् के दोनों सदनों के समक्ष भारत सरकार के गत वर्ष के राजस्व, व्यय तथा भारतीय जनता की भौतिक एवं नैतिक उन्नति के संदर्भ में वार्षिक प्रतिवेदन प्रस्तुत करे।

भारत-मंत्री का वेतन इस अधिनियम के आधार पर भारतीय राजस्व से दिया जाने लगा। भारत-मंत्री की सहायता के लिए इंडिया कौंसिल की 15 सदस्यीय एक संस्था भी गठित की गई, जिसके सदस्यों को भी भारतीय राजस्व से ही वेतन दिए जाने का विधान था।

1 नवंबर, 1858 को ब्रिटेन की महारानी ने भारतीय शासन के बारे में पूर्ण उत्तरदायित्व लेने की घोषणा करते हुए

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

ईस्ट इंडिया कंपनी के माध्यम से भारत के पूर्व अधिकृत प्रदेशों के अतिरिक्त शेष प्रदेशों को अपने अधीन न करने का विश्वास व्यक्त किया। साथ ही धार्मिक सहिष्णुता की नीति पर बल दिया। इस घोषणा का भारत में आशातीत स्वागत हुआ। साम्राज्य की सुरक्षा के लिए ब्रिटिश संसद् ने कई अधिनियम पारित किए, जो भारतीय प्रशासन का आधार बने। सन् 1858 के अधिनियम के प्रमुख प्रावधान निम्नलिखित थे—

● भारत में कंपनी के शासन को समाप्त कर शासन का उत्तरदायित्व ब्रिटिश संसद् को सौंप दिया गया।

● अब भारत का शासन ब्रिटिश सम्राज्ञी की ओर से राज्य सचिव को चलाना था, जिसकी सहायता के लिए 15 सदस्यीय भारत परिषद् का गठन किया गया। अब भारत के शासन से संबंधित सभी कानूनों एवं कार्यवाहियों पर भारत सचिव की स्वीकृति अनिवार्य कर दी गई।

● भारत के गवर्नर जनरल का नाम 'वाइसराय' (क्राउन का प्रतिनिधि) कर दिया गया तथा उसे भारत सचिव की आज्ञा के अनुसार कार्य करने के लिए बाध्य किया गया।

● भारत मंत्री को वाइसराय से गुप्त पत्र-व्यवहार तथा ब्रिटिश संसद् में प्रति वर्ष भारतीय बजट पेश करने का अधिकार दिया गया।

● कंपनी की सेवा को ब्रिटिश शासन के अधीन कर दिया गया।

भारतीय परिषद् अधिनियम, 1861

इस अधिनियम के पूर्व सन् 1859 में 'कोड ऑफ सिविल प्रोसीजर्स एक्ट', सन् 1860 में 'इंडियन पेनल कोड' और सन् 1861 में 'फौजदारी कानून' बनाए जा चुके थे। सन् 1858 के अधिनियम की अपेक्षा ये अधिनियम अधिक महत्त्वपूर्ण हैं, क्योंकि इनमें कई परिवर्तन किए गए थे, जिनका संविधान की दृष्टि से बहुत महत्त्व है।

मांटेग्यू चेम्सफोर्ड की रिपोर्ट के अनुसार, ''भारत के लिए सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण सन् 1861 के अधिनियम के साथ भारत में एक नए युग का सूत्रपात हुआ।''

वस्तुत: 1861 का भारतीय परिषद् अधिनियम भारत के संवैधानिक इतिहास में एक महत्त्वपूर्ण और युगांतकारी घटना है। यह दो मुख्य कारणों से महत्त्वपूर्ण है। एक तो यह कि इसने गवर्नर जनरल को अपनी विस्तारित परिषद् में भारतीय जनता के प्रतिनिधियों को नामजद करके उन्हें विधायी कार्य से संबद्ध करने का अधिकार दिया। दूसरा यह कि इसने गवर्नर जनरल की परिषद् की विधायी शक्तियों का विकेंद्रीकरण कर दिया अर्थात् बंबई और मद्रास की सरकारों को भी विधायी शक्ति प्रदान की गई। इस अधिनियम की अन्य महत्त्वपूर्ण बातें निम्नलिखित थीं—

● गवर्नर जनरल की विधान परिषद् की संख्या में वृद्धि की गई। अब इस परिषद् में कम-से-कम 6 तथा अधिकतम 12 सदस्य हो सकते थे। उनमें कम-से-कम आधे सदस्यों का गैर-सरकारी होना जरूरी था।

● गवर्नर जनरल को विधायी कार्यों हेतु नए प्रांत के निर्माण का तथा नव-निर्मित प्रांत में गवर्नर या लेफ्टिनेंट गवर्नर नियुक्त करने का अधिकार दिया गया।

● गवर्नर जनरल को अध्यादेश जारी करने का अधिकार दिया गया।

सन् 1865 के अधिनियम के द्वारा गवर्नर जनरल को प्रेसीडेंसियों तथा प्रांतों की सीमाओं को उद्घोषणा द्वारा नियत करने तथा उनमें परिवर्तन करने का अधिकार दिया गया। इसी तरह सन् 1869 के अधिनियम के द्वारा गवर्नर जनरल को विदेश में रहनेवाले भारतीयों के संबंध में कानून बनाने का अधिकार दिया गया। 1873 के अधिनियम के द्वारा ईस्ट इंडिया कंपनी को किसी भी समय भंग करने का प्रावधान किया गया। इसी के अनुसरण में 1 जनवरी, 1874 को ईस्ट इंडिया कंपनी भंग कर दी गई।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस का गठन

भारत के संवैधानिक विकास में एक ओर जहाँ भारत पर अपना शासन सुदृढ़ बनाए रखने के लिए ब्रिटिश सरकार द्वारा समय-समय पर पारित अधिनियमों का महत्त्वपूर्ण स्थान है, वहीं दूसरी ओर भारतवासियों पर हुई उनकी प्रतिक्रिया में विरोधस्वरूप गठित संगठनों, संस्थाओं, आंदोलनों आदि की भूमिका को भी नकारा नहीं जा सकता।

ऐसा ही एक संगठन था—भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस। इसकी स्थापना सन् 1885 में की गई थी। यद्यपि स्थापना के समय इसके उद्देश्यों में समाज-सुधार और राष्ट्रीय एकीकरण का विशेष रूप से उल्लेख हुआ था, किंतु एक वर्ष बाद ही सन् 1886 को हुए इसके अधिवेशन में दादा भाई नौरोजी ने घोषित कर दिया था कि कांग्रेस एक राजनीतिक संस्था है। आगे चलकर यह बात सामने भी आई। देश को स्वतंत्र कराने में ही नहीं, संविधान-रचना के लिए भी कांग्रेस ने महत्त्वपूर्ण प्रयास किए थे।

शाही उपाधि अधिनियम, 1876

इस अधिनियम के अंतर्गत निम्नलिखित कार्य किए गए—

- 28 अप्रैल, 1876 को एक घोषणा द्वारा महारानी विक्टोरिया को 'भारत की सम्राज्ञी' घोषित किया गया।
- औपचारिक रूप से भारत सरकार का ब्रिटिश सरकार को हस्तान्तरण मान्य किया गया।

भारतीय परिषद् अधिनियम, 1892

सन् 1861 के बाद ब्रिटिश सम्राट् के शासन पर भारतीय राष्ट्रीय आंदोलन का गंभीर प्रभाव पड़ा। देश का संवैधानिक विकास इसी राष्ट्रीय आंदोलन का प्रतिफल था, जिसका असली रूप सन् 1892 के भारतीय परिषद् अधिनियम के रूप में सामने आया। वस्तुत: सन् 1858 से 1891 तक अंग्रेज सरकार ने देश में कोई सुधार करने का प्रयास नहीं किया। इसके विपरीत यहाँ अंग्रेजों के अत्याचार बढ़ते गए और जनता त्रस्त होती गई। परिणामस्वरूप जनता में जागृति बढ़ने लगी और स्वशासन की माँग उग्रतर हो गई। सन् 1892 में ब्रिटिश सरकार का विधेयक संसद् का अधिनियम बन गया। इस अधिनियम के अंतर्गत केंद्रीय एवं प्रांतीय व्यवस्थापिका सभाओं में अतिरिक्त सदस्यों की संख्या बढ़ाई गई।

इस प्रकार अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचन के सिद्धांत को स्वीकार किया गया। यह भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के दबाव का परिणाम था। अब व्यवस्थापिका सभाओं को वार्षिक बजट पर बहस करने की इजाजत थी, लेकिन वह उस पर अपना मत नहीं दे सकती थी और न ही उससे संबंधित किसी विषय पर मत की माँग कर सकती थी।

सन् 1892 के अधिनियम ने गैर-सरकारी सदस्यों को सरकार की आर्थिक नीति पर स्वतंत्र रूप से बहस करने की शक्ति दी। साथ ही सरकार को भी उनकी समालोचनाओं का उत्तर देने और उनकी शंकाएँ दूर करने का अवसर दिया गया। लॉर्ड कर्जन के शब्दों में, ''इसका अभिप्राय यह नहीं है कि हम भारत में बजट की एक-एक मद पर इस प्रकार मत देंगे, जिस प्रकार हम संसद् में देते हैं; बल्कि सुझाव यह है कि कौंसिल के सदस्यों को इस बात का अवसर दिया जाए कि वे सरकार की आर्थिक नीतियों के संबंध में पूर्ण स्वतंत्र तथा उचित आलोचना कर सकें।''

सन् 1861 के अधिनियम से 1892 का अधिनियम कितना आगे बढ़ा हुआ था, इसका आभास 'रिपोर्ट ऑफ कॉन्स्टीट्यूशनल रिफॉर्म्स (1918)' से मिलता है, जिसमें कहा गया है—''सन् 1861 में अंग्रेज कहते थे कि हमें अपनी पसंद के चंद भारतीयों के कानूनों के विषय में प्रकट किए गए विचार सुनने चाहिए। सन् 1889 में संसदीय

Novels English & Hind

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

प्रणाली का सूत्रपात करना नहीं था, फिर भी यह विधेयक इस दिशा में एक 'मील का पत्थर' अवश्य था। एक प्रकार से इसे 'भारत की संसदीय प्रणाली का बीज' भी कहा जा सकता है, जो कालांतर में अंकुरित होकर एक विशाल वृक्ष के रूप में बदल गया। गैर-सरकारी भारतीयों को परिषदों में शामिल करना, बजट पर वाद-विवाद करना, सरकार की नीतियों की आलोचना करना, प्रश्न पूछने की सुविधा देना आदि इस दिशा में उठे कुछ नए कदम थे।''

अधिनियम, 1861 के अंतर्गत गैर-सरकारी सदस्य या तो बड़े जमींदार होते थे या अवकाश प्राप्त अधिकारी या भारत के राज-परिवारों के सदस्य। प्रतिनिधित्व की आम आकांक्षा की पुष्टि इससे नहीं हुई। इसी बीच भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा अधिक प्रतिनिधित्व की माँग की जाती रही।

यूरोपीय व्यापारियों की ओर से भी भारत सरकार को इंग्लैंड में स्थित इंडिया ऑफिस से अधिक स्वतंत्रता की माँग की जाती रही। सर जॉर्ज चिजनी की अध्यक्षता में एक कमेटी बनी, जिसके सुझावों का समावेश सन् 1892 के अधिनियम में किया गया। इस अधिनियम की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित थीं—

- इस अधिनियम के द्वारा केंद्रीय तथा प्रांतीय विधान परिषद् में 'अतिरिक्त सदस्यों' की संख्या बढ़ा दी गई और उनके निर्वाचन का भी विशेष उल्लेख किया गया। यद्यपि इसके द्वारा सीमित चुनाव की ही व्यवस्था हुई, लेकिन भारत के मुख्य सामाजिक वर्गों का प्रतिनिधित्व सुनिश्चित किया गया।
- परिषद् के अधिकारों में भी वृद्धि की गई। वार्षिक आय या बजट का ब्योरा परिषद् में प्रस्तुत करना आवश्यक हो गया। सदस्यों को कार्यपालिका के काम के बारे में प्रश्न पूछने का अधिकार दिया गया।

यद्यपि इस अधिनियम द्वारा विधायिका के सदस्यों के सीमित निर्वाचन की शुरुआत हुई, फिर भी इस अधिनियम में अनेक कमियाँ थीं, जिनके कारण भारतीय राष्ट्रवादियों ने इस अधिनियम की बार-बार आलोचना की। यह माना गया कि स्थानीय निकायों का चुनाव-मंडल बनाना एक प्रकार से इनके द्वारा मनोनीत करना ही है। विधानमंडलों की शक्तियाँ भी सीमित थीं। सदस्य अनुपूरक प्रश्न नहीं पूछ सकते थे। किसी प्रश्न का उत्तर देने से इनकार किया जा सकता था। इसके अलावा वर्गों का प्रतिनिधित्व भी पक्षपातपूर्ण था।

भारतीय परिषद् अधिनियम, 1909

1892 का अधिनियम राष्ट्रवादियों को संतुष्ट नहीं कर सका था, साथ ही राष्ट्रीय आंदोलन पर उग्रवादी नेताओं का प्रभाव बढ़ता जा रहा था। सेक्रेटरी ऑफ स्टेट लॉर्ड मार्ले तथा भारत में वाइसराय लॉर्ड मिंटो दोनों ही सहमत थे कि कुछ सुधारों की आवश्यकता है। सर अरुंडेल कमेटी की रिपोर्ट के आधार पर फरवरी, 1909 में नया अधिनियम पारित किया गया, जिसे भारतीय परिषद् अधिनियम, 1909 व 'मार्ले-मिंटो सुधार' के नाम से जाना गया। इस अधिनियम के प्रमुख प्रावधान इस प्रकार थे—

- इस अधिनियम के द्वारा केंद्रीय एवं प्रांतीय विधान परिषदों में निर्वाचित सदस्यों की संख्या में वृद्धि की गई। प्रांतीय विधान परिषदों में गैर-सरकारी बहुमत स्थापित किया गया।
- सभी निर्वाचित सदस्य अप्रत्यक्ष रूप से चुने जाते थे। स्थानीय निकायों से निर्वाचन परिषद् का गठन होता था। यह प्रांतीय विधान परिषदों के सदस्यों का चुनाव करती थी। प्रांतीय विधान परिषद् के सदस्य केंद्रीय व्यवस्थापिका के सदस्यों का चुनाव करते थे।
- पहली बार पृथक् निर्वाचन व्यवस्था प्रारंभ की गई। मुसलमानों को प्रतिनिधित्व में विशेष रियायत दी गई। उन्हें केंद्रीय एवं प्रांतीय विधान परिषदों में जनसंख्या के अनुपात से अधिक प्रतिनिधि भेजने का अधिकार दिया गया।
- गवर्नर जनरल की कार्यकारिणी में एक भारतीय सदस्य को नियुक्त करने की व्यवस्था की गई। प्रथम भारतीय

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

सदस्य के रूप में सत्येंद्र सिन्हा की नियुक्ति हुई।

● विधायिका के कार्यक्षेत्र में विस्तार किया गया। सदस्यों को बजट प्रस्ताव करने और जनहित के विषयों पर प्रश्न पूछने का अधिकार दिया गया। जिन विषयों को विधायिका के क्षेत्र से बाहर रखा गया था, वे थे—सशस्त्र सेना, विदेश संबंध और देसी रियासतें।

इस अधिनियम की सबसे बड़ी त्रुटि यह थी कि पृथक् अथवा सांप्रदायिक आधार पर निर्वाचन की पद्धति लागू की गई। इसके अलावा जो चुनाव पद्धति अपनाई गई, वह इतनी अस्पष्ट थी कि जनप्रतिनिधित्व प्रणाली एक प्रकार की बहुत सी छन्नियों में से छानने की प्रक्रिया बन गई। संसदीय प्रणाली तो दे दी गई, परंतु उत्तरदायित्व नहीं दिया गया।

भारतीय परिषद् अधिनियम, 1919

20 अगस्त, 1917 को तत्कालीन सेक्रेटरी ऑफ स्टेट फॉर इंडिया, मांटेग्यू ने हाउस ऑफ कॉमंस में एक ऐतिहासिक वक्तव्य दिया, जिसमें ब्रिटेन का इरादा बयान किया गया : शासन की सभी शाखाओं में भारतीयों को शामिल करना और स्वायत्तशासी संस्थाओं का क्रमिक विकास, जिससे ब्रिटिश भारत के अभिन्न अंग के रूप में उत्तरदायी सरकार की उत्तरोत्तर उपलब्धि हो सके।

इसी घोषणा को कार्यान्वित करने के लिए 'मांट-फोर्ड रिपोर्ट-1918' प्रकाशित की गई, जो 1919 के अधिनियम का आधार बनी। इस एक्ट द्वारा तत्कालीन भारतीय संवैधानिक प्रणाली में महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किए गए—

● केंद्रीय विधान परिषद् का स्थान राज्य परिषद् (उच्च सदन) तथा विधानसभा (निम्न सदन) वाले द्विसदनीय विधानमंडल ने ले लिया। हालाँकि, सदस्यों को नामजद करने की कुछ शक्ति बनाए रखी गई, फिर भी प्रत्येक सदन में निर्वाचित सदस्य का बहुमत होना सुनिश्चित किया गया।

● सदस्यों का चुनाव सीमांकित निर्वाचन क्षेत्रों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से किया जाना था। मताधिकार का विस्तार किया गया। निर्वाचक मंडल के लिए अर्हताएँ सांप्रदायिक समूह, निवास और संपत्ति पर आधारित थीं।

● आठ प्रमुख प्रांतों में जिन्हें 'गवर्नर का प्रांत' कहा जाता था, 'द्वैध शासन' की एक नई पद्धति शुरू की गई। प्रांतीय सूची के विषयों को दो भागों में बाँटा गया-सुरक्षित विषय और हस्तांतरित विषय। सुरक्षित सूची के विषय गवर्नर के अधिकार क्षेत्र में थे और वह इन विभागों को अपनी कार्यकारिणी की सहायता से देखता था। हस्तांतरित विषय भारतीय मंत्रियों के अधिकार में थे, जिनकी नियुक्ति भारतीय सदस्यों में से होती थी।

● अधिनियम के प्रारंभ के दस वर्ष बाद द्वैध शासन प्रणाली तथा संवैधानिक सुधारों के व्यावहारिक रूप की जाँच के लिए और उत्तरदायी सरकार की प्रगति से संबंधित मामलों पर सिफारिश करने के लिए ब्रिटिश संसद् द्वारा एक आयोग के गठन की व्यवस्था की गई। इसी प्रावधान के अनुसार, सन् 1927 में साइमन आयोग का गठन किया गया।

सन् 1919 के अधिनियम में अनेक खामियाँ थीं। इसने जिम्मेदार सरकार की माँग को पूरा नहीं किया। इसके अलावा प्रांतीय विधानमंडल गवर्नर जनरल की स्वीकृति के बगैर अनेक विषयों में विधेयक पर बहस नहीं कर सकते थे। सिद्धांत रूप में केंद्रीय विधानमंडल संपूर्ण क्षेत्र में कानून बनाने के लिए सर्वोच्च तथा सक्षम बना रहा। केंद्र तथा प्रांतों के बीच शक्तियों के बँटवारे के बावजूद ब्रिटिश भारत का संविधान एकात्मक राज्य का संविधान ही बना रहा।

प्रांतों में द्वैध शासन पूरी तरह विफल रहा। गवर्नर का पूर्ण वर्चस्व कायम रहा। वित्तीय शक्ति के अभाव में मंत्री अपनी नीतियों को प्रभावी रूप से कार्यान्वित नहीं कर सकते थे। इसके अलावा मंत्री विधानमंडल के प्रति सामूहिक

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hind

रूप से जिम्मेदार नहीं थे। वस्तुत: मंत्रियों को दो मालिकों को खुश रखना पड़ता था—एक तो विधान परिषद् को और दूसरा गवर्नर जनरल को।

साइमन कमीशन, 1927

सन् 1919 के अधिनियम की धारा 84 के अनुसार, सर जॉन साइमन की अध्यक्षता में एक आयोग का गठन किया गया। इस आयोग में एक भी भारतीय सदस्य नहीं था। अत: भारतीयों द्वारा इसका विरोध किया गया। आयोग की रिपोर्ट जून, 1930 में प्रकाशित हुई। साइमन कमीशन द्वारा डोमीनियन दर्जे की माँग को ठुकरा दिए जाने के बाद कांग्रेस द्वारा सन् 1929 के लाहौर अधिवेशन में 'पूर्ण स्वराज्य' का प्रस्ताव पारित किया गया।

गोलमेज सम्मेलन, 1930-1932

साइमन आयोग की रिपोर्ट के प्रकाशित होने से पहले ही लॉर्ड इर्विन ने घोषणा की थी कि रिपोर्ट को गोलमेज सम्मेलन में विचार के लिए रखा जाएगा। पहला सम्मेलन 12 नवंबर, 1930 को हुआ। यह सम्मेलन किसी निश्चित सहमति पर नहीं पहुँच सका। पहले सम्मेलन में कांग्रेस ने भाग नहीं लिया था। फरवरी, 1931 के 'गांधी-इर्विन समझौते' के फलस्वरूप दूसरे गोलमेज सम्मेलन में कांग्रेस की तरफ से गांधीजी ने सम्मेलन में भाग लिया। श्रीमती सरोजिनी नायडू और पंडित मदन मोहन मालवीय ने ब्रिटिश सरकार के मनोनीत सदस्य के रूप में भाग लिया। दूसरे समुदायों के प्रतिनिधियों को भी आमंत्रित किया गया। इस सम्मेलन के बाद ही 'सांप्रदायिक अधिनिर्णय' और पूना समझौते का आविर्भाव हुआ, जिनके द्वारा धार्मिक समूहों और हिंदुओं के विभिन्न वर्ण समूहों को विशेष प्रतिनिधित्व दिया गया।

कांग्रेस और अन्य राष्ट्रीय समूहों ने इन प्रावधानों का जमकर विरोध किया। तीसरा और अंतिम गोलमेज सम्मेलन नवंबर, 1932 में हुआ। एक श्वेत-पत्र जारी किया गया, जिस पर ब्रिटेन की संसद् की संयुक्त प्रवर समिति ने विचार किया। इसके सुझावों के आधार पर भारत सरकार अधिनियम, 1935 बनाया गया।

भारत सरकार अधिनियम, 1935

इस अधिनियम द्वारा प्रांतीय स्वशासन स्थापित करने का प्रयत्न किया गया। रियासतों का ब्रिटिश सम्राट् से प्रत्यक्ष संबंध स्थापित कर दिया गया, जो पहले अप्रत्यक्ष रहता था। इस अधिनियम के अंतर्गत गवर्नर जनरल को कुछ विशेष शक्तियाँ भी दी गईं। इस अधिनियम के अंतर्गत भारत में संघ पद्धति का श्रीगणेश किया गया। भारतीय संघ 11 प्रांतों, मुख्यमंत्रियों के 6 प्रांतों और उन भारतीय रियासतों से मिलकर बनना था, जो इसमें मिलने के लिए सहमत होतीं। सन् 1935 के भारत सरकार अधिनियम में 321 अनुच्छेद तथा 10 अनुसूचियाँ थीं। इस अधिनियम के प्रमुख प्रावधान निम्नलिखित थे—

- इस अधिनियम द्वारा अखिल भारतीय संघ का प्रावधान किया गया, जिसमें ब्रिटिश प्रांतों का शामिल होना अनिवार्य था, किंतु देसी रियासतों का शामिल होना नरेशों की इच्छा पर निर्भर था।
- संघ तथा केंद्र के बीच शक्तियों का विभाजन किया गया। विभिन्न विषयों की तीन सूचियाँ बनाई गईं—संघीय सूची, प्रांतीय सूची तथा समवर्ती सूची।
- केंद्र में द्विसदनात्मक विधायिका की स्थापना की गई— राज्य परिषद् (उच्च सदन) तथा केंद्रीय विधानसभा (निम्न सदन)।
- प्रांतों में द्वैध शासन को समाप्त कर प्रांतीय स्वायत्तता के सिद्धांत को स्वीकार किया गया।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

- प्रांतीय विधायिका को प्रांतीय सूची तथा समवर्ती सूची पर कानून बनाने का अधिकार दिया गया।
- प्रांतीय विधानमंडल को अनेक शक्तियाँ दी गईं। मंत्रिपरिषद् को विधानमंडल के प्रति जिम्मेदार बना दिया गया और वह एक अविश्वास प्रस्ताव पारित कर उसे पदच्युत कर सकता था। विधानमंडल प्रश्नों तथा अनुपूरक प्रश्नों के माध्यम से प्रशासन पर कुछ नियंत्रण रख सकता था।
- इस अधिनियम के अधीन बर्मा को भारत से अलग कर दिया गया और उड़ीसा तथा सिंध नाम से दो नए प्रांत बना दिए गए।
- इस अधिनियम द्वारा एक संघीय बैंक और एक संघीय न्यायालय की स्थापना का भी प्रावधान किया गया।

अगस्त प्रस्ताव

पूना के इस सहयोग प्रस्ताव के उत्तर में 8 अगस्त, 1940 को वायसराय ने एक वक्तव्य दिया, जिसे 'अगस्त प्रस्ताव' नाम दिया गया। इस प्रस्ताव में युद्ध की समाप्ति के बाद औपनिवेशिक आधार पर भारत में पूर्ण उत्तरदायी शासन स्थापित करने की घोषणा की गई, जिसमें कहा गया, "सम्राट की उत्कट इच्छा है कि युद्ध के बाद राष्ट्रीय जीवन के प्रधान तत्त्वों के प्रतिनिधियों की एक परिषद् गठित की जाए, जो नए संविधान की रूपरेखा तैयार करे।"

यह प्रस्ताव औपनिवेशिक स्वराज के प्रस्ताव से कहीं अधिक आगे की ओर बढ़ने वाला था। इस प्रस्ताव की दूसरी महत्त्वपूर्ण विशेषता यह थी कि इसमें पहली बार यह स्वीकार किया था कि भारत का संविधान तैयार करने का उत्तरदायित्व भारतीयों पर है। इस संविधान की रचना भारतीय जीवन का प्रतिनिधित्व करने वाले प्रधान तत्त्वों द्वारा की जानी थी। इसके साथ ही ब्रिटिश संसद ने भारत की वैधानिक प्रगति को निर्धारित एवं नियमित करने का दावा छोड़ दिया।

क्रिप्स मिशन

1 मार्च, 1942 को ब्रिटिश प्रधानमंत्री चर्चिल ने हाउस ऑफ कॉमंस में घोषणा की कि जापान की बढ़ती हुई सेना के कारण उत्पन्न खतरे को देखते हुए आक्रमणकारियों से भारत की रक्षा के लिए हम यह आवश्यक समझते हैं कि भारत के सभी वर्गों को संगठित किया जाए। इसके लिए हमने मंत्रिमंडल के एक सदस्य को भारत भेजने का निश्चय किया है, ताकि वह वहाँ जाकर भारतीय नेताओं से बातचीत करे...मेरे मित्र लॉर्ड प्रिवी सील एवं हाउस ऑफ कॉमंस के नेता सर स्टेफोर्ड क्रिप्स ने यह काम करने की जिम्मेदारी स्वेच्छा से अपने ऊपर ली है।

भारत दौरे के दौरान क्रिप्स ने यह प्रस्ताव किया कि युद्ध समाप्त होने पर संविधान की रचना के लिए एक संविधान-सभा का गठन किया जाएगा और भारत को एक उपनिवेश का दर्जा दिया जाएगा। यदि कोई प्रांत भारत से अलग रहना चाहता है तो वह अपना संविधान अलग बना सकता है और अपने आपको स्वतंत्र राज्य घोषित कर सकता है। यह रियासतों पर निर्भर होगा कि वे स्वतंत्र रहना चाहेंगी या भारत में विलीन होना चाहेंगी। क्रिप्स के ये प्रस्ताव संविधान-सभा के गठन की भूमिका कहे जा सकते हैं, किंतु भारत में इन प्रस्तावों का जमकर विरोध हुआ, क्योंकि इनमें भारत-विभाजन के बीज बोए गए थे।

शिमला सम्मेलन

मई, 1945 में द्वितीय विश्वयुद्ध समाप्त हो गया। इंग्लैंड में लेबर पार्टी की सरकार बनी, जिससे वातावरण में परिवर्तन आया और भारतीयों में नई आशा का संचार हुआ। जून, 1945 में वाइसराय लॉर्ड वेवेल ने भारतीय नेताओं को शिमला में वार्ता हेतु आमंत्रित किया। उन्होंने भारतीय नेताओं के समक्ष यह प्रस्ताव रखा कि अपनी कार्यकारी

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

परिषद् में वे भारतीयों को भी नियुक्त करेंगे और उन्हें सेना के अतिरिक्त अन्य सभी विभागों में स्थान दिया जाएगा। हिंदुओं और मुसलमानों को परिषद् में बराबर स्थान देने का प्रस्ताव भी रखा गया।

वेवेल के इस प्रस्ताव पर भारतीय लोकमत की प्रतिक्रिया तीन विभिन्न स्तरों पर हुई। कुछ लोग इस प्रस्ताव से संतुष्ट थे और इस पर विचार करने का आग्रह कर रहे थे। गांधीजी, तेजबहादुर सपूर, सी.वी. रामास्वामी अय्यर आदि इसी विचारधारा के थे। श्रीनिवास शास्त्री आदि कुछ लोगों का मत था कि अंतरिम सरकार, जिसमें भारतीय बातों से ब्रिटिश नियंत्रण हट जाएगा और देश की राजनीतिक सत्ता पूर्णतया भारतीयों को सौंप दी जाएगी, कोई चमत्कार कर दिखाएगी, फिर भी हमें आगे बढ़ना चाहिए। एम.एन. राय आदि की दृष्टि में वेवेल का प्रस्ताव क्रिप्स योजना का ही दोहराव था।

'भारत छोड़ो आंदोलन' और 'अगस्त क्रांति'

अंग्रेजों की वादाखिलाफी की नीति और क्रिप्स के विभाजनवादी प्रस्ताव को देखते हुए कांग्रेसी नेताओं ने 8 अगस्त, 1942 को यह माँग की कि अंग्रेज तुरंत अपना शासन समाप्त कर भारत छोड़ दें। इसी माँग के तहत उन्होंने 9 अगस्त, 1942 को देशव्यापी आंदोलन छेड़ दिया, जिसे भारतीय इतिहास में 'भारत छोड़ो आंदोलन' के नाम से जाना जाता है। इसमें आंदोलनकारियों ने 'करो या मरो' का नारा दिया था।

एक प्रकार से यह आंदोलन जनभावनाओं का ज्वार था, जिसकी कोई व्यवस्थित तैयारी या योजना नहीं थी। फलत: आंदोलन के नाम पर डाकघर, रेलवे स्टेशन, पुलिस थाने तथा अन्य सरकारी स्थानों पर तोड़-फोड़, हिंसा आदि किए गए। यातायात में रुकावट डाली गई। उद्योग-धंधों के मजदूर हड़ताल पर चले गए। कहीं-कहीं अंग्रेजों को मैदान छोड़कर भागना पड़ा। फिर भी अंग्रेजों ने इस आंदोलन का क्रूरतापूर्वक दमन किया, जिसमें 1100 व्यक्ति मारे गए और लगभग 1200 व्यक्तियों को जेल में डाल दिया गया। सन् 1857 की क्रांति के बाद ब्रिटिश शासन के विरोध में व्यापक स्तर पर यह दूसरी क्रांति थी।

ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली की घोषणा

15 मार्च, 1946 को ब्रिटिश प्रधानमंत्री एटली ने एक महत्त्वपूर्ण घोषणा की, जिसमें उन्होंने भारत को स्वतंत्रता देना स्वीकार किया। साथ ही यह भी स्पष्ट किया कि ब्रिटिश सरकार भारतीयों की स्वतंत्रता-प्राप्ति में पूरी तरह सहायक होगी और बहुसंख्यक लोगों की उन्नति का ध्यान रखकर वह अल्पसंख्यकों के हितों का भी ध्यान रखेगी। उन्होंने सत्ता हस्तांतरण की अंतिम समय-सीमा जून, 1948 निर्धारित की थी।

कैबिनेट मिशन, 1946

प्रधानमंत्री एटली की इस घोषणा के बाद ब्रिटिश सरकार ने अपने तीन मंत्रियों—लॉर्ड पैथिक लॉरेंस, स्टेफोर्ड क्रिप्स और ए.वी. एलेक्जेंडर को भारतीय नेताओं और राजनीतिक दलों से विचार-विमर्श करने के लिए भारत भेजा।

ये मंत्रिगण 23 मार्च, 1946 को भारत पहुँचे। प्रधानमंत्री एटली की घोषणा और इस ब्रिटिश प्रतिनिधिमंडल का अच्छा स्वागत भारत में हुआ। इसे 'कैबिनेट मिशन' का नाम दिया गया। कैबिनेट मिशन के तीनों सदस्य दिल्ली तथा अन्य प्रांतों में विभिन्न दलों के नेताओं से मिले, उनके साथ विस्तारपूर्वक विचार-विमर्श किया। उन्होंने केंद्रीय और प्रांतीय व्यवस्थापिकाओं के सदस्यों, अल्पसंख्यक वर्गों और विशेष हितों के प्रतिनिधियों, देसी रियासतों के राजाओं और उनके मंत्रियों से भी भेंट की। कैबिनेट मिशन के सदस्यों के इस लंबे दौरे और विचार-विमर्श में एक ही समस्या प्रमुख रूप से सामने आई—कांग्रेस और मुसलिम लीग का मतभेद, जिसमें कांग्रेस ने अखंड भारत की

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

माँग की और मुसलिम लीग ने पाकिस्तान की। मुसलिम लीग को छोड़कर अन्य दल भी अखंड भारत के पक्ष में थे।

कैबिनेट मिशन योजना की प्रमुख बातें इस प्रकार हैं—

- ब्रिटिश भारत तथा रियासतों को मिलाकर एक भारतीय संघ होगा, जो विदेशी मामलों, रक्षा तथा यातायात की देखभाल करेगा।
- प्रांतों को तीन समूहों में बाँटा जाएगा—(अ) हिंदू बहुमत वाले 6 प्रांत (मद्रास, बंबई, उत्तर प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश और उड़ीसा)। (ब) मुसलिम बहुमत वाले प्रांत (पंजाब, पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत, बलूचिस्तान और सिंधु प्रदेश) और (स) मुसलिम बहुमत वाले तथा असम और बंगाल होंगे।
- संघ और समूह की सरकारों के गठन के बाद प्रांतों को अलग होने का अधिकार होगा। प्रांतीय विधानसभाएँ संविधान-सभा के लिए 292 प्रतिनिधियों का निर्वाचन करेंगी।
- विधानसभा सदस्य तीन वर्गों से चुने जाएँगे—मुसलिम, सिख और साधारण (गैर-मुसलिम या शेष)।
- संविधान बन जाने पर देसी रियासतों को यह निर्णय करने का अधिकार होगा कि संघ और प्रांतों के साथ उनका संबंध कैसा होगा।
- राजनीतिक दलों के प्रतिनिधि एक अंतरिम सरकार का भी गठन करेंगे, जिसमें हिंदुओं व मुसलमानों का समान प्रतिनिधित्व होगा।

कैबिनेट मिशन के प्रस्ताव की इन बातों के परिप्रेक्ष्य में यह साफ दिखाई देता था कि यह कपटी जुआरी का गणित था, जिसमें जानबूझकर 23 को 77 बना दिया गया था, ताकि भारत में आंतरिक संघर्ष होता रहे और भारत कमजोर रहे। इस मिशन-योजना में भारत के भावी संविधान की रचना के सिद्धांतों और उसकी प्रक्रिया—दोनों का उल्लेख मिलता है।

मिशन ने अपनी योजना में यह स्पष्ट कर दिया कि उसका उद्देश्य संविधान का विवरण तैयार करना नहीं, बल्कि ऐसी व्यवस्था को आरंभ करना है, जिसके लिए भारतीय अपना संविधान बना सकें।

अंतरिम सरकार का गठन

लगभग 4 महीने की कवायद के बाद कैबिनेट कमिशन 29 जून को इंग्लैंड वापस चला गया। इस मिशन को अपेक्षित सफलता नहीं मिल सकी, क्योंकि वेवेल के प्रस्ताव में हिंदुओं और अल्पसंख्यकों के प्रति अनुचित व्यवस्था की गई थी। इसीलिए कांग्रेस ने वेवेल के प्रस्ताव पर संविधान-सभा में सम्मिलित होना तो स्वीकार कर लिया था, किंतु अंतरिम संयुक्त सरकार में सहभागी होना उसे स्वीकार नहीं था।

लॉर्ड वेवेल ने इंग्लैंड लौटकर भी संयुक्त अंतरिम सरकार बनाने का प्रयास जारी रखा। उन्होंने 22 जुलाई को कांग्रेस और मुसलिम लीग से पत्राचार द्वारा पुन: विचार-विमर्श किया, जिसके प्रमुख मुद्दे इस प्रकार थे—

- अंतरिम सरकार में 14 सदस्य रहेंगे, जिनमें से 6 सदस्य कांग्रेस नियुक्त करेगी (दलित वर्ग का एक सदस्य मिलाकर) और पाँच सदस्य मुसलिम लीग नियुक्त करेगी तथा अन्य अल्पसंख्यक वर्ग तीन प्रतिनिधि नियुक्त करेंगे।
- कांग्रेस तथा लीग को एक-दूसरे के नामों पर विरोध करने का कोई अधिकार नहीं होगा।
- इन दोनों प्रमुख दलों के सम्मिलित सरकार में भाग लेने का निश्चय कर लेने और आवश्यक नाम पेश कर देने पर ही विभागों का विभाजन किया जाएगा।
- यदि कांग्रेस स्वीकार करे तो बड़े सांप्रदायिक प्रश्न दोनों दलों के राय- मशविरे से निबटाए जा सकते हैं।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

अंतरिम सरकार के सदस्य

पंडित जवाहरलाल नेहरू कार्यकारी परिषद् के उपाध्यक्ष, विदेश विभाग, —राष्ट्रमंडल से संबंधित मामले
वल्लभभाई पटेल—गृह, सूचना एवं प्रसारण
सरदार बलदेव सिंह—रक्षा
डॉ. जॉन मथाई—उद्योग एवं नागरिक आपूर्ति
सी. राजगोपालाचारी—शिक्षा
सी.एच. भाभा—कार्य, खनन एवं शक्ति
राजेंद्र प्रसाद—खाद्य एवं कृषि
आसफ अली—रेलवे
जगजीवन राम—श्रम
लियाकत अली—वित्त
आई.आई. चुंदरीगर—वाणिज्य
अब्दुर रब निश्तर—संचार
गजनफर अली खान—स्वास्थ्य
जोगेंद्र नाथ मंडल—विधि

वेवेल के अंतरिम संयुक्त सरकार संबंधी इन संशोधित प्रस्तावों पर मुसलिम लीग ने सम्मिलित होने से इनकार कर दिया, क्योंकि वह कांग्रेस के बराबर प्रतिनिधित्व चाहती थी। इसके विपरीत कांग्रेस ने अंतरिम सरकार में सम्मिलित होना स्वीकार कर लिया था। इस पर लॉर्ड वेवेल ने पं. जवाहरलाल नेहरू को अंतरिम सरकार बनाने के लिए आमंत्रित किया। 24 अगस्त, 1946 को वाइसराय का वक्तव्य प्रकाशित किया गया—''सम्राट् ने गवर्नर जनरल की कार्यकारिणी परिषद् के वर्तमान सदस्यों के त्यागपत्र स्वीकार कर लिए हैं और निम्नलिखित व्यक्तियों को उनके स्थान पर सहर्ष नियुक्त किया है—पं. जवाहरलाल नेहरू, सरदार वल्लभभाई पटेल, डॉ. राजेंद्र प्रसाद, आसफ अली, चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, शरत्चंद्र बोस, डॉ. जॉन मथाई, सरदार बलदेव सिंह, सर शफत अहमद खाँ, जगजीवन राम, सैयद अली जहीर, सी.एच. भाभा। दो अन्य मुसलिम सदस्यों की भी नियुक्ति होगी। अंतरिम सरकार 2 सितंबर को कार्यभार ग्रहण करेगी।''

इस प्रकार 2 सितंबर, 1946 को अंतरिम सरकार का गठन हो गया। इसमें पं. जवाहरलाल नेहरू को गवर्नर जनरल की परिषद् का उपाध्यक्ष बनाया गया। इस परिषद् में नेहरू सहित 12 सदस्य थे, जिनमें से 5 सवर्ण हिंदू, 3 मुसलिम, 1 सिख, 1 ईसाई, 1 पारसी और 1 अनुसूचित जनजाति के थे।

यद्यपि आरंभ में मुसलिम लीग ने इस अंतरिम सरकार में सम्मिलित होने से इनकार कर दिया था, किंतु बाद में 26 अक्तूबर, 1946 को वह अंतरिम सरकार में सम्मिलित हो गई, ताकि पाकिस्तान के लिए संघर्ष करना आसान हो जाए। अंतरिम सरकार पर डॉ. अंबेडकर की टिप्पणी थी कि यह एक देश की सरकार है, जिसे दो राष्ट्र चला रहे हैं।

माउंटबेटन योजना

सन् 1942 की अगस्त क्रांति के बाद देश में स्वाधीनता संग्राम के प्रति जबरदस्त लहर उठी। कदम-कदम पर ब्रिटिश सरकार का विरोध होने लगा। पंजाब, पश्चिमोत्तर सीमा प्रांत तथा असम में अंधाधुंध हिंसात्मक उपद्रव हुए।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

इन क्षेत्रों में सांप्रदायिक विद्वेष की भयंकर ज्वाला धधक उठी। असम में एक ऐसा संघर्षात्मक आंदोलन हुआ, जिसे 'नागरिक-अधिकार आंदोलन' कहते हैं।

इन्हीं परिस्थितियों में ब्रिटिश सरकार ने लॉर्ड वेवेल को वापस बुला लिया और उनके स्थान पर लॉर्ड लुई माउंटबेटन को वाइसराय के पद पर नियुक्त कर दिया। माउंटबेटन ने 23 मार्च, 1946 को वाइसराय पद की शपथ ली। इस दौरान उन्होंने घोषणा की कि जून, 1948 तक सत्ता हस्तांतरित करने का फैसला सरकार कर चुकी है।

इस बीच हमें अपनी वैधानिक व्यवस्था करनी पड़ेगी और शासन संबंधी जटिल समस्याओं का हल खोजना पड़ेगा। इस बीच मुसलिम लीग द्वारा पाकिस्तान की माँग बराबर जारी थी। डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने इस संदर्भ में कहा कि यदि भारत का विभाजन अनिवार्य है, तो उसे अधिक-से-अधिक पूर्ण तथा तर्कसंगत होना चाहिए, ताकि भविष्य में झगड़े की कोई गुंजाइश न रह जाए।

माउंटबेटन को डॉ. राजेंद्र प्रसाद की यह बात अकाट्य लगी। 18 मई को ब्रिटिश सरकार से विचार-विमर्श करने के लिए वे इंग्लैंड गए और 2 जून को इंग्लैंड से भारत लौटे। 3 जून को उन्होंने एक घोषणा की, जिसमें दो सरकारों—भारत और पाकिस्तान को सत्ता हस्तांतरण का निश्चय किया। इस घोषणा में उन्होंने भारत-विभाजन की बात भी कही, जिसे कांग्रेस और मुसलिम लीग दोनों ने स्वीकार किया।

स्वतंत्र भारत का पहला मंत्रिमंडल (1947)

सदस्य: जवाहरलाल नेहरू

धारित विभाग : प्रधानमंत्री, राष्ट्रमंडल तथा विदेशी मामले, वैज्ञानिक शोध

सदस्य: सरदार वल्लभभाई पटेल

धारित विभाग : गृह, सूचना एवं प्रसारण, राज्यों के मामले

सदस्य: डॉ. राजेंद्र प्रसाद

धारित विभाग : खाद्य एवं कृषि

सदस्य: मो. अबुल कलाम आजाद

धारित विभाग : शिक्षा

सदस्य: डॉ. जॉन मथाई

धारित विभाग : रेलवे एवं परिवहन

सदस्य: आर. के. षणमुगम शेट्टी

धारित विभाग : विधि

सदस्य: डॉ. बी.आर. अंबेडकर

धारित विभाग : विधि

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

सदस्य: जगजीवन राम

धारित विभाग : श्रम

सदस्य: सरदार बलदेव सिंह

धारित विभाग : रक्षा

सदस्य: राजकुमारी अमृत कौर

धारित विभाग : स्वास्थ्य

सदस्य: सी.एच. भाभा

धारित विभाग : वाणिज्य

सदस्य: रफी अहमद किदवई

धारित विभाग : संचार

सदस्य: डॉ. श्यामा प्रसाद मुखर्जी

धारित विभाग : उद्योग एवं आपूर्ति

सदस्य: वी.एन. गाडगिल

धारित विभाग : कार्य, खान एवं ऊजा

भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम, 1947

माउंटबेटन योजना के आधार पर ब्रिटिश संसद् द्वारा पारित भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम, 1947 के प्रमुख प्रावधान निम्नलिखित थे—

- भारत तथा पाकिस्तान नामक दो डोमीनियनों की स्थापना के लिए 15 अगस्त, 1947 की तारीख निश्चित की गई।
- इसमें भारत का क्षेत्रीय विभाजन भारत तथा पाकिस्तान के रूप में करने तथा बंगाल एवं पंजाब में दो-दो प्रांत बनाने का प्रस्ताव किया गया। पाकिस्तान को मिलने वाले क्षेत्रों को छोड़कर ब्रिटिश भारत में सम्मिलित सभी प्रांत भारत में सम्मिलित माने गए।
- पूर्वी बंगाल, पश्चिमी बंगाल और असम के सिलहट जिले को पाकिस्तान में सम्मिलित किया जाना था।
- भारत में महामहिम की सरकार का उत्तरदायित्व तथा भारतीय रियासतों पर महामहिम का अधिराजत्व 15 अगस्त, 1947 को समाप्त हो जाएगा।
- भारतीय रियासतें इन दोनों में से किसी में शामिल हो सकती थीं।
- प्रत्येक डोमीनियन के लिए पृथक् गवर्नर जनरल होगा, जिसे महामहिम द्वारा नियुक्त किया जाएगा। गवर्नर जनरल डोमीनियन की सरकार के प्रयोजनों के लिए महामहिम का प्रतिनिधित्व करेगा।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

• प्रत्येक डोमीनियन के लिए पृथक् विधानमंडल होगा, जिसे कानून बनाने का पूरा प्राधिकार होगा तथा ब्रिटिश संसद् उसमें कोई हस्तक्षेप नहीं कर सकेगी।

• डोमीनियन की सरकार के लिए अस्थायी उपबंध के द्वारा दोनों संविधानसभाओं को संसद् का दर्जा तथा डोमीनियन विधानमंडल की शक्तियाँ प्रदान की गईं।

• इसमें गवर्नर जनरल को एक्ट के प्रभावी प्रवर्तन के लिए ऐसी व्यवस्था करने हेतु, जो उसे आवश्यक तथा समीचीन प्रतीत हो, अस्थायी आदेश जारी करने का प्राधिकार दिया गया।

• इसमें सेक्रेटरी ऑफ दि स्टेट की सेवाओं तथा भारतीय सशस्त्र बल, ब्रिटिश स्थल सेना, नौसेना और वायु सेना पर महामहिम की सरकार का अधिकार क्षेत्र अथवा प्राधिकार जारी रहने की शर्तें निर्दिष्ट की गई थीं।

इस प्रकार भारतीय स्वतंत्रता अधिनियम, 1947 के अनुसार, 14-15 अगस्त, 1947 को भारत तथा पाकिस्तान नामक दो स्वतंत्र राष्ट्रों का गठन कर दिया गया। इस प्रकार भारतीय संविधान की बहुत सी संस्थाओं का विकास संवैधानिक विकास के लंबे समय में हुआ। इसका सबसे महत्त्वपूर्ण उदाहरण है—संघीय व्यवस्था। यह व्यवस्था कांग्रेस और मुसलिम लीग द्वारा सन् 1916 के लखनऊ समझौते में स्वीकार की गई थी। साइमन कमीशन ने भी संघीय व्यवस्था पर बल दिया और सन् 1935 के अधिनियम ने संघीय व्यवस्था की स्थापना की, जिसमें प्रांतों के अधिकार ब्रिटेन के क्राउन द्वारा प्राप्त हुए थे। जब तक भारत स्वतंत्र हुआ, तब तक राष्ट्रीय आंदोलन के नेता संघीय व्यवस्था के लिए वचनबद्ध हो चुके थे। संसदीय व्यवस्था, जो कार्यपालिका और विधायिका के संबंधों को परिभाषित करती है, भारत में अपरिचित नहीं थी। इस तरह भारतीय संविधान, संविधान के रचनाकारों की बुद्धिमानी एवं सूक्ष्म दृष्टि और कालक्रम में विकसित संस्थाओं व कार्यविधियों का एक अपूर्व सम्मिश्रण है।

समग्रत: भारतीय संविधान की रचना भारत पर ब्रिटिश शासन द्वारा थोपे गए विभिन्न अधिनियमों की पृष्ठभूमि पर हुई, जो ईस्ट इंडिया कंपनी के भारत में व्यापार से लेकर भारतीय स्वतंत्रता संग्राम की समाप्ति तक बनाए जाते रहे थे। इस रूप में भारतीय संविधान की रचना में भारत में ब्रिटिश शासन, उससे उत्पन्न विभिन्न राजनीतिक और सामाजिक परिस्थितियों का विशेष हाथ कहा जा सकता है। यह संविधान एक युग का पटाक्षेप और दूसरे युग का शुभारंभ है। असमानता, सांप्रदायिकता, दमन, अत्याचार एवं अनेक सामाजिक कुरीतियों को दूर कर गौरवसंपन्न भारत में स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व तथा न्याय के आदर्शों की नींव इस संविधान में रखी गई है।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

2

भारतीय संविधान-सभा

चूँकि संविधान के आधार पर किसी भी लोकतंत्रात्मक देश की प्रशासनिक व्यवस्था ही नहीं, देश की जनता के कर्तव्य, अधिकार और अंतरराष्ट्रीय संबंध भी निर्भर करते हैं, इसीलिए प्राय: सभी देशों में यह कुछ विशिष्ट व्यक्तियों का सामूहिक कार्य रहा है। ये विशिष्ट व्यक्ति जनता द्वारा निर्वाचित और उसके प्रतिनिधि होते हैं, जो अपनी योग्यताओं के अनुसार देश, काल और परिस्थितियों के आधार पर संविधान का स्वरूप निर्धारित करते हैं। इन प्रतिनिधियों की सभा को 'संविधान-सभा' की संज्ञा दी जाती है। इस प्रकार यह जनता की एक प्रातिनिधिक संस्था होती है।

आधुनिक युग में विश्व का सर्वप्रथम संविधान संयुक्त राज्य अमेरिका का माना जाता है, जिसकी रचना सन् 1787 में फिलाडेलफिया सम्मेलन ने की थी। इसी तरह फ्रांसीसी क्रांति के बाद सन् 1789-91 के दौरान वहाँ की राष्ट्रीय सभा ने फ्रांस का संविधान तैयार किया था। भारत भी इसका अपवाद नहीं है। यहाँ भी संविधान की रचना संविधान-सभा ने की है।

संविधान-सभा में राज्यवार सदस्य संख्या

(31 दिसंबर, 1947 को यथाविद्यमान)

1. भारतीय प्रांत (229)

प्रांत: मद्रास

सदस्य-संख्या : 49

प्रांत: पश्चिम बंगाल

सदस्य-संख्या : 19

प्रांत: बिहार

सदस्य-संख्या : 36

प्रांत: मध्य प्रांत और बरार

सदस्य-संख्या : 17

प्रांत: उड़ीसा

सदस्य-संख्या : 9

प्रांत: अजमेर-मेवाड़

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

सदस्य-संख्या : 1

प्रांत: बंबई

सदस्य-संख्या : 21

प्रांत: संयुक्त प्रांत

सदस्य-संख्या : 55

प्रांत: पूर्वी पंजाब

सदस्य-संख्या : 12

प्रांत: असम

सदस्य-संख्या : 8

प्रांत: दिल्ली

सदस्य-संख्या : 1

प्रांत: कुर्ग

सदस्य-संख्या : 1

2. देशी रियासतें

अलवर —1
भोपाल —1
कोचीन —1
इंदौर —1
जोधपुर —2
कोटा —1
मैसूर —9
रीवा —2
उदयपुर —2
त्रिपुरा, मणिपुर, खासी मध्य भारत राज्य समूह (बुन्देलखंड, मालवा सहित) —1
दक्षिण व मद्रास राज्य समूह—2
पूर्वी राज्य समूह-1 —4
अवशिष्ट राज्य समूह —4
बड़ौदा —3
बीकानेर —1

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

ग्वालियर —4
जयपुर —3
कोल्हापुर —1
मयूरभंज —1
पटियाला —2
त्रावणकोर —6
पू. राजपूताना राज्य समूह —1
संयुक्त प्रांत राज्य समूह —1
सिक्किम और कूच बिहार—1
पंजाब राज्य समूह—3
पूर्वी राज्य समूह-2 —3
पश्चिमी भारत राज्य समूह —4
गुजरात राज्य समूह —2
कुल— 299

संविधान सभा (1946) में समुदाय आधारित प्रतिनिधित्व

समुदाय: हिंदू

शक्ति: 163

समुदाय: मुस्लिम

शक्ति: 80

समुदाय: अनुसूचित जाति

शक्ति: 31

समुदाय: भारतीय ईसाई

शक्ति: 6

समुदाय: पिछड़ी जनजातियां

शक्ति: 6

समुदाय: सिख

शक्ति: 4

समुदाय: ऐंग्लो-इंडियन

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

शक्ति: 3

समुदाय: पारसी

शक्ति: 3

समुदाय: कुल

शक्ति: 296

संविधान-सभा की माँग

सन् 1922 में महात्मा गांधी ने पहली बार भारतीयों द्वारा भारत का संविधान बनाए जाने की चर्चा की थी। इस चर्चा में उन्होंने 'संविधान-सभा' शब्दबंध का प्रयोग नहीं किया था, फिर भी उनके वक्तव्य से ऐसी ही प्रातिनिधिक संस्था की ध्वनि निकलती है।

गांधीजी का कथन था—"स्वराज ब्रिटिश संसद् का उपहार नहीं है, वह भारत की पूर्ण आत्माभिव्यक्ति की घोषणा होगी। यद्यपि उसे संसद् के एक अधिनियम द्वारा व्यक्त किया जाएगा, किंतु यह भारत के लोगों की घोषित इच्छा की औपचारिक पुष्टि होगी। यह पुष्टि एक संधि की होगी, जिसमें ब्रिटेन भी एक पक्ष होगा। संधि के बाद ब्रिटिश संसद् भारतीयों की इच्छा की पुष्टि कर देगी। यह इच्छा भी नौकरशाही द्वारा नहीं, बल्कि भारतीय जनता के चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा व्यक्त होगी।"

सन् 1922 में ही एनीबेसेंट के आह्वान पर केंद्रीय विधानमंडल के दोनों सदनों की संयुक्त बैठक शिमला में आयोजित की गई, जिसमें राष्ट्रीय सभा या संविधान-सभा की माँग की गई थी।

फरवरी, 1923 में दिल्ली में एक अन्य सम्मेलन का आयोजन किया गया, जिसमें केंद्रीय और प्रांतीय विधानमंडल के सदस्यों द्वारा संविधान के आवश्यक तत्त्वों की एक रूपरेखा तैयार की गई, जिसके अंतर्गत भारत को अन्य स्वशासित राज्यों की बराबरी का दर्जा दिया गया था।

अप्रैल, 1924 में एक राष्ट्रीय सम्मेलन आयोजित किया गया, जिसके अध्यक्ष थे तेजबहादुर सपूर। इस सम्मेलन में एक भारतीय कॉमनवेल्थ विधेयक (कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया बिल) का प्रारूप तैयार किया गया। इस विधेयक पर दिसंबर, 1924 में सम्मेलन द्वारा आयोजित बंबई की बैठक में पुन: विचार-विमर्श हुआ।

कुछ संशोधनों के पश्चात् यह विधेयक सन् 1925 में दिल्ली में हुए सर्वदलीय सम्मेलन के समक्ष रखा गया, जिसके अध्यक्ष महात्मा गांधी थे। पर्याप्त विचार-विमर्श, संशोधनों और परिमार्जनों के बाद यह विधेयक ब्रिटिश संसद् के समक्ष प्रस्तुत किया गया। इस विधेयक को श्रमिक दल (लेबर पार्टी) के एक प्रभावशाली सदस्य के पास भी भेजा गया।

लेबर पार्टी ने कुछ संशोधनों के बाद इसे स्वीकार कर लिया। दिसंबर, 1925 में यह विधेयक हाउस ऑफ कॉमंस में पुन: रखा गया, जहाँ उसका प्रथम वाचन हुआ। आम चुनावों के दौरान लेबर पार्टी की हार के बाद यह विधेयक घपले में पड़ गया। इस सबके बावजूद इस बात से इनकार नहीं किया जा सकता कि संवैधानिक एवं शांतिपूर्ण ढंग से स्वशासन का अधिकार दिलाने और ब्रिटिश संसद् के माध्यम से उसका नया संविधान लागू करने में यह एक महत्त्वपूर्ण कदम था।

ब्रिटिश सरकार द्वारा संविधान-सभा की माँग स्वीकार

Novels English & Hind

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

17 मई, 1927 को कांग्रेस के बंबई अधिवेशन के दौरान पं. मोतीलाल नेहरू ने कांग्रेस कार्यकारिणी समिति में केंद्रीय तथा प्रांतीय विधानमंडलों के निर्वाचित सदस्यों तथा राजनीतिक दलों के नेताओं के परामर्श से भारत के लिए एक संविधान तैयार करने संबंधी प्रस्ताव रखा, जो आंशिक संशोधनों के साथ भारी बहुमत से स्वीकार किया गया।

बाद में 28 दिसंबर, 1927 को कांग्रेस के मद्रास अधिवेशन में पं. जवाहरलाल नेहरू ने इसी प्रस्ताव को कुछ परिवर्तित रूप में प्रस्तुत किया, जो पुन: पारित हुआ। 19 मई, 1928 को बंबई में एक सर्वदलीय सम्मेलन आयोजित किया गया, जिसमें 'भारतीय संविधान के सिद्धांत निर्धारित करने के लिए' एक समिति गठित की गई, जिसके सभापति थे—पं. मोतीलाल नेहरू।

इस समिति ने 10 अगस्त, 1928 को अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की, जो 'नेहरू रिपोर्ट' के नाम से प्रसिद्ध हुई। इस रिपोर्ट में भारत के संविधान के प्रारूप की रूपरेखा भी सम्मिलित थी। यह भारतीयों द्वारा अपने देश के लिए सर्वांगपूर्ण संविधान बनाए जाने का प्रथम प्रयास था।

भारतीय शासन अधिनियम, 1935 की धारा-110 में यह भी कहा गया था कि भारत के संघीय और प्रांतीय विधानमंडलों को स्वत: संविधान में संशोधन करने का अधिकार न होगा।

इस अधिनियम को कांग्रेस ने अपने लखनऊ अधिवेशन (अप्रैल, 1936) और फैजपुर अधिवेशन (दिसंबर, 1936) में एक प्रस्ताव पारित करके पूर्णत: अस्वीकार कर दिया कि भारत से बाहर की किसी सत्ता को भारत के लिए राजनीतिक और आर्थिक संगठन तैयार करने का कोई अधिकार नहीं है।

प्रस्ताव में यह भी स्पष्ट कर दिया गया था कि कांग्रेस भारत में एक लोकतंत्रात्मक राज्य की स्थापना करना चाहती है, जिसमें राजनीतिक शक्ति जनता को सौंपी गई हो और सरकार उसके नियंत्रण में रहे। जाहिर है, इस तरह का राज्य केवल ऐसी संविधान-सभा द्वारा ही जन्म ले सकता था, जो सार्वभौम मताधिकार द्वारा निर्वाचित की गई हो और जिसे देश का संविधान बनाने के लिए अंतिम अधिकार सौंपा गया हो।

संविधान सभा के लिए हुए चुनावों के परिणाम (जुलाई-अगस्त 1946)

दल का नाम: कांग्रेस

सीटें जीतीं: 208

दल का नाम: मुसलिम लीग

सीटें जीतीं: 73

दल का नाम: यूनियनिस्ट पार्टी

सीटें जीतीं: 1

दल का नाम: यूनियनिस्ट मुसलिम

सीटें जीतीं: 1

दल का नाम: यूनियनिस्ट शेड्यूल्ड कास्ट्स

सीटें जीतीं: 1

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

दल का नाम: कृषक प्रजा पार्टी

सीटें जीतीं: 1

दल का नाम: शेड्यूल्ड कास्ट फेडरेशन

सीटें जीतीं: 1

दल का नाम: सिख (नॉन कांग्रेस)

सीटें जीतीं: 1

दल का नाम: कम्युनिस्ट पार्टी

सीटें जीतीं: 1

दल का नाम: इंडिपेंडेंट्स (स्वतंत्र)

सीटें जीतीं: 8

दल का नाम: कुल

सीटें जीतीं: 296

सन् 1935 के भारत शासन अधिनियम के अंतर्गत होनेवाले प्रांतीय विधान-सभाओं के निर्वाचन के बाद केंद्रीय और प्रांतीय विधानमंडलों के निर्वाचन में निर्णायक सफलता पाने के बाद कांग्रेस की कार्यकारिणी समिति ने दिल्ली में 18 मार्च, 1937 को बैठक की। इस बैठक में इस बात पर बल दिया कि चुनाव परिणामों से संविधान-सभा की माँग की पुष्टि जनता द्वारा होती है अर्थात् जनता चाहती है कि सन् 1935 का अधिनियम वापस ले लिया जाए और भारतीयों को संविधान-सभा में अपना संविधान बनाने का अवसर दिया जाए।

इसके बाद 19-20 मार्च, 1937 को विधानमंडल के सदस्यों ने राष्ट्रीय सम्मेलन में और कांग्रेस ने 14 सितंबर, 1939 को अपने ऐतिहासिक प्रस्ताव में संविधान-सभा की माँग दोहराई। उधर कांग्रेस कार्यकारिणी समिति ने नवंबर, 1939 में एक प्रस्ताव पारित करते हुए भारत के लिए संविधान-सभा की स्थापना पर जोर दिया—"समिति पुन: यह घोषणा करना चाहती है कि ब्रिटेन की नीति से साम्राज्यवाद का धब्बा दूर करने और कांग्रेस को आगे सहयोग देने के संबंध में प्रेरित करने के लिए बहुत आवश्यक है कि भारतीय स्वतंत्रता को मान्यता मिले और उसके लोगों का यह अधिकार स्वीकार किया जाए कि वे एक संविधान-सभा द्वारा अपने संविधान की रचना कर सकते हैं। उसका यह मत है कि किसी स्वतंत्र देश का संविधान तैयार करने के लिए संविधान-सभा ही एक लोकतंत्रात्मक उपाय है।"

संविधान-सभा का स्वरूप

सन् 1940 के अगस्त-प्रस्ताव में ब्रिटिश सरकार ने पहली बार परोक्षत: भारतीयों को अपना संविधान स्वयं बनाने का अधिकार स्वीकार किया। सन् 1940 में ब्रिटिश सरकार ने भी संविधान-सभा, जिसमें केवल भारत के ही प्रतिनिधि हों, द्वारा स्वतंत्र भारत के संविधान की रचना की माँग को स्वीकार किया।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

सन् 1946 की कैबिनेट मिशन योजना और 3 जून, 1946 की माउंटबेटन योजना के आधार पर भारत में संविधान-सभा का गठन किया गया। इस सभा के सदस्यों अथवा प्रतिनिधियों का चुनाव जुलाई-अगस्त, 1946 में प्रांतीय विधानसभाओं ने किया। संविधान-सभा में कुल 389 सदस्यों का चयन होना था। इनमें 296 सदस्य ब्रिटिश भारत के गवर्नरों के प्रांतों से चुने जाने थे—4 चीफ कमिश्नरों के प्रांतों से और 89 देसी रियासतों से।

ब्रिटिश भारत के गवर्नरों के प्रांतों को आवंटित 296 स्थानों के लिए चुनाव जुलाई-अगस्त, 1946 तक संपन्न हो गए, जिनमें कांग्रेस ने 208, मुसलिम लीग ने 73, यूनियनिस्ट ने 1, यूनियनिस्ट मुसलिम ने 1, यूनियनिस्ट अनुसूचित जाति ने 1, कृषक प्रजा ने 1, अनुसूचित जाति परिसंघ ने 1, सिख (गैर-कांग्रेसी) ने 1, क म्युनिस्ट ने 1 और स्वतंत्र ने 8 स्थान प्राप्त किए।

संविधान-सभा के प्रमुख सदस्य

कांग्रेसी सदस्य

मौ. अबुल कलाम आज़ाद

चक्रवर्ती राजगोपालाचारी

आचार्य जे.बी. कृपलानी

गोविंद वल्लभ पंत

राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन

बालगोविंद खेर

के.एम. मुंशी

पं जवाहरलाल नेहरू

सरदार वल्लभभाई पटेल

डॉ. राजेंद्र प्रसाद

गैर-कांग्रेसी सदस्य

पं. हृदयनाथ कुंजरू

सर अल्लादि कृष्णास्वामी अय्यर

टेकचंद बख्शी

प्रो. के.टी. शाह

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

डॉ. भीमराव अंबेडकर

डॉ. जयकर

टी.टी. कृष्णमाचारी

डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन

डॉ. श्यामाप्रसाद मुखर्जी

एन. गोपालास्वामी आयंगर

महिला सदस्य

सरोजिनी नायडू

श्रीमती हंसा मेहता

संविधान-सभा की प्रमुख समितियाँ

समिति : नियम एवं प्रक्रिया समिति

अध्यक्ष: डॉ. राजेंद्र प्रसाद

समिति : संघ शक्ति समिति

अध्यक्ष: पं. जवाहरलाल नेहरू

समिति : संघ संविधान समिति

अध्यक्ष: पं. जवाहरलाल नेहरू

समिति : प्रांतीय संविधान समिति

अध्यक्ष: सरदार वल्लभभाई पटेल

समिति : संचालन समिति

अध्यक्ष: डॉ. राजेंद्र प्रसाद

समिति : प्रारूप समिति

अध्यक्ष: डॉ. भीमराव अंबेडकर

समिति : झंडा समिति

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

अध्यक्ष: जे.बी. कृपलानी

समिति : राज्य समिति

अध्यक्ष: पं. जवाहरलाल नेहरू

समिति : परामर्श समिति

अध्यक्ष: सरदार वल्लभभाई पटेल

समिति : सर्वोच्च न्यायालय समिति

अध्यक्ष: एस. वारदाचारियार

समिति : मूल अधिकार उपसमिति

अध्यक्ष: जे.बी. कृपलानी

समिति : अल्पसंख्यक उपसमिति

अध्यक्ष: एच.सी. मुखर्जी

प्रमुख सदस्य

संविधान-सभा के सदस्य भारत के राज्यों की सभाओं के निर्वाचित सदस्यों के द्वारा चुने गए थे। जवाहरलाल नेहरू, डॉ. राजेंद्र प्रसाद, सरदार वल्लभभाई पटेल, श्यामा प्रसाद मुखर्जी, अबुल कलाम आजाद आदि इस सभा के प्रमुख सदस्य थे।

अनुसूचित वर्गों से तीस से अधिक सदस्य इस सभा में शामिल थे। सच्चिदानंद सिन्हा इस सभा के प्रथम सभापति नियुक्त किए गए थे; किंतु उनकी मृत्यु हो जाने के बाद डॉ. राजेंद्र प्रसाद को सभापति निर्वाचित किया गया।

डॉ. भीमराव अंबेडकर को संविधान की रचना करने वाली समिति का अध्यक्ष चुना गया था। संविधान-सभा ने 2 वर्ष, 11 माह और 18 दिन में कुल 166 दिन बैठक की। सभा की बैठकों में प्रेस और जनता को भी स्वतंत्रता से भाग लेने की छूट प्राप्त थी।

प्रमुख उपसमितियाँ

उपसमिति : अल्पसंख्यक उपसमिति

अध्यक्ष: एच.सी. मुखर्जी

उपसमिति : मूलाधिकार उपसमिति

अध्यक्ष: आचार्य कृपलानी

उपसमिति : उत्तर-पूर्वी सीमा आदिम जाति उपसमिति तथा पृथक् प्रदेश उपसमिति

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

अध्यक्ष: गोपीनाथ बारदोलोई

उपसमिति : आदिम जाति और पृथक् प्रदेश उपसमिति

अध्यक्ष: श्री ठक्कर बापा

संविधान-सभा द्वारा कृ त कतिपय संविधानेतर कार्य

संविधान-सभा ने संविधान की रचना के अतिरिक्त निम्नलिखित संविधानेतर कतिपय महत्त्वपूर्ण कार्य भी किए—

- राष्ट्रमंडल में भारत की सदस्यता स्वीकार करवाई (सन् 1949)।
- 'राष्ट्रीय ध्वज' अपनाया (22 जुलाई, 1947)।
- राष्ट्र गान अपनाया (24 जनवरी, 1950)।
- राष्ट्रीय गीत अपनाया (24 जनवरी, 1950)।
- डॉ. राजेंद्र प्रसाद को देश का प्रथम राष्ट्रपति नियुक्त किया (24 जनवरी, 1950)।

समितियों का गठन

संविधान की रचना के लिए विभिन्न समितियों के गठन की आवश्यकता भी महसूस की गई, ताकि संविधान की रचना का कार्य व्यवस्थित एवं सुचारु रूप से चल सके। इसके लिए कई समितियों और उपसमितियों का गठन किया गया, जिनमें से प्रमुख समितियाँ इस प्रकार थीं—नियम समिति, संघ शक्ति समिति, संघ संविधान समिति, प्रांतीय संविधान समिति, संचालन समिति, प्रारूप समिति, झंडा समिति, राज्य समिति, परामर्श समिति, सर्वोच्च न्यायालय समिति, मूल अधिकार उपसमिति आदि। कुछ प्रमुख उपसमितियाँ इस प्रकार थीं—अल्पसंख्यक उपसमिति, मूलाधिकार उपसमिति, उत्तर-पूर्वी सीमा आदिम जाति उपसमिति तथा पृथक् प्रदेश उपसमिति आदि।

संविधान-सभा का प्रथम अधिवेशन

20 नवंबर, 1946 को वाइसराय ने निर्वाचित प्रतिनिधियों को संविधान-सभा के पहले अधिवेशन के लिए आमंत्रित किया, जो 9 दिसंबर, 1946 को होना था। इस बैठक को संविधान-सभा का प्रथम अधिवेशन भी कहा जा सकता है। भारत के लिए यह एक ऐतिहासिक अवसर था। इस पहली बैठक में 207 सदस्यों ने भाग लिया।

संविधान-सभा के सत्र : एक नजर में

सत्र: पहला सत्र

अवधि: 9-23 दिसंबर, 1946

सत्र: दूसरा सत्र

अवधि: 20-25 जनवरी, 1947

सत्र: तीसरा सत्र

अवधि: 28 अप्रैल-2 मई, 1947

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

सत्र: चौथा सत्र

अवधि: 14-31 जुलाई, 1947

सत्र: पाँचवाँ सत्र

अवधि: 14-30 अगस्त, 1947

सत्र: छठा सत्र

अवधि: 27 जनवरी, 1948

सत्र: सातवाँ सत्र

अवधि: 4 नवंबर, 1948-8 जनवरी, 1949

सत्र: आठवाँ सत्र

अवधि: 16 मई-16 जून, 1949

सत्र: नौवाँ सत्र

अवधि: 30 जुलाई-18 सितंबर, 1949

सत्र: दसवाँ सत्र

अवधि: 6-17 अक्तूबर, 1949

सत्र: ग्यारहवाँ सत्र

अवधि: 14-26 नवंबर, 1949

यह अधिवेशन दिल्ली में संसद् भवन के केंद्रीय कक्ष में संपन्न हुआ था। अधिवेशन के आरंभ में सर्वप्रथम आचार्य कृपलानी ने संविधान-सभा के अस्थायी सभापति के लिए सभा के सबसे बुजुर्ग सदस्य डॉ. सच्चिदानंद सिन्हा का नाम प्रस्तावित किया, जिसे सभी सदस्यों ने स्वीकृति प्रदान कर दी। इस प्रकार डॉ. सच्चिदानंद सिन्हा को इस संविधान-सभा का अस्थायी सभापति चुना गया। मुसलिम लीग ने इस बैठक का बहिष्कार किया और पाकिस्तान के लिए अलग संविधान-सभा की माँग प्रारंभ कर दी।

11 दिसंबर, 1946 को संविधान-सभा के स्थायी अध्यक्ष डॉ. राजेंद्र प्रसाद निर्वाचित हुए। एक प्रक्रिया नियम समिति बनाई गई। साथ ही संविधान-सभा के अपने नियम बनने तक काम चलाने के लिए केंद्रीय विधानसभा के प्रक्रिया तथा कार्य-संचालन संबंधी नियम स्वीकार किए गए। इस प्रकार संविधान-रचना का कार्य आरंभ करने से पहले सभी औपचारिक कार्य संपन्न किए गए।

हैदराबाद एक ऐसी देसी रियासत थी, जिसके प्रतिनिधि संविधान-सभा में सम्मिलित नहीं हुए थे। प्रांतों या देसी रियासतों को उनकी जनसंख्या के अनुपात में संविधान-सभा में प्रतिनिधित्व दिया गया था। साधारणत: 10 लाख की

Novels English & Hind

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

आबादी पर एक स्थान का आवंटन किया गया था।

सम्बन्धित तथ्य

● हैदराबाद एक ऐसी रियासत थी, जिसके प्रतिनिधि संविधान-सभा में सम्मिलित नहीं हुए थे।

● प्रांतों या देसी रियासतों को उनकी जनसंख्या के अनुपात में संविधान-सभा में प्रतिनिधित्व दिया गया था। साधारणत: 10 लाख की आबादी पर एक स्थान का आवंटन किया गया था।

● संविधान-सभा की कार्यवाही 13 दिसंबर, 1946 को जवाहरलाल नेहरू द्वारा पेश किए गए उद्देश्य प्रस्ताव के साथ प्रारंभ हुई।

● 22 जनवरी, 1947 को उद्देश्य प्रस्ताव की स्वीकृति के बाद संविधान-सभा ने संविधान रचना हेतु अनेक समितियां गठित कीं। इनमें प्रमुख थीं—वार्ता समिति, संघ संविधान समिति, प्रांतीय संविधान समिति, संघ शक्ति समिति, प्रारूप समिति।

● बी.एन. राव द्वारा प्रस्तुत किए गए संविधान के प्रारूप पर विचार-विमर्श करने के लिए संविधान-सभा द्वारा 29 अगस्त, 1947 को एक संकल्प पारित करके प्रारूप समिति का गठन किया गया तथा इसके अध्यक्ष के रूप में डॉ. भीमराव अंबेडकर को चुना गया। प्रारूप समिति के सदस्यों की संख्या सात थी।

● 3 जून, 1947 की योजना के अनुसार, देश का बंटवारा हो जाने पर भारतीय संविधान-सभा की कुल सदस्य संख्या 324 नियत की गई, जिसमें 235 स्थान प्रांतों के लिए और 89 स्थान देसी राज्यों के लिए थे।

● देश-विभाजन के बाद संविधान-सभा का पुनर्गठन 31 अक्तूबर, 1947 को किया गया और 31 दिसंबर, 1947 को संविधान- सभा के सदस्यों की कुल संख्या 299 थी, जिसमें प्रांतीय सदस्यों की संख्या एवं देसी रियासतों के सदस्यों की संख्या 70 थी।

● प्रारूप समिति ने संविधान के प्रारूप पर विचार-विमर्श करने के बाद 21 फरवरी, 1948 को संविधान-सभा के समक्ष अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की।

● संविधान-सभा में संविधान का प्रथम वाचन 4 नवंबर से 9 नवंबर, 1948 तक चला। संविधान पर दूसरा वाचन 15 नवंबर, 1948 को प्रारंभ हुआ, जो 17 अक्तूबर, 1949 तक चला। संविधान-सभा में संविधान का तीसरा वाचन 14 नवंबर, 1949 को प्रारंभ हुआ, जो 26 नवंबर, 1949 तक चला और संविधान-सभा द्वारा संविधान को पारित कर दिया गया। उस समय संविधान-सभा के 184 सदस्य उपस्थित थे।

● संविधान-सभा की अंतिम बैठक 24 जनवरी, 1950 को हुई और उसी दिन संविधान-सभा के द्वारा डॉ. राजेंद्र प्रसाद को भारत का प्रथम राष्ट्रपति चुना गया।

प्रांतों का प्रतिनिधित्व मुख्यत: तीन प्रमुख समुदायों की जनसंख्या के आधार पर विभाजित किया गया था, वे समुदाय थे—मुसलिम, सिख एवं साधारण। संविधान-सभा में ब्रिटिश प्रांतों के 296 प्रतिनिधियों का विभाजन सांप्रदायिक आधार पर किया गया—213 सामान्य, 79 मुसलमान तथा 4 सिख। संविधान-सभा के सदस्यों में अनुसूचित जनजाति के सदस्यों की संख्या 33 थी।

संविधान-सभा में महिला सदस्यों की संख्या 12 थी।

यह संविधान-सभा 15 अगस्त, 1947 तक ब्रिटिश संसद् द्वारा निर्धारित नियमों के अंतर्गत कार्यरत रही, किंतु 15 अगस्त, 1947 को जब भारत स्वतंत्र होकर एक डोमीनियन या अधिराज्य बना, तब संविधान-सभा ने एक सार्वभौम संस्था के रूप में कार्य करना आरंभ किया। पाकिस्तान के लिए अलग से संविधान-सभा की व्यवस्था की गई। तब भारतीय संविधान-सभा में कुल 324 सदस्य रह गए, जिनमें से 235 स्थान प्रांतों और 89 स्थान देसी राज्यों से थे।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hind

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

3. संविधान-रचना की प्रक्रिया

संविधानसभा की कार्यवाही 13 दिसम्बर, 1946 को जवाहरलाल नेहरू द्वारा पेश किए गए उद्देश्य प्रस्ताव के साथ प्रारंभ हुई। संविधान-रचना के संबंध में यही सबसे पहला कदम था। इसी के साथ संविधान-सभा ने उद्देश्य प्रस्ताव के रूप में अपने 'विचारार्थ विषय' निर्धारित किए। यह उद्देश्य प्रस्ताव बाद में भारतीय संविधान की 'उद्देशिका' का आधार बना।

22 जनवरी, 1947 को उद्देश्य प्रस्ताव की स्वीकृति के बाद संविधान-सभा ने संवैधानिक समस्याओं के विभिन्न पहलुओं से संबंधित अनेक समितियाँ गठित कीं। इनमें प्रमुख थीं—वार्ता समिति, संघ संविधान समिति, प्रांतीय संविधान समिति, संघ शक्ति समिति, प्रारूप समिति।

इन समितियों में से अधिकतर के अध्यक्ष सरदार वल्लभभाई पटेल या पं. जवाहरलाल नेहरू थे। संविधान-सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेंद्र प्रसाद के अनुसार, ''इन दोनों महारथियों ने ही संविधान के मूल सिद्धांत निर्धारित किए थे।''

सभी समितियों ने अपना-अपना कार्य दायित्वपूर्ण ढंग से करते हुए, यथासमय महत्त्वपूर्ण प्रतिवेदन प्रस्तुत किए, जिन पर संविधान-सभा ने विस्तारपूर्वक विचार-विमर्श किया। इन प्रतिवेदनों की सिफारिशें प्रारूप संविधान का आधार बनीं।

प्रारूप संविधान पर केवल प्रारूप समिति के सदस्यों ने ही नहीं, अपितु संविधान-सभा के अन्य सदस्यों ने भी गंभीरतापूर्वक विचार-विमर्श तथा परीक्षण किया। प्रारूप संविधान की इस विशद परीक्षा के परिणामस्वरूप संविधान का आकार बहुत बढ़ गया।

संविधान-सभा के सचिवालय की परामर्श शाखा ने प्रारूप समिति के समक्ष विचार-विमर्श के लिए संविधान का जो प्रथम प्रारूप तैयार किया था, उसमें 243 अनुच्छेद और 13 अनुसूचियाँ थीं।

संविधान-सभा की प्रारूप समिति द्वारा आरंभिक स्तर पर प्रस्तुत संविधान में 305 अनुच्छेद और 8 अनुसूचियाँ थीं। प्रारूप संविधान के दूसरे वाचन की समाप्ति पर अनुच्छेदों की संख्या 286 हो गई। अपने वर्तमान रूप तक पहुँचते-पहुँचते संविधान में 395 अनुच्छेद और 8 अनुसूचियाँ सम्मिलित हो गईं।

उद्देश्य प्रस्ताव

किसी संविधान की रचना-यात्रा आरंभ करने से पूर्व यह स्पष्ट करना आवश्यक होता है कि उस संविधान की रचना के उद्देश्य एवं विषय क्या हैं। भारतीय संविधान भी इसका अपवाद नहीं है। संविधान-सभा ने भी सबसे पहले उद्देश्य प्रस्ताव पर ध्यान दिया, जिसके फलस्वरूप जवाहरलाल नेहरू ने 13 दिसंबर, 1946 को संविधान-सभा में उद्देश्य प्रस्ताव प्रस्तुत किया था, जिसकी प्रमुख बातें इस प्रकार थीं—

- यह संविधान-सभा अपने इस दृढ़ संकल्प की घोषणा करती है कि वह भारत को एक स्वतंत्र प्रभुसत्तासंपन्न गणराज्य घोषित करेगी और उसके भावी शासन के लिए एक ऐसे संविधान की रचना करेगी, जिसके अंतर्गत ब्रिटिश भारत के राज्य, देसी राज्य और भारत के ऐसे अन्य भाग जो ब्रिटिश भारत से बाहर हैं और ऐसे राज्य-क्षेत्र, जो स्वतंत्र प्रभुत्वसंपन्न भारत के भीतर सम्मिलित होने के लिए प्रस्तुत हैं—आपस में मिलकर एक संघ के रूप में गठित होंगे।
- उपयुक्त राज्य-क्षेत्र स्वायत्तशासी एककों की सत्ता से संपन्न होंगे।
- उनके पास अवशिष्ट शक्तियाँ होंगी—वे सरकार तथा प्रशासन की सारी शक्तियों का प्रयोग तथा उनके सारे कार्य

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

करेंगे। इसके अपवाद केवल वे शक्तियाँ और कार्य होंगे, जो संघ में निहित हों या संघ को सौंपे गए हों।

● विधि तथा सार्वजनिक नैतिकता के अधीन रहते हुए भारत के सभी लोगों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय की स्थिति और अवसर तथा विधि के समक्ष समानता; विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म, उपासना, व्यवसाय और कार्य की गारंटी दी जाएगी।

● अल्पसंख्यकों, पिछड़े और कबीलाई क्षेत्रों तथा दलित और पिछड़े वर्गों के कल्याण की व्यवस्था की जाएगी।

● प्रभुत्वसंपन्न और स्वतंत्र भारत की, इसके अंगभूत भागों तथा शासन के अंगों की समूची शक्ति और सत्ता जनता से प्राप्त हुई हो।

● न्याय तथा सभ्य राष्ट्रों की विधि के अनुसार, गणराज्य के राज्य-क्षेत्रों की अखंडता और जल, समुद्र तथा आकाश पर उसके प्रभुता-अधिकारों की रक्षा की जाएगी।

● यह प्राचीन देश संसार में अपना न्यायपूर्ण एवं सामान्य स्थान प्राप्त करेगा और विश्व-शांति तथा मानव जाति के कल्याण के लिए कृतसंकल्प रहेगा।

संविधान की रचना : कुछ रोचक तथ्य

● संविधान रचना की प्रक्रिया में कुल 2 वर्ष, 11 महीना और 18 दिन लगे। इस कार्य पर लगभग 6.4 करोड़ रुपए खर्च हुए।

● संविधान के प्रारूप पर कुल 114 दिन बहस हुई।

● संविधान को जब 26 नवंबर, 1949 को संविधान-सभा द्वारा पारित किया गया, तब इसमें कुल 22 भाग, 315 अनुच्छेद और 8 अनुसूचियां थीं। वर्तमान समय में संविधान में 25 भाग, 395 अनुच्छेद एवं 12 अनुसूचियां हैं।

● संविधान के कुछ अनुच्छेदों में से 15 अर्थात् 5, 6, 7, 8, 9, 60, 324, 366, 367, 372, 380, 388, 391, 392 तथा 393 अनुच्छेदों को 26 नवंबर, 1949 को ही परिवर्तित कर दिया गया; जबकि शेष अनुच्छेदों को 26 जनवरी, 1950 को लागू किया गया।

● कैबिनेट मिशन के सदस्य सर स्टेफोर्ड क्रिप्स, लार्ड पेंथिक लारेंस तथा ए. बी. एलेक्ज़ेंडर थे।

● 26 जुलाई, 1947 को गवर्नर जनरल ने पाकिस्तान के लिए पृथक् संविधान-सभा के गठन की घोषणा की।

सन् 1946 में 13 से 19 दिसंबर तक संविधान-सभा ने उद्देश्य प्रस्ताव पर विचार-विमर्श किया। इस बीच उद्देश्य प्रस्ताव संबंधी कई संशोधनात्मक विचार प्रस्तुत किए गए, जिनमें सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विचार डॉ. एम.आर. जयकर का था कि जब तक मुसलिम लीग और देसी राज्यों के प्रतिनिधि संविधान-सभा में सम्मिलित न हो जाएँ, तब तक इस प्रस्ताव पर विचार-विमर्श स्थगित कर दिया जाए।

इसके बाद इस प्रस्ताव पर विचार-विमर्श 21 दिसंबर, 1946 को अगले अधिवेशन तक के लिए स्थगित कर दिया गया। मुसलिम लीग को इस प्रस्ताव पर विचार-विमर्श करने के लिए एक महीने का समय मिल गया, फिर भी वह संविधान-सभा में सम्मिलित नहीं हुई। यह देखकर संविधान-सभा ने और अधिक प्रतीक्षा करना उचित नहीं समझा। 22 जनवरी, 1947 को संविधान-सभा के सभी सदस्यों ने नेहरू के प्रस्ताव को सर्वसम्मति से पारित कर दिया। इससे पूर्व 20 नवंबर, 1946 को सारांशत: मेरठ के खुले कांग्रेस अधिवेशन में यह प्रस्ताव पारित हो चुका था।

संविधान का प्रथम प्रारूप

भारतीय संविधान का पहला प्रारूप तैयार होने से पहले संविधान-सभा के परामर्शदाता श्री बी.एन. राव के निर्देशन

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

में 60 देशों के संविधानों का गहन अध्ययन किया गया और उनके कार्यकारी, विधायी प्रक्रिया संबंधी और प्रशासनिक तथा कुछ अन्य उपबंध तुलनात्मक रूप में तीन भागों में संकलित किए गए, जिन्हें संविधान-सभा के सभी सदस्यों में वितरित किया गया।

यह संकलन मुख्यत: दो रूपों में विभाजित था—एक समूह में ऑस्ट्रेलिया, कनाडा आदि ब्रिटिश राष्ट्रीय मंडलों की संवैधानिक रूपरेखा दी गई थी; जबकि दूसरे समूह में डेंजिक (स्वतंत्र नगर), जर्मनी (तीसरा गणराज्य), संयुक्त राज्य अमेरिका, सोवियत समाजवादी गणराज्य के संवैधानिक उपबंध दिए गए थे। साथ ही विभिन्न राज्यों के प्रधान, मूल अधिकारों, अल्पसंख्यकों को दी जानेवाली सहायता, प्रतिनिधित्व पद्धतियों और द्वितीय सदनों के बारे में सहायक सामग्री दी गई थी।

इस उपलब्ध सामग्री के आधार पर अक्तूबर, 1947 में संविधान का प्राथमिक रूप तैयार हो जाने के बाद संविधान-सभा के अध्यक्ष ने संवैधानिक परामर्शदाता बेनेगल नरसिंह राव को अमेरिका, कनाडा, आयरलैंड और ब्रिटेन भेजा, ताकि वह इन देशों के प्रमुख संविधान विशेषज्ञों से विचार-विमर्श कर सकें। श्री बेनेगल ने सन् 1947 में अक्तूबर से दिसंबर तक उक्त प्रवास-यात्रा की और लौटकर विचार-विमर्श के परिणामों पर एक प्रतिवेदन संविधान-सभा के समक्ष प्रस्तुत किया।

प्रारूप समिति द्वारा तैयार संविधान 25 फरवरी, 1948 को संविधान-सभा के अध्यक्ष के समक्ष प्रस्तुत किया गया। प्रारूप संविधान के प्रकाशित होने पर उसमें संशोधन के लिए सात-आठ हजार टिप्पणियाँ, आलोचनाएँ और सुझाव प्राप्त हुए, जिन पर विचार-विमर्श करने का दायित्व संविधान-सभा के अध्यक्ष ने प्रारूप समिति को सौंपा। साथ ही विभिन्न सुझावों, टिप्पणियों तथा प्रारूप समिति की सिफारिशों पर विचार करने के लिए उन्होंने एक विशेष समिति का गठन भी किया, जिसके अधिकतर सदस्य संविधान समिति और संघ शक्ति समिति के भी सदस्य थे।

विशेष समिति द्वारा परीक्षण करने और सिफारिशों के बाद प्रारूप समिति ने उचित और स्वीकार्य संशोधनों के अध्ययन की सरलता के लिए प्रारूप संविधान को पुनर्मुद्रित करवाया और उसे 26 अक्तूबर, 1948 को संविधान-सभा के अध्यक्ष के समक्ष प्रस्तुत किया। बाद में इसकी प्रतियाँ संविधान-सभा के सदस्यों में भी वितरित की गईं। प्रारूप संविधान पर विचार करते समय इसी पुनर्मुद्रित संस्करण का उपयोग किया गया। 4 नवंबर, 1948 को डॉ. भीमराव अंबेडकर ने संविधान-सभा में प्रारूप संविधान विचारार्थ प्रस्तुत किया।

विभिन्न देशों के संविधानों की रचना में लगा समय

अमेरिका (7 धाराओं के लिए)—4 महीने
कनाडा (147 धाराओं के लिए)—2 वर्ष 5 महीने
ऑस्ट्रेलिया (127 धाराओं के लिए)—9 वर्ष
दक्षिण अफ्रीका (153 धाराओं के लिए)—1 वर्ष
भारत (395 धाराओं, 8 परिशिष्ट और 2,473 संशोधनों के लिए)—2 वर्ष 11 महीने

संविधान की व्याख्या के प्रमुख आधारिक सिद्धांत

संविधान के सभी प्रावधानों की व्याख्या इस प्रकार की जानी चाहिए कि प्रत्येक प्रयुक्त शब्द का अर्थ एवं प्रासंगिकता स्पष्ट हो। इसके लिए सामान्य नियमों के अतिरिक्त कुछ विशिष्ट नियम भी हैं; जैसे—

उदारवादी व्याख्या का सिद्धांत : भारतीय संविधान की व्याख्या संकुचित दृष्टि से नहीं, अपितु उदारवादी दृष्टि से की जाती है (गुड ईयर इंडिया बनाम हरियाणा राज्य, एआईआर-1990, एससी-781)।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

विच्छेदता का सिद्धांत : यदि संविधान के किसी प्रावधान का कोई भाग अमान्य सिद्ध होता है, तो उस स्थिति में प्रावधान के शेष भाग की मान्यता प्रभावित नहीं होनी चाहिए। यदि वह प्रावधान से पृथक् किया जा सके तथा इसका अपना स्वतंत्र अर्थ हो (प्रताप सिंह बनाम इलाहाबाद बैंक, एआईआर-1955 एससी-765 गोपाल बनाम मद्रास राज्य, 1955 एससी-88)।

प्रत्याशित अमान्यता का सिद्धांत : सर्वोच्च न्यायालय के अनुसार, न्यायालय द्वारा की गई व्याख्या तथा इसके द्वारा घोषित कानूनों का भूतलक्षी प्रभाव नहीं होना चाहिए अर्थात् भूतकाल में पारित अधिनियम की विधि मान्यता प्रभावित नहीं होनी चाहिए (गोलकनाथ बनाम पंजाब राज्य, एआईआर 1967, एससी 1643)।

15 नवंबर, 1948 को संविधान के प्रारूप पर खंडवार गहन विचार-विमर्श आरंभ हुआ, जो 17 अक्तूबर, 1949 को समाप्त हुआ। लगभग ग्यारह महीने वाले इस विचार-विमर्श के दौरान ढाई हजार संशोधनों पर संविधान-सभा में विधिवत् वाद-विवाद हुआ।

3 नवंबर, 1949 को प्रारूप समिति ने अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। इसमें प्रारूप समिति द्वारा किए गए संशोधनों तथा परिवर्तनों को मुख्य रूप से निम्नलिखित भागों में बाँटा जा सकता है—

- अनुच्छेदों, धाराओं और उपधाराओं की क्रम-संख्याओं में परिवर्तन।
- अंग्रेजी के कुछ कैपिटल अक्षरों में परिवर्तन, 'शासक' की जगह 'राजप्रमुख' तथा 'इस संविधान के' शब्दों का लोप आदि कुछ औपचारिक परिवर्तन।
- कुछ अनुच्छेदों का अर्थ स्पष्ट करने के लिए उनमें शाब्दिक परिवर्तन।
- कुछ नए अनुच्छेद रखना या वर्तमान अनुच्छेदों के दोषों का परिहार आदि कुछ अन्य आवश्यक संशोधन।

प्रारूप समिति के प्रतिवेदन तथा संशोधनों पर 14 नवंबर, 1949 को 11वें अधिवेशन में विचार-विमर्श हुआ। इसे 'संविधान का द्वितीय वाचन' कहा जा सकता है। 16 नवंबर, 1949 को द्वितीय वाचन समाप्त होने पर 17 नवंबर, 1949 को संविधान-सभा ने संविधान का तीसरा वाचन शुरू किया। इसी दौरान डॉ. अंबेडकर ने प्रस्ताव रखा कि सभा द्वारा अनुमोदित संविधान को पारित किया जाए। यह प्रस्ताव 26 नवंबर, 1949 को स्वीकृत हुआ। इस संविधान पर संविधान-सभा के सदस्यों द्वारा 24 जनवरी, 1950 को अंतिम रूप से हस्ताक्षर किए गए। यह संविधान 26 जनवरी, 1950 को लागू किया गया। इस तारीख को संविधान में 'प्रारंभ की तारीख' कहा गया है। इसी तारीख को भारत में 'गणतंत्र दिवस' मनाया जाता है।

भारतीय संविधान के विदेशी स्रोत

प्राय: कहा जाता है कि भारतीय संविधान 'संगतिहीन घोटाला' (Hotchpotch) है अर्थात् कहीं की ईंट और कहीं का रोड़ा लेकर इसका ढाँचा तैयार किया गया है। इसका अभिप्राय यह है कि विभिन्न देशों के संविधानों के आवश्यक तत्त्व इसमें सम्मिलित किए गए हैं और उनके आधार पर भारत की शासन-व्यवस्था का स्वरूप निर्धारित किया गया है।

संविधान के प्रमुख स्रोत

भारत के संविधान की रचना में निम्नलिखित देशों के संविधान से सहायता ली गई है-

संयुक्त राज्य अमेरिका —मौलिक अधिकार, न्यायिक पुनरावलोकन, संविधान की सर्वोच्चता, न्यायपालिका की स्वतंत्रता, निर्वाचित राष्ट्रपति एवं उस पर महाभियोग, उपराष्ट्रपति, उच्चतम एवं उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों को हटाने की विधि एवं वित्तीय आपात।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

ब्रिटेन —संसदात्मक शासन प्रणाली, एकल नागरिकता एवं विधि-रचना प्रक्रिया।

आयरलैंड —नीति निदेशक तत्त्व, राष्ट्रपति के निर्वाचक मंडल की व्यवस्था, राष्ट्रपति द्वारा राज्य सभा में साहित्य, कला, विज्ञान तथा समाज-सेवा इत्यादि के क्षेत्रों में ख्यातिप्राप्त व्यक्तियों का मनोनयन।

ऑस्ट्रेलिया —प्रस्तावना की भाषा, समवर्ती सूची का प्रावधान, केंद्र एवं राज्य के बीच संबंध तथा शक्तियों का मनोनयन।

जर्मनी —आपात्काल के प्रवर्तन के दौरान राष्ट्रपति को मौलिक अधिकार संबंधी शक्तियाँ।

कनाडा —संघात्मक विशेषताएँ, अवशिष्ट शक्तियाँ केंद्र के पास, राज्यपाल की नियुक्ति विषयक प्रक्रिया, संघ एवं राज्य के बीच शक्ति विभाजन।

दक्षिण अफ्रीका —संविधान संशोधन की प्रक्रिया का प्रावधान।

रूस —मौलिक कर्तव्यों का प्रावधान।

अन्य शब्दों में, संविधान की रचना करते समय उसके रचनाकारों ने अन्य देशों के राजनीतिक एवं संवैधानिक स्वरूपों से लाभ उठाया, उन्हें अपने देश के वातावरण, आचार-विचार आदि के अनुरूप आत्मसात् किया और फिर उन्हें अपने संविधान में समाविष्ट कर दिया।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि भारतीय संविधान के प्रणेताओं ने यह दावा कभी नहीं किया कि उन्होंने एक मौलिक संविधान की रचना की है। उनका उद्देश्य तो देश की परिस्थितियों एवं आवश्यकताओं के अनुकूल एक व्यावहारिक संविधान प्रस्तुत करना था। अन्य देशों की उन धाराओं को भारतीय संविधान ने सहज ही ग्रहण कर लिया है, जो उन देशों में सफल रहीं और भारत की परिस्थितियों के भी अनुकूल हैं।

यहाँ यह भी उल्लेखनीय है कि यद्यपि भारतीय संविधान के रचनाकारों ने विभिन्न देशों के संविधानों का अध्ययन किया, तथापि भारत के संविधान पर सर्वाधिक प्रभाव ब्रिटेन के संविधान का रहा, क्योंकि लंबे समय तक भारत ब्रिटिश शासकों के संरक्षण में रहा था।

इस संदर्भ में डॉ. अंबेडकर का वक्तव्य है, ''प्रश्न यह है कि क्या संसार के इतिहास में इस समय निर्मित किसी संविधान में कोई नवीनता हो भी सकती है? संसार के पहले लिखित संविधान की रचना हुए 150 साल से अधिक हो चुके हैं। अनेक देशों ने अपने संविधानों को लिखित रूप देने में उसी का अनुकरण किया है। संविधान का क्षेत्र क्या होना चाहिए, यह बात पहले तय हो चुकी है। इसी प्रकार यह बात भी सारे संसार में मान ली गई है कि संविधान के मूल तत्त्व क्या होते हैं? इन तथ्यों के संदर्भ में सभी एक जैसे प्रतीत होंगे। आज बनाए गए किसी संविधान में यदि कोई नई चीज हो सकती है, तो यही कि उसमें पुराने संविधानों की गलतियों को दूर कर दिया जाए और उसे देश की आवश्यकताओं के अनुरूप ढाला जाए। यह आरोप कि हमारा संविधान दूसरे देशों के संविधानों का अंधानुकरण है, संविधान के अपर्याप्त अध्ययन पर आधारित है...प्रारूप संविधान में भारतीय शासन अधिनियम, 1935 के अधिसंख्य उपबंधों को ज्यों-का-त्यों ले लिया गया है, उधार लेने में किसी तरह की साहित्यिक चोरी नहीं है। संविधान के मूल सिद्धांतों के बारे में किसी का कोई एकाधिकार नहीं होता।''

भारत के इस संविधान के अनुसार, संपूर्ण देश को एक केंद्र से शासित करने की व्यवस्था करके संपूर्ण देश के एकीकरण का प्रयास किया गया है। भारतीय संविधान 26 जनवरी, 1949 को संविधान-सभा द्वारा स्वीकृत किया गया और 26 जनवरी, 1950 को लागू हुआ। विस्तार की दृष्टि से यह विश्व के समस्त संविधानों में सबसे बड़ा संविधान है।

इसमें 395 अनुच्छेद हैं, जिन्हें 22 भागों में बाँटा गया है। ये 22 भाग अलग-अलग विषयों से संबद्ध हैं।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

आरंभिक (मूल) संविधान में अनुच्छेदों और भागों के अतिरिक्त 8 अनुसूचियाँ भी थीं, जो संवैधानिक संशोधनों के कारण आज बढ़कर 12 हो गई हैं। इसके अतिरिक्त संविधान में 3 परिशिष्ट भी हैं।

संविधान के 75 प्रतिशत उपबंध भारत सरकार अधिनियम, 1935 से लिए गए हैं। शेष उपबंध विभिन्न देशों के संविधान से लिए गए हैं। भारतीय संविधान की रचना संयुक्त राज्य अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया, कनाडा, आयरलैंड, इंग्लैंड आदि जनतंत्रों के आधार पर की गई है। इंग्लैंड का संविधान अलिखित है। संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान सबसे छोटा और लिखित है, उसकी अपेक्षा भारत का संविधान लगभग 5 गुना बड़ा है।

इस प्रकार भारत का संविधान संयुक्त राज्य अमेरिका, ग्रेट ब्रिटेन, ऑस्ट्रेलिया, आयरलैंड आदि देशों के संविधानों से प्रभावित है। इसके नागरिकों के मूल अधिकार और नीति निदेशक तत्त्वों पर संयुक्त राज्य अमेरिका और आयरलैंड के संविधानों का प्रभाव पड़ा है, जबकि संघ पद्धति पर कनाडा और ऑस्ट्रेलिया के संविधानों का प्रभाव है। इसी प्रकार सर्वोच्च न्यायालय का स्वरूप संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान से प्रभावित है।

समग्रत: भारतीय संविधान के अनेक देशी और विदेशी स्रोत हैं, लेकिन भारतीय संविधान पर सबसे अधिक प्रभाव 'भारतीय शासन अधिनियम, 1935 का है।' भारतीय संविधान के 395 अनुच्छेदों में से लगभग 250 अनुच्छेद ऐसे हैं, जो 1935 के अधिनियम से या तो शब्दश: लिए गए हैं या फिर बहुत थोड़े परिवर्तन के साथ लिए गए हैं।

संविधान के मूलभूत ढांचे का विकास

क्र.: 1

मुकदमे का नाम: केशवानंद भारती मामला (1973) (मौलिक अधिकार मामला के नाम से विख्यात)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 1. संविधान की सर्वोच्चता

क्र.: 1

मुकदमे का नाम: केशवानंद भारती मामला (1973) (मौलिक अधिकार मामला के नाम से विख्यात)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 2. विधायिका, कार्यपालिका एवं

क्र.: 1

मुकदमे का नाम: केशवानंद भारती मामला (1973) (मौलिक अधिकार मामला के नाम से विख्यात)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 3. गणराज्यात्मक एवं लोकतांत्रिक स्वरूप

क्र.: 1

मुकदमे का नाम: केशवानंद भारती मामला (1973) (मौलिक अधिकार मामला के नाम से विख्यात)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 4. संविधान का धर्मनिरपेक्ष चरित्र

क्र.: 1

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

मुकदमे का नाम: केशवानंद भारती मामला (1973) (मौलिक अधिकार मामला के नाम से विख्यात)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 5. संविधान का संघीय चरित्र

क्र.: 1

मुकदमे का नाम: केशवानंद भारती मामला (1973) (मौलिक अधिकार मामला के नाम से विख्यात)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 6. भारत की संप्रभुता एवं एकता

क्र.: 1

मुकदमे का नाम: केशवानंद भारती मामला (1973) (मौलिक अधिकार मामला के नाम से विख्यात)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 7. व्यक्ति की स्वतंत्रता एवं गरिमा

क्र.: 1

मुकदमे का नाम: केशवानंद भारती मामला (1973) (मौलिक अधिकार मामला के नाम से विख्यात)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 8. एक कल्याणकारी राज्य की स्थापना का

क्र.: 1

मुकदमे का नाम: केशवानंद भारती मामला (1973) (मौलिक अधिकार मामला के नाम से विख्यात)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 9. संसदीय प्रणाली

क्र.: 2

मुकदमे का नाम: इंदिरा नेहरू गांधी मामला (1975) (चुनावी मामला के नाम से विख्यात)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 1. भारत एक संप्रभु लोकतंत्रात्मक गणराज्य

क्र.: 2

मुकदमे का नाम: इंदिरा नेहरू गांधी मामला (1975) (चुनावी मामला के नाम से विख्यात)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 2. व्यक्ति की प्रस्थिति एवं अवसर की समानता

क्र.: 2

मुकदमे का नाम: इंदिरा नेहरू गांधी मामला (1975) (चुनावी मामला के नाम से विख्यात)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 4. कानून की सरकार, लोगों की सरकार नहीं

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

क्र.: 2

मुकदमे का नाम: इंदिरा नेहरू गांधी मामला (1975) (चुनावी मामला के नाम से विख्यात)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 5. न्यायिक समीक्षा

क्र.: 2

मुकदमे का नाम: इंदिरा नेहरू गांधी मामला (1975) (चुनावी मामला के नाम से विख्यात)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 6. स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव जो लोकतंत्र में

क्र.: 3

मुकदमे का नाम: मिनर्वा मिल्स मामला (1980)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 1. संसद् की संविधान संशोधन की सीमित

क्र.: 3

मुकदमे का नाम: मिनर्वा मिल्स मामला (1980)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 2. न्यायिक समीक्षा

क्र.: 3

मुकदमे का नाम: मिनर्वा मिल्स मामला (1980)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 3. मौलिक अधिकारों एवं नीति निदेशक

क्र.: 4

मुकदमे का नाम: सेंट्रल कोलफील्ड लिमिटेड मामला -1980

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: न्याय तक प्रभावी पहुंच

क्र.: 5

मुकदमे का नाम: भीमसिंह जी मामला (1981)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: कल्याणकारी राज्य (सामाजिक-आर्थिक

क्र.: 6

मुकदमे का नाम: एस.पी. सम्पथ कुमार मामला (1987)

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 1. कानून का शासन

क्र.: 6

मुकदमे का नाम: एस.पी. सम्पथ कुमार मामला (1987)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 2. न्यायिक समीक्षा

क्र.: 7

मुकदमे का नाम: पी. सम्बामूर्ति मामला (1987)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 1. कानून का शासन

क्र.: 7

मुकदमे का नाम: पी. सम्बामूर्ति मामला (1987)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 2. न्यायिक समीक्षा

क्र.: 8

मुकदमे का नाम: दिल्ली ज्युडीशियल सर्विस

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: अनुच्छेद-32, 136, 141 तथा 142 के

क्र.: 9

मुकदमे का नाम: इंद्रा साहनी मामला (1992) मंडल मामले के रूप में चर्चित

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: कानून का शासन

क्र.: 9

मुकदमे का नाम: इंद्रा साहनी मामला (1992) मंडल मामले के रूप में चर्चित

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: सामाजिक तथा शैक्षिक रूप से पिछड़े वर्गों

क्र.: 10

मुकदमे का नाम: कुमार पद्म प्रसाद मामला (1992)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: न्यायपालिका की स्वतंत्रता

क्र.: 11

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

मुकदमे का नाम: किहोतो होलोहोन मामला (1993)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: (दलबदल मामले के रूप में चर्चित)

क्र.: 11

मुकदमे का नाम: किहोतो होलोहोन मामला (1993)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 1. स्वतंत्र निष्पक्ष चुनाव

क्र.: 11

मुकदमे का नाम: किहोतो होलोहोन मामला (1993)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 2. संप्रभु, लोकतंत्रात्मक, गणराज्यात्मक ढांचा

क्र.: 12

मुकदमे का नाम: रघुनाथ राव मामला (1993)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 1. समानता का सिद्धांत

क्र.: 12

मुकदमे का नाम: रघुनाथ राव मामला (1993)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 2. भारत की एकता एवं अखंडता

क्र.: 13

मुकदमे का नाम: एस.आर. बोम्मई मामला (1994)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 1. संघवाद

क्र.: 13

मुकदमे का नाम: एस.आर. बोम्मई मामला (1994)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 2. धर्मनिरपेक्षता

क्र.: 13

मुकदमे का नाम: एस.आर. बोम्मई मामला (1994)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 3. लोकतंत्र

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

क्र.: 13

मुकदमे का नाम: एस.आर. बोम्मई मामला (1994)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 4. राष्ट्र की एकता एवं अखंडता

क्र.: 13

मुकदमे का नाम: एस.आर. बोम्मई मामला (1994)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 5. सामाजिक न्याय

क्र.: 13

मुकदमे का नाम: एस.आर. बोम्मई मामला (1994)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 6. न्यायिक समीक्षा

क्र.: 14

मुकदमे का नाम: एल. चंद्रकुमार मामला (1997)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: उच्च न्यायालयों की अनुच्छेद-226 एवं 227 के अंतर्गत शक्तियां

क्र.: 15

मुकदमे का नाम: इंद्रा साहनी-2 मामला (2000)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: समानता का सिद्धांत

क्र.: 16

मुकदमे का नाम: ऑल इंडिया जजेज एसोसिएशयन मामला (2002)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: स्वतंत्र न्यायिक प्रणाली

क्र.: 17

मुकदमे का नाम: कुलदीप नायर मामला (2006)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 1. लोकतंत्र

क्र.: 17

मुकदमे का नाम: कुलदीप नायर मामला (2006)

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 2. स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव

क्र.: 18

मुकदमे का नाम: एम. नागराज मामला (2006)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: समानता का सिद्धांत

क्र.: 19

मुकदमे का नाम: आई. आर. कोएल्हो मामला (2007) (नवीं अनुसूची मामले के रूप में चर्चित)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 1. कानून का शासन

क्र.: 19

मुकदमे का नाम: आई. आर. कोएल्हो मामला (2007) (नवीं अनुसूची मामले के रूप में चर्चित)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 2. शक्तियों का बंटवारा

क्र.: 19

मुकदमे का नाम: आई. आर. कोएल्हो मामला (2007) (नवीं अनुसूची मामले के रूप में चर्चित)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 3. मौलिक अधिकारों के आधारभूत सिद्धांत

क्र.: 19

मुकदमे का नाम: आई. आर. कोएल्हो मामला (2007) (नवीं अनुसूची मामले के रूप में चर्चित)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 4. न्यायिक समीक्षा

क्र.: 19

मुकदमे का नाम: आई. आर. कोएल्हो मामला (2007) (नवीं अनुसूची मामले के रूप में चर्चित)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: 5. समानता का सिद्धांत

क्र.: 20

मुकदमे का नाम: राम जेठमलानी मामला (2011)

मूलभूत ढांचे के तत्त्व: अनुच्छेद-32 के अंतर्गत सर्वोच्च न्यायालय

क्र.: 21

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

मुकदमे का नामः नमित शर्मा मामला (2013)

मूलभूत ढांचे के तत्त्वः व्यक्ति की स्वतंत्रता एवं गरिमा

क्र.: 22

मुकदमे का नामः मद्रास कर एसोसिएशन मामला -2014

मूलभूत ढांचे के तत्त्वः 1. न्यायिक समीक्षा

मूलभूत ढांचे के तत्त्वः 2. अनुच्छेद-226 एवं 227 के अंतर्गत उच्च

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

4. भारतीय संविधान की प्रमुख विशेषताएँ

भारतीय संविधान की प्रस्तावना के अनुसार, भारत एक संप्रभुतासंपन्न, समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक गणराज्य है। संविधान की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं—

संप्रभुता

'संप्रभुता' शब्द का अर्थ है—सर्वोच्चता या प्रधानता। भारत किसी भी विदेशी और आंतरिक शक्ति के नियंत्रण से पूर्णत: मुक्तसंप्रभुतासंपन्न राष्ट्र है। यह सीधे चुनी गई एक स्वतंत्र सरकार द्वारा शासित है तथा यही सरकार कानून बनाकर लोगों पर शासन करती है।

समाजवादी

'समाजवादी' शब्द संविधान के सन् 1976 में हुए 42वें संशोधन अधिनियम द्वारा प्रस्तावना में जोड़ा गया। यह अपने सभी नागरिकों के लिए सामाजिक और आर्थिक समानता सुनिश्चित करता है। जाति, रंग, नस्ल, लिंग, धर्म या भाषा के आधार पर कोई भेदभाव किए बिना सभी को बराबरी का दर्जा और अवसर देता है। सरकार केवल कुछ लोगों के हाथों में धन जमा होने से रोकेगी तथा सभी नागरिकों को एक अच्छा जीवन स्तर प्रदान करने की कोशिश करेगी।

भारत ने एक मिश्रित आर्थिक मॉडल अपनाया है। सरकार ने समाजवाद के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अस्पृश्यता उन्मूलन, जमींदारी उन्मूलन अधिनियम, अधिकतम जोत सीमा अध्नियम, समान वेतन अधिनियम और बालश्रम निषेध अधिनियम आदि बनाए हैं।

धर्मनिरपेक्षता

भारतीय संविधान किसी भी एक धर्म का पोषक नहीं है। जिस प्रकार नेपाल हिंदू राष्ट्र है, पाकिस्तान मुसलिम राष्ट्र है, उस प्रकार भारत किसी विशेष धर्म को अंगीकार करके नहीं चला है। प्रत्येक भारतीय नागरिक को अपनी इच्छा के अनुसार किसी धर्म में विश्वास रखने की स्वतंत्रता है। सरकार धार्मिक आधार पर किसी के साथ पक्षपात नहीं कर सकती। वह किसी धर्म या संप्रदाय विशेष के उपासना स्थलों, शिक्षा-संस्थाओं आदि को विशेष सुविधाएँ नहीं देती। भारतीय संविधान के लिए देश में प्रचलित सभी धर्म समान हैं।

'धर्मनिरपेक्ष' शब्द संविधान के सन् 1976 में हुए 42वें संशोधन अधिनियम द्वारा प्रस्तावना में जोड़ा गया। यह सभी धर्मों की समानता और धार्मिक सहिष्णुता सुनिश्चित करता है। भारत का कोई आधिकारिक धर्म नहीं है। यह न तो किसी धर्म को बढ़ावा देता है और न ही किसी से भेदभाव करता है। यह सभी धर्मों का सम्मान व एक समान व्यवहार करता है। हर व्यक्ति को अपनी पसंद के किसी भी धर्म के पालन और प्रचार का अधिकार है। सभी नागरिक, चाहे उनकी धार्मिक मान्यता कुछ भी हो, कानून की नजर में बराबर हैं। सरकारी या सरकारी अनुदान प्राप्त स्कूलों में कोई धार्मिक अनुदेश लागू नहीं होता।

लोकतांत्रिकता

भारत एक स्वतंत्र देश है। किसी भी जगह से वोट देने की आजादी, संसद् में अनुसूचित सामाजिक समूहों और

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

अनुसूचित जनजातियों को विशिष्ट सीटें आरक्षित की गई हैं। स्थानीय निकाय चुनाव में महिला उम्मीदवारों के लिए एक निश्चित अनुपात में सीटें आरक्षित की जाती हैं। भारत का चुनाव आयोग स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावों के लिए जिम्मेदार है।

गणराज्य

राजशाही, जिसमें राज्य का प्रमुख वंशानुगत आधार पर जीवन भर या पदत्याग करने तक के लिए नियुक्त किया जाता है, के विपरीत एक गणतांत्रिक राष्ट्र के प्रमुख एक निश्चित अवधि के लिए प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से जनता द्वारा निर्वाचित होते हैं। भारत के राष्ट्रपति पाँच वर्ष की अवधि के लिए एक चुनावी प्रक्रिया द्वारा चुने जाते हैं।

संविधान की सर्वोच्चता

संविधान के उपबंध संघ तथा राज्य सरकारों पर समान रूप से बाध्यकारी होते हैं। केंद्र तथा राज्य शक्ति विभाजित करने वाले कुछ अनुच्छेद हैं—73, 162, 245, 246, 248

संसद् की सार्वभौमिकता

भारतीय संविधान में संसद् एक सार्वभौमिक संस्था है। उसे संघ सूची (97 विषय) और समवर्ती सूची (47 विषय) में विधि-रचना का अधिकार दिया गया है। कुछ अवशिष्ट विषय भी संसद् के अधीन हैं। मंत्रिपरिषद् अपने प्रशासकीय कार्य के लिए संसद् के प्रति उत्तरदायी है। इस प्रकार भारत में संसदीय शासन-प्रणाली की व्यवस्था की गई है, जिसमें मंत्रिमंडल प्रत्यक्ष रूप से लोकसभा के प्रति और अप्रत्यक्ष रूप से जनता के प्रति उत्तरदायी होता है।

भारतीय संविधान में संसदीय प्रणाली के शासन की व्यवस्था की गई है। यह शासन वेस्ट मिंस्टर इंग्लैंड पर आधारित है। इस प्रणाली के अंतर्गत यद्यपि राष्ट्रपति का विधिवत् निर्वाचन होता है और वह राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है, तथापि वह राष्ट्र पर शासन नहीं करता। वह राज्य का अध्यक्ष होता है। इसके विपरीत उसके मंत्रिमंडल का प्रधानमंत्री सरकार का अध्यक्ष होता है। सभी मंत्री संसद् के सदस्य होते हैं। यदि अपवादस्वरूप किसी ऐसे व्यक्ति को मंत्री बना दिया जाता है, जो संसद् का सदस्य नहीं होता तो उसे 6 माह के अंदर संसद् का सदस्य बनना पड़ता है। यदि 6 महीने में ऐसा नहीं हुआ तो उसे मंत्री पद छोड़ना पड़ता है।

लिखित संविधान

भारत का संविधान संविधान-सभा द्वारा लिखा गया है। इसमें नीति-निदेशक तत्त्व, मूल अधिकार, केंद्रीय तथा राज्य शासन, नागरिकता, लोक-सेवाएँ, निर्वाचन पद्धति आदि का विस्तृत विवेचन किया गया है।

भारतीय संविधान : कुछ रोचक तथ्य

संविधान-सभा के सदस्यों की संख्या—389
सभा की पहली बैठक—9 दिसंबर, 1946
संविधान स्वीकृति की अंतिम बैठक—26 नवंबर, 1949
संविधान बनाने में लगा समय—2 वर्ष 11 महीने 18 दिन
कुल संपन्न अधिवेशनों की संख्या—11
अधिवेशनों में उपस्थित लोगों की संख्या—53,000

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

संविधान-सभा पर कुल व्यय—63,96,726 रुपए

वैधानिक सलाहकार द्वारा तैयार संविधान के मसविदे की विषय-सूची 243 धाराएँ, 13 परिशिष्ट

मसविदा समिति द्वारा विधान परिषद् के सम्मुख प्रस्तुत विधान के मसविदे की विषय सूची—315 धाराएँ, 8 परिशिष्ट विधान

के मसविदे में मिले संशोधनों के नोटिस —7,635 (लगभग)

वास्तविक संशोधनों की संख्या—2,473

अंतिम रूप में स्वीकृत संविधान का स्वरूप—395 धाराएँ और 8 परिशिष्ट

नागरिकों के मूल अधिकारों का रक्षक

भारतीय संविधान के तीसरे भाग के अनुच्छेद-12 से 35 तक में नागरिकों के मूल अधिकार विवेचित हैं। ये मूल अधिकार हैं—समता का अधिकार, स्वतंत्रता का अधिकार, शोषण के विरुद्ध अधिकार, धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार, शिक्षा तथा संस्कृति संबंधी अधिकार तथा संवैधानिक प्रतिकारों का अधिकार। इन मूल अधिकारों की रक्षा का उत्तरदायित्व सर्वोच्च न्यायालय को सौंपा गया है।

मूल अधिकारों का उपयोग भारत के समस्त नागरिक और व्यक्ति करते हैं। इन अधिकारों का खंडन या उल्लंघन न्यायालय द्वारा दंडनीय है।

शक्ति विभाजन

यह भारतीय संविधान का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण लक्षण है। राज्य की शक्तियाँ केंद्रीय तथा राज्य सरकारों में विभाजित होती हैं। दोनों सत्ताएँ एक-दूसरे के अधीन नहीं होती हैं, वे संविधान से उत्पन्न तथा नियंत्रित होती हैं।

जनसत्तात्मकता

भारतीय संविधान लोकतंत्र के सिद्धांत पर जनता का, जनता द्वारा तथा जनता के हित के लिए रचा गया है। संविधान में स्पष्टत: यह उल्लिखित है कि भारतीय संघ एवं उसकी समस्त इकाइयों में अंतिम सत्ता जनता के हाथों में रहेगी।

एकल नागरिकता

भारतीय संविधान में यद्यपि दो राजतंत्र हैं—संघ और राज्य, किंतु नागरिकता एक ही है। यहाँ राज्यों की कोई नागरिकता नहीं है, केवल भारत की नागरिकता है। इसके विपरीत अमेरिका में दोहरी नागरिकता है—पहली अमेरिका की नागरिकता और दूसरी राज्य की नागरिकता। भारत में प्रत्येक नागरिक चाहे जहाँ निवास करे, किंतु वह भारतीय नागरिक ही कहलाएगा।

उत्तरदायी कार्यपालिका

भारत में राजनीतिक कार्यपालिका मंत्रिमंडल है। यह केंद्र में संसद् और राज्यों में राज्यों की व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी रहता है। संसद् या व्यवस्थापिकाओं में अविश्वास प्रस्ताव पास होने पर मंत्रिमंडल को पद-त्याग करना पड़ता है।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

वैविध्यपूर्ण लोकतंत्र का प्रतिष्ठापक

इन मूल अधिकारों के आधार पर भारत में लोकतंत्र को उसके निम्नलिखित स्वरूपों में स्थापित किया गया है—

- संविधान ने छुआछूत, सांप्रदायिकता आदि का अंत कर 'सामाजिक लोकतंत्र' की स्थापना की है।
- संविधान ने सार्वजनिक मताधिकार तथा निर्वाचन आदि विधि के सम्मुख सभी व्यक्तियों की समानता के द्वारा, शासन के सम्मुख प्रतिवेदन देने के अधिकारों को प्रदान कर देश में एक 'राजनीतिक लोकतंत्र' की स्थापना की है।
- संविधान ने नागरिकों को पेशा, उपजीविका, व्यापार या कारोबार करने तथा व्यय करने की स्वतंत्रता एवं व्यापार और आवागमन की अबाध स्वतंत्रता देकर देश में एक 'आर्थिक लोकतंत्र' की स्थापना की है।

नीति-निदेशक तत्त्व

भारत में लोककल्याणकारी राज्य की स्थापना करने के लिए नीति-निदेशक तत्त्वों का स्पष्ट उल्लेख संविधान में किया गया है। ये महत्त्वपूर्ण तत्त्व हैं—जीविका के पर्याप्त साधन, भौतिक संसाधनों का उचित बँटवारा, समान कार्य के लिए समान वेतन, नागरिकों के लिए रोजगार की व्यवस्था, 14 वर्ष तक के बालकों के लिए नि:शुल्क तथा अनिवार्य शिक्षा; बेरोजगारी, बुढ़ापे अथवा अभावों की स्थिति में राज्य की ओर से सहायता, सभी के लिए न्यूनतम मजदूरी की व्यवस्था, ग्राम-पंचायतों का संगठन, न्यायपालिका और कार्यकारिणी का पृथक्करण, ऐतिहासिक स्थानों की सुरक्षा आदि।

भारत के अतिरिक्त संभवत: एक या दो अन्य देशों के संविधानों में नीति-निदेशक तत्त्वों का समावेश पाया जाता है। भारतीय संविधान के रचनाकारों को नीति के निदेशक तत्त्वों को समाविष्ट करने की प्रेरणा आयरलैंड के संविधान से प्राप्त हुई थी। राज्य के नीति-निदेशक सिद्धांत समान महत्त्व वाले आर्थिक प्रजातंत्रवाद का पोषण करते हैं। ये निदेशक तत्त्व संविधान के चौथे भाग में निरूपित हैं।

लोक कल्याणकारी राज्य

भारतीय संविधान लोक कल्याणकारी राज्य की स्थापना के लिए कृतसंकल्प है।

वयस्क मताधिकार

डॉ. भीमराव अंबेडकर ने संविधान-सभा में कहा था कि संसदीय प्रणाली से हमारा अभिप्राय एक व्यक्ति एक वोट से है, जिस पर गंभीरतापूर्वक विचार करके संविधान के रचनाकारों ने सार्वतृक वयस्क मताधिकार (Universal Adult Franchise) की पद्धति अपनाई थी, ताकि प्रत्येक भारतीय को बिना किसी भेदभाव के मतदान के समान अधिकार प्राप्त हों।

इसीलिए भारतीय संविधान में बिना किसी भेदभाव के 18 वर्ष की अवस्था वाले प्रत्येक नागरिक—चाहे वह स्त्री हो या पुरुष को मताधिकार दिया गया है। सन् 1988 तक इस मताधिकार के लिए न्यूनतम उम्र 21 वर्ष थी।

सन् 1935 के सुधार कानून के अंतर्गत केवल 14 प्रतिशत भारतीयों को मताधिकार प्राप्त था, जबकि वर्तमान संविधान के अंतर्गत देश का प्रत्येक 18 वर्षीय स्त्री अथवा पुरुष नागरिक वयस्क मताधिकार पा लेता है। वह बिना किसी भेदभाव के स्थानीय निकायों, विधानमंडल, लोकसभा आदि के निर्वाचनों के लिए मतदान कर सकता है।

स्वतंत्र न्यायपालिका

भारतीय संविधान के अंतर्गत सबल, स्वतंत्र तथा समन्वित न्यायपालिका की व्यवस्था की गई है। सन् 1935 के

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

कानून द्वारा स्थापित संघीय न्यायालय राष्ट्रवादी दृष्टि से असंतोषकर था, क्योंकि उसे अपने निर्णयों के विरुद्ध इंग्लैंड की प्रिवी कौंसिल में अपील रोकने का अधिकार नहीं था। साथ ही संवैधानिक विषयों में भी उसका क्षेत्राधिकार पुनरीक्षण से मुक्त नहीं था। देश में व्यवहार तथा दंडन्याय की व्यवस्था से भी उसका कोई विशेष संबंध नहीं था। भारतीय संविधान के अंतर्गत इन समस्त दोषों का परिहार करते हुए, एक स्वतंत्र एवं सर्वोच्च न्यायालय की व्यवस्था की गई है। सभी नागरिकों को उचित न्याय दिलाने के लिए इसे कार्यपालिका से अलग और स्वतंत्र रखने का प्रयत्न किया गया है। इसके लिए स्थानांतरण, वेतन, नियुक्ति, वेतन-वृद्धि आदि के संबंध में संविधान में उपयुक्त अनुबंध दिए गए हैं। ऐसे ही उपबंध अधीनस्थ न्यायपालिका के बारे में भी हैं।

न्यायिक सर्वोच्चता

भारतीय संविधान में न्यायपालिका को सर्वोच्चता प्रदान की गई है। लेकिन यह सर्वोच्चता निर्धारित सीमाओं के अंतर्गत है।

त्रिस्तरीय सरकार

भारतीय संविधान इस मामले में अनूठा है कि यहाँ त्रिस्तरीय सरकार की व्यवस्था की गई है। इसमें पंचायत और नगरपालिका तथा राज्य और केंद्रीय स्तर पर सरकार की व्यवस्था है।

देश की एकता एवं अखंडता का द्योतक

सन् 1947 में भारत की स्वतंत्रता से पहले देश में लगभग 562 रियासतें थीं। इन रियासतों के राजा मनमाने तरीके से प्रजा पर शासन करते थे, जिसमें प्राय: अत्याचार या शोषण का बोलबाला था। उनमें आपसी फूट भी थी, जिसके कारण समय-समय पर विदेशी आक्रांताओं ने उन्हें अपना गुलाम भी बनाया।

अशोक, हर्षवर्धन, अकबर आदि सम्राटों के शासन में उनका राज्य चाहे कितना ही विस्तृत हो एवं शासन कितना भी प्रशंसनीय रहा हो, किंतु विभिन्न राज्य (प्रांत, रियासतें आदि) अपनी निजी शासन-व्यवस्था बनाए रखने के लिए स्वतंत्र थे।

भारतीय संविधान में ही पहली बार इन सभी प्रांतों, राज्यों, रियासतों आदि को एक केंद्रीय शासन के अंतर्गत एकीकृत किया गया। इस प्रकार भारत के प्रत्येक नागरिक को समान अधिकार प्राप्त हैं। भारतीय संविधान ने शताब्दियों से चले आ रहे राजतंत्र को इन सभी रियासतों का एकीकरण करके समाप्त कर दिया।

संशोधन में सरलता

भारतीय संविधान में संसद् को यह अधिकार दिया गया है कि विशेष या अधिकांश परिस्थितियों में अकेले ही, कुछ परिस्थितियों में राज्यों के परामर्श से वह सहज ही संशोधन कर सकती है।

आधारभूत मामलों में एकता

भारतीय संविधान के अधीन आधारभूत मामलों में एकता परिलक्षित होती है। यहाँ एक ही नगरपालिका है। सभी राज्यों में सिविल और दांडिक प्रक्रिया का आधार एक ही है। इसी प्रकार भारतीय प्रशासनिक सेवा, भारतीय पुलिस सेवा और भारतीय वन सेवा संघ तथा राज्यों—दोनों के लिए समान हैं।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

विश्व का सबसे बड़ा संविधान

यह विश्व के सभी संविधानों में सबसे बड़ा है। अमेरिकी संविधान में 5000 से भी कम और कनाडा के संविधान में लगभग 6500 शब्द हैं, जबकि भारतीय संविधान में 22 विभाग, 395 अनुच्छेद और 8 अनुसूचियाँ हैं। यह संविधान आकार में ही विशाल नहीं है, बल्कि केंद्रीय तथा प्रांतीय कार्यकारिणी, विधानमंडल तथा न्यायपालिका की शक्तियों आदि के निरूपण और उसमें नागरिकता, नागरिकों के मूल अधिकार, शासकीय नीति के निदेशक सिद्धांत आदि विभिन्न क्षेत्रों में भी विस्तृत है।

सबल केंद्रीय शासन

भारतीय संविधान के अंतर्गत कार्यकारिणी एवं विधायी अवशिष्ट शक्तियाँ संघीय शासन को सौंपी गई हैं। संविधान में केंद्रीय शासन को इतना सबल बनाने का प्रयास किया गया है कि दोहरी शासन प्रणाली होते हुए भी देश की एकता के लिए आवश्यक सभी मूल विषयों में समानता बनी रहे। एक ही संविधान द्वारा केंद्र और राज्यों की शासन-व्यवस्था संचालित करना अपने आपमें एक महत्त्वपूर्ण कार्य है। केंद्र और राज्य के कानून, न्याय, शासन तथा प्रशासन की प्रणालियाँ समान हैं।

अस्पृश्यता-निवारक

भारतीय संविधान के 17वें अनुच्छेद में समस्त नागरिकों को समान अधिकार देकर छुआछूत, ऊँच-नीच आदि के भेदभाव को मिटा दिया गया है। संविधान के अंतर्गत अस्पृश्यता को अपराध की श्रेणी में रखा गया है। हरिजनों को किसी दुकान, रेस्तराँ, होटल, सिनेमा, तालाब, कुआँ, सड़क आदि का उपयोग करने से नहीं रोका जा सकता। उनके किसी भी प्रकार के स्वतंत्र व्यवसाय या व्यापार में रुकावट भी नहीं डाली जा सकती। इस प्रकार छुआछूत के जिस भूत को नष्ट करने के लिए समाज-सुधारकों ने एड़ी-चोटी का जोर लगाया, उसे भारतीय संविधान ने समूल नष्ट कर दिया है।

सांप्रदायिकता समापक

ब्रिटिशकालीन भारत में जनता प्राय: दो वर्गों में विभक्त हो गई थी—हिंदू और मुसलमान। शासन में उनके लिए अलग-अलग निर्वाचन-क्षेत्र बनाए गए थे। इतना ही नहीं, हिंदू हिंदू को वोट देता था और मुसलमान मुसलमान को। हर प्रश्न पर वे सांप्रदायिक दृष्टिकोण से ही विचार करते थे। इसी कारण देश का विभाजन हुआ। अत: भारतीय संविधान में पृथक् निर्वाचन-क्षेत्रों और सुरक्षित स्थानों की प्रथा समाप्त कर दी गई। अब नागरिकता की दृष्टि से भारत में हिंदू और मुसलमान सभी समान हैं।

नर-नारियों की समानता का पोषक

भारतीय समाज में नारियाँ सदियों से शोषित और पीड़ित रही हैं। उन्हें प्राय: ऐसा कोई अधिकार नहीं दिया गया था, जिसके आधार पर वे अपना कोई स्वतंत्र अस्तित्व बनाए रख पातीं। भारतीय संविधान में उन्हें बिना किसी भेदभाव के पुरुषों के समान अधिकार दिए गए हैं।

अब संविधान के अनुसार, सरकारी नौकरियों में भी पुरुषों एवं नारियों में कोई भेदभाव नहीं बरता जाता। पुरुषों के समान महिलाओं को भी जन-प्रतिनिधि चुनने का वयस्क मताधिकार प्राप्त है। यहाँ तक कि महिलाओं के लिए पंचायतों तथा नगरपालिकाओं के निवचिन में एक-तिहाई सीटों पर आरक्षण है।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

अल्पसंख्यकों के अधिकारों का समर्थक

भारतीय संविधान में बहुसंख्य जातियों के अधिकारों की ही रक्षा नहीं की गई है, प्रत्युत् अल्पसंख्यकों के धार्मिक, सांस्कृतिक, आर्थिक तथा राजनीतिक अधिकारों की भी रक्षा की गई है। संविधान के अनुसार, भारत के प्रत्येक नागरिक को धर्म, जाति, वर्ण, मत, लिंग आदि के विचार के बिना बराबर के अधिकार दिए गए हैं।

नमनीयता

भारतीय संविधान अपरिवर्तनशील नहीं है; इसे बदलती हुई परिस्थितियों के अनुकूल बदला जा सकता है। इसमें विकास, फैलाव एवं परिवर्तनशीलता के सभी गुण विद्यमान हैं। संविधान की अधिकांश धाराएँ राष्ट्रपति, राज्य सरकारों अथवा संसद् के दो तिहाई बहुमत से बदली जा सकती हैं।

भारतीय संविधान की आलोचनाएँ

भारतीय संविधान में जहाँ इतनी विशेषताएँ हैं, वहीं विद्वानों ने इसमें कुछ कमियाँ भी खोजी हैं। इसी संदर्भ में आलोचकों ने भारतीय संविधान की तुलना ऐसी महिला से की है, जो अपने प्रेमियों के मनोभावों के अनुसार प्रशंसा अथवा निंदा पाती है। सामान्यत: भारतीय संविधान के निम्नलिखित कमजोर पक्ष उद्घाटित किए गए हैं—

मूल अधिकारों का खोखलापन

भारतीय संविधान में नागरिकों के लिए मौलिक अधिकारों की व्यवस्था है, लेकिन ये मूल अधिकार इतने प्रतिबंधों के दायरे में आबद्ध हैं कि उनका वास्तविक मूल्य ही समाप्त हो जाता है। इस रूप में ये अधिकार खोखले और केवल दिखावा प्रतीत होते हैं।

वकीलों का स्वर्ग

भारतीय संविधान को 'वकीलों का स्वर्ग' कहा जाता है, क्योंकि इसमें प्रयुक्त शब्दावली प्राय: अनेकार्थक है, जिसकी व्याख्या के लिए वकीलों की आवश्यकता पड़ती है। इसीलिए यह कहा जाता है कि भारतीय संविधान की रचना वकीलों द्वारा वकीलों के लिए की गई है। वकील संविधान के प्रावधानों की जैसी व्याख्या करते हैं, न्यायालय उसी के आधार पर निर्णय देते हैं। आलोचकों का यह भी कहना है कि इस संविधान को जानबूझकर इतना जटिल बना दिया गया है कि इसे समझने के लिए वकीलों की जरूरत पड़े।

इस प्रकार भारतीय संविधान में कुछ कमियाँ हैं, लेकिन ये उसकी महत्ता को कम नहीं करतीं। किसी भी देश का कोई संविधान हमेशा के लिए कारगर नहीं हो सकता। भारतीय संविधान भी इसका अपवाद नहीं है। समय के अनुसार इसमें भी परिवर्तन और संशोधन अपेक्षित हैं।

भारतीय संविधान वस्तुत: क्षमता का नहीं, बल्कि स्वतंत्रता का जीवंत दस्तावेज है। संविधान में 'कानून का राज्य' के सिद्धांत को मान्यता प्रदान करके मूलभूत कानूनों की शुचिता में वृद्धि की गई है। हमारा संविधान पर्याप्त लचीला है। यह सांस्कृतिक एवं सामाजिक विकास की संभावनाओं के पूर्ण अवसर प्रदान करता है। यह भारत के नागरिकों को समानता का अधिकार प्रदान करता है। यह भारत के नागरिकों को समानता का अधिकार प्रदान करता है।

इसके अंतर्गत शक्ति का विकेंद्रीकरण किया जा सकता है। इस संविधान की रचना उन सत्यनिष्ठ नेतृवर्ग के द्वारा की गई है, जो देश के भविष्य के प्रति सतत् जागरूक थे।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

राज्यों की स्वायत्तता पर नियंत्रण

भारतीय संविधान में राज्य सरकारों की अपेक्षा केंद्र सरकार को अधिक शक्तियाँ प्रदान की गई हैं, जिससे वह संघात्मक से अधिक एकात्मक हो गया है। भारतीय संविधान पर टिप्पणी करते हुए डॉ. जेनिंग्स का कथन है कि यह संविधान ब्रिटिश शासन के विरुद्ध एक प्रतिक्रियात्मक संविधान है। जिस प्रकार अमेरिकी संविधान जॉर्ज तृतीय के विरुद्ध जनप्रतिक्रियाओं का प्रतिफल था, उसी प्रकार भारतीय संविधान बॉल्डविन, मैक्डोनाल्ड, चेंबरलेन, चर्चिल आदि के प्रति प्रतिक्रियाओं की देन है।

अनावश्यक विशालता

विभिन्न समितियों के परामर्श और लंबे समय तक चलनेवाले विचार- विमर्शों के परिणामस्वरूप संविधान अनावश्यक रूप से विशाल हो गया है। इसमें अनेक उपबंधों और धाराओं का कोई विशेष औचित्य नहीं है। इससे मुकदमेबाजी को प्रोत्साहन मिलता है, जैसा कि भारतीय अदालतों में बढ़ते मुकदमों से जाहिर होता है।

राष्ट्रपति बनाम तानाशाह

भारतीय संविधान में राष्ट्रपति को व्यापक संकटकालीन अधिकार दिए गए हैं, जिससे राष्ट्रपति के पद में तानाशाही तत्त्वों का समावेश हो गया है। शंकर राव देव के शब्दों में, ''राष्ट्रपति पद में जर्मन संविधान के समान तानाशाही शक्तियाँ निहित हैं।''

नीति-निदेशक तत्त्वों की निस्सारता

राज्यों के नीति-निदेशक तत्त्वों को व्यावहारिक रूप में लागू करना आसान नहीं है। कुछ मामलों में तो न्यायालय भी असमर्थता जाहिर कर बैठते हैं। अत: ये तत्त्व व्यर्थ और निस्सार हैं।

भारतीयता का अभाव

कुछ आलोचकों की दृष्टि में भारतीय संविधान भारतीयता से सर्वथा रहित है, क्योंकि इसकी आत्मा सन् 1935 के अधिनियम में बसती है और इसके शरीर के लिए इंग्लैंड, अमेरिका, फ्रांस, कनाडा आदि के संविधानों से मसाला जुटाया गया है।

अनावश्यक केंद्रीयकरण

भारतीय संविधान में अनावश्यक रूप से शासन का केंद्रीयकरण किया गया है, जो संघ के सिद्धांतों के प्रतिकूल है।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

5. भारतीय संविधान की प्रकृति

जिस समय हमारे संविधान की रचना की जा रही थी, उस समय यहाँ अनेक देसी रियासतें थीं, जिन्हें एक ही शासन-व्यवस्था के अंतर्गत सम्मिलित करना जटिल समस्या थी। इस समस्या के समाधान हेतु संविधान में अनेक उपबंधों की व्यवस्था की गई।

इस संविधान के अनुसार, संपूर्ण भारत को एक केंद्र से शासित करने की व्यवस्था करके एकीकरण का प्रयास किया गया है। भिन्नताओं वाले इस देश में एकात्मक शासन की सफलता की संदिग्धता समझते हुए संविधान के रचनाकारों ने संविधान को ऐसा रूप दिया है कि वह स्वरूप में एकात्मक न होते हुए भी आत्मा में इतना केंद्रीयकृत हो गया कि विभिन्नताओं पर कुशलता से एकात्मक शासन की व्यवस्था हो सके।

इस प्रकार भारत के संविधान में एकात्मक और संघात्मक—दोनों प्रकार के संविधानों का सम्मिश्रण हो गया है। इसीलिए प्राय: यह प्रश्न उठाया जाता है कि भारत का संविधान संघात्मक है या एकात्मक?

संघात्मकता के पोषक तत्त्व

भारतीय संविधान की संघात्मकता को पोषित करने वाली प्रमुख बातें इस प्रकार हैं—● अन्य संघों के संविधानों की तरह भारतीय संविधान अपने देश में सर्वोच्च स्थान रखता है अर्थात् संघ या केंद्र और इकाइयाँ इसी संविधान की धाराओं का पालन करने के लिए बाध्य हैं। वे स्वेच्छा से कार्य नहीं कर सकतीं।

● संघ और राज्यों की व्यवस्थापिकाओं द्वारा बने कानून इस संविधान से मेल खाने चाहिए, अन्यथा उन्हें न्यायपालिका द्वारा अवैध घोषित किया जा सकता है।

● अन्य संघों के संविधानों की तरह भारतीय संविधान में एक केंद्रीय (संघीय) सरकार तथा 28 या अधिक राज्यों (इकाइयों) की सरकारों की व्यवस्था की गई है।

● अन्य संघों की तरह केंद्रीय सरकार अपने क्षेत्र में स्वतंत्र है और इकाइयाँ अपने क्षेत्र (राज्यक्षेत्र) में स्वतंत्र हैं।

● संघ सरकार को संघ सूची, समवर्ती सूची में तथा राज्य सरकारों को राज्य सूची में विधि-रचना का अधिकार दिया गया है। यद्यपि राज्यों को समवर्ती सूची में से विधि-रचना का अधिकार दिया गया है, किंतु संघ से विरोध की अवस्था में संघ को ही प्राथमिकता मिलेगी। अवशिष्ट या शेष विषय केंद्र या संघ के अधीन हैं। इस दृष्टि से भारतीय संघ कनाडा के संघ से समानता रखता है।

● भारत में एक सर्वोच्च और स्वतंत्र न्यायालय के रूप में उच्चतम न्यायालय की स्थापना की गई है, जो संघ और राज्यों के विवादों को दूर करता है। राज्यक्षेत्र में संघ हस्तक्षेप नहीं कर सकता।

संघात्मकता के प्रमुख कारण

● एकात्मक संविधान ब्रिटेन तथा फ्रांस सरीखे छोटे देशों के लिए उपयुक्त होता है, किंतु संघात्मक संविधान भारत जैसे विशाल देश के लिए उपयुक्त होता है। इसीलिए संविधान के रचनाकारों ने संघीय व्यवस्था को उपयुक्त समझा।

● भारत में संस्कृतियों, भाषाओं, आचार-विचारों की दृष्टि से विभिन्नताएँ हैं। एक संघ में ही स्वायत्तता देकर इनकी रक्षा की जा सकती है।

● देश के विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न आर्थिक, सामाजिक विशेषताएँ हैं, जिनका विकास भी इकाइयों को अधिकाधिक स्वायत्तता देकर ही किया जा सकता है।

● एक विशाल देश में एकात्मक शासन निरंकुश हो सकता है और देश की सारी शक्ति एक केंद्र में केंद्रित हो

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

सकती है, जबकि संघात्मक संविधान केंद्र और एककों में देश को विभक्त कर इस तानाशाही और निरंकुशता से देश की रक्षा करता है।

भारतीय संविधान की एकात्मकता के पोषक तत्त्व

संघात्मकता के इन बिंदुओं के परिप्रेक्ष्य में जहाँ भारतीय संविधान संघात्मक प्रतीत होता है, वहाँ इसमें कुछ ऐसे तत्त्व भी विद्यमान हैं, जिनके आधार पर यह एकात्मक लगता है। ये प्रमुख तत्त्व इस प्रकार हैं—

- राष्ट्रपति ही राज्यों के वैधानिक प्रधान को नियुक्त करता है।
- राज्यपालों को अधिकांश परिस्थितियों में राष्ट्रपति के प्रति अपने उत्तरदायित्वों का निर्वाह करना पड़ता है।
- संघ सरकार को संघ सूची और अवशिष्ट सूची के विषयों से संबंधित कानून बनाने के अधिकार प्राप्त है, जिनमें प्राय: समस्त महत्त्वपूर्ण विषय आ जाते हैं। साथ ही समवर्ती सूची में भी उसे प्राथमिकता प्राप्त है। राज्यों की तुलना में राज्य सूची में भी संघ सरकार को साधारण स्थितियों में अधिकार प्राप्त हो जाते हैं, यदि राज्य विधानमंडल दो तिहाई सदस्यों के बहुमत से इस आशय का प्रस्ताव पारित कर दे कि संसद् द्वारा राज्य सूची के अमुक विषय पर विधि-रचना करने से राष्ट्रीय हित होगा।
- राज्यों को 'स्वायत्तता' नाम के लिए ही दी गई है। वे वास्तव में संघ या केंद्र के अधीन हैं।
- संविधान में निम्नलिखित विषयों में एकरूपता रखी गई है—
- भारतीय संविधान के अंतर्गत एक ही न्यायपालिका की व्यवस्था है, जो संपूर्ण देश के नागरिकों को समान रूप से न्याय प्रदान करती है। ● भारतीय संविधान के अंतर्गत एक ही लोक सेवा आयोग की व्यवस्था है, जो संपूर्ण देश के लिए प्रशासनिक पदों पर नियुक्तियाँ करता है।
- भारतीय संविधान के अंतर्गत एक ही निर्वाचन आयोग की व्यवस्था है, जो संपूर्ण देश में विभिन्न निर्वाचन कार्य संपन्न कराता है।
- भारतीय संविधान के अंतर्गत एक ही नियंत्रक महालेखा परीक्षक है, जो केंद्र और समस्त राज्यों की आय-व्यय की व्यवस्था की जाँच करता है।

संविधान के रचनाकारों का विचार

हमारे संविधान के प्रथम अनुच्छेद में कहा गया है कि भारत राज्यों का संघ होगा। प्रारूप समिति के अध्यक्ष डॉ. भीमराव अंबेडकर ने संविधान का प्रारूप संविधान-सभा के अध्यक्ष के समक्ष प्रस्तुत करते हुए एक टिप्पणी में लिखा था—''प्रारूप समिति ने 'फेडरेशन' शब्द की जगह 'यूनियन' शब्द रखा है। नामों के प्रयोग से किसी भी वस्तु का स्वरूप नहीं बदल जाता, किंतु इस (यूनियन) शब्द को अपनाने का कारण यह है कि ब्रिटिश नॉर्थ अमेरिका एक्ट, 1867 की प्रस्तावना का अनुकरण करते हुए 'यूनियन' शब्द का भारतीय संविधान में प्रयोग किए जाने के लाभों को हमने अधिक देखा, यद्यपि भारतीय संविधान का स्वरूप संघात्मक ही रहेगा।''

इस प्रकार संविधान के रचनाकारों ने भारतीय संविधान को संघ-संविधान का ही रूप देने का प्रयास किया है।

भारतीय संविधान के रचनाकारों के द्वारा पहले ही भारत में संघ-शासन की उपयुक्तता महसूस की जा चुकी थी। सन् 1930 में प्रथम गोलमेज सम्मेलन में सर तेजबहादुर सपूर के आमंत्रण पर देसी रियासतों ने भारतरूपी संघ में विलीन होने की इच्छा व्यक्त की थी।

बीकानेर के महाराज ने एकात्मक शासन को इस विशाल देश के लिए अनुपयुक्त देखते हुए संघ-शासन के लाभों को स्वीकार किया था। सन् 1930 में मुसलिम प्रतिनिधियों (जिन्ना और मुहम्मद शफी) ने भी संघ की उपयोगिता

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

स्वीकार की थी। सन् 1935 के भारत अधिनियम में इसीलिए संघ की ही रूपरेखा रखी गई थी।

● भारतीय संविधान के अंतर्गत उच्चतम न्यायालय द्वारा घोषित नियम और आदेश समग्र देश पर समान रूप से लागू होते हैं।

● भारतीय संविधान के अंतर्गत राष्ट्रपति को वित्तीय और युद्धकालीन संकट के समय संपूर्ण देश में एकात्मक राज्य की स्थापना का अधिकार दिया गया है।

● राष्ट्रपति केंद्रीय मंत्रिमंडल के परामर्श पर कभी भी किसी राज्य का शासन अपने हाथों में ले सकता है। ऐसी स्थिति में केंद्रीय सरकार ही उस राज्य का शासन चलाएगी और संसद् ही उस राज्य के लिए विधि-रचना करेगी। यहाँ उल्लेखनीय है कि किसी भी राज्य में संविधान का अतिक्रमण होने या शासन-व्यवस्था लड़खड़ाने पर केंद्रीय मंत्रिमंडल राष्ट्रपति को राज्य विधानसभा भंग करने का परामर्श दे सकता है।

● राज्यों के विधानमंडलों की विधि-रचना संबंधी भी कुछ सीमाएँ हैं। राज्यों के विधानमंडलों में निम्नलिखित विधेयक प्रस्तुत करने से पहले राष्ट्रपति की स्वीकृति प्राप्त करना अनिवार्य है—

● जब विधेयक समवर्ती सूची के उस विषय पर हो, जहाँ संसद् द्वारा विधि-रचना कर दी गई हो और राज्य का यह विधेयक संसद् की उस विधि के विरोध में हो;

● जब विधेयक नागरिकों की संपत्ति का अधिग्रहण करने से संबंधित हो;

● जब विधेयक अंतरराज्यीय व्यापार पर प्रतिबंध लगाने से संबंधित हो;

● जब विधेयक नागरिक जीवन के लिए अनिवार्य घोषित वस्तुओं पर कर लगाना चाहता हो।

एकात्मकता के प्रमुख कारण

● संविधान के रचनाकार देश में विभाजक प्रवृत्तियों को रोककर एक सुदृढ़ शासन की स्थापना करना चाहते थे। इसलिए देश में सांप्रदायिकता, भाषाओं और संस्कृतियों के विरोध, आचारों की भिन्नता को बढ़ावा देनेवाली दुष्प्रवृत्तियों से बचाने के लिए संविधान में एकात्मक विशेषताओं का समावेश कर दिया गयाहै।

● संविधान के रचनाकारों ने द्वितीय महायुद्ध, भारत-विभाजन और उसके फलस्वरूप भयंकर रक्तपात आदि की भयावहता देखी थी, उनकी विकटता का अनुभव किया था। अत: उन्होंने इन परिस्थितियों की पुनरावृत्ति को रोकने के लिए संकटकालीन अधिकारों के रूप में एकात्मक संविधान के तत्त्वों का समावेशकिया।

एकात्मकता एवं संघात्मकता की दृष्टि से विदेशी संविधानों से तुलना

● संघ संविधान के आदर्श माने जानेवाले अमेरिकी और स्विस संघों की तरह भारत का संविधान इकाइयों के स्वतंत्र समझौते का परिणाम नहीं है। यह एक बड़े एकात्मक राज्य को इकाइयों में विभक्त करके बनाया गया है, न कि स्वतंत्र राज्यों को एक संघ में गठित करके।

● अमेरिकी संघ के समान भारत में दोहरी नागरिकता न रखकर इकहरी नागरिकता रखी गई है। इस दृष्टि से भारत ने कनाडा के संविधान का अनुकरण किया है।

● अमेरिका, ऑस्ट्रेलिया और स्विट्जरलैंड में राज्यों को कुछ सीमाओं के अंतर्गत अपना-अपना संविधान बनाने की स्वतंत्रता है, किंतु भारत में राज्यों को ऐसा अधिकार नहीं है।

संविधान के संबंध में विभिन्न विद्वानों के विचार

सभारतीय संविधान में संघात्मक एवं एकात्मक दोनों प्रकार की विशेषताओं को देखकर विभिन्न देसी-विदेशी

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

विद्वान् भी एकमत नहीं हैं कि इसे किस प्रकार का संविधान माना जाए। इस संदर्भ में प्रो. ह्वसीयर का कथन है, ''कोई भी संविधान पूर्णतया संघात्मक नहीं होता। अमेरिकी संघ में भी केंद्रीयकरण और एकात्मकता के तत्त्व हैं। इस दृष्टि से भारत भी न तो पूर्णत: संघात्मक है, न पूर्णतया एकात्मक।''

डॉ. घोषाल का मत है कि संघ संविधानों में एक ओर तो ऑस्ट्रेलिया जैसे देश हैं, जो संघ के सिद्धांतों का कठोरता से पालन करते हैं तथा दूसरी ओर कनाडा जैसे देश हैं, जिन्होंने अपने संघ संविधान में एकात्मकता के काफी तत्त्व रखे हैं और इन दो 'अति' स्वरूपों के बीच भारतीय संघ का स्थान है।

डॉ. मुखर्जी के अनुसार, ''भारतीय संविधान में तो संघात्मक तत्त्व हैं ही नहीं, भारतीय संविधान के आरंभ के 4 अनुच्छेदों में ही यह स्पष्ट कर दिया गया है कि भारतीय संविधान एकात्मक संविधान है। जहाँ कहीं भी एककों और केंद्र के बीच अधिकार-क्षेत्रों का विभाजन किया गया है या जहाँ कहीं भी एककों का अस्तित्व मान्य किया गया है, वह केवल सुभीते के लिए ही है। जहाँ केंद्र को कठिनाई महसूस होती है, वहीं इन एककों की स्वायत्तता कम, स्थगित या समाप्त कर दी जाती है।''

संविधान प्रारूप समिति तथा सर्वोच्च न्यायालय ने इसे संघात्मक संविधान माना है, परंतु विद्वानों में मतभेद है। अमेरिकी विद्वान् इसे 'छद्म-संघात्मक संविधान' कहते हैं, हालाँकि पूर्वी संविधानवेत्ता कहते हैं कि अमेरिकी संविधान ही एकमात्र संघात्मक संविधान नहीं हो सकता। संविधान का संघात्मक होना उसमें निहित संघात्मक लक्षणों पर निर्भर करता है, किंतु माननीय सर्वोच्च न्यायालय ने इसे संघात्मक माना है।

वस्तुत: भारत का संविधान देखने में संघात्मक है, परंतु उसकी आत्मा एकात्मक है। इसीलिए डॉ. भीमराव अंबेडकर ने कहा है कि भारतीय संविधान कठोर रूप से संघात्मक नहीं है। डॉ. ह्विरे ने इसे 'अद्‌र्धसंघात्मक' कहा है।

- भारत में अमेरिकी, स्विस या ऑस्ट्रेलियन संघों के समान शासन में दोहरेपन का अभाव है—यहाँ एक न्याय-व्यवस्था, एक लोक सेवा आयोग रखे गए हैं तथा ऐसे विषयों में राज्य के सेवकों को केंद्रीय शासन के आदेशों का भी पालन करना पड़ता है।
- अमेरिकी, स्विस और ऑस्ट्रेलियाई संघों में इकाइयों को द्वितीय सदन में समान प्रतिनिधित्व प्राप्त है, किंतु भारत में राज्यों को उनकी जनसंख्या के अनुपात से राज्य सभा में प्रतिनिधित्व दिया गया है।
- अन्य संघों के समान भारत में राष्ट्रपति के निर्वाचन की विधि नहीं रखी गई है। संयुक्त राज्य अमेरिका में जनता द्वारा निर्वाचित निर्वाचक मंडल राष्ट्रपति का निर्वाचन करता है, किंतु भारत में संसद् और विधानसभाओं के निर्वाचित सदस्य राष्ट्रपति का निर्वाचन करते हैं।
- स्विस और अमेरिकी संविधानों में संशोधन की दृष्टि से जितनी कठोरता पाई जाती है, उतनी कठोरता का अभाव भारत में है। भारत में संविधान अत्यधिक लचीला या परिवर्तनशील है, क्योंकि भारत में अधिकांश स्थितियों में संसद् ही उपस्थित सदस्यों के दो तिहाई बहुमत से और कुल सदस्य-संख्या के साधारण बहुमत से संविधान में संशोधन कर सकती है।
- भारत में अवशिष्ट या शेष विषय केंद्रीय सरकार को दिए गए हैं, किंतु अमेरिका में ये विषय राज्यों को दिए गए हैं। इसी प्रकार समवर्ती सूची के विषयों में संघ और राज्यों के बीच संघर्ष होने पर संघ को प्रधानता दी गई है।
- भारत में संसद् को भारत का मानचित्र बदलने का अधिकार है, उसे नए क्षेत्रों के प्रवेश की अनुमति, पुराने राज्यों को मिलाने, उनकी सीमा में परिवर्तन का व्यापक अधिकार है। इनमें उसे केवल राज्यों की औपचारिक स्वीकृति लेनी पड़ेगी।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

- भारत में अभी 7 केंद्रशासित क्षेत्र मौजूद हैं।

❑

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

6. उद्देशिका

संविधान के उद्देश्यों को प्रकट करने हेतु प्राय: उनसे पहले एक प्रस्तावना प्रस्तुत की जाती है। भारतीय संविधान की प्रस्तावना अमेरिकी संविधान से प्रभावित तथा विश्व में श्रेष्ठ मानी जाती है। प्रस्तावना के माध्यम से भारतीय संविधान का सार, अपेक्षाएँ, उद्देश्य, उसका लक्ष्य तथा दर्शन प्रकट होता है। प्रस्तावना यह घोषणा करती है कि संविधान अपनी शक्ति सीधे जनता से प्राप्त करता है। इसी कारण यह 'हम भारत के लोग'—इस वाक्य से प्रारंभ होती है। 'केहर सिंह बनाम भारत संघ' के वाद में कहा गया था कि संविधान-सभा भारतीय जनता का सीधा प्रतिनिधित्व नहीं करती। अत: संविधान विधि की विशेष अनुकंपा प्राप्त नहीं कर सकता, परंतु न्यायालय ने इसे खारिज करते हुए संविधान को सर्वोपरि माना है, जिस पर कोई प्रश्न नहीं उठाया जा सकता है।

उद्देशिका संविधान की कुंजी है। भारतीय संविधान में उद्देशिका की वही भूमिका है, जो किसी भी पुस्तक के आरंभ में उसकी प्रस्तावना या भूमिका की होती है। इससे संविधान का रूप स्पष्ट होता है—साथ ही उसके उद्देश्य, क्षेत्र और आधार भी। अन्य शब्दों में जिन उद्देश्यों से संविधान की रचना की जाती है, वे संविधान की उद्देशिका या प्रस्तावना में निहित रहते हैं।

विश्व के प्राय: सभी संविधानों में संक्षिप्त उद्देशिका होती है, जिसके द्वारा संविधानों के रचनाकार उन आधारभूत आदर्शों, आस्थाओं और प्रेरणाओं को वाणी देने का प्रयास करते हैं, जिन पर राष्ट्र की नींव रखनी होती है। इस दृष्टि से संविधान रूपी शरीर की आत्मा होती है—उसकी उद्देशिका। भारतीय संविधान के आरंभ में भी उद्देशिका (प्रस्तावना) दी गई है। शब्द-चयन एवं गरिमा की दृष्टि से भारतीय संविधान की यह उद्देशिका विश्व के संवैधानिक साहित्य में अद्वितीय है। उच्चतम न्यायालय ने इसे 'संविधान के रचनाकार के आशय को स्पष्ट करने वाली कुंजी' कहा है।

संविधान का प्रमुख अंग

भारतीय संविधान की यह उद्देशिका संविधान का अंग है या नहीं—इस विषय पर कुछ वर्षों तक पर्याप्त वाद-विवाद और मतवैभिन्य रहा है। यहाँ तक कि न्यायालय को भी इस मामले में अपनी राय देनी पड़ गई थी। बेरूबाड़ी के मामले में न्यायाधीश गजेंद्र गडकर ने कहा था कि उद्देशिका संविधान का अंग नहीं है, क्योंकि वह विधानमंडलों या राज्य के अन्य अंगों को कोई महत्त्वपूर्ण शक्तियाँ प्रदान नहीं करती, किंतु 12 दिसंबर, 1968 को फीरोज गांधी स्मारक व्याख्यानमाला के अंतर्गत व्याख्यान देते हुए न्यायाधीश एम. हिदायतुल्ला ने कहा था कि भारतीय संविधान की उद्देशिका समग्र संविधान की आत्मा है, शाश्वत और अपरिवर्तनीय है। इसमें संवैधानिक जीवन के वैविध्य का उल्लेख मिलता है और भविष्य- दर्शन का भी।

इसी प्रकार भारती चंद बनाम मैसूर राज्य के मामले में उच्चतम न्यायालय ने अपना निर्णय दिया था कि नीति-निदेशक तत्त्वों तथा मूल अधिकारों को भी उद्देशिका में प्रतिष्ठित उद्देश्यों के आलोक में अधिक अच्छी तरह समझा जा सकता है।

यहाँ यह गौरतलब है कि संविधान-सभा में संविधान के अन्य विषयों की तरह उद्देशिका पर भी लंबी बहस हुई थी, तभी उसे स्वीकार किया गया था। उद्देशिका पर अंतिम मतदान कराते समय संविधान-सभा के अध्यक्ष डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने कहा था—''प्रस्ताव यह है कि उद्देशिका संविधान का अंग बने।'' ऐसा प्रतीत होता है कि बेरूबाड़ी के मामले में उच्चतम न्यायालय ने इन तथ्यों की ओर ध्यान नहीं दिया था। संभवत: इसीलिए बाद में

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश गजेंद्र गडकर का निर्णय संशोधित करना पड़ा।

इसी प्रकार केशवानंद भारती बनाम केरल राज्य (1973)4 एससीसी 225 के मामले में अधिकतर न्यायाधीशों ने संविधान-सभा के वाद-विवाद का हवाला देते हुए उद्देशिका को संविधान का अंग घोषित किया था।

उच्चतम न्यायालय के शब्दों में, ''हमारे संविधान का प्रासाद उद्देशिका में वर्णित बुनियादी तत्त्वों पर खड़ा है। यदि इसमें से किसी भी तत्त्व को हटा दिया जाए तो सारा ढाँचा ही ढह जाएगा और संविधान वही नहीं रह जाएगा यानी अपनी पहचान खो देगा।'' समग्रत: उद्देशिका संविधान का प्रमुख अंग है। उसमें समाविष्ट बुनियादी तत्त्वों या उसकी विशेषताओं को अनुच्छेद-368 के अधीन किसी संशोधन द्वारा बदला नहीं जा सकता।

उद्देशिका का आधार

भारतीय संविधान की उद्देशिका का आधार पं. जवाहरलाल नेहरू द्वारा 13 दिसंबर, 1946 को संविधान-सभा की बैठक के 5वें दिन 'उद्देश्य-प्रस्ताव' के रूप में प्रस्तुत किया गया था। वस्तुत: यह प्रस्ताव भारतीय स्वतंत्रता का घोषणा-पत्र था।

उद्देशिका का आरंभिक स्वरूप

फरवरी, 1948 में प्रारूप समिति ने उद्देशिका पर पुन: विचार-विमर्श किया और निम्नलिखित रूप में उद्देशिका को स्वीकार किया—

''हम भारत के लोग, भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्वसंपन्न लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए तथा उसके समस्त नागरिकों को सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए तथा उन सबमें व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान-सभा में आज तारीख (मई, 1948) को एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत और अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।''

17 अक्तूबर, 1949 को संविधान-सभा ने उद्देशिका के प्रारूप पर पुन: विचार किया। तमाम वाद-विवादों के बाद सभा ने उद्देशिका को बिना किसी परिवर्तन के स्वीकार कर लिया। हाँ, उसमें 'मई, 1948' के स्थान पर '26 नवंबर, 1949' (मिति मार्गशीर्ष शुक्ल सप्तमी संवत् 2006 विक्रमी) कर दिया गया।

नेहरू के शब्दों में, ''प्रस्ताव होते हुए भी यह प्रस्ताव से बहुत ज्यादा है। यह एक घोषणा है, यह एक दृढ़ निश्चय है, यह एक प्रतिज्ञा और दायित्व है और हमें विश्वास है कि यह एक व्रत है...यह प्रस्ताव टूटे-फूटे शब्दों में संसार को बताना चाहता है कि हमने इतने दिनों से किस बात की अभिलाषा रखी थी, हमारा स्वप्न क्या था।''

सभा नेहरू का यह उद्देश्य-प्रस्ताव तमाम वाद-विवादों के बाद 22 जनवरी, 1947 को संविधान सभा द्वारा स्वीकार कर लिया गया था।

उद्देशिका का वर्तमान स्वरूप

हम भारत के लोग, भारत को एक संपूर्ण प्रभुत्वसंपन्न समाजवादी, धर्मनिरपेक्ष, लोकतंत्रात्मक गणराज्य बनाने के लिए, तथा उसके समस्त नागरिकों को :

सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय, विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म और उपासना की स्वतंत्रता, प्रतिष्ठा और अवसर की समता प्राप्त कराने के लिए, तथा उन सबमें व्यक्ति की गरिमा और (राष्ट्र की एकता एवं अखंडता) सुनिश्चित करने वाली बंधुता बढ़ाने के लिए दृढ़ संकल्प होकर अपनी इस संविधान-सभा में आज तारीख

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

26 नवंबर, 1949 ई. (मिति मार्गशीर्ष शुक्ल सप्तमी, संवत् 2006 विक्रमी) को एतद्द्वारा इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।

संघ संविधान के आरंभिक प्रारूप में उद्देशिका को औपचारिक रूप में ही रखा गया था; जैसा कि बेनेगल नरसिंह राव द्वारा 30 मई, 1947 को संघ संविधान के संबंध में दिए गए इस ज्ञापन से ध्वनित होता है—''हम भारत के लोग, जो समान हित के लिए प्रयत्नशील हैं, एतद्द्वारा अपने चुने हुए प्रतिनिधियों के माध्यम से यह संविधान अधिनियमित, अंगीकृत और आत्मार्पित करते हैं।'' लेकिन जब 3 जून, 1947 को कैबिनेट मिशन योजना के आधार पर भारत का विभाजन लगभग तय हो चुका था, तब एक बार पुन: 8 जून, 1947 को संघ संविधान और प्रांतीय समितियों की उपसमिति ने उद्देश्य-प्रस्ताव में आवश्यक संशोधन पर विचार करके यह तय किया कि भारत-विभाजन की योजना के कार्यान्वयन के बाद ही अंतिम निर्णय लिया जाए। 18 जुलाई, 1947 को नेहरू ने संविधान-सभा के सदस्यों के बीच अपने वक्तव्य में कहा कि एक प्रकार से उद्देशिका उद्देश्य-प्रस्ताव में आ ही गई है, लेकिन देश की बदली हुई परिस्थितियों में उसमें कुछ परिवर्तन अपेक्षित हैं।

एक प्रश्न

यह संविधान सभा द्वारा 28 नवंबर को स्वीकृत उद्देशिका का मूल स्वरूप है, जिसमें 'संपूर्ण प्रभुत्व-संपन्न 'लोकतंत्रात्मक गणराज्य' तथा 'राष्ट्र की एकता' वाक्यांश 42वें संविधान संशोधन के अंतर्गत 1976 में प्रतिस्थापित किए गए थे। भारत सरकार द्वारा प्रकाशित 'भारत का संविधान' तथा एतत् संबंधी प्राय: सभी ग्रंथों में उद्देशिका का उक्त स्वरूप ही दिया गया है, जिसमें एक तकनीकी दोष की ओर प्राय: विद्वानों का ध्यान नहीं गया है।

गौरतलब है कि इस उद्देशिका में उद्देशिका का उक्त स्वरूप 26 नवंबर, 1949 को स्वीकृत हुआ था, जैसा कि उद्देशिका के अंतिम अंश में उल्लेख भी है, जबकि इसके संशोधित पदबंध 'समाजवादी', 'धर्मनिरपेक्ष' और 'अखंडता' 1976 में जोड़े गए हैं। फिर 26 नवंबर, 1949 को संविधान-सभा इन्हें कैसे उद्देशिका में सम्मिलित कर सकती थी?

उद्देशिका की व्याख्या

उद्देशिका की शब्दावली में प्राच्य एवं पाश्चात्य परंपराओं का निचोड़ समाया हुआ है, जो प्रायोगिक दृष्टि से सार्वभौमिक है। इसीलिए इसे भारतीय संविधान का सार अथवा दर्शन कहा गया है। इसमें जिन तथ्यों, सिद्धांतों एवं आदर्शों का उल्लेख हुआ है, वे समग्र संविधान में अंतर्व्याप्त हैं।

भारतीय संविधान की उद्देशिका में पहला स्थान सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय को दिया गया है; तत्पश्चात् धर्म और उपासना की स्वतंत्रता; प्रतिष्ठा और अवसर की समता आदि को। उद्देशिका के ये तत्त्व आधुनिक युग की फ्रांसीसी, अमेरिकी और रूसी—तीन महान् क्रांतियों से प्रभावित हैं। फ्रांसीसी क्रांति में स्वतंत्रता, समानता और बंधुता पर विशेष बल दिया गया था; जबकि अमेरिकी क्रांति में राजनीतिक तथा व्यक्तिगत स्वतंत्रता पर और रूसी क्रांति में आर्थिक समानता पर विशेष बल दिया गया था। उद्देशिका का वास्तविक महत्त्व समझने के लिए यह आवश्यक है कि उसके कुछ मुख्य शब्दों और पदों का विश्लेषण करके यह देखा जाए कि संविधान के विविध उपबंधों में उन्हें कहाँ तक स्थान दिया गया है।

'हम भारत के लोग'

उद्देशिका का प्रारंभिक वाक्यांश है—'हम भारत के लोग', जो संपूर्ण भारत के लोगों का प्रतिनिधित्व करता है

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

अर्थात् हम सब भारत के लोग हैं, किसी राज्य के नहीं। इसीलिए हम एक हैं। इससे यह संकेत मिलता है कि भारतीय संविधान की रचना राज्यों ने अथवा राज्यों के लोगों ने नहीं की है, बल्कि इसमें संपूर्ण भारत के लोगों की सामूहिक क्षमता प्रतिफलित हुई है। इस शब्दावली की सार्थकता संविधान के अनेक उपबंधों से प्रमाणित होती है।

इस शब्दावली का एक अर्थ यह भी है कि जनतंत्र की समग्र शक्ति जनता में निहित है और संविधान जनता के प्राधिकार पर आधारित है। इस संविधान को सन् 1935 के भारतीय शासन अधिनियम की तरह किसी विदेसी सत्ता ने आरोपित नहीं किया, बल्कि भारत की जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों ने स्वेच्छा से 'अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित' किया है।

संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान की उद्देशिका में भी 'संयुक्त राज्यों के लोग' वाक्यांश का प्रयोग किया गया है, जिससे यह ध्वनित होता है कि अमेरिका के लोग विभिन्न राज्यों के लोग हैं अर्थात् यह शब्दावली दोहरी नागरिकता की ओर संकेत करती है, जबकि भारतीय संविधान की उक्त शब्दावली भारत में केवल एक ही नागरिकता की ओर इंगित करती है।

'संपूर्ण प्रभुत्वसंपन्न'

भारतीय संविधान की शब्दावली 'संपूर्ण प्रभुत्वसंपन्न' संभवत: आयरलैंड के संविधान के पाँचवें अनुच्छेद से ली गई है। इस शब्दावली से ध्वनित होता है कि भारत पूर्ण रूप से प्रभुतासंपन्न राज्य है, जिस पर न तो कानूनी दृष्टि से किसी आंतरिक शक्ति का प्रतिबंध है और न किसी बाहरी शक्ति का।

यहाँ गौरतलब है कि राजनीति विज्ञान में 'प्रभुता' शब्द का आशय उस सर्वोच्च राजनीतिक शक्ति से होता है, जिस पर भीतर या बाहर से किसी अन्य शक्ति का नियंत्रण नहीं होता। इस प्रकार 'प्रभुता' शब्द के दो पहलू हैं—आंतरिक प्रभुता और बाह्य प्रभुता। आंतरिक प्रभुता उच्च अधिकार शक्ति से संबंधित होती है, जबकि बाह्य प्रभुता से अभिप्राय है कि देश पर किसी बाहरी शक्ति का न तो दबाव है और न ही अधिकार। संविधान के लागू होने के बाद से भारत उसी प्रकार संपूर्ण प्रभुत्वसंपन्न राज्य है, जिस प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका, इंग्लैंड, फ्रांस आदि कोई स्वतंत्र देश।

'समाजवाद'

रूसी क्रांति के उपरांत अंतरराष्ट्रीय चिंतन पद्धतियों में समाजवाद को विशेष स्थान प्राप्त हुआ है। इस विचारधारा के आधार पर अनेक विचारकों ने ऐसे राज्य और समाज की परिकल्पना की, जिसमें धार्मिक और आर्थिक विषमताओं को मिटाकर समानता और स्वतंत्रता के आधार पर एक वर्गहीन समाज की स्थापना करना संभव है। यह विचारधारा भारत में भी आई, जिसके अग्रदूत थे—आचार्य नरेंद्र देव, पं. जवाहरलाल नेहरू, डॉ. संपूर्णानंद, अशोक मेहता, डॉ. राममनोहर लोहिया आदि। भारत में समाजवाद की स्थापना की दृष्टि से कांग्रेस के अंतर्गत समाजवादी दल की स्थापना की गई। यह बात अलग है कि आगे चलकर आचार्य नरेंद्र देव के नेतृत्व में समाजवादी दल को कांग्रेस से अलग हो जाना पड़ा।

ऐसा प्रतीत होता है कि भारतीय संविधान के रचनाकार यह नहीं चाहते थे कि भारतीय संविधान किसी विचारधारा या वाद-विशेष से जुड़े अथवा उसके द्वारा सीमित हो। इसलिए उन्होंने अन्य बातों के साथ-साथ समाजवाद का उल्लेख संविधान की उद्देशिका में नहीं किया था। हाँ, इस विचारधारा का निर्वाह सभी नागरिकों को आर्थिक न्याय और प्रतिष्ठा तथा अवसर की समानता दिलाने के संकल्प में अवश्य किया गया था, किंतु बाद में वर्ष 1976 में 42वें संशोधन के अंतर्गत गणराज्य की विशेषता दरसाने के लिए 'समाजवाद' शब्द का समावेश उद्देशिका में

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

किया गया।

एक संभावना यह भी है कि भारतीय संविधान की उद्देशिका में इस शब्द का प्रयोग पं. नेहरू के विचारों को प्रतिष्ठा देने के लिए उनकी पुत्री इंदिरा गांधी ने जानबूझकर किया हो, क्योंकि पं. नेहरू ने संविधान-सभा में कहा था—''मैं समाजवाद का पक्षधर हूँ और आशा करता हूँ कि भारत समाजवाद का पक्ष लेगा और वह एक समाजवादी राज्य के गठन के लिए कदम उठाएगा।''

गौरतलब है कि संविधान की उद्देशिका में यह शब्द आपात्काल के दौरान 3 जनवरी, 1977 को तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने अंत:स्थापित किया था, जब वह पूर्णत: प्रभुत्वसंपन्न थीं।

'संपूर्ण प्रभुत्वसंपन्न' शब्दावली के ठीक बाद 'समाजवाद' शब्द का प्रयोग उसे महत्त्वपूर्ण बना देता है। भारतीय संविधान के 45वें संशोधन द्वारा 'समाजवाद' शब्द को परिभाषित करने का प्रयास किया गया है, जिसका अभिप्राय है—सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक आदि सभी प्रकार के शोषणों से मुक्ति। इस विधेयक को अंतत: 44वें संशोधन के रूप में पारित किया गया था।

'पंथनिरपेक्ष'

भारतीय संविधान के मूल पाठ में जिस प्रकार 'समाजवाद' शब्द का प्रयोग नहीं था, उसी प्रकार उसमें 'पंथनिरपेक्ष' शब्द भी नहीं था। यह शब्द भी 42वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा गणराज्य से पूर्व एक विशेषण के रूप में जोड़ा गया। पिछले कुछ समय से इस शब्द का संबंध 'सर्वधर्म समभाव' से जोड़ने का प्रयास किया जाने लगा है अर्थात् सभी धर्मों को एक समान समझना अथवा सभी धर्मों का समान रूप से आदर करना। कुछ लोग इसकी जगह 'धर्मनिरपेक्ष' शब्द का भी इस्तेमाल करते हैं, जो पहले 'सेक्यूलरिज्म' का शब्दार्थ माना जाता था, किंतु संविधान के प्राधिकृत हिंदी पाठ में 'पंथनिरपेक्ष' शब्द का प्रयोग किया गया है।

भारतीय संदर्भ में 'पंथनिरपेक्षता' का अर्थ यह है कि भारत कोई मजहबी या धर्मतंत्रवादी राज्य नहीं है; जैसे पाकिस्तान मुसलिम राष्ट्र है, अरब देश भी मुसलिम राष्ट्र हैं, नेपाल हिंदू राष्ट्र है। भारत का इस रूप में अपना कोई पंथ, मजहब या संप्रदाय नहीं है। भारत की दृष्टि में सभी पंथ समान हैं। पंथ के आधार पर भारतीय नागरिकों के साथ कोई भेदभाव नहीं किया जा सकता।

'धर्मनिरपेक्ष' शब्द का प्रयोग वस्तुत: विदेशी देन है अथवा विदेशी भाषा में शिक्षित तथा विदेशी संस्कृति में प्रशिक्षित हमारे कर्णधारों की खोज अथवा उपज है। जिस प्रकार वोट की राजनीति को स्थायी जीवन प्रदान करने के लिए 'अल्पसंख्यक' शब्द को अपनाया गया, उसी प्रकार शासनतंत्र के अंतर्गत राजनीति को स्थायी उपनिवेश प्रदान करने के लिए 'धर्मनिरपेक्षता' अथवा 'धर्मनिरपेक्ष राज्य' शब्द को अपनाया गया है।

'लोकतंत्रात्मक'

प्लेटो और अरस्तू से लेकर लिंकन तथा लॉर्ड जेम्स प्राइस आदि आधुनिक विचारकों ने लोकतंत्र को शासन का एक रूप माना है, किंतु यह केवल शासन का एक रूप ही नहीं, बल्कि जीवन पद्धति और सामाजिक दर्शन भी है। साथ ही वह एक प्रकार की सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था भी है।

'लोकतंत्र', 'प्रजातंत्र' अथवा 'जनतंत्र' अंग्रेजी शब्द 'डेमोक्रेसी' के हिंदी रूपांतर हैं। 'डेमोक्रेसी' शब्द ग्रीक भाषा के दो शब्दों से मिलकर बना है-'डेमो' और 'क्रेटोस' जिनका अर्थ है—वह शासन जिसमें प्रतिनिधियों के माध्यम से सत्ता जनता के ही हाथों में रहे, चाहे प्रत्यक्ष रूप से, चाहे परोक्ष रूप से।

देश के शासन में नागरिकों की इच्छा चले—लोकतंत्र की यह मुख्य कसौटी है। वस्तुत: लोकतंत्र भावना की

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

एक विधि है, उसका पालन करनेवाले लोगों के मन की एक प्रवृत्ति है। जो लोग लोकतंत्र के अनुसार कार्य करते हैं, वे ही उसको व्यवहार में भी ला सकते हैं। यही लोकतंत्र का सार है।

संसदीय लोकतंत्र की सफलता के लिए कतिपय मूलभूत तत्त्वों का निर्वाह आवश्यक होता है। इन्हें लोकतंत्र के मूल तत्त्व भी कहते हैं, यथा—1. न्याय का शासन, 2. विचार की स्वतंत्रता के प्रति सम्मान भाव, 3. राजनीतिक दलों का संगठन, 4. उत्तरदायित्व की भावना, 5. विरोधी दल और उसकी रीति के प्रति सहनशीलता, 6. स्वस्थ परंपराओं का विकास, 7. आंतरिक और बाह्य सुरक्षा, 8. राजनीति और प्रशिक्षण, 9. शक्तिशाली आर्थिक नीति, 10. सार्वजनिक मताधिकार और 11. उत्तरदायी जनमत।

इस संदर्भ में यह उल्लेखनीय है कि सन् 1949 में यूनेस्को ने लोकतंत्र से संबंधित आदर्शों के संघर्ष की जो खोज की, उससे वह इस परिणाम पर पहुँचा कि अधिकतर देशों के विद्वान् लोकतंत्र को उचित और आदर्श राजनीतिक तथा सामाजिक संगठन समझते हैं।

इस प्रकार लोकतंत्र के सामाजिक पक्ष का आशय एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था है, जिसमें सबको प्रगति और विकास के लिए समान अवसर प्राप्त हों।

लोकतंत्र एक ऐसे समाज की परिकल्पना करता है, जो समानता, स्वतंत्रता और बंधुत्व के आधार पर संगठित हो। यही कारण है कि पूँजीवादी तथा साम्राज्यवादी—दोनों ही प्रकार के देश लोकतंत्र की दुहाई देते हैं। यद्यपि दोनों एक-दूसरे के लोकतंत्र को धोखा और आडंबर बताते हैं।

भारतीय संविधान इस दृष्टि से एक सफल लोकतंत्र की स्थापना करता है। उद्देशिका में उल्लिखित 'लोकतंत्र' शब्द यह द्योतित करता है कि भारतीय संविधान एक श्रेष्ठ लोकतंत्र की स्थापना के लिए कृतसंकल्प है; यहाँ तक कि संविधान की रचना भी प्राय: लोकतंत्रात्मक पद्धति पर आधारित है। उसी के साथ देशवासियों को मौलिक अधिकारों की प्राप्ति हुई है। इसमें कोई संदेह नहीं कि सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक समानता के लिए भारतीय संविधान में विशेष प्रावधान किया गया है।

भारत के संविधान में बालिग मताधिकार की व्यवस्था है—यानी प्रत्येक बालिग नागरिक मत देने का अधिकारी है। इस दृष्टि से सभी समान हैं। वैसे भी लोकतंत्र का आधार बहुमत होता है। जिस देश में केवल दो राजनीतिक दल होते हैं, वहाँ 51 प्रतिशत मत प्राप्त करने वाला शासक बन जाता है और 49 प्रतिशत मत पानेवाला दल 'विपक्ष' बनकर रह जाता है।

यहाँ यह कहना अनुचित होगा कि लोकतंत्र बहुमत का शासन होता है। यह सच है कि जनता के प्रतिनिधियों का चुनाव बहुमत के आधार पर होता है, किंतु एक बार निर्वाचित होने के बाद वे समस्त जनता के प्रतिनिधि हो जाते हैं और जनता के हित के लिए ही शासन करते हैं। इसीलिए लोकतंत्र को 'अल्पसंख्यकों की सहमति से बहुसंख्यकों का शासन' भी कहा गया है।

'लोकतंत्र' राजनीतिशास्त्र का बहुप्रचलित शब्द है। इस शासन पद्धति के अंतर्गत राजशक्ति नागरिकों के हाथों में रहती है। अन्य शब्दों में, इसमें शासन का संचालन जनमत के सिद्धांत के आधार पर होता है और वे ही विधियाँ लागू की जाती हैं, जिन्हें जनता का समर्थन प्राप्त होता है।

भारतीय संविधान में 'लोकतंत्र' केवल एक शासन-प्रणाली के रूप में ही नहीं, बल्कि एक जीवन-दर्शन के रूप में भी स्वीकार किया गया है। उद्देशिका में यह 'गणराज्य' के विशेषण के रूप में प्रयुक्त हुआ है। इसके आगे न्याय, स्वतंत्रता, व्यक्ति की गरिमा, राष्ट्र की एकता, बंधुता आदि शब्द भली-भाँति प्रमाणित कर देते हैं कि संविधान के रचनाकारों का लक्ष्य देश में राजनीतिक लोकतंत्र के साथ-साथ सामाजिक और आर्थिक लोकतंत्र की स्थापना

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

करना भी था।

भारतीय संविधान ने देश में प्रतिनिधि लोकतंत्र की स्थापना की है, जिसमें 18 वर्ष से अधिक आयु के सभी वयस्क नागरिकों को मताधिकार दिया गया है, जिसमें स्त्री और पुरुष—दोनों बराबर के अधिकारी हैं।

इस संदर्भ में अल्लादी कृष्ण स्वामी अय्यर ने कहा था, ''संविधान-सभा ने वयस्क मताधिकार के सिद्धांत को इसलिए स्वीकार किया है कि उसका जनसाधारण में तथा लोकशासन की चरम सफलता में दृढ़ विश्वास है। साथ ही उसका यह भी पूरा विश्वास है कि वयस्क मताधिकार पर आधारित लोकतंत्रात्मक शासन से जनसाधारण में जागृति आएगी, उसकी भलाई होगी और उसका जीवन-स्तर ऊँचा उठेगा, उसे सुख-सुविधाएँ सुलभ होंगी और वह शिष्ट व सुसंस्कृत जीवन व्यतीत कर सकेगा।''

'गणराज्य'

अंग्रेजी शब्द 'रिपब्लिक' का हिंदी रूपांतरण 'गणराज्य' प्राचीन भारतीय संस्कृति का शब्द है। प्राचीन भारत में राजतंत्र के साथ-साथ गणराज्यों की भी परंपरा थी। महाभारत में भी 'गणराज्य' शब्द का उल्लेख किया गया है। कौटिल्य के अर्थशास्त्र और बौद्ध साहित्य के अंतर्गत गणशासन का विस्तारपूर्वक विवेचन किया गया है। इसके अंतर्गत प्रत्येक नागरिक छोटे से लेकर बड़े पदों तक अपनी योग्यतानुसार पहुँचने का अधिकार रखता है, यहाँ तक कि राष्ट्रपति भी भारत का नागरिक ही बनता है, परंपरागत रूप में कोई राजा नहीं।

संविधान के अनुच्छेद-16 के अनुसार, यहाँ सभी छोटे और बड़े-से-बड़े पद जाति, धर्म, प्रदेश या लिंग के किसी भेदभाव के बिना सभी नागरिकों के लिए उनकी योग्यता के आधार पर खुले हैं। संविधान के अनुच्छेद-325 के अंतर्गत यह व्यवस्था है कि भारतीय गणराज्य में उच्चतम शक्ति वयस्क मताधिकार से संपन्न जनसमुदाय में निहित है।

न्याय

यद्यपि इतिहास में न्याय की व्याख्या अनेक प्रकार से की गई है, किंतु भारतीय संविधान में न्याय निष्पक्ष रूप से सत्य, तथ्य एवं प्रमाणों पर आधारित है, किसी आध्यात्मिक या अलौकिक क्षमता पर नहीं; जैसाकि प्राय: कहा जाता है—'जैसी करनी, वैसी भरनी' अथवा 'ईश्वर न्याय करता है' अथवा 'अच्छे कर्मों का फल अच्छा और बुरे कर्मों का बुरा होता है' अथवा 'वर्तमान जीवन पूर्वजन्म के कर्मों का फल है'।

संविधान की उद्देशिका में न्याय के आदर्श की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। भारतीय संविधान में न्यायपालिका को सर्वोच्च गरिमा प्राप्त है। इसका मतलब है कि संविधान के रचनाकारों ने यह अच्छी तरह समझ लिया था कि सच्चे लोकतंत्र के लिए समानता के साथ-साथ न्याय की भी आवश्यकता है। न्याय के बिना स्वतंत्रता और समानता का कोई महत्त्व नहीं रह जाता।

संविधान के अनुच्छेद-38 में न्याय के इस आदर्श का विशेष उल्लेख हुआ है—'राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था की, जिसमें सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक न्याय राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं को अनुप्राणित करे, भरसक प्रभावी रूप में स्थापना और संरक्षण करके लोककल्याण की उन्नति का प्रयास करेगा।'

उद्देशिका में तीन प्रकार का न्याय संकेतित है—सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक।

सामाजिक न्याय का आदर्श है—'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय'। अनुच्छेद-17 और 18 में सामाजिक न्याय पाने के प्रयास संदर्भित हैं। आर्थिक न्याय सामाजिक न्याय से संयोजित होकर वितरणवादी न्याय बन जाता है। जिस समाज में आर्थिक असमानता न हो, उस समाज में यह न्याय विद्यमान है। यद्यपि असमानताओं को समाप्त नहीं

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hind

किया जा सकता, लेकिन उन्हें कम अवश्य किया जा सकता है। इसीलिए भारतीय संविधान में आर्थिक असमानताओं को कम करने का प्रयास किया गया है।

राजनीतिक न्याय की व्यवस्था के लिए भारतीय संविधान में सभी वयस्क नागरिकों को मताधिकार दिया गया है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद-14 से 18 तक दिए गए उपबंध राजनीतिक न्याय के आधार हैं।

स्वतंत्रता

मनुष्य के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास के लिए स्वतंत्रता अत्यंत आवश्यक है। इसीलिए भारतीय संविधान में स्वतंत्रता को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। चूँकि भारतीय नागरिक इस संविधान से पूर्व अंग्रेजों, मुगलों आदि की दासता सदियों तक झेलते रहे थे, इसलिए यह स्वाभाविक था कि स्वतंत्र भारत में प्रत्येक नागरिक को स्वतंत्रता का अधिकार दिया जाए। इसीलिए संविधान की उद्देशिका में स्वतंत्रता का विशेष उल्लेख किया गया है—राजनीतिक क्षेत्र में प्रमुख रूप से पाँच प्रकार की स्वतंत्रता का महत्त्व माना गया है—प्राकृतिक स्वतंत्रता, नागरिक स्वतंत्रता, राजनीतिक स्वतंत्रता, आर्थिक स्वतंत्रता और राष्ट्रीय स्वतंत्रता।

भारतीय संविधान में प्रत्येक नागरिक को स्वतंत्रता का मौलिक अधिकार दिया गया है, जिसके अंतर्गत वह अपने विचारों की अभिव्यक्ति, मनोनुकूल कोई भी धर्म और उसकी उपासना पद्धति अपनाने के लिए स्वतंत्र है। संविधान के अनुच्छेद-19-22 में समस्त भारतीय नागरिकों को सामूहिक रूप से कुछ स्वतंत्रताएँ दी गई हैं, जिन्हें 'स्वातंत्र्य अधिकारों' की संज्ञा दी जा सकती है। अनुच्छेद-19 में नागरिकों को ऐसी वैयक्तिक स्वतंत्रता प्रदान की गई है, जो उदारवादी लोकतंत्र के लिए आवश्यक है। जैसे—वाक् स्वतंत्रता, अभिव्यक्ति स्वतंत्रता, भारत राज-क्षेत्र में कहीं भी आने-जाने तथा बस जाने की स्वतंत्रता तथा कोई भी कारोबार वृत्ति, उपजीविका अपना लेने की स्वतंत्रता। यहाँ उल्लेखनीय है कि भारतीय संविधान द्वारा प्रदत्त ये स्वतंत्रताएँ पूर्णत: निरपेक्ष नहीं हैं, अपितु सार्वजनिक हित तथा राज्य की सुरक्षा की दृष्टि से कुछ प्रतिबंध भी लगाए गए हैं; जैसे—संविधान द्वारा प्रदत्त स्वातंत्र्य अधिकारों को इस प्रकार उपयोग में लाना चाहिए, जिससे किसी का अपमान, मानहानि, न्यायालय की अवमानना, शिष्टाचार या सदाचार पर आघात आदि न हो [अनुच्छेद-19(2)]।

उद्देशिका में उल्लिखित स्वतंत्रताओं का विवरण भारतीय संविधान के अनुच्छेद-19 और अनुच्छेद-25-28 तक दिया गया है।

प्रस्तावना की मुख्य बातें

- संविधान की प्रस्तावना को 'संविधान की कुंजी' कहा जाता है।
- प्रस्तावना के अनुसार, संविधान के अधीन समस्त शक्तियों का केंद्रबिंदु अथवा स्रोत 'भारत के लोग' ही हैं।
- प्रस्तावना में लिखित शब्द यथा 'हम भारत के लोग...इस संविधान को अंगीकृत, अधिनियमित और आत्मार्पित करते हैं।' भारतीय लोगों की सर्वोच्च संप्रभुता का उद्घोष करते हैं।
- 'प्रस्तावना' को न्यायालय में परिवर्तित नहीं किया जा सकता।
- जहाँ संविधान की भाषा संदिग्ध हो, वहाँ प्रस्तावना विधिक निर्वाचन में सहायता करती है।
- संसद् संविधान के मूल ढाँचे में नकारात्मक संशोधन नहीं कर सकती; किंतु संसद् वैसा संशोधन कर सकती है, जिससे मूल ढाँचे का विस्तार व मजबूतीकरण होता हो।

समता

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

राजनीतिशास्त्र में समानता के सिद्धांत का मतलब होता है—अपनी-अपनी मन:शक्तियों के समुचित विकास के लिए प्रत्येक नागरिक को समान अवसर उपलब्ध कराना। संविधान के रचनाकारों ने इसी सिद्धांत के आधार पर उद्देशिका में स्थान और अवसर की समता पर बल दिया है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद-14 से 17 तक का उद्देश्य समता के अधिकार को व्यावहारिक रूप देना है।

अनुच्छेद-14 के अनुसार, 'विधि के समक्ष समता' का अधिकार प्रत्येक नागरिक को दिया गया है, जिसका अभिप्राय है—विधि-विशेष के संदर्भ में नागरिकों के साथ समान व्यवहार। अनुच्छेद-15 के अनुसार, राज्य किसी भी नागरिक के विरुद्ध केवल धर्म, मूल-वंश, जाति, लिंग, जन्मस्थान अथवा इनमें से किसी एक के आधार पर कोई विभेद नहीं करेगा। अनुच्छेद-16 में यह व्यवस्था की गई है कि राज्याधीन नौकरियों या पदों पर नियुक्ति के संबंध में समस्त नागरिकों के लिए अवसर की समता है। अनुच्छेद-17 के अंतर्गत अस्पृश्यता का अंत कर दिया गया है, जो सामाजिक समता की दिशा में उठाया गया एक बहुत बड़ा कदम है।

बंधुता

भारतीय जनजीवन में बंधुता के दो पहलू हैं—आंतरिक और बाह्य। आंतरिक बंधुता के अंतर्गत विभिन्न क्षेत्रों, भाषाओं, जातियों और रीति-रिवाजों के बावजूद एक बुनियादी एकता है। बाह्य क्षेत्र में बंधुता की भावना का मतलब है कि संसार के विभिन्न देशों को एक-दूसरे के निकट लाने, विश्व-शांति बनाए रखने और सौहार्द की स्थापना के लिए भारत अपना पूर्ण योगदान करेगा। वैसे भी देखा जाए तो भारत में 'वसुधैव कुटुंबकम्' अथवा विश्वबंधुत्व की भावना का महत्त्वपूर्ण स्थान रहा है।

उद्देशिका में बंधुता को दो-तीन बातों से संयुक्त किया गया है—

1. व्यक्ति की गरिमा सुनिश्चित करना।
2. राष्ट्र की एकता और अखंडता सुनिश्चित करना।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-17, 18 और इसी तथ्य की ओर इंगित करते हैं।

समग्रत: संपूर्ण भारतीय संविधान की अवधारणा उसकी उद्देशिका में निर्दिष्ट है। इसे संविधान का निचोड़, दर्शन, मूल मंत्र, प्रस्तावना आदि भी कहा जा सकता है, जिसे संविधान के विविध उपबंधों द्वारा मूर्त रूप देने का प्रयास किया गया है। उद्देशिका के सैद्धांतिक आयाम अत्यंत उदात्त, व्यापक एवं सार्वभौम हैं।

42वें संविधान संशोधन के पश्चात् जिस रूप में भारतीय संविधान की उद्देशिका विद्यमान है, उसके अनुसार संविधान रचनाकारों के मूलभूत संवैधानिक मूल्यों में विश्वास इस प्रकार सूचीबद्ध किया जा सकता है—संप्रभुता, समाजवाद, लोकतंत्र, गणराज्यीय स्वरूप, न्याय, स्वतंत्रता, समानता, बंधुता, व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता तथा अखंडता। अब यह स्वीकार कर लिया गया है कि उद्देशिका में समाविष्ट संविधान के बुनियादी तत्त्वों को अनुच्छेद-368 के अंतर्गत किसी संशोधन द्वारा बदला नहीं जा सकता।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

7. संघ और उसका राज्यक्षेत्र

(भाग-1, अनुच्छेद—1 से 4 तक)

उत्तरी गोलार्द्ध में स्थित भारत का क्षेत्रफल 32,87,263 वर्ग किलोमीटर है, जो हिमालय की हिमाच्छादित चोटियों से लेकर दक्षिण के उष्णकटिबंधीय सघन वनों तक फैला हुआ है। इसकी मुख्य भूमि 8°4′ और 37°6′ उत्तरी अक्षांशों एवं 68°7′ और 97°25′ पूर्वी देशांतरों के मध्य फैली हुई है।

उत्तर से दक्षिण तक इसका विस्तार 3,214 किलोमीटर और पूर्व से पश्चिम तक 2,933 किलोमीटर है। इसकी भूमि-सीमा लगभग 15,200 किलोमीटर है। मुख्य भूमि, लक्षद्वीप समूह और अंडमान-निकोबार द्वीप समूहों के समुद्र तटों की कुल लंबाई 7,516.6 किलोमीटर है।

विशालता की दृष्टि से भारत विश्व का सातवाँ बड़ा देश है, जिसे पर्वत तथा समुद्र शेष एशिया से अलग करते हैं। फलतः इसका एक अलग भौगोलिक अस्तित्व बन गया है। इसके उत्तर में विशाल हिमालय पर्वत है, जहाँ से यह दक्षिण में बढ़ता हुआ कर्क रेखा तक जाकर, पूर्व में बंगाल की खाड़ी और पश्चिम में अरब सागर और हिंद महासागर से जा मिलता है।

भारत के सीमावर्ती देशों में उत्तर-पश्चिम में अफगानिस्तान और पाकिस्तान हैं; उत्तर में चीन, नेपाल और भूटान; पूर्व में म्याँमार और बांग्लादेश स्थित हैं। मन्नार की खाड़ी और पाक जलडमरूमध्य इसे श्रीलंका से अलग करते हैं।

राजनीतिक एवं संवैधानिक दृष्टि से भारतभूमि को मुख्यतः दो इकाइयों में विभाजित किया गया है—राज्य और संघ राज्य-क्षेत्र। वैधानिक दृष्टि से भारत राज्यों का संघ है। 15 अगस्त, 1947 को जब देश स्वतंत्र हुआ था, तब इसमें 562 देसी रियासतें थीं। सन् 1956 में राज्यों के पुनर्गठन के बाद भारतीय संघ में 22 राज्य और 9 केंद्रशासित प्रदेश थे।

15 अगस्त, 1947 को ब्रिटिश शासन से मुक्त होने पर भारत सरकार ने देसी राजाओं से अपील की कि वे भारतीय अधिराज्य में सम्मिलित हो जाएँ। साथ ही अखिल भारतीय महत्त्व के और सुरक्षा, वैदेशिक विभाग और यातायात आदि से संबंधित विषयों को केंद्रीय सरकार को सौंप दें। जो राज्य संघ में सम्मिलित हो जाएँगे, उनके राजाओं के विशेषाधिकार सुरक्षित रहेंगे।

राष्ट्रीय सरकार के इस आह्वान पर जूनागढ़, कश्मीर और हैदराबाद को छोड़कर सभी देसी रियासतें भारतीय संघ में सम्मिलित हो गईं, किंतु कुछ समय बाद जूनागढ़ और हैदराबाद की रियासतें भी भारतीय संघ में आ मिलीं या मिलती गईं।

राज्यों का पुनर्गठन

मूल संविधान में निम्नांकित राज्य थे, जिन्हें तीन प्रवर्गों में बाँटा गया था।

बाद में 7वें संविधान संशोधन द्वारा इन प्रवर्गों को समाप्त करके एक ही स्तर पर रखा गया।

सन् 1953 में दक्षिण भारत में भाषायी आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की माँग सिर उठाने लगी, जिसके मद्देनजर तथा देसी रियासतों के प्रत्येक भाग में उत्तरदायी शासन को शक्तिशाली बनाने के लिए भारत सरकार ने राज्यों का पुनर्गठन करने के लिए राज्य पुनर्गठन आयोग का गठन किया।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels & Hind

पुराने राज्यों के नए नाम

पुराना राज्य :मद्रास

नया नाम :तमिलनाडु

पुराना राज्य :आंध्र

नया नाम :आंध्र प्रदेश

पुराना राज्य :त्रावणकोर-कोचीन

नया नाम :केरल

पुराना राज्य :मैसूर

नया नाम :कर्नाटक

पुराना राज्य :संयुक्त प्रांत

नया नाम :उत्तर प्रदेश

पुराना राज्य :मध्य प्रांत

नया नाम :मध्य प्रदेश

पुराना राज्य :लक्षद्वीप, मिनिकाय एवं अदिनी द्वीप समूह

नया नाम :लक्षद्वीप

इस आयोग के अध्यक्ष थे—फजल अली और सदस्य थे—हृदयनाथ कुंजरू तथा के.एम. पणिक्कर। इस आयोग ने भाषा के आधार पर राज्यों के पुनर्गठन का विरोध किया और प्रशासनिक सुविधा के आधार पर राज्यों के पुनर्गठन का समर्थन किया। आयोग के प्रमुख सुझाव इस प्रकार थे—

- राज्यों को वैधानिक समानता प्राप्त करने के लिए संविधान के अंतर्गत भाग-क और ख राज्यों का अंतर समाप्त किया जाए।
- राज्यों की संख्या में कमी की जाए और केवल 16 राज्य रखे जाएँ—मद्रास, केरल, कर्नाटक, हैदराबाद, आंध्र, बंबई, विदर्भ, मध्य प्रदेश, राजस्थान, पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार, पश्चिमी बंगाल, उड़ीसा, असम और जम्मू-कश्मीर।
- उड़ीसा और संयुक्त प्रदेश में कोई परिवर्तन नहीं किया जाना चाहिए। यहाँ गौरतलब है कि आयोग के सदस्य के. एम. पणिक्कर ने अपनी रिपोर्ट में संयुक्त प्रदेश के विभाजन का समर्थन किया था।
- भाग-क के राज्यों को निकटवर्ती राज्यों में सम्मिलित कर दिया जाए। केवल दिल्ली, मणिपुर (असम राज्य में) और अंडमान-निकोबार द्वीप समूह को केंद्रीय शासन के अंतर्गत रखा जाए।
- बंबई और पंजाब के राज्य द्विभाषी राज्य रहें।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

- संविधान के अनुच्छेद-347 के अंतर्गत राज्यों में अल्पसंख्यकों को प्रशिक्षण, मातृभाषा संबंधी अधिकार दिए जाएँ और इस कार्य में राज्यों के राज्यपालों का विशेष दायित्व हो।
- राज्य सेवा आयोगों का संगठन इस तरह किया जाए कि वे एक राज्य की अपेक्षा राज्यों की भी सेवा कर सकें।
- राज्यों के पुनर्गठन संबंधी राज्य सेवाओं के एकीकरण का कार्य समितियों द्वारा किया जाए।
- कुछ समय तक विश्वविद्यालयों में हिंदी के साथ-साथ अंग्रेजी भाषा का भी शिक्षण किया जाए।

आयोग की रिपोर्ट के बाद मद्रास राज्य के तेलुगु-भाषियों ने पोटी श्री रामुल्लू के नेतृत्व में भाषायी आधार पर नए राज्य आंध्र प्रदेश के लिए आंदोलन प्रारंभ कर दिया। 56 दिन के आमरण अनशन के बाद 15 दिसंबर, 1952 को रामुल्लू की मृत्यु हो गई। मजबूरन सरकार ने 1 अक्तूबर, 1953 को आंध्र प्रदेश राज्य के गठन की घोषणा कर दी। यह राज्य स्वतंत्र भारत में भाषा के आधार पर गठित होनेवाला पहला राज्य था। उस समय आंध्र प्रदेश की राजधानी कर्नूल थी।

वैधानिक कार्यविधि

राज्य पुनर्गठन आयोग के उपर्युक्त सुझावों को समस्त राज्यों के विधानमंडलों में विचारार्थ भेजा गया। विधानमंडलों ने आयोग के सुझावों पर विचार-विमर्श कर अपनी रिपोर्ट केंद्रीय सरकार को भेज दी, जिन पर संसद् में विस्तार से चर्चा हुई। लोकसभा में यह चर्चा साढ़े पचपन घंटे और राज्यसभा में इकतालीस घंटे तक चली। इस चर्चा में संसद् के 259 सदस्यों ने सक्रिय भाग लिया।

सरकार का निर्णय

16 जनवरी, 1956 को भारत सरकार ने राज्य पुनर्गठन आयोग की सिफारिशों के आधार पर अपना निर्णय दिया, जिसमें आयोग की सिफारिशों का यथासंभव ध्यान रखा गया था। आयोग की केवल उन्हीं सिफारिशों की अवहेलना की गई थी, जो जनमत के विरुद्ध थीं। 16 मार्च, 1956 को सरकार के निर्णय पर आधारित राज्य पुनर्गठन विधेयक संसद् में प्रस्तुत किया गया, जिसमें 14 राज्यों एवं 7 केंद्रशासित प्रदेशों की व्यवस्था की गई थी।

मूल संविधान में वर्गीकृत राज्य

भाग-क

1. असम
2. बिहार
3. बंबई
4. मध्य प्रदेश
5. मद्रास
6. उड़ीसा
7. पंजाब

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

8. संयुक्त प्रांत

9. पश्चिमी बंगाल

भाग-ख

1. हैदराबाद

2. जम्मू-कश्मीर

3. मध्य भारत

4. मैसूर

5. पटियाला और पूर्वी पंजाब

भाग-ग

1. अजमेर

2. भोपाल

3. विलासपुर

4. कूच बिहार

5. कोड़गू

भाग-घ

1. अंडमान और निकोबार

2. अर्जित राज्यक्षेत्र

नामकरण

भारतीय संविधान के भाग-1 में अनुच्छेद-1 से 4 तक भारतीय संघ और उसके राज्य-क्षेत्रों का निरूपण किया गया है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद-1(1) में देश का नामकरण करते हुए कहा गया है—भारत, अर्थात् इंडिया, राज्यों का संघ होगा।

भारतीय संविधान-सभा में देश के नामकरण पर विस्तारपूर्वक चर्चा की गई थी, जिसमें विविध नाम प्रस्तावित किए गए थे। उनमें से दो नाम 'भारत' और 'इंडिया' सर्वाधिक रूप से उभरकर सामने आए। प्राचीनता का पोषक जहाँ भारत था, वहाँ आधुनिकता का प्रतीक 'इंडिया' था। 'भारत' शब्द से देश की एकता और अखंडता अभिव्यंजित होती है और 'इंडिया' संभवत: अंग्रेजों का दिया हुआ नाम था, जिससे विश्व भर में यह देश इसी नाम से जाना गया। संयुक्त राष्ट्र संघ के सदस्य के रूप में भी इसका नाम इंडिया ही था और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर सभी समझौते इसी नाम से किए गए थे। दोनों नामों के समर्थक प्रबल थे। इसी कारण संविधान में इस देश के दोनों नाम

Novels English & Hind

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

स्वीकार किए गए। दोनों नामों के अंतर को स्पष्ट करने के लिए कहा जा सकता है कि 'भारत' हिंदी नाम है और 'इंडिया' अंग्रेजी।

राज्य-क्षेत्रों का वर्गीकरण

भाग-1 के अनुच्छेद-1(2) के अनुसार, राज्य और उसके राज्य-क्षेत्र वे होंगे, जो पहली अनुसूची में विनिर्दिष्ट हैं। अनुच्छेद-1(3) में भारत के राज्य-क्षेत्र को भौतिक रूप से परिभाषित करते हुए कहा गया है—''भारत के राज्यक्षेत्र में—(क) राज्यों के राज्यक्षेत्र, (ख) पहली अनुसूची में विनिर्दिष्ट संघ राज्यक्षेत्र और ऐसे राज्यक्षेत्र, जो अर्जित किए जाएँ, समाविष्ट होंगे।''

संविधान-सभा द्वारा स्वीकृत तथा संविधान में समाविष्ट प्रथम अनुसूची में राज्यों तथा राज्य-क्षेत्रों की 4 श्रेणियाँ —भाग-क, भाग-ख एवं भाग-ग के राज्यों तथा भाग-घ के राज्य-क्षेत्रों का वर्णन किया गया है। 'क' श्रेणी में 9 राज्य थे, जो पूर्वकालीन ब्रिटिश भारत के ही प्रांत थे। इसी प्रकार 'ख' श्रेणी में 5 राज्य थे। ये राज्य मुख्यत: एकीकरण के प्रतिफल थे। इनमें राज्यपाल के स्थान पर राजप्रमुख होते थे। 'ग' श्रेणी में 5 राज्य थे, जिनका शासन प्रत्यक्षत: केंद्र द्वारा चलाया जाता था। अंडमान तथा निकोबार द्वीपसमूहों का उल्लेख भाग 'घ' में किया गया था।

राज्य पुनर्गठन अधिनियम और राज्य पुनर्गठन

संविधान के 7वें संशोधन (अधिनियम, 1956) के अधीन राज्यों के पुनर्गठन ने क, ख और घ राज्यों की श्रेणी को समाप्त कर दिया था। पांडिचेरी, कारिकल, माही और यनम (फ्रांसीसी) और गोआ, दमन, दीव और दादर, नागर हवेली (पुर्तगाली) जैसे फ्रांसीसी और पुर्तगाल अधिकृत क्षेत्र भारत में उनके विधित: अंतरण के बाद क्रमश: सन् 1962 में 14वें, 12वें और 10वें संविधान संशोधन के द्वारा संघ में जोड़ दिए गए थे।

1956 में भारतीय क्षेत्र

राज्य

आंध्र प्रदेश

असम

बिहार

बंबई

जम्मू एवं कश्मीर

केरल

मध्य प्रदेश

मद्रास

मैसूर

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

उड़ीसा

पंजाब

राजस्थान

उत्तर प्रदेश

पश्चिम बंगाल

संघशासित क्षेत्र

अंडमान एंड निकोबार द्वीप समूह

दिल्ली

हिमाचल प्रदेश

लकादीव, मिनिकाय और अमीनदीवी द्वीप समूह

मणिपुर

त्रिपुरा

इस प्रकार राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 के अंतर्गत भारत में 14 राज्य तथा 6 संघ राज्य-क्षेत्र अस्तित्व में आए। सन् 1953 में भाषायी आधार पर आंध्र प्रदेश के नाम पर एक पृथक् राज्य का गठन किया गया। इसके बाद सन् 1960 में द्विभाषीय बंबई राज्य का विभाजन करके महाराष्ट्र और गुजरात राज्य की स्थापना की गई।

सन् 1961 में नागा जातियों की बहुलता के कारण पूर्वांचल में नागालैंड अस्तित्व में आया। सन् 1966 में पंजाब राज्य का पुनर्गठन किया गया और हरियाणा राज्य का अस्तित्व सामने आया। कुछ राजनीतिक कारणों से चंडीगढ़ को संघ राज्य-क्षेत्र बना दिया गया। जनवरी, 1971 में हिमाचल प्रदेश को राज्य का दर्जा दिया गया, जो पहले संघ राज्य-क्षेत्र था।

संसद् ने सन् 1971-72 में उत्तर-पूर्वी क्षेत्र का पुनर्गठन करने के लिए जनवरी, 1972 में पुनर्गठन अधिनियम पारित किया, जिसके आधार पर मेघालय, मणिपुर तथा त्रिपुरा को पूर्ण राज्य का दर्जा दिया गया। सन् 1974 एवं 1975 में 35वें तथा 36वें संविधान संशोधनों द्वारा सिक्किम को संघ में जोड़ा गया। यह कार्य सिक्किम विधानसभा के अनुरोध पर और वहाँ जनमत-संग्रह के आधार पर किया गया। सन् 1986 में 53वें संविधान संशोधन द्वारा संघ राज्य-क्षेत्र मिजोरम को, सन् 1986 में 55वें संविधान संशोधन द्वारा संघशासित क्षेत्र अरुणाचल प्रदेश को तथा सन् 1987 में 56वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा गोआ जिले को दमन व दीव से अलग करके पूर्ण राज्य का दर्जा प्रदान किया।

28 अगस्त, 2000 को राष्ट्रपति ने उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश और बिहार को विभाजित करके देश में 3 राज्यों-क्रमश: उत्तराखंड, छत्तीसगढ़ व झारखंड के गठन संबंधी विधेयकों को स्वीकृति दी, जिसके फलस्वरूप 1 नवंबर, 2000 को छत्तीसगढ़; 9 नवंबर, 2000 को उत्तराखंड और 15 नवंबर, 2000 को झारखंड राज्य अस्तित्व में आए।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

तत्पश्चात् वर्ष 2014 में आंध्र प्रदेश का विभाजन कर एक और नया राज्य तेलंगाना बना दिया गया।

वर्तमान राज्य

जम्मू-कश्मीर
बिहार
केरल
तमिलनाडु
कर्नाटक
पंजाब
उत्तर प्रदेश
तेलंगाना
आंध्र प्रदेश
हरियाणा
मणिपुर
मेघालय
मिजोरम
गोवा
छत्तीसगढ़
असम
गुजरात
मध्य प्रदेश
महाराष्ट्र
उड़ीसा
राजस्थान
पश्चिम बंगाल
नागालैंड
हिमाचल प्रदेश
त्रिपुरा
सिक्किम
अरुणाचल प्रदेश
उत्तरांचल
झारखंड

संघ राज्य-क्षेत्र

दिल्ली
चंडीगढ़

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

लक्षद्वीप
अंडमान-निकोबार
दमन और दीव
पुदुचेरी दादर और नागर हवेली

विशेष दर्जा प्राप्त राज्य

राज्य का नाम :असम

वर्ष :1969

राज्य का नाम :नागालैंड

वर्ष :1969

राज्य का नाम :जम्मू-कश्मीर

वर्ष :1969

राज्य का नाम :हिमाचल प्रदेश

वर्ष :1971

राज्य का नाम :मणिपुर

वर्ष :1972

राज्य का नाम :मेघालय

वर्ष :1972

राज्य का नाम :त्रिपुरा

वर्ष :1972

राज्य का नाम :सिक्किम

वर्ष :1975-76

राज्य का नाम :मिजोरम

वर्ष :1986-87

राज्य का नाम :अरुणाचल प्रदेश

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

वर्ष :1986-87

राज्य का नाम :उत्तराखंड

वर्ष :2001

नए राज्यों का गठन

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-3 के अंतर्गत संसद् को यह अधिकार दिया गया है कि वह विभिन्न परिस्थितियों के अंतर्गत नए राज्यों का गठन कर सकती है। नवराज्य-गठन का प्रारूप या आधार इस प्रकार है—

- किसी राज्य में से उसका राज्य-क्षेत्र अलग करके; जैसे—पंजाब से हरियाणा, बंबई से गुजरात, उत्तर प्रदेश से उत्तरांचल, मध्य प्रदेश से छत्तीसगढ़ राज्य गठित किए गए।
- दो या अधिक राज्यों के भागों को मिलाकर; जैसे-भोपाल, मध्य भारत और विंध्य प्रदेश को मिलाकर 'मध्य प्रदेश' बना। अजमेर का विलय राजस्थान में हुआ।

संविधान ने संसद् को यह भी अधिकार दिया है कि वह राज्यों की सहमति या अनुमति के बिना भी उनका राज्य-क्षेत्र परिवर्तित कर सकती है।

इस दृष्टि से भारत का संविधान अमेरिकी संविधान से कुछ अलग है, क्योंकि अमेरिकी सरकार को यह अधिकार नहीं है कि वह राज्यों की सीमाओं में कोई परिवर्तन कर सके। इसीलिए अमेरिकी परिसंघ को 'अमिट राज्यों का अमिट संघ' कहा जाता है। भारतीय संविधान के रचनाकारों को इस बात का पूरा आभास था कि भविष्य में राज्यों का पुनर्गठन करना पड़ सकता है। इसीलिए उन्होंने संविधान के अंतर्गत संविधान संबंधी अत्यंत लचीला विधान रखा। इसी लचीलेपन के कारण सन् 1947 के बाद भारत में लगभग 562 देसी रियासतों का विलय हुआ।

वर्ष 1950 के पश्चात् बनाए गए राज्य

आंध्र प्रदेश—आंध्र प्रदेश अधिनियम, 1953 द्वारा चेन्नई राज्य के कुछ क्षेत्रों को निकालकर बनाया गया भाषायी आधार पर प्रथम राज्य।

गुजरात, महाराष्ट्र—वर्ष 1960 में मुंबई राज्य को दो भागों—गुजरात तथा महाराष्ट्र में विभाजित कर दिया गया।

केरल—ट्रावनकोर-कोचीन की जगह बनाया गया (राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 द्वारा)।

कर्नाटक—राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 द्वारा मैसूर राज्य से पृथक कर बनाया गया। राज्य अधिनियम, 1973 में इसे कर्नाटक नाम दिया गया।

नागालैंड—नागालैंड राज्य अधिनियम, 1962 द्वारा असम राज्य से अलग बनाया गया नया राज्य।

हरियाणा—पंजाब पुनर्गठन अधिनियम, 1966 द्वारा पंजाब के कुछ क्षेत्रों को निकालकर बनाया गया।

हिमाचल प्रदेश—हिमाचल संघ राज्य क्षेत्र को हिमाचल प्रदेश राज्य अधिनियम, 1970 द्वारा राज्य का दर्जा।

मेघालय—संविधान के 23वें संशोधन अधिनियम, 1969 द्वारा इसे असम राज्य के अंदर एक उपराज्य बनाया गया, पूर्वोत्तर क्षेत्र पुनर्गठन अधिनियम, 1971 द्वारा इसे पूर्ण राज्य का दर्जा प्रदान किया गया।

मणिपुर, त्रिपुरा—पूर्वोत्तर क्षेत्र पुनर्गठन अधिनियम, 1975 द्वारा संघ राज्य का दर्जा दिया गया।

सिक्किम—36वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1975 द्वारा इसे पूर्ण राज्य की मान्यता प्रदान की गई।

मिजोरम—मिजोरम राज्य अधिनियम, 1986 द्वारा पूर्व राज्य का दर्जा प्रदान किया गया।

अरुणाचल प्रदेश—अरुणाचल प्रदेश अधिनियम, 1986 द्वारा संघ राज्य क्षेत्र से पूर्ण राज्य का दर्जा प्रदान किया

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

गया।

गोवा—गोवा, दमन और दीव पुनर्गठन अधिनियम, 1967 द्वारा दमन और दीव संघ राज्य क्षेत्र बना रहने दिया गया तथा गोवा को निकालकर राज्य का दर्जा प्रदान किया।

छत्तीसगढ़—यह राज्य मध्य प्रदेश से अलग करके बनाया गया। (84वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2000 द्वारा सृजित)।

उत्तराखंड—यह राज्य उत्तर प्रदेश से अलग करके बनाया गया। (84वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2000 द्वारा सृजित)।

झारखंड—यह राज्य बिहार राज्य से अलग करके बनाया गया है। (84वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2000 द्वारा सृजित)।

तेलंगाना—2 जून, 2014 को यह राज्य आंध्र प्रदेश से अलग करके बनाया गया।

नाम-परिवर्तन

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-3 के अंतर्गत संसद् को यह अधिकार दिया गया है कि वह किसी भी राज्य के क्षेत्र को घटा या बढ़ा सकती है। इतना ही नहीं, उसे नाम-परिवर्तन का भी अधिकार है। संसद् यह कार्य, विधि बनाकर सहज ही कर सकती है। अनुच्छेद-3 के अधीन विधि-व्यवस्था की प्रक्रिया निर्दिष्ट है। इस प्रक्रिया में निम्नलिखित अपेक्षाएँ निहित हैं—

- विधेयक को पुन: स्थापित करने के लिए राष्ट्रपति की सिफारिश होगी।
- राष्ट्रपति द्वारा विधेयक उस राज्य के विधानमंडल को निर्दिष्ट किया जाएगा, जो विधेयक द्वारा प्रभावित होगा।

राष्ट्रपति राज्य को अपना मत व्यक्त करने के लिए समुचित समय दे सकता है। राज्य द्वारा व्यक्त विचारों को स्वीकार करना या न करना या उनमें संशोधन करना संसद् का अधिकार है।

संघ एवं राज्यों से संबंधित अनुच्छेद

अनुच्छेद :1

विषयवस्तु :संघ के क्षेत्र का नाम

अनुच्छेद :2

विषयवस्तु :नए राज्यों का नामांकन अथवा स्थापना

अनुच्छेद :2A.

विषयवस्तु :सिक्किम का संघ के साथ सहयुक्त किया जाना निरस्त

अनुच्छेद :3

विषयवस्तु :नए राज्यों की स्थापना तथा मौजूदा राज्यों के क्षेत्रफल, सीमा अथवा नामों में परिवर्तन

अनुच्छेद :4

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

विषयवस्तु :अनुच्छेद-2 एवं 3 के अंतर्गत बनाए गए कानून जिनके द्वारा पहली तथा चौथी अनुसूची एवं पूरक आनुषंगिक एवं अनुवर्ती मामलों में संशोधन किया जा सके।

संघ राज्य-क्षेत्र राज्य नहीं होते, इसलिए उनमें किसी भी प्रकार के परिवर्तन के लिए राज्य को निर्देश देने की आवश्यकता नहीं पड़ती। अनुच्छेद-3 एवं 4 में उल्लिखित परिवर्तन संसदीय विधान द्वारा ही संभव है। संसद् की स्वीकृति के बिना कार्यपालिका के आदेश से यह कार्य नहीं किया जा सकता।

नए राज्यों के गठन या राज्यों की सीमाओं में परिवर्तन संसद् द्वारा सामान्य बहुमत से पारित विधि के अंतर्गत संभव है। इस प्रक्रिया में निम्नांकित तथ्य विचारणीय होते हैं—

- विधेयक के पुर:स्थापन के लिए राष्ट्रपति द्वारा सिफारिश।
- पुर:स्थापित किए जाने से पूर्व विधेयक को राष्ट्रपति द्वारा सम्बन्धित विधान राज्यमंडल को अपना मत व्यक्त करने के लिए निर्देशन।
- निर्देश में निर्धारित अवधि के अंतर्गत विधानमंडल को अपना मत व्यक्त करना।
- निर्धारित अवधि को बढ़ाया भी जा सकता है।
- यदि राज्य विधानमंडल ने अपने विचार व्यक्त नहीं किए तो भी विधेयक पुन:स्थापित किया जा सकता है।
- विधानमंडल के विचारों को स्वीकार करने के लिए संसद् बाध्य नहीं।
- मूल विधेयक में यदि कोई संशोधन किया जाना है तो यह आवश्यक नहीं कि संशोधन राज्य विधानमंडल को भेजा जाए।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

8. नागरिकता

(भाग-2, अनुच्छेद-5 से 11 तक)

यद्यपि भारतीय संविधान के अंतर्गत भारत में एक संघीय व्यवस्था है, किंतु यह एकल नागरिकता को ही मान्यता देता है। भारत की नागरिकता और घटक राज्यों की नागरिकता अलग-अलग नहीं है। भारतीय संविधान के भाग-2 में अनुच्छेद-5 से 11 तक संपूर्ण भारत के सभी नागरिकों के लिए एकल नागरिकता संबंधी उपबंधों का निरूपण किया गया है। यह व्यवस्था इसलिए की गई है, ताकि देश की अखंडता बनी रहे। संविधान के अनुसार, नागरिक को राज्य की ओर से समस्त सामाजिक और राजनीतिक अधिकार प्राप्त होने चाहिए तथा उसे राज्य के प्रति कुछ कर्तव्यों का भी पालन करना चाहिए। साथ ही भारतीय नागरिक को राज्य के प्रति निष्ठा और आज्ञाकारिता भी अपनानी पड़ती है।

नागरिकों का वर्गीकरण

भारतीय संविधान में नागरिकों को निम्नलिखित पाँच श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है—

- प्रथम श्रेणी के अंतर्गत वे नागरिक आते हैं, जिनका जन्म अथवा उनके माता-पिता में से किसी एक का जन्म भारत में हुआ हो। इस प्रकार जो मूलत: भारतीय हैं, वे 'भारतीय नागरिक' कहलाने के अधिकारी हैं।
- द्वितीय श्रेणी के अंतर्गत वे नागरिक आते हैं, जो 19 जुलाई, 1948 से पहले पाकिस्तान से भारत में आ गए थे और तब से वे भारत में ही रह रहे हैं तथा जिनके माता-पिता, दादा-दादी में से किसी एक का जन्म अविभाजित भारत में हुआ हो।
- तृतीय श्रेणी के अंतर्गत वे नागरिक आते हैं, जो 19 जुलाई, 1948 के बाद पाकिस्तान से भारत आए और जिन्होंने 6 महीने बाद नागरिकता प्राप्त करने के लिए आवेदन-पत्र देकर संविधान के लागू होने से पहले भारतीय नागरिकों की सूची में अपना नाम दर्ज करा लिया।
- चतुर्थ श्रेणी के अंतर्गत उन नागरिकों की गणना की जाती है, जो मार्च, 1947 के बाद भारत से पाकिस्तान चले गए थे और बाद में भारत लौटकर भारत सरकार के कानूनी आज्ञा-पत्र से भारत में स्थायी रूप से बस गए और यहाँ के नागरिक बन गए।
- पंचम श्रेणी के अंतर्गत वे नागरिक परिगणित किए जाते हैं, जिनके माता-पिता या दादा-दादी दोनों या कोई एक अविभाजित भारत में पैदा हुए थे और किसी कारण से अन्य देश में रहते थे। ये लोग उस देश में स्थित भारतीय राजदूत अथवा वाणिज्य दूत के सामने विधिवत् आवेदन-पत्र उपस्थित करके भारत के नागरिक बन गए।

नागरिकता अधिनियम (1955) : एक दृष्टि में (2015 तक संशोधित)

धाराएं : 1

विषयवस्तु : संक्षिप्त शीर्षक,
धाराएं : 2

विषयवस्तु : व्याख्या

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

नागरिकता ग्रहण

धाराएं : 3

विषयवस्तु : जन्म से नागरिकता
धाराएं : 4

विषयवस्तु : वंश से नागरिकता
धाराएं : 5

विषयवस्तु : पंजीकरण से नागरिकता
धाराएं : 6

विषयवस्तु : प्रकृतिकरण से नागरिकता
धाराएं : 6-A.

विषयवस्तु : असम समझौते से आवरित व्यक्तियों की नागरिकता संबंधी विशेष प्रावधान

: ***धाराएं :*** 7

विषयवस्तु : भूभाग सम्मिलितीकरण से नागरिकता

विदेशी नागरिकता

धाराएं : 7-A.

विषयवस्तु : विदेशी भारतीय नागरिक कार्डहोल्डर का पंजीकरण
धाराएं : 7-B.

विषयवस्तु : विदेशी भारतीय नागरिक कार्डहोल्डर को अधिकार प्रदान करना
धाराएं : 7-C.

विषयवस्तु : विदेशी भारतीय नागरिक कार्ड का परित्याग
धाराएं : 7-D.

विषयवस्तु : विदेशी भारतीय नागरिक कार्डहोल्डर के रूप में पंजीकरण रद्द होना

नागरिकता की समाप्ति

धाराएं : 8

विषयवस्तु : नागरिकता का परित्याग
धाराएं : 9

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

विषयवस्तु : नागरिकता को समाप्त करना
धाराएं : 10

विषयवस्तु : नागरिकता से वंचित करना

परिशिष्टीय/पूरक

11. राष्ट्रमंडलीय नागरिकता (निरस्त)
12. कतिपय देशों के नागरिकों को भारतीय नागरिकों के समान अधिकार देना (निरस्त)
13. संदेह की स्थिति में नागरिकता प्रमाण-पत्र
14-A. धारा-5, 6 एवं 7-A के अंतर्गत आवेदनों का निस्तारण
14 I. राष्ट्रीय पहचान पत्र जारी करना 15. पुनरीक्षण
16. शक्ति का प्रतिविधान 17. अपराध
18. कानून बनाने की शक्ति 19. निरसित (निरस्त)

भारतीय नागरिकता अधिनियम, 1955

उपर्युक्त पाँच प्रकार की नागरिकता के अतिरिक्त अन्य प्रकार की नागरिकता भी हो सकती है, जिसे रेखांकित करने के लिए सन् 1955 में भारतीय संसद् ने भारतीय नागरिकता अधिनियम, 1955 पारित किया। इस अधिनियम के अनुसार, निम्नांकित आधारों पर नागरिकता प्राप्त की जा सकती है—

● *जन्म से* : प्रत्येक वह व्यक्ति, जिसका जन्म संविधान लागू होने अर्थात् 26 जनवरी, 1950 को या उसके पश्चात् भारत में हुआ हो, वह जन्म से भारत का नागरिक होगा। इसके अपवाद हो सकते हैं—राजनयिकों के बच्चे, विदेशियों के बच्चे।

● *वंश-परंपरा द्वारा नागरिकता* : भारत के बाहर अन्य देश में 26 जनवरी, 1950 के पश्चात् जन्म लेनेवाला व्यक्ति भारत का नागरिक माना जाएगा, यदि उसके जन्म के समय उसके माता-पिता में से कोई एक भारत का नागरिक हो।

नोट : माता की नागरिकता के आधार पर विदेश में जन्म लेने वाले व्यक्ति को नागरिकता प्रदान करने का प्रावधान नागरिकता संशोधन अधिनियम द्वारा किया गया है। ● *पंजीकरण द्वारा* : निम्नांकित वर्ग के व्यक्ति सक्षम पदाधिकारी के समक्ष स्वयं को पंजीकृत करवाकर भारत की नागरिकता प्राप्त कर सकते हैं—झ

● ऐसे व्यक्ति जो 26 जुलाई, 1947 के बाद पाकिस्तान से भारत आए हैं, वे उस दशा में भारतीय नागरिक माने जाएँगे, जब वे आवेदन-पत्र देकर सक्षम प्राधिकारी के समक्ष अपनी नागरिकता पंजीकृत करा लें, बशर्ते पत्र देने से पूर्व कम-से-कम 6 माह से भारत में रहते रहे हों तथा उनके माता-पिता अथवा दादा-दादी का जन्म अविभाजित भारत में हुआ हो।● ऐसे भारतीय, जो विदेशों में बस गए हैं, भारतीय दूतावासों में आवेदन-पत्र देकर भारतीय नागरिकता प्राप्त कर सकते हैं।

● वे विदेशी महिलाएँ जिन्होंने भारतीय नागरिकों से विवाह कर लिया हो, आवेदन-पत्र देकर भारतीय नागरिकता प्राप्त कर सकती हैं।

● भारतीय नागरिकों के नाबालिग बच्चे।

● राष्ट्रमंडल देशों के नागरिक आवेदन-पत्र देकर भारतीय नागरिकता प्राप्त कर सकते हैं, बशर्ते वे भारत में ही रहते

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

हों अथवा भारत सरकार की नौकरी करते हों।

● *देसीकरण द्वारा* : कोई भी विदेशी नागरिक भारत सरकार को देसीकरण के लिए आवेदन-पत्र देकर निम्नलिखित शर्तें पूरी करने तक भारतीय नागरिकता प्राप्त कर सकता है—

● वह किसी ऐसे देश का नागरिक न हो, जहाँ भारतीय देसीकरण द्वारा नागरिक बनने पर प्रतिबंध लगा हो।

● वह अपने देश की नागरिकता छोड़ चुका हो और भारत सरकार को इसकी सूचना दे दी हो।

● वह देसीकरण के लिए आवेदन करने की तिथि से 12 वर्ष तक या तो भारत या भारत सरकार की सेवा में रहा हो। यदि भारत सरकार चाहे तो इस अवधि को कम भी कर सकती है।

● 12 वर्षों के आरंभिक कुल सात वर्षों में से कम-से-कम 4 वर्ष तक वह भारत में रहा हो।

● वह अच्छे चरित्रवाला व्यक्ति हो।

● वह भारत की किसी प्रादेशिक भाषा अथवा राजभाषा का जानकार हो।

● नागरिकता प्रमाण-पत्र प्राप्त करने के बाद भारत में रहने का या सरकारी नौकरी करने अथवा किसी अंतरराष्ट्रीय संस्था, जिसका भारत भी सदस्य हो, में काम करने का इच्छुक हो।

● वह राज्य-निष्ठा की शपथ ग्रहण करे।

● *भूमि विस्तार द्वारा* : यदि किसी नए भू-भाग को भारत में शामिल किया जाता है, तो भारत सरकार स्वत: वहाँ की जनता को भारतीय नागरिकता दे सकती है।

नागरिकता का लोप

भारतीय नागरिकता अधिनियम, 1955 के अंतर्गत निम्नलिखित परिस्थितियों में नागरिकता के लोप का विधान किया गया है—

● विदेशी नागरिकता ग्रहण कर लेने पर किसी भी भारतीय व्यक्ति की नागरिकता समाप्त हो जाती है। पुन: भारत की नागरिकता पाने के लिए उसे विदेशी नागरिकता छोड़नी पड़ेगी।

● निम्नलिखित व्यक्ति भारत सरकार के द्वारा नागरिकता संबंधी अधिकारों से वंचित किए जा सकते हैं-

क. धोखा देकर भारत की नागरिकता प्राप्त करनेवाले।

ख. देशद्रोह के अपराधी।

ग. युद्धकाल में शत्रु की सहायता करनेवाले।

घ. नागरिकता प्राप्त करने के पाँच वर्षों के अंदर किसी न्यायालय से नागरिकता सम्बन्धी मामले में एक वर्ष के सजायाफ्ता।

च. नागरिकता प्राप्त करने के बाद 7 वर्षों से अधिक समय तक भारत से बाहर रहने वाले।

नागरिकता से संबंधित अनुच्छेद

अनुच्छेद विषयवस्तु

5. संविधान लागू होने के समय नागरिकता
6. कुछ वैसे व्यक्तियों के नागरिकता अधिकार जिन्होंने पाकिस्तान से भारत में प्रव्रजन किया है।
7. पाकिस्तान के प्रव्रजित व्यक्तियों के नागरिकता अधिकार
8. भारतीय मूल के वैसे लोगों के नागरिकता अधिकार जो भारत से बाहर निवास कर रहे हैं।
9. जो व्यक्ति स्वेच्छा से विदेशी राज्यों की नागरिकता प्राप्त कर रहे हैं, उन्हें नागरिकता नहीं मिल सकती।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

10. नागरिकता अधिकारों की निरंतरता।

11. संसद् द्वारा कानून बनाकर नागरिकता अधिकारों का नियमन।

भारतीय नागरिकता अधिनियम, 1955 की धारा-11 के अनुसार, प्रथम अनुसूची में लिखित किसी राष्ट्रमंडलीय देश का नागरिक भारत राष्ट्रमंडलीय नागरिक की स्थिति प्राप्त कर सकता है। इसी अधिनियम की धारा-12 के अनुसार, पारस्परिकता के आधार पर प्रथम अनुसूची में दिए हुए किसी देश के नागरिक को राजकीय सूचना के द्वारा भारत की नागरिकता संबंधी सभी अधिकार प्रदान किए जा सकते हैं।

नागरिकता संशोधन अधिनियम, 1986

सन् 1986 में नागरिकता अधिनियम, 1955 में संशोधन किया गया। यह संशोधित अधिनियम, 'नागरिकता संशोधन अधिनियम, 1986' के नाम से जाना जाता है। इसके अंतर्गत नागरिकता प्राप्त करने की शर्तों में निम्नलिखित संशोधन किए गए—

- भारत में जन्म लेनेवाला कोई भी व्यक्ति यदि भारतीय नागरिक के रूप में पंजीकृत होना चाहता है तो उसे भारत में लगातार पाँच वर्ष तक रहने का प्रमाण-पत्र देना होगा। उल्लेख्य है कि पहले यह अवधि मात्र 6 माह थी।
- किसी भी व्यक्ति का जन्म भारत में हो तो उसे इस आधार पर भारतीय नागरिकता स्वत: प्रदान नहीं की जा सकती। जन्म के आधार पर केवल उन्हीं लोगों को नागरिकता प्रदान की जा सकती है, जिनके माता-पिता में से कोई एक पहले से ही भारत का नागरिक रहा हो। इससे पूर्व अधिनियम में ऐसी व्यवस्था थी कि भारत में जन्म लेने वाला व्यक्ति स्वत: नागरिकता प्राप्त करने का अधिकारी हो जाता है।
- प्रवासी के रूप में रहनेवाले विदेशी व्यक्ति को देसीकरण के आधार पर नागरिकता प्राप्त करने के लिए भारत में निवास करने की जो शर्तें पहले पाँच वर्ष की थीं, उन्हें इस संशोधन के द्वारा दस वर्ष कर दिया गया।
- इस संशोधन के बाद भारतीय पुरुष से विवाह करनेवाली विदेशी महिला को नागरिकता प्राप्त करने का अधिकार दिया गया।

सन् 1992 में संसद् द्वारा पुन: सर्वसम्मति से नागरिकता संशोधन अधिनियम संशोधित किया गया। इस अधिनियम के अंतर्गत यह व्यवस्था की गई कि भारत से बाहर पैदा होने वाले बच्चे को, यदि उसकी माँ भारत की नागरिक है तो उसे भी भारत की नागरिकता प्राप्त होगी। इससे पूर्व भारत से बाहर पैदा होनेवाले बच्चे को केवल उसी दशा में नागरिकता दी जाती थी, जब उसका पिता भारतीय नागरिक होता था।

भारतीय नागरिक के अधिकार

भारतीय संविधान के अंतर्गत भारतीय नागरिकों को निम्नलिखित अधिकार दिए गए हैं—

- अनुच्छेद-12 से 35 तक में उल्लिखित मूल अधिकार।
- अनुच्छेद-18(2) नागरिकों पर यह प्रतिबंध लगाता है कि वह विदेशी राष्ट्र से कोई उपाधि स्वीकार नहीं करेगा।
- केवल भारतीय नागरिक ही संसद् या राज्य विधानमंडल के सदस्य होने के योग्य होते हैं।
- लोकसभा और राज्य विधानसभा के मतदाता होने के योग्य पात्र केवल भारतीय नागरिक ही हैं।
- केवल भारतीय नागरिक ही कुछ विशिष्ट पद धारण करने के उचित पात्र हैं। ये पद हैं—राष्ट्रपति (अनुच्छेद-58), उपराष्ट्रपति (अनुच्छेद-66), उच्चतम न्यायालय का न्यायाधीश (अनुच्छेद-124), उच्च न्यायालय का न्यायाधीश (अनुच्छेद-217), किसी राज्य का राज्यपाल (अनुच्छेद-157), महान्यायवादी और महाधिवक्ता (अनुच्छेद-76 और 165)।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

नागरिकता अधिनियम (1955) की अनुसूचियां

संख्या: पहली अनुसूची

विषयवस्तु: राष्ट्रमंडल देशों से संबंधित देशों की सूची (2003 संशोधन द्वारा निरस्त)

संख्या: दूसरी अनुसूची

विषयवस्तु: निष्ठा की शपथ

संख्या: तीसरी अनुसूची

विषयवस्तु: प्रकृतिकरण के लिए योग्यता

संख्या: चौथी अनुसूची

विषयवस्तु: विदेशी नागरिकता से संबंधित देश (2005 संशोधन द्वारा निरस्त)

नोट : जम्मू-कश्मीर राज्य के विधानमंडल को निम्नलिखित विषयों के संबंध में राज्य में स्थायी रूप से निवास करनेवाले व्यक्तियों को अधिकार तथा विशेषाधिकार प्रदान करने की शक्ति प्रदान की गई है—

- राज्य के अधीन नियोजन के संबंध में।
- राज्य में अचल संपत्ति के अर्जन के संबंध में।
- राज्य में स्थायी रूप से बस जाने के संबंध में।
- छात्रवृत्तियाँ अथवा इसी प्रकार की सहायता, जो राज्य सरकार प्रदान करे।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

9. मौलिक अधिकार

(भाग-3, अनुच्छेद-12 से 35 तक)

व्यक्ति के जीवन में पूर्ण नैतिक, भौतिक और व्यक्तित्व विकास के लिए कुछ अनिवार्य अधिकार माने गए हैं, अत: इन्हें 'मौलिक अधिकार' कहा जाता है। संविधान के भाग-3 में इन मौलिक अधिकारों का निरूपण किया गया है। संविधान के भाग-3 को भारत का अधिकार-पत्र कहा जाता है। इन्हीं की सहायता से जनता का विकास होता है। इस रूप में ये अधिकार ही राज्य की आधारशिला होते हैं। इसीलिए विश्व के प्राय: सभी लोकतंत्रात्मक राज्यों के लिखित संविधानों में किसी-न-किसी रूप में मौलिक अधिकारों की व्यवस्था की गई है।

सन् 1931 में कराची अधिवेशन में (अध्यक्ष सरदार वल्लभभाई पटेल) कांग्रेस ने घोषणा-पत्र में मूल अधिकारों की माँग की। मूल अधिकारों का प्रारूप जवाहरलाल नेहरू ने बनाया था।

संवैधानिक मूल अधिकारों की मुख्य विशेषता यह है कि वे राज्य द्वारा पारित विधियों से ऊपर हैं। संवैधानिक प्रक्रिया के अतिरिक्त इनमें कोई परिवर्तन या संशोधन अपेक्षित नहीं है। मूल अधिकारों की रक्षा के लिए न्यायपालिका सभी आवश्यक कदम उठा सकती है। मौलिक अधिकारों के संबंध में न्यायाधीश सप्रू का कथन है —''संविधान के रचनाकार मौलिक अधिकारों के माध्यम से समस्त नागरिकों को यह समझाना चाहते थे कि देश के सर्वोच्च कानून ने विशेष अधिकारों को समाप्त और निश्चित कर दिया है कि मानव की भौतिक, नैतिक पूर्णता के लिए आवश्यक अधिकारों के विषय में समाज के एक भाग और दूसरे में पूर्ण समानता है।''

मौलिक अधिकारों का स्वरूप

भारतीय संविधान के भाग-3 में अनुच्छेद-12 से 35 तक मौलिक अधिकारों का निरूपण किया गया है। इस भाग में पहले मूल अधिकार को परिभाषित करने का प्रयास किया गया है। भारतीय संविधान में प्रतिपादित इन अधिकारों को तीन वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

- इस वर्ग के अधिकारों के संबंध में न्यायालय में कार्यवाही की जा सकती है। ऐसे अधिकारों के अनुसार, कानून की दृष्टि में सभी नागरिक समान हैं।
- दूसरे प्रकार के अधिकार ऐसे हैं, जिनके संबंध में न्यायालय में कोई कार्यवाही नहीं की जा सकती, जैसे— नागरिक को जीविका प्राप्त करने का अधिकार। यह बात यूँ भी कही जा सकती है कि न्यायालय में कोई यह दावा नहीं कर सकता कि मैं बेकार हूँ, मुझे रोजगार दिया जाए।
- कुछ अधिकार भारतीय और विदेशियों को समान रूप से प्राप्त हैं, जैसे—जीवन और संपत्ति की रक्षा का अधिकार।

संविधान में मौलिक अधिकार

संविधान में निम्नलिखित छह मौलिक अधिकार हैं—

1. समता का अधिकार—अनुच्छेद-14 से 18 तक।
2. स्वतंत्रता का अधिकार—अनुच्छेद-19 से 22 तक।
3. शोषण के विरुद्ध अधिकार—अनुच्छेद-23 से 24 तक।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

4. धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार—अनुच्छेद-25 से 28 तक।
5. संस्कृति और शिक्षा संबंधी अधिकार—अनुच्छेद-29 से 30 तक।
6. संवैधानिक उपचारों का अधिकार—अनुच्छेद-32।

अनुच्छेद-31 में वर्णित संपत्ति के अधिकार को संविधान के 44वें संशोधन अधिनियम के द्वारा हटाकर इसे कानूनी अधिकार के रूप में अनुच्छेद-300 (क) में स्थान दिया गया। इस प्रकार वर्तमान में भारतीय नागरिकों को सिर्फ 6 मौलिक अधिकार प्राप्त हैं और संपत्ति का अधिकार अब विधिक अधिकार मात्र रह गया है।

मौलिक अधिकारों की विशेषताएँ

संविधान द्वारा भारतीय नागरिकों को दिए गए मौलिक अधिकारों की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं—

- भारतीय नागरिकों के मूल अधिकार मुख्यत: अमेरिकी पद्धति पर आधारित हैं, न कि ब्रिटिश पद्धति पर। ग्रेट ब्रिटेन में संविधान का कोई लिखित अस्तित्व नहीं है, इसलिए स्थायित्व का भी अभाव है। इसके विपरीत अमेरिकी संविधान में मौलिक अधिकारों की लिखित एवं औपचारिक घोषणा की गई है। भारतीय संविधान के रचनाकारों ने भारतीय परिवेश में नागरिकों के मूल अधिकार निश्चित किए हैं, जो आधुनिक विचारधारा और राष्ट्रीयता की भावनाओं से प्रभावित हैं।
- भारतीय संविधान में नागरिकों के मौलिक अधिकार राजनीतिक गतिविधियों एवं परिवर्तनों के प्रभाव से सर्वथा मुक्त हैं। साथ ही इनमें अल्पसंख्यक वर्गों को पूर्ण संरक्षण प्रदान किया गया है।
- इन मौलिक अधिकारों द्वारा जनता को यह आभास दिलाया गया है कि उसे एक नया राष्ट्रीय और स्थायी स्वरूप दिया गया है। जैसा कि न्यायाधीश तेजबहादुर सपू्र ने एक मुकदमे के फैसले में कहा था, ''इन मौलिक अधिकारों का उद्देश्य न केवल सुरक्षा व नागरिक समानता ही प्रदान करना था, बल्कि इसके साथ आचरण, नागरिकता, न्याय और उचित व्यवहारों का मानदंड भी निर्धारित करना था, ताकि राष्ट्र निर्माण में सहायता मिल सके। साथ ही संविधान की पृष्ठभूमि में नागरिकों को यह विदित कराना भी एक उद्देश्य था कि इस देश की सर्वोच्च विधि ने सब प्रकार के विशेषाधिकारों को समाप्त कर समाज में पूर्ण साम्य स्थापित किया है।''
- विश्व के अन्य संविधानों की अपेक्षा भारतीय संविधान में नागरिकों के मौलिक अधिकारों का विशद् निरूपण हुआ है; उदाहरण के लिए—अनुच्छेद-15 (2) के अंतर्गत किसी को धर्म, जाति या वंश के आधार पर बाजारों या होटलों में आने-जाने से नहीं रोका जा सकता। अनुच्छेद-15 (4) में अछूत जातियों और अनुसूचित जातियों से संबंधित उपबंध हैं।
- भारतीय संविधान के मौलिक अधिकार केवल भारतीय नागरिकों के लिए हैं, विदेशियों के लिए नहीं; जैसे—अनुच्छेद-15, 16 और 19 में उल्लिखित अधिकार। इसके विपरीत कुछ अधिकार भारतीय और विदेशी—दोनों प्रकार के नागरिकों को समान रूप से दिए गए हैं; जैसे—अनुच्छेद-17, 20-32.
- भारतीय संविधान में कुछ मौलिक अधिकार राज्य पर निषेध के रूप में हैं और राज्य की विधि-निर्माण शक्ति की सीमा निर्धारित करते हैं, जैसे—किसी भी व्यक्ति को विधि के समक्ष समता से अथवा विधि के समान संरक्षण से (अनुच्छेद-14) राज्य द्वारा वंचित नहीं किया जाएगा। शिक्षा संबंधी उपाधियों के अतिरिक्त राज्य कोई अन्य उपाधि प्रदान नहीं कर सकेगा। नागरिकों की दृष्टि से इन अधिकारों को 'नकारात्मक अधिकार' कहा जा सकता है, जबकि अन्य अधिकार 'सकारात्मक' कहे जा सकते हैं। नकारात्मक अधिकारों का पालन करना शासन के लिए अनिवार्य है, किंतु सकारात्मक अधिकार सर्वोच्च नहीं हैं, इन पर प्रतिबंध लगाना अवैध नहीं होगा।
- अनुच्छेद-368 के अनुसार, मौलिक अधिकारों में संशोधन संभव है। इनके लिए राज्यों की स्वीकृति अनिवार्य

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

नहीं है। केवल संसद् ही यह संशोधन कर सकती है, बशर्ते उसे (संसद् को) दोनों सदनों के सदस्यों की संख्या के बहुमत से और उपस्थित मतदाता सदस्यों से दो तिहाई बहुमत मिला हो।

● अनुच्छेद-35 के अंतर्गत कुछ मौलिक अधिकारों को स्थगित करने अथवा उसे प्रतिबंधित करने का अधिकार सिर्फ संसद् को दिया गया है। संसद् किसी राज्य अथवा स्थानीय सेवाओं में नियुक्ति के संबंध में कानून बनाकर बंधन लगा सकती है। संसद् किसी भी न्यायालय को अपने स्थानीय क्षेत्राधिकार के अंतर्गत आदेश-निर्देश जारी करने का अधिकार दे सकती है। संसद् सैनिक सेवा या सशस्त्र बलों में संलग्न सदस्यों के लिए मौलिक अधिकारों में संशोधन या परिवर्तन कर सकती है। भाग-3 में उल्लिखित कुछ अपराधों के लिए संसद् दंड की सीमा निर्धारित कर सकती है।

नागरिकों के मूल अधिकार, जो विदेशियों को प्राप्त नहीं हैं

● केवल धर्म, मूल वंश, जाति, लिंग, जन्मस्थान आदि के आधार पर विभेद का प्रतिबंध (अनु. 15)

● सरकारी नियुक्ति के विषय में अवसर की समता (अनु. 16)

● वाक् स्वातंत्र्य एवं अभिव्यक्ति, शांतिपूर्ण सम्मेलन, संघ बनाने, निर्बाध विचरण एवं निवास तथा पेशा, व्यापार या कारोबार करने की स्वतंत्रता (अनु. 19)

● अल्पसंख्यकों को शिक्षा एवं संस्कृति संबंधी (अनु. 29)

● अल्पसंख्यकों को अपने धर्म के प्रसार हेतु शिक्षण संस्थाओं की स्थापना का अधिकार (अनु. 30)

प्रवासी भारतीय

वर्तमान में प्रवासी भारतीय 48 देशों में निवास कर रहे हैं और इनकी संख्या करीब 2 करोड़ है। इनमें से सर्वाधिक भारतीय इन देशों में निवास करते हैं—

देश :अमेरिका

प्रवासी भारतीय :34,43,063

देश :सऊदी अरब

प्रवासी भारतीय :30,00,000

देश :संयुक्त राज्य अमीरात

प्रवासी भारतीय :22,00,000

देश :मलेशिया

प्रवासी भारतीय :20,88,000

देश :नेपाल

प्रवासी भारतीय :20,00,000

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

देश :ब्रिटेन

प्रवासी भारतीय :14,51,862

देश :कनाडा

प्रवासी भारतीय :12,14,110

देश :दक्षिण अफ्रीका

प्रवासी भारतीय :1,21,411

देश :म्याँमार

प्रवासी भारतीय :1,00,000

देश :कुवैत

प्रवासी भारतीय :5,79,390

देश :श्रीलंका

प्रवासी भारतीय :5,51,390

देश :कतर

प्रवासी भारतीय :5,45,000

देश :ऑस्ट्रेलिया

प्रवासी भारतीय :3,90,894

देश :सिंगापुर

प्रवासी भारतीय :3,51,700

देश :त्रिनिनाद एवं टेबेगो

प्रवासी भारतीय :4,68,500

देश :बहरीन

प्रवासी भारतीय :3,50,000

देश :गुआना

प्रवासी भारतीय :3,20,200

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

देश :फिजी

प्रवासी भारतीय :3,13,798

देश :नीदरलैंड

प्रवासी भारतीय :2,15,000

देश :थाइलैंड

प्रवासी भारतीय :1,50,000

देश :इटली

प्रवासी भारतीय :1,20,000

देश :इंडोनेशिया

प्रवासी भारतीय :1,25,000

देश :न्यूजीलैंड

प्रवासी भारतीय :1,60,000

देश :केन्या

प्रवासी भारतीय :1,00,000

मौलिक अधिकारों पर प्रतिबंध

नागरिकों के मौलिक अधिकारों पर प्रतिबंध लगाकर उन्हें निम्नलिखित कारणों से स्थगित किया जा सकता है—

- अनुच्छेद-19, 21 और 32 के अंतर्गत आमतौर पर केवल भाषण, अभिव्यक्ति और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार और संवैधानिक उपचारों पर ही प्रतिबंध लगाकर उन्हें स्थगित किया जा सकता है, किंतु सैनिक सेवाओं में अनुशासन बनाए रखने के लिए मौलिक अधिकारों को प्रतिबंधित किया जा सकता है।
- अनुच्छेद-34 के अंतर्गत यदि किसी क्षेत्र में कुछ समय के लिए सैनिक कानून लागू होता है तो उस अवधि और उस क्षेत्र में किए गए कार्यों से संसद् अपने प्राधिकारियों को मुक्त कर सकती है।
- आपात्काल के दौरान अनुच्छेद-19 में उल्लिखित समस्त स्वतंत्रताएँ प्रतिबंधित की जा सकती हैं। अनुच्छेद-32 के अंतर्गत उल्लिखित संवैधानिक उपचारों के अधिकार भी इसके अपवाद नहीं हैं।
- अनुच्छेद-19 के अंतर्गत यह विधान है कि राज्य की सुरक्षा, सार्वजनिक व्यवस्था और शांति' तथा 'नैतिकता' के आधार पर राज्य भाषण और अभिव्यक्ति की, संस्था-गठन की और हथियार आदि से रहित रहकर सभा करने की स्वतंत्रताओं को प्रतिबंधित कर सकता है।

सामान्य और मौलिक अधिकारों में अंतर

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

प्राय: सामान्य और मौलिक अधिकारों को एक ही समझ लिया जाता है, जबकि दोनों में मूलभूत अंतर है।

सामान्य अधिकार देश की विधि द्वारा संरक्षित होते हैं, जबकि मूल अधिकार संविधान द्वारा रक्षित होते हैं। सामान्य अधिकारों को विधायी प्रक्रिया द्वारा बदला जा सकता है, जबकि मौलिक अधिकारों में परिवर्तन के लिए संविधान में संशोधन करना आवश्यक है। सामान्य अधिकार किसी अन्य व्यक्ति पर उसका प्रतिरूप कर्तव्य अधिरोपित करता है, जबकि मौलिक अधिकार में किसी व्यक्ति को राज्य के विरुद्ध अधिकार प्राप्त होता है।

प्रवासी भारतीय दिवस

भारत सरकार द्वारा प्रवासी भारतीयों के साथ सामंजस्य और संवाद कैसे स्थापित किया जाए, इसके लिए भारत सरकार ने एक उच्च स्तरीय कमेटी का गठन प्रमुख कानूनविद् लक्ष्मीमल सिंघवी की अध्यक्षता में किया था। 18 अगस्त, 2000 को इस कमेटी की संस्तुति पर महात्मा गांधी के आगमन की तिथि 9 जनवरी (1915) को प्रवासी भारतीय दिवस के रूप में मनाने की परंपरा शुरू हुई। इसके बाद प्रतिवर्ष 9 जनवरी को त्रिदिवसीय प्रवासी भारतीय दिवस सम्मेलन किया जाने लगा। इस अवसर पर ग्यारह प्रमुख प्रवासियों को सम्मानित भी किया जाता है।

अब तक संपन्न 'प्रवासी भारतीय दिवस'

वर्ष :2003

स्थान :नई दिल्ली

वर्ष :2004

स्थान :नई दिल्ली

वर्ष :2005

स्थान :मुंबई

वर्ष :2006

स्थान :हैदराबाद

वर्ष :2007

स्थान :नई दिल्ली

वर्ष :2008

स्थान :नई दिल्ली

वर्ष :2009

स्थान :चेन्नई

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

वर्ष :2010

स्थान :नई दिल्ली

वर्ष :2011

स्थान :नई दिल्ली

वर्ष :2012

स्थान :जयपुर

वर्ष :2013

स्थान :कोच्चि

वर्ष :2014

स्थान :नई दिल्ली

वर्ष :2015

स्थान :गांधी नगर

वर्ष :2016

स्थान :नई दिल्ली

वर्ष :2017

स्थान :बेंगलुरु

नागरिकों के मौलिक अधिकार

भारतीय संविधान में नागरिकों को निम्नलिखित मौलिक अधिकार दिए गए हैं—

समता का अधिकार

भारतीय संविधान के अनुसार, सभी भारतीय नागरिकों को समता का अधिकार प्राप्त है। संविधान के अनुच्छेद-14, 15 और 18 में समता संबंधी अधिकार का विवेचन किया गया है, जिसका सारांश यह है कि राज्य के लिए सभी नागरिक समान हैं। धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग या जन्म-स्थान के आधार पर किसी भी व्यक्ति के प्रति किसी प्रकार का पक्षपात करना संविधान के विरुद्ध है। इस रूप में नागरिकों को यह अधिकार दिया गया है कि यदि राज्य किसी नागरिक के प्रति असमान व्यवहार करे तो नागरिक उसका विरोध कर सकते हैं। लोकतंत्र में इस अधिकार को बहुत महत्त्वपूर्ण माना गया है, क्योंकि यही उसकी आधारशिला है। न्यायालय ने भी प्रतिष्ठित समता के सिद्धांत को संविधान का आधारिक लक्षण माना है। भारतीय संविधान में नागरिकों के इस अधिकार को

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

निम्नलिखित भागों में बाँटा गया है—

• *विधि के समक्ष समता* : अनुच्छेद-14 के अंतर्गत राज्य के क्षेत्र में किसी भी नागरिक को विधि के समक्ष समानता का अधिकार दिया गया है। इसका अभिप्राय यह है कि विधि के समक्ष सभी नागरिकों को समान रूप से संरक्षण प्राप्त होगा अर्थात् राज्य के कानून सब पर समान रूप से लागू होंगे। कानून के रूप में देशी और विदेशी नागरिकों के बीच कोई भेदभाव नहीं किया जाएगा। इसके द्वारा राज्य पर यह बंधन लगाया गया है कि वह सभी व्यक्तियों के लिए एक सी विधि बनाएगा और उसे समान रूप से लागू करेगा।

'विधियों के समान संरक्षण' पदवाक्य अमेरिकी संविधान से लिया गया है, जिसका अर्थ है कि विभिन्न वर्ग के व्यक्तियों की विभिन्न आवश्यकताओं के अनुसार उनके साथ पृथक् व्यवहार किया जा सकता है।

• *धर्म, जाति तथा लिंग के आधार पर भेदभाव का अंत* : अनुच्छेद-15 के अंतर्गत कहा गया है कि संविधान के अनुसार राज्य किसी भी नागरिक के विरुद्ध धर्म, मूल वंश, जाति, जन्मस्थान या लिंग के आधार पर भेदभाव नहीं करेगा। देश के सभी नागरिक सार्वजनिक स्थलों का उपयोग समान रूप से कर सकते हैं।

सार्वजनिक भोजनालय, दुकान, सिनेमा, होटल, तालाब, स्नानघाट, कुआँ, पार्क आदि का उपयोग सभी नागरिकों को समान रूप से प्राप्त करने का अधिकार है।

• *राज्य के अंतर्गत सेवाओं के संदर्भ में अवसर की समता* : अनुच्छेद-16(1) के अनुसार, सभी नागरिकों को राज्य के अधीन सरकारी सेवा अथवा पद पर नियुक्ति के लिए समान रूप से अवसर मिलेंगे। 16(2) के अनुसार, केवल धर्म, मूलवंश, जाति, लिंग, वंश, जन्मस्थान या निवास के आधार पर किसी नागरिक को राज्य के किसी विभाग की सेवा के लिए अयोग्य नहीं माना जाएगा। 16(5) के अनुसार, इस अनुच्छेद का कोई भी तत्त्व ऐसी विधि के प्रवर्तन को प्रभावित नहीं कर सकेगा, जो किसी धार्मिक संस्था के संचालन के लिए किसी पद पर नियुक्ति से संबंधित हो। अभिप्राय यह है कि सरकार को यह अधिकार होगा कि वह धार्मिक संस्था के लिए किसी विशिष्ट धर्मानुयायी को नियुक्त करे।

85वें संविधान संशोधन, 2002 द्वारा संविधान के अनुच्छेद-16(4)क को जोड़कर संशोधन किया गया है, जिससे सरकारी नौकरियों में अनुसूचित जाति एवं जनजाति के कर्मचारियों के लिए पदोन्नति में आरक्षण का मार्ग प्रशस्त हो गया है। संशोधनों के प्रावधानों के आधार पर अनुसूचित जाति व जनजाति के कर्मचारियों को 17 जून, 1995 से नियमानुसार पदोन्नति दी जा रही है।

• *अस्पृश्यता का अंत* : अनुच्छेद-17 के अनुसार, देश में अस्पृश्यता को पूर्णतः समाप्त कर दिया गया है, लेकिन व्यवहार में व्यापक रूप से अस्पृश्यता के प्रभाव को देखकर सन् 1955 में सरकार ने एक अधिनियम बनाया और अस्पृश्यता को एक दंडनीय अपराध बनाया।

• *उपाधियों का अंत* : उपाधियों को अनुच्छेद-18 के प्रथम उपबंध के अंतर्गत शैक्षिक और सैनिक क्षेत्रों को छोड़कर सभी उपाधियाँ प्रतिबंधित कर दी गईं। दूसरे उपबंध में कहा गया है कि भारत का कोई भी नागरिक विदेशी राज्य द्वारा दी गई उपाधि को स्वीकार नहीं कर सकेगा। तीसरे उपबंध में कोई भी विदेशी नागरिक, जो भारत में किसी सरकारी पद पर कार्यरत है, राष्ट्रपति की अनुमति के बिना विदेशी राज्य द्वारा दी गई उपाधि स्वीकार नहीं करेगा। चौथे उपबंध द्वारा यह भी प्रतिबंध लगा दिया गया कि कोई भी व्यक्ति, जो राज्य के अधीन किसी लाभप्रद पद पर है, राष्ट्रपति से अनुमति लिए बिना विदेशी राज्य से कोई भेंट या पद स्वीकार नहीं करेगा।

विदेशियों को प्राप्त मूल अधिकार (शत्रु देश के लोगों को छोड़कर)

• विधि के समक्ष समता और विधियों का समान संरक्षण (अनु. 14)

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

- अपराधों के लिए दोषसिद्धि के संबंध में संरक्षण (अनु.20)
- प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता का संरक्षण (अनु. 21)
- प्रारंभिक शिक्षा का अधिकार (अनु. 21 क)
- कुछ मामलों में हिरासत एवं नजरबंदी से संरक्षण (अनु. 22)
- बलात् श्रम एवं अवैध मानव व्यापार के विरुद्ध प्रतिषेध (अनु. 23)
- कारखानों आदि में बच्चों के नियोजन का प्रतिषेध (अनु.. 24)
- अंत:करण की और धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण और प्रयास करने की स्वतंत्रता (अनु. 25)
- धार्मिक कार्यों के संचालन की स्वतंत्रता (अनु. 26)
- किसी धर्म को प्रोत्साहित करने हेतु कर देने से स्वतंत्रता (अनु. 27)
- विशिष्ट शिक्षा संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा का धार्मिक उपासना में उपस्थित होने की स्वतंत्रता (अनु. 28)

स्वातंत्र्य अधिकार से संबंधित कुछ महत्त्वपूर्ण तथ्य

- संविधान में प्रेस की स्वतंत्रता जैसी कोई व्यवस्था नहीं है। नागरिकों की अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में ही प्रेस की स्वतंत्रता निहित है।
- अनुच्छेद-19(1)(ख) के अंतर्गत हड़ताल करने का अधिकार मूल अधिकार नहीं है, इसलिए किसी भी व्यक्ति को हड़ताल करने से रोका जा सकता है। 6 अगस्त, 2003 को तमिलनाडु के सरकारी कर्मचारियों की हड़ताल से संबंधित याचिकाओं पर निर्णय देते हुए उच्चतम न्यायालय ने कहा था कि हालाँकि यूनियनों को कर्मचारियों के हितों के लिए सामूहिक मोल भाव करने का अधिकार है, लेकिन उन्हें हड़ताल पर जाने का अधिकार नहीं है।

स्वतंत्रता का अधिकार

किसी भी देश या समाज की उन्नति व विकास के लिए ही नहीं, प्रजातंत्र की सफलता के लिए व्यक्तिगत स्वतंत्रता आवश्यक होती है। इसीलिए भारतीय संविधान में नागरिकों को स्वतंत्रता का अधिकार दिया गया है, जिन्हें अनुच्छेद-19 से 22 तक में देखा जा सकता है। ये स्वतंत्रताएँ निम्नलिखित हैं—

1. बोलने एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता।
2. शांतिपूर्वक एवं बिना हथियार लिए सभा करने की स्वतंत्रता।
3. संस्था, परिषद् या संघ के संगठन की स्वतंत्रता।
4. भारत में कहीं भी बिना रोक-टोक आने-जाने की स्वतंत्रता।
5. भारत के किसी भी भाग में बस जाने या निवास करने की स्वतंत्रता।
6. कोई आजीविका, व्यापार या कारोबार करने की स्वतंत्रता।
7. अपराधों के लिए दोष-सिद्धि के विषय में संरक्षण।
8. प्राण व शारीरिक स्वतंत्रता का संरक्षण।
9. बंदीकरण और निरोध से संरक्षण।

स्वतंत्रता संबंधी इन उपबंधों में से 7, 8, 9 आंग्ल रूल ऑफ लॉ (विधि का शासन) के अनुकरण में हैं। इसका मतलब है कि किसी भी व्यक्ति को तब तक दंडित नहीं किया जा सकता, जब तक न्यायालय द्वारा उसका अपराध सिद्ध नहीं कर दिया गया हो। इस प्रकरण में यह भी महत्त्वपूर्ण तथ्य है कि किसी व्यक्ति को उसी सीमा तक दंडित किया जा सकता है, जिसका उल्लेख विधि में किया गया हो।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

इस संदर्भ में कुछ अन्य महत्त्वपूर्ण बातें इस प्रकार हैं—

- यद्यपि संविधान के अनुसार सभी नागरिकों को अपना संघ बनाने का अधिकार है, किंतु यह अधिकार इस निर्बंधन के अधीन है कि राज्य लोक-व्यवस्था, सदाचार अथवा देश की अखंडता के हक में युक्ति-युक्त परिसीमाएं अधिरोपित कर सकेगा। विधि विरुद्ध क्रियाकलाप (निवारण) अधिनियम, 1967 के अधीन किसी संघ को विधि विरुद्ध घोषित करके उसके क्रिया-कलापों पर प्रतिबंध लगाया जा सकता है। यह तभी संभव है, जब उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की अध्यक्षता वाला अधिकार उस संगठन को सुनने के पश्चात् घोषणा को विधिमान्य ठहराए।
- पूर्व में नेशनल सोशलिस्ट कौंसलिंग ऑफ नागालैंड, लिबरेशन टाइगर्स ऑफ तमिल ईलम (एल.टी.टी.ई.), नेशनल कौंसलिंग ऑफ खालिस्तान और यूनाइटिड लिब्रेशनशिप ऑफ असम (उल्फा) को विधि विरुद्ध घोषित किया गया था। 10 दिसंबर, 1992 को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ, विश्व हिंदू परिषद्, बजरंग दल, इसलामिक सेवक संघ और जमायत-ए-इसलामी हिंद को विधि विरुद्ध घोषित किया गया था, किंतु 4 जून, 1993 को राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ और बजरंग दल पर लगाया गया प्रतिबंध अनुचित ठहराया गया था।
- एक अपराध के लिए किसी व्यक्ति पर दोबारा मुकदमा नहीं चलाया जा सकता है और न ही उसे एक अपराध के लिए दोबारा दंडित किया जा सकता है।
- किसी भी व्यक्ति को अपने ही विरुद्ध गवाही देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता।
- विधि द्वारा निर्धारित प्रक्रिया के बिना राज्य न तो किसी का प्राण ले सकता है और न ही उसकी दैहिक स्वतंत्रता का हरण कर सकता है।
- किसी अपराध में संदेह के आधार पर या पूछताछ के लिए किसी व्यक्ति को यदि गिरफ्तार किया जाता है, तो उसे उसकी गिरफ्तारी का कारण बताए बिना हवालात में नहीं रखा जा सकता। ऐसे व्यक्ति को उसकी इच्छानुसार अपने वकील से परामर्श करने एवं उसे अपनी पैरवी के लिए नियुक्त करने का अधिकार है।
- किसी भी गिरफ्तार व्यक्ति को मजिस्ट्रेट की आज्ञा के बिना हवालात में 24 घंटे से अधिक नहीं रखा जा सकता अर्थात् 24 घंटे के अंदर उसे निकटस्थ एवं संबंधित मजिस्ट्रेट के न्यायालय में उपस्थित करना आवश्यक है।
- ये उपबंध दो प्रकार के व्यक्तियों पर लागू नहीं होंगे-—

1. जो व्यक्ति भारत का अन्य देशीय शत्रु हो।
2. जो व्यक्ति किसी नजरबंदी कानून के अंतर्गत बंदी हो।

अब निजता भी एक मौलिक अधिकार(प्राइवेसी इज दि राइट अगेंस्ट दि स्टेट)

24 अगस्त, 2017 को भारत के उच्चतम न्यायालय की नौ सदस्यीय पीठ ने एक मत से अपने ऐतिहासिक फैसले में व्यक्ति की निजता को संविधान के तहत मौलिक अधिकार घोषित किया, जिसमें सरकार का कोई हस्तक्षेप नहीं हो सकता।

उच्चतम न्यायालय के अनुसार, यह अधिकार संविधान के अनुच्छेद-21 (जीवन व वैयक्तिक स्वतंत्रता के अधिकार और संविधान के भाग-3 (मौलिक अधिकारों का अध्याय) का एक स्वाभाविक अंग है, जिसे अलग करके नहीं देखा जा सकता।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि पर देखा जाए तो विभिन्न संदर्भों में पहले भी समय-समय पर निजता के अधिकार की चर्चा

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

होती रही है। सन् 1925 में महात्मा गांधी की सदस्यता वाली समिति ने कॉमनवेल्थ ऑफ इंडिया बिल बनाते समय निजता के अधिकार का विस्तार से उल्लेख किया था।

सन् 1947 में संविधान सभा में प्रारूप समिति थे अध्यक्ष डॉ. भीमराव अंबेडकर ने भी निजता के अधिकार का विस्तार से उल्लेख किया था, किंतु सन् 1954 में एम.पी. शर्मा मामले में आठ जजों की पीठ ने और सन् 1962 में खड़क सिंह मामले में छह जजों की पीठ ने निजता को मौलिक अधिकार नहीं माना था। 28 अप्रैल, 1976 को एडीएम, जबलपुर बनाम शिवाकांत शुक्ला के मामले में पूर्व मुख्य न्यायाधीश वाई.वी. चंद्रचूड़ ने भी निजता को मौलिक अधिकार नहीं माना था।

निवारक नजरबंदी अधिनियम : कुछ तथ्य

- संसद् ने सन् 1950 में निवारक नजरबंदी अधिनियम पारित किया था, जो 31 दिसंबर, 1969 तक चला। बाद में उसे समाप्त कर दिया गया।
- भारतीय संविधान के अनुसार, निवारक निरोध, सामान्य काल तथा संकट काल—दोनों में लागू होगा।
- 'निवारक निरोध' से अभिप्राय किसी प्रकार का अपराध किए जाने से पूर्व और बिना किसी प्रकार की न्यायिक प्रक्रिया के ही नजरबंद करना है। निवारक निरोध का उद्देश्य व्यक्ति को अपराध के लिए दंड देना नहीं, बल्कि उसे अपराध करने से रोकना है।
- कुछ राज्यों ने उनकी अधिकारिता के अंतर्गत आनेवाले विषयों से संबंधित निवारक निरोध को प्राधिकृत करने की विधियाँ बनाई हैं, जैसे—
- जम्मू-कश्मीर पब्लिक सेफ्टी एक्ट, 1977
- आंध्र प्रदेश डिटेंशन एक्ट, 1970
- राजस्थान निवारक निरोध अधिनियम, 1970
- उत्तर प्रदेश राष्ट्र विरोधी तत्त्व निवारण अधिनियम, 1970
- वैस्ट बंगाल प्रिवेंशन ऑफ वॉयलेंट एक्टिविटीज एक्ट, 1970
- मध्य प्रदेश सुरक्षा एवं लोक अधिनियम, 1980
- निवारक निरोध के लिए निम्नलिखित केंद्रीय अधिनियमों में उपबंध हैं
- विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी निवारण अधिनियम, 1974
- राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980
- चोरबाजारी निवारण और आवश्यक वस्तु प्रदाय अधिनियम, 1980

नजरबंदी कानून के अंतर्गत किसी व्यक्ति को तीन माह से अधिक समय तक बंदी नहीं रखा जा सकता। यदि उसे 3 माह से अधिक समय तक बंदी रखना आवश्यक है, तो नजरबंदी कानून परामर्शदात्री समिति की लिखित सलाह लेना अनिवार्य है। नजरबंदी कानून के अंतर्गत व्यक्ति को यथाशीघ्र और पूर्ण अवसर दिया जाएगा।16वें संविधान संशोधन (1963) द्वारा विचार और अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर एक और प्रतिबंध लगाया गया था, वह यह कि यदि कोई व्यक्ति भारत के किसी भाग को उससे अलग करवाने का प्रचार करे तो राज्य उसके विचार एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को सीमित कर सकता है।

44वें संशोधन अधिनियम द्वारा अनुच्छेद-21 को अनुच्छेद-359 की परिधि से बाहर निकाल दिया गया है। अब आपात्काल में भी जीवन की सुरक्षा और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के अधिकार को समाप्त या सीमित नहीं किया जा सकता। 86वें संशोधन (2002) द्वारा संविधान के अनुच्छेद-21 के तुरंत बाद खंड-21-(क) को जोड़कर शिक्षा

Novels English & Hind

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

को मौलिक अधिकार घोषित कर दिया गया है—'राज्य 6 से 14 वर्ष की आयु के सभी किशोर-किशोरियों को विधि द्वारा स्थापित प्रक्रिया के अनुसार नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा प्रदान करेगा।'

'टाडा', 'पोटा' और यू.ए.पी.ए.

● पंजाब, जम्मू-कश्मीर तथा अन्य राज्यों में बढ़ रही आतंकवादी गतिविधियों पर अंकुश लगाने के लिए सन् 1985 में 'टाडा' अर्थात् आतंकवाद एवं विध्वंसकारी गतिविधियाँ (निरोधक) अधिनियम लागू किया गया।

● 24 अक्तूबर, 2001 को राष्ट्रपति ने आतंकवाद निरोधक अध्यादेश, 2001 को लागू किया। यह अध्यादेश 'पोटा' के नाम से जाना गया। इसके तहत न्यूनतम सजा के तौर पर 5 वर्ष की कैद और अधिकतम सजा के तौर पर मृत्युदंड देने का प्रावधान किया गया था।

● 31 दिसंबर, 2001 को 3 प्रमुख संशोधनों के साथ यह अध्यादेश नए रूप में लागू किया गया, जिसे 'आतंकवाद निरोधक अध्यादेश' के नाम से जाना जाता है।

● 26 मार्च, 2002 को संसद् की संयुक्त बैठक में 'पोटो' के स्थान पर 'पोटा' (आतंकवाद निरोधक विधेयक) पारित किया गया। यह विधेयक 2 अप्रैल, 2002 को लागू किया गया। इस अधिनियम के आधार पर केंद्र को आतंकवाद से निबटने के लिए व्यापक अधिकार मिल गए।

● सन् 2004 में यू.पी.ए. सरकार ने पोटा हटाकर यू.ए.पी.ए. नामक विधेयक संसद् में प्रस्तुत किया। राष्ट्रीय सुरक्षा की दृष्टि से यह पोटा का ही नया रूप है।

मॉर्शल लॉ बनाम आपातकाल

मार्शल लॉ :1. यह सिर्फ मूल अधिकारों को प्रभावित करता है।

राष्ट्रीय आपातकाल :1. यह न केवल मूल अधिकारों को प्रभावित करता है, बल्कि केंद्र-राज्य संबंधों को भी प्रभावित करता है। इसके अलावा राजस्व वितरण एवं निकायी शक्तियों को प्रभावित करने के साथ संसद का कार्यकाल भी बढ़ा सकता है।

मार्शल लॉ :2. यह सरकार एवं साधारण कानूनी न्यायालयों को निलंबित करता है।

राष्ट्रीय आपातकाल :2. यह सरकार एवं सामान्य कानूनी न्याय को जारी रखता है।

मार्शल लॉ :3. यह कानून एवं व्यवस्था के भंग होने पर उसे दोबारा निर्धारित करता है।

राष्ट्रीय आपातकाल :3. यह सिर्फ तीन आधारों पर ही लागू हो सकता है—युद्ध, बाहरी आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह।

मार्शल लॉ :4. इसे देश के कुछ विशेष क्षेत्रों में ही लागू किया जा सकता है।

राष्ट्रीय आपातकाल :4. इसे पूरे देश के किसी भी हिस्से में लागू किया जा सकता है।

मार्शल लॉ :5. इसके लिए संविधान में कोई विशेष प्रावधान नहीं है।

राष्ट्रीय आपातकाल :5. संविधान में इसकी विशेष व्यवस्था है।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

अनुच्छेद-21 के संदर्भ में उच्चतम न्यायालय की घोषणा

उच्चतम न्यायालय ने अनुच्छेद-21 के भाग के रूप में निम्नलिखित अधिकारों की घोषणा की :

- मानवीय प्रतिष्ठा के साथ जीने का अधिकार।
- स्वच्छ पर्यावरण-प्रदूषण रहित जल एवं वायु में जीने का अधिकार एवं हानिकारक उद्योगों के विरुद्ध सुरक्षा।
- जीवन रक्षा का अधिकार।
- निजता का अधिकार।
- आश्रय का अधिकार।
- नि:शुल्क कानूनी सहायता का अधिकार।
- स्वास्थ्य का अधिकार।
- 14 वर्ष की उम्र तक नि:शुल्क शिक्षा का अधिकार।
- अकेले कारावास में बंद होने के विरुद्ध अधिकार।
- त्वरित सुनवाई का अधिकार।
- हथकड़ी लगाने के विरुद्ध अधिकार।
- अमानवीय व्यवहार के विरुद्ध अधिकार।
- देर से फांसी के विरुद्ध अधिकार।
- विदेश यात्रा करने का अधिकार।
- बंधुआ मजदूरी करने के विरुद्ध अधिकार।
- हिरासत में शोषण के विरुद्ध अधिकार।
- आपातकालीन चिकित्सा सुविधा का अधिकार।
- सरकारी अस्पतालों में समय पर उचित इलाज का अधिकार।
- राज्य के बाहर न जाने का अधिकार।
- निष्पक्ष सुनवाई का अधिकार।
- कैदी के लिए जीवन की आवश्यकताओं का अधिकार।
- महिलाओं के साथ आदर और सम्मानपूर्वक व्यवहार करने का अधिकार।
- सार्वजनिक फांसी के विरुद्ध अधिकार।
- सुनवाई का अधिकार।
- सूचना का अधिकार।
- प्रतिष्ठा का अधिकार।
- दोषसिद्धि वाले न्यायालय आदेश से अपील का अधिकार।
- सामाजिक सुरक्षा तथा परिवार के संरक्षण का अधिकार।
- सामाजिक एवं आर्थिक न्याय एवं सशक्तीकरण का अधिकार।
- जीवन बीमा पॉलिसी के विनियोग का अधिकार।
- शयन का अधिकार।
- शोर प्रदूषण से मुक्ति का अधिकार।
- विद्युत् (बिजली) का अधिकार।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

शोषण के विरुद्ध अधिकार

शोषण के विरुद्ध अधिकार को प्रत्याभूत करनेवाले दो अनुच्छेद भारतीय संविधान में हैं—23 और 24. अनुच्छेद-23 के अंतर्गत मनुष्यों की खरीद-फरोख्त करना, बेगार लेना और जबरदस्ती कार्य लेना वर्जित है। यदि कोई व्यक्ति इस अनुच्छेद का उल्लंघन करता है, तो उसे दंडित किया जाएगा। अनुच्छेद-24 के अंतर्गत 14 वर्ष से कम अवस्था के बच्चों को किसी भी कारखाने, खान अथवा अन्य किसी संकटपूर्ण नौकरी में नहीं लगाया जाएगा। इन्हें 'बाल-शोषण के विरुद्ध उपबंध' कहा जा सकता है। संविधान में इस अधिकार का एक अपवाद भी है, जिसके अंतर्गत सार्वजनिक उद्देश्य से लोगों को कार्य करने के लिए विवश किया जा सकता है। युद्ध अथवा अन्य राष्ट्रीय विपत्तियों के समय सरकार के विभिन्न प्रकार के कार्य इसी उपबंध के अंतर्गत आते हैं।

धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार

संविधान के अनुसार, भारत एक पंथनिरपेक्ष राज्य है। 'पंथ' को प्राय: धर्म का पर्यायवाची भी समझा जाता है। अंग्रेजी में इसके लिए 'सेक्यूलर' शब्द प्रयोग किया जा सकता है। इस धर्मनिरपेक्षता का सीधा-सा अर्थ यह है कि राज्य के लिए सभी धर्म समान होंगे। वह न तो किसी धर्म का स्वयं प्रचार करेगा और न किसी धर्म के शांतिपूर्ण प्रचार में बाधा बनेगा।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-25 से 28 तक धार्मिक स्वतंत्रता संबंधी उपबंध हैं। किसी व्यक्ति या संस्था को सदाचार, स्वास्थ्य, सार्वजनिक शांति और राज्य के अन्य नियमों का पालन करते हुए किसी भी धर्म अथवा विश्वास के प्रचार का अधिकारहोगा।

अनुच्छेद-25 के अंतर्गत प्रत्येक व्यक्ति को अंत:करण की स्वतंत्रता का अधिकार दिया गया है, जिसके आधार पर किसी भी धर्म को मानने तथा उसका प्रचार करने के लिए वह स्वतंत्र है। चूँकि भारत में ही नहीं, समस्त विश्व में धर्म के नाम पर जितना खून-खराबा हुआ है, उतना और किसी के नाम पर नहीं। संभवत: इसीलिए संविधान के रचनाकारों ने नागरिकों को यह अधिकार दिया है।

अनुच्छेद-25 के अधीन धार्मिक स्वतंत्रता पर कुछ नियंत्रण भी रखे गए हैं। समाज व राज्य के हित के लिए इनका पालन करना अत्यंत आवश्यक है। सार्वजनिक व्यवस्था की दृष्टि से राज्य किसी धार्मिक आचरण से संबंधित आर्थिक, राजनीतिक तथा अन्य किसी भी प्रकार की धार्मिक क्रियाओं पर नियंत्रण लगा सकता है। इसका मतलब यह है कि धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार असीमित नहीं है। इसके साथ-साथ यह भी उल्लेखनीय है कि राज्य किसी भी व्यक्ति को धर्म के आधार पर अनिवार्य सेवा से मुक्त नहीं कर सकता।

संविधान के अनुच्छेद-26 में धार्मिक मामलों के प्रबंध की स्वतंत्रता का अधिकार प्रत्याभूत किया गया है। इसके अंतर्गत धार्मिक उद्देश्य से संस्थाओं की स्थापना और उनके संचालन की स्वतंत्रता है। चल-अचल संपत्ति की स्वतंत्रता और विधि के अनुसार उसके प्रबंध की स्वतंत्रता भी इसी उपबंध के अंतर्गत आती है।

संविधान के अनुच्छेद-27 के अंतर्गत धार्मिक संस्थाएँ अपने सदस्यों से कर नहीं वसूल कर सकतीं। वस्तुत: यह अनुच्छेद किसी धर्म के साथ होनेवाले विशेष पक्षपात का विरोध करता है। संयुक्त राज्य अमेरिका और जापान के संविधानों में भी प्राय: ऐसी व्यवस्था है।

अनुच्छेद-28 के अंतर्गत सरकारी शिक्षण संस्थाओं में किसी धर्म विशेष की शिक्षा नहीं दी जाएगी। सरकारी अनुदान प्राप्त शिक्षण संस्थाओं में यह शिक्षा दी तो जा सकती है, किंतु इसके लिए नागरिकों को बाध्य नहीं किया जा सकता। धार्मिक संस्थाएँ राज्य के नियमों के अंतर्गत चल-अचल संपत्ति रख सकती हैं।

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

संस्कृति तथा शिक्षा से संबंधित अधिकार

भारत में धर्मगत विविधता की तरह संस्कृति की भिन्नता भी रही है; क्योंकि भारत एक विशाल देश है, जहाँ विभिन्न धर्म और संस्कृतियों के लोग निवास करते हैं। सामूहिक रूप से भले ही भारतीय संस्कृति के रूप में सांस्कृतिक एकता का उल्लेख किया जाए, किंतु व्यवहार में अलग-अलग क्षेत्र में अलग-अलग संस्कृतियों का विकास हुआ है। इसीलिए संविधान के रचनाकारों ने नागरिकों की सांस्कृतिक भिन्नताओं की रक्षा के लिए अनुच्छेद-29 और 30 में निम्नलिखित व्यवस्था दी है—

- अनुच्छेद-29 के अंतर्गत भारतीय नागरिकों को अपनी भाषा, लिपि एवं संस्कृति को बनाए रखने का अधिकार है।
- राज्य द्वारा संचालित अथवा वित्तीय सहायता प्राप्त किसी शिक्षण संस्थान में केवल धर्म, जाति अथवा भाषा के आधार पर किसी नागरिक को प्रवेश से वंचित नहीं किया जा सकता।
- अनुच्छेद-30 के अंतर्गत धर्म तथा भाषा के आधार पर अल्पसंख्यकों को अपनी इच्छा के अनुसार शिक्षण संस्थान की स्थापना करने का अधिकार दिया गया है।
- धर्म अथवा भाषा पर आधारित अल्पसंख्यकों की शिक्षण संस्थाओं को वित्तीय सहायता प्रदान करने में राज्य किसी भी प्रकार का भेद-भाव नहीं करेगा।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-345 के अंतर्गत यद्यपि भारत संघ की सरकारी भाषा हिंदी तथा उसकी लिपि देवनागरी घोषित की गई है, तथापि राज्यों को अपनी इच्छानुसार हिंदी अथवा उस प्रदेश में प्रचलित अन्य भाषा को सरकारी कामकाज में प्रयोग करने का अधिकार दिया गया है।

44वें संविधान के संशोधन से पूर्व 30 अप्रैल, 1979 तक संपत्ति का अधिकार मौलिक अधिकार माना जाता था, किंतु संविधान द्वारा प्रदत्त इस अधिकार में सन् 1951 में प्रथम संशोधन, 1955 में चतुर्थ संशोधन, 1971 में 25वें संशोधन एवं 1972 में 29वें और 1978 में 44वें संशोधन के द्वारा अनुच्छेद-19(1) (च) और अनुच्छेद- 31 को अपने सभी उपखंडों सहित निरसित कर दिया गया है। साथ ही संविधान के भाग-12 में एक नया अध्याय (4) जोड़ दिया गया है। इस नए अध्याय का शीर्षक है—संपत्ति का अधिकार। इसमें सिर्फ एक ही अनुच्छेद है—अनुच्छेद-300(क)। अब संपत्ति का अधिकार मौलिक अधिकार नहीं है। अब यह विधिक अधिकार रह गया है, संवैधानिक अधिकार नहीं।

संवैधानिक उपचारों का अधिकार

उपर्युक्त अनुच्छेदों के द्वारा भारतीय संविधान ने भारतीय नागरिकों को महत्त्वपूर्ण मौलिक अधिकार प्रदान किए हैं, किंतु समस्या तब उत्पन्न होती है, जब इन अधिकारों का हनन या अपहरण हो। मौलिक अधिकारों के लिए नागरिकों को पर्याप्त प्रतिकार मिलना भी आवश्यक होता है। प्रतिकारविहीन अधिकार किसी काम के नहीं होते। भारतीय संविधान में इन अधिकारों की प्राप्ति या रक्षा के लिए न्यायाधिकरण के माध्यम के रूप में सर्वोच्च न्यायालय की व्यवस्था की गई है।

संविधान के अनुच्छेद-32 से 35 तक मौलिक अधिकारों के प्रतिकार की व्यवस्था की गई है। संविधान के अनुसार, सर्वोच्च न्यायालय को यह अधिकार दिया गया है कि वह नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए किसी भी प्रकार की 'रिट' या लेख आदेश जारी कर सकता है। राज्य के उच्च न्यायालयों को भी अपने क्षेत्र में इसी प्रकार का अधिकार दिया गया है। मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए न्यायालय द्वारा निम्नलिखित व्यवस्थाएँ की जा सकती हैं—

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

● *बंदी प्रत्यक्षीकरण 'लेख'*—बंदी प्रत्यक्षीकरण लेख का तात्पर्य है—बंदी को प्रत्यक्ष रूप से न्यायालय के सामने उपस्थित करना। इस 'लेख' के अनुसार अवैध रूप से बंदी व्यक्ति को तुरंत रिहा कर दिया जाता है। बंदी अथवा कारावास—दोनों ही स्थितियों में यह 'लेख' लागू होता है। इस 'लेख' के द्वारा न्यायालय को यह अधिकार दिया गया है कि वह बंदी व्यक्ति को अपने समक्ष प्रस्तुत करने का आदेश दे। न्यायालय ही यह विवेचना करता है कि बंदी बनाए जाने के कारण वैध हैं अथवा नहीं। यदि कारणों की वैधता सिद्ध नहीं होती तो उस व्यक्ति को तुरंत मुक्त करने का आदेश दिया जा सकता है। यह प्रतिकार अवैध बंदीकरण के विरुद्ध है और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का संरक्षक भी।

● *परमादेश 'लेख'*—यह आज्ञा अथवा आदेश के रूप में होता है। किसी व्यक्ति या संस्था द्वारा अपना कर्तव्यपालन न करने पर परमादेश के रूप में न्यायालय उसे कर्तव्यपालन के लिए आज्ञा दे सकता है। इसके लिए परमादेश 'लेख' की याचिका से यह प्रदर्शित होना आवश्यक है कि जिसके विरुद्ध लेख जारी हो रहा है, उससे कार्य कराने का अधिकार प्रार्थी को है। द्वितीयत: यह लेख लोकप्रकृति के कर्तव्यों के संपादन के लिए जारी किया जाता है। तृतीयत: लेख जारी होने से पहले यह सिद्ध करना जरूरी है कि उसका वह कर्तव्य वैध है।

● *प्रतिषेध 'लेख'*—प्रतिषेध लेख के द्वारा सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय अपने अधीन न्यायालयों को उनके अधिकार क्षेत्र से बाहर जाने से रोकते हैं। अभिप्राय यह है कि यदि कोई न्यायालय विधि के विपरीत न्याय करता है तो उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय उसे रोक सकते हैं।

● *अधिकारपृच्छा 'लेख'*—किसी व्यक्ति के हित अथवा पद के विरुद्ध जारी किया जाने वाला लेख 'अधिकारपृच्छा लेख' कहलाता है। इस लेख के द्वारा कानून के प्रतिकूल पद या अधिकार प्राप्त करनेवाले व्यक्ति को पद या अधिकार के उपयोग से न्यायालय रोकता है, उदाहरण के लिए—65 वर्ष से अधिक उम्रवाले किसी व्यक्ति को लोक सेवा आयोग का सदस्य नियुक्त नहीं किया जा सकता। यदि इस नियम का उल्लंघन करते हुए 65 वर्ष से अधिक उम्र के किसी व्यक्ति को लोक सेवा आयोग का सदस्य नियुक्त किया जाता है तो न्यायालय उस पद को रिक्त करने का आदेश दे सकता है।

● *उत्प्रेषण 'लेख'*—यह लेख न्यायिक अथवा न्यायिक संस्थाओं के विरुद्ध जारी किया जाता है। जब कोई न्यायाधीश कानून की प्रक्रिया का अनुसरण नहीं करता और मुकदमे में कार्यवाही करते हुए अपने अधिकार-क्षेत्र से बाहर चला जाता है तो उच्चतम न्यायालय उत्प्रेषण लेख के द्वारा मुकदमा संबंधी समस्त कागजात अपने पास भेजने का आदेश दे सकता है।

मूल अधिकारों की वर्तमान स्थिति

संविधान में हुए विभिन्न संशोधनों और विवादों में दिए गए उच्चतम न्यायालय के फैसलों के आधार पर मौलिक अधिकारों की वर्तमान स्थिति इस प्रकार है—

● मौलिक अधिकार अनुच्छेद-368 में उल्लिखित प्रक्रिया के अनुसार, संविधान संशोधन अधिनियम पारित करके निरसित या संक्षिप्त किए जा सकते हैं।

● संवैधानिक मौलिक अधिकारों में संशोधन संभव है, पर उन्हें समाप्त नहीं किया जा सकता। यदि किसी मामले में उच्चतम न्यायालय यह निर्धारित करता है कि वह विशिष्ट अधिकार (या उसका कोई भाग) संशोधन द्वारा निकाल दिया गया है तो उस अधिकार का संशोधन अवैध होगा।

● जब तक कोई विशिष्ट मूल अधिकार संविधान के संशोधन द्वारा समाप्त नहीं किया जाता, तब तक वह संसद् और राज्य विधानमंडलों की विधायी शक्ति पर परिसीमा के रूप में होता है। यदि कोई विधानमंडल ऐसे मौलिक

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

अधिकार के उल्लंघन में कोई विधि बनाता है तो उसे उच्चतम न्यायालय अवैध घोषित कर सकता है, यदि उस विधि को संविधान द्वारा स्वयं संरक्षण प्रदान किया गया है तो ऐसा नहीं होगा। उदाहरण के लिए—अनुच्छेद-31 (क), 31 (ख) के साथ पठित 9वीं अनुसूची, अनुच्छेद-31 (ग)।

● उच्चतम न्यायालय ने अपने विभिन्न फैसलों में निम्नलिखित अधिकारों को मौलिक अधिकारों का भाग माना है। इसी दृष्टि से संविधान समीक्षा के लिए गठित राष्ट्रीय आयोग ने सुझाव दिया है कि निम्नलिखित अधिकारों को मौलिक अधिकारों के अध्याय में सम्मिलित किया जाना चाहिए—

क. प्रेस की स्वतंत्रता।
ख. सूचना पाने की स्वतंत्रता।
ग. यातना की क्रूरता, अमानवता अथवा दुर्व्यवहार अथवा दंड से निरोध।
घ. विदेश-भ्रमण करने और स्वदेश लौटने का अधिकार।
ङ एकांतता का अधिकार।
च. 14 वर्ष की आयु तक नि:शुल्क शिक्षा पाने का अधिकार।
छ. स्वच्छ और स्वास्थ्यवर्द्धक पर्यावरण का अधिकार।
ज. न्यायालय तक जाने का अधिकार।
झ. विधिक सहायता पाने का अधिकार।

मौलिक अधिकारों से संबंधित अनुच्छेद

अनुच्छेद विषय-वस्तु

सामान्य

12. राज्य की परिभाषा।
13. कानून जो मूल अधिकारों के प्रति असंगति अथवा अप्रतिष्ठापूर्ण है।
14. कानून के समक्ष समानता।
15. धर्म, प्रजाति अथवा नस्ल, जाति, लिंग अथवा जन्म स्थान के आधार पर भेदभाव का निषेध।
16. सार्वजनिक रोजगारों के मामलों में अवसर की समानता।
17. अस्पृश्यता का उन्मूलन।
18. उपाधियों का उन्मूलन।

स्वतंत्रता का अधिकार

19. अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता में संबंधित अधिकारों का संरक्षण।
20. अपराधों के लिए दोषसिद्धि से संरक्षण।
21. जीवन तथा व्यक्तिगत स्वतंत्रता का संरक्षण।
21-A. शिक्षा का अधिकार।
22. कुछ मामलों में गिरफ्तारी तथा निरुद्धता से संरक्षण।

शोषण के विरुद्ध अधिकार

23. मानव व्यापार तथा बलात् श्रम से संरक्षण।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

24. कारखानों में बच्चों के रोजगार का निषेध।

धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार

25. अंत:करण तथा धर्म के प्रकटन, अभ्यास एवं प्रचार-प्रसार की स्वतंत्रता।
26. धार्मिक मामलों के प्रबंधन की स्वतंत्रता।
27. किसी विशेष धर्म को प्रोत्साहित करने के लिए कर भुगतान की स्वतंत्रता।
28. कुछ शैक्षणिक संस्थाओं में धार्मिक निर्देशों अथवा धार्मिक उपासना के लिए उपस्थित होने की स्वतंत्रता।

सांस्कृतिक एवं शैक्षणिक अधिकार

29. अल्पसंख्यकों के हितों का संरक्षण।
30. अल्पसंख्यकों को अपनी शैक्षणिक संस्था खोलने और चलाने का अधिकार।
31. संपत्ति का अनिवार्य अधिग्रहण (निरस्त)।

कुछ कानूनों की सुरक्षा

31-A. भी में संपदा के अधिग्रहण के लिए कानून की सुरक्षा।
31-B. कुछ अधिनियमों एवं विनियमनों की वैधता।
31-C. नीति-निदेशक सिद्धांतों पर प्रभाव डालने वाले कानूनों की सुरक्षा।

संवैधानिक उपचारों का अधिकार

32. इस भाग द्वारा प्रदत्त अधिकारों को लागू करने से संबंधित उपचार।
33. इस भाग द्वारा प्रदान किए गए अधिकारों को संशोधित करने की संसद् की शक्ति।
34. इस भाग द्वारा प्रदत्त उन स्थितियों में रोक, जबकि किसी स्थान पर सैन्य शासन लगा हो।
35. इस भाग के प्रावधानों को प्रभावी बनाने संबंधी विधान।

अतिरिक्त ज्ञानवर्द्धक बिन्दु

- सर्वप्रथम मौलिक अधिकारों की मांग कांग्रेस द्वारा अपने बंबई अधिवेशन में उठाई गई। इस अधिवेशन के अध्यक्ष सदर हसन इमाम थे।
- कांग्रेस ने कराची अधिवेशन 1931 में प्रस्ताव किया कि भारतीय संविधान में मौलिक अधिकारों की आवश्यक सूची को शामिल किया जाना चाहिए इससे पूर्व नेहरू कमेटी ने 19 मौलिक अधिकारों का उल्लेख अपनी रिपोर्ट में किया था।
- संपत्ति का अधिकार पहले एक मौलिक अधिकार था लेकिन 44वें संविधान संशोधन अधिनियम (1978) द्वारा इसे मौलिक अधिकारों की श्रेणी से निकालकर संविधान के भाग 12 में अनुच्छेद 300-क के तहत एक कानूनी अधिकार बना दिया गया।
- मैगना कार्टा अधिकारों का वह प्रपत्र है जिसे इंग्लैंड के किंग जार्ज द्वारा 1215 में सामंतों के दबाव में जारी किया गया यह नागरिकों के मूल अधिकारों से संबंधित पहला लिखित प्रपत्र था।
- भारत में सभी व्यक्तियों (नागरिकों एवं विदेशियों) को दिए जाने वाले मूलाधिकार अनुच्छेद 14, 21, 23, 25, 27 और 28 में समाहित हैं।
- अस्पृश्यता को संविधान में परिभाषित नहीं किया गया है।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

- 1954 में भारत सरकार ने चार प्रकार के नागरिक सम्मान प्रारंभ किए-भारत रत्न, पदम् विभूषण, पदम् भूषण और पदम श्री। भारत सरकार द्वारा प्रदान उपाधियां भारत रत्न, पदम विभूषण, पदम भूषण, पदम श्री आदि को जनता पार्टी सरकार ने 1977 में समाप्त कर दिया था, जो कि 1980 में फिर चालू हो गया।
- जब अनुच्छेद 352 के अधीन आपात उद्घोषणा की जाती है तो अनु. 358 के तहत अनुच्छेद 19 निलंबित हो जाता है।
- गिरफ्तार अथवा हिरासत में लिए गए व्यक्ति को गिरफ्तारी के स्थान से मजिस्ट्रेट के न्यायालय में आवश्यक समय के अतिरिक्त ऐसी गिरफ्तारी से चौबीस घंटे की अवधि में निकटतम मजिस्ट्रेट के समक्ष पेश किया जाएगा। इन 24 घंटों में यात्रा में लगा समय शामिल नहीं होता।
- राष्ट्रपति के विशेष अधिकार द्वारा अनुच्छेद 20 व 21 में निहित अधिकारों को छोड़कर अन्य समस्त मौलिक अधिकारों को निलंबित किया जा सकता है।
- 50वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा अनुच्छेद 33 का विस्तार कर इंटेलीजेंस दूरसंचार तथा पैरा मिलिट्री के सदस्यों को भी इसमें सम्मिलित कर लिया गया।
- अनुच्छेद 359 के द्वारा राष्ट्रपति यह उद्घोषणा कर सकता है कि जब तक यह आपातकाल घोषणा जारी रहेगी तब तक मौलिक अधिकार निलंबित रहेंगे।
- मौलिक अधिकारों का उल्लंघन होने पर सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालय में अपील की जा सकती है।
- निवारक विरोध कानून के तहत किसी व्यक्ति को अपराध करने के पूर्व ही गिरफ्तार किया जा सकता है।
- संवैधानिक उपचारों का अधिकार संविधान द्वारा प्रदत्त मौलिक अधिकारों के लिए प्रभावी कार्यविधियां प्रतिपादित करता है। इसीलिए संविधान की आत्मा कहा जाता है।
- राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने 1931 के गोलमेज सम्मेलन में मांग रखी थी कि भारत के लिए जो संविधान बनाया जाए उसमें भाषायी और धार्मिक स्वतंत्रताएं अवश्य शामिल की जाएं।
- 1944-45 में तेज बहादुर सप्रू समिति के प्रस्तावों में दो प्रकार के अधिकारों की चर्चा थी— न्याय योग अधिकार और वाद अयोग्य अधिकार।
- संविधान सभा में मूल अधिकारों की उपसमिति ने जो प्रारूप सूची फरवरी 1948 को तैयार की मूल अधिकारों का वही प्रारूप संविधान में शामिल किया गया।
- संसद् ने अनु. 35 के अंतर्गत अस्पृश्यता निवारक अधिनियम, 1955 को 1976 में संशोधित करते हुए अस्पृश्यता बरतने पर कैद और कठोर दंड की व्यवस्था की।
- अनुच्छेद 19 को सभी मूल अधिकारों में आवश्यक अथवा मूल अधिकार के अध्याय का केंद्र कहा गया है।
- पिछड़े वर्गों के लिए सन् 1953 में काका कालेकर आयोग की स्थापना की गई थी, जिसने सन् 1955 में अपनी रिपोर्ट सरकार को प्रस्तुत की थी। इस रिपोर्ट में 2399 जातियों को सामाजिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़ी हुई माना गया था, जिनमें 837 जातियां तो अत्यधिक पिछड़ी हुई थीं।
- 1 जनवरी, 1979 को मंडल आयोग की स्थापना की गई वी.पी. मंडल इस आयोग के अध्यक्ष थे। मंडल आयोग ने 21 मार्च, 1979 को अपना कार्य प्रारंभ किया था तथा 31 दिसंबर, 1980 को अपनी रिपोर्ट सरकार को प्रस्तुत की थी। इस रिपोर्ट में 3743 जातियों को पिछड़ी हुई माना गया था।
- मंडल आयोग की रिपोर्ट के आधार पर 13 अगस्त, 1990 को प्रधानमंत्री वी.पी. सिंह के नेतृत्व में केंद्रीय सरकार ने एक कार्यालय ज्ञापन निकाला तथा सामाजिक एवं शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों के लिए 27 प्रतिशत अतिरिक्त

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

स्थान आरक्षित कर दिए।

- उपाधियों से सम्बन्धित अनुच्छेद 18 केवल निर्देशात्मक है, आदेशात्मक नहीं है।

❑

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

10. राज्य की नीति के निदेशक तत्त्व

(भाग-4 अनुच्छेद-36 से 51 तक)

किसी भी स्वतंत्र राष्ट्र के लिए मौलिक अधिकार तथा नीति-निर्देश देश के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। संभवत: इसीलिए भारतीय संविधान के भाग-3 व 4 के अनुच्छेद-36 से 51 तक में राज्य के नीति निदेशक तत्त्वों का निरूपण किया गया है। इन नीति-निदेशक तत्त्वों का महत्त्व इसी से प्रमाणित होता है कि भाग-3 तथा 4 मिलकर 'संविधान की आत्मा तथा चेतना' कहलाते हैं। नीति-निदेशक तत्त्व जनतांत्रिक और संवैधानिक विकास के नवीनतम तत्त्व हैं। ये वे तत्त्व हैं, जो संविधान के विकास के साथ ही विकसित हुए हैं। इन तत्त्वों का कार्य एक जनकल्याणकारी राज्य की स्थापना करना है।

राज्य के नीति-निदेशक तत्त्वों को संविधान की संजीवनी व्यवस्था कहा जा सकता है। इनमें संविधान और उसके सामाजिक न्याय-दर्शन का निचोड़ सन्निहित है। ये तत्त्व संविधान की प्रतिज्ञाओं और इच्छाओं को वाणी प्रदान करते हैं। इनका प्रयोजन शांतिपूर्ण तरीके से सामाजिक क्रांति का पथ प्रशस्त कर सामाजिक और आर्थिक उद्देश्यों को सिद्ध करना है। भारतीय संविधान के भाग-4 में वर्णित राज्य के नीति-निदेशक तत्त्वों का यह भाग न्यायपालिका के क्षेत्र से बाहर है, क्योंकि इसके लिए नागरिकों को न्यायालय में नहीं जाना पड़ता।

विश्व के संविधानों में संभवत: जर्मनी के संविधान में सबसे पहले राज्य की आर्थिक और संवैधानिक नीतियों की घोषणा की गई थी। बाद में अन्य देशों में भी इस पद्धति को महत्त्व दिया जाने लगा। इन संविधानों में ये नीतियाँ प्राय: न्यायालयों के कार्यक्षेत्र में ही आ जाती हैं।

संभवत: आयरलैंड का ही संविधान ऐसा है, जिसमें राज्य के नीति-निदेशक तत्त्व राज्य के न्यायपालिका क्षेत्र से बाहर रखे गए। भारतीय संविधान के रचनाकारों ने भी आयरलैंड के ही संविधान का अनुसरण किया है। अनुच्छेद-37 में स्पष्ट कहा गया है कि इस भाग में दिए गए उपबंधों को किसी न्यायालय द्वारा बाधित नहीं किया जा सकता, फिर भी इनमें निर्दिष्ट तत्त्व देश के शासन के मूलभूत तत्त्व हैं। विधि बनाने में इन तत्त्वों का प्रयोग करना राज्य का कर्तव्य होगा।

राज्यों के नीति-निदेशक तत्त्व राज्यों के लिए एक विशेष दिशा निर्धारित करते हैं, जिस पर राज्य को चलना चाहिए। अनुच्छेद-38 के अंतर्गत नीति-निदेशक तत्त्वों का लक्ष्य स्पष्ट करते हुए कहा गया है कि राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था, जिसमें सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक न्याय, राष्ट्रीय जीवन की सभी संस्थाओं को अनुप्राणित कर, भरसक प्रभावी रूप में स्थापना और संरक्षण करके अधिकाधिक लोक-कल्याण का प्रयास करेगा।

जिस प्रकार किसी भी कार्य की सफलता के लिए कुछ निश्चित सिद्धांतों एवं निर्देशों का पालन करना अनिवार्य होता है, उसी प्रकार राज्यों का संविधान में निर्दिष्ट उद्देश्य को पाने के लिए नीति-निर्धारक सिद्धांतों पर चलना अनिवार्य होता है।

राज्य की सफलता या विफलता का दायित्व बहुत कुछ इन्हीं नीति-निदेशक तत्त्वों पर निर्भर रहता है। इस प्रकर नीति-निदेशक सिद्धांत राज्य की नीति के निर्धारण में सहायक होते हैं।

डॉ. राजेंद्र प्रसाद के शब्दों में, ''राज्य के नीति-निदेशक सिद्धांतों का उद्देश्य जन-कल्याण को बढ़ावा देनेवाली सामाजिक व्यवस्था बनाना है।'' संविधान के चतुर्थ भाग में अनुच्छेद-38 से 51 तक राज्य के लिए 17 नीति-निदेशक तत्त्व निर्दिष्ट हैं। अनुच्छेद-39(क), 48(क), 49(क) को 1976 में 42वें संविधान संशोधन अधिनियम के

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

द्वारा अंत:स्थापित किया गया है। इसके अलावा 44वें संविधान संशोधन अधिनियम के द्वारा अनुच्छेद-38 में परिवर्तन किया गया है। इसी प्रकार सन् 2002 में पारित 86वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा अनुच्छेद-45 के स्थान पर नया अनुच्छेद रखा गया है।

नीति-निदेशक तत्त्वों का वर्गीकरण

यों तो संविधान में निर्दिष्ट राज्य के नीति-निदेशक सिद्धांतों को अनेक प्रकार से वर्गीकृत किया गया है, किंतु मोटे तौर पर इन्हें तीन समूहों में वर्गीकृत किया जा सकता है—

- इस समूह के नीति-निदेशक तत्त्वों पर कल्याणकारी राज्य का भवन खड़ा किया गया है। इस समूह के अंतर्गत अनुच्छेद-38(1), 38(2), 39(ख) और 39(ग), 43, 47 तथा 51 आते हैं।
- इस समूह के नीति-निदेशक तत्त्व प्रतिष्ठा और अवसर की समानता सुनिश्चित करते हैं। इस समूह के अंतर्गत अनुच्छेद-40, 44, 45, 47, 48, 48(क) और 50 आते हैं।
- इस समूह के नीति-निदेशक तत्त्व व्यक्ति के अधिकार जैसे हैं। इस समूह के अंतर्गत अनुच्छेद-39, 41, 42, 43(क) और 43 और 45 के कुछ भाग आते हैं।

नीति-निदेशक सिद्धांत

संविधान में उल्लिखित राज्य के नीति-निदेशक सिद्धांत इस प्रकार हैं—

लोक-कल्याण के लिए सामाजिक व्यवस्था

भारतीय संविधान के अनुसार, राज्य ऐसी सामाजिक व्यवस्था की स्थापना एवं रक्षा का प्रयत्न करेगा, जिससे अधिकाधिक लोक-कल्याण संभव हो। एक प्रकार से इस सिद्धांत में संविधान की उद्देशिका का आदर्श दोहराया गया। इस सिद्धांत के द्वारा प्रत्येक राज्य के समक्ष सामाजिक-आर्थिक उन्नति के लिए उचित लक्ष्य निर्धारित किए गए हैं।

लोक-कल्याणकारी राज्य की अवधारणा प्राय: मानव-संस्कृति के विकास में अपरिहार्य सोपान के रूप में मान्य है। भारत में लोक-कल्याणकारी राज्य की परिकल्पना हमें महाभारत काल से मिलती है। महर्षि व्यास का कथन प्रमाण है कि जो राजा अपनी प्रजा को पुत्रवत् समझकर उसके चतुर्दिक विकास का प्रयास नहीं करता है, वह नरकवासी होता है।

सन् 1947 में स्वतंत्रता-प्राप्ति के साथ ही हमारे कर्णधारों ने लोक-कल्याणकारी राज्य की परिकल्पना को साकार करने की बात उठाई। स्वतंत्रता-संग्राम के मध्य उन्होंने समाजवाद और व्यक्तिवाद का समन्वय प्रस्तुत करनेवाले लोक-कल्याणकारी राज्य के सिद्धांत को क्रियान्वित करने का स्वप्न देखा था।

स्वतंत्र भारत के प्रथम प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू का यह कथन द्रष्टव्य है— ''इसका कोई महत्त्व नहीं है कि हम साम्यवादी हैं या पूँजीवादी या समाजवादी या अन्य कुछ। हमारा मुख्य कार्य है—देशवासियों की भोजन, आवास, वस्त्र आदि की समस्याओं को सुलझाना।''

फलत: भारत के संविधान की प्रस्तावना और नीति-निदेशक तत्त्वों के अंतर्गत यह स्पष्ट शब्दों में लिखा गया है। संविधान के चतुर्थ खंड में अनुच्छेद-36 से 51 तक उन नीतियों और ठोस कार्यक्रमों का विवेचन किया गया है, जिन्हें अपनाकर भारत में लोक-कल्याणकारी राज्य की स्थापना की जा सकेगी।

संविधान के अनुच्छेद-38 में कहा गया है कि राज्य अधिकाधिक प्रभावी ढंग से एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

की स्थापना और सुरक्षा द्वारा, जिसके अंतर्गत सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक न्याय की प्राप्ति हो, जनता के कल्याण का प्रयास करेगा और राष्ट्रीय जीवन की प्रत्येक संस्था को इस संदर्भ में अवगत कराएगा।

इसी उद्देश्य की पूर्ति के लिए संविधान के अन्य अनुच्छेदों में (विशेषकर अनुच्छेद-39, 41, 43, 45, 46 तथा 48) कई नीति-निदेशक तत्त्वों का उल्लेख किया गया है, यथा—

1. राज्य अपनी नीति का संचालन इस प्रकार करेगा कि—

- सभी को जीवन-निर्वाह के पर्याप्त साधन समान रूप से सुलभ हों।
- राष्ट्रीय धन एवं संसाधनों का स्वामित्व एवं वितरण सभी के हित में हो।
- स्त्रियों और पुरुषों को समान कार्य हेतु समान वेतन प्राप्त हो।
- बालकों का शोषण न किया जा सके।

2. राज्य अपने आर्थिक साधनों की सीमा में कार्य दिलाने, वृद्घावस्था, बेकारी, बीमारी व अंग-भंग होने की दशा में लोक सहायता देने की व्यवस्था करे।

3. राज्य नागरिकों के जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने का प्रयास करे।

यहाँ यह उल्लेखनीय है कि भारत में लोक-कल्याणकारी राज्य की स्थापना हेतु नियोजन की नीति अपनाई गई है। इस संदर्भ में विभिन्न पंचवर्षीय योजनाएँ कार्यान्वित की गई हैं। शिक्षा के क्षेत्र में विविध प्रकार की सुविधाओं, जमींदारी-उन्मूलन, चकबंदी, भूमि-सुधार, सहकारी कृषि, ग्रामोद्योग, रोजगार संबंधी सुविधाओं आदि की व्यवस्था के द्वारा भारत में लोक-कल्याण का विस्तार हुआ है।

कर्मचारियों एवं मजदूरों के कल्याण हेतु भी कई योजनाएँ बनाई गई हैं। 44वें और 45वें संविधान संशोधन के द्वारा भी लोकमंगल की दिशा में अग्रसर होने के संकल्प को बल प्रदान किया गया है।

नीतिगत तत्त्वों का पालन

संविधान के अनुच्छेद-39 में यह व्यवस्था है कि राज्य निम्नलिखित विषयों की सुरक्षा में नीति का निर्देशन करेगा —

- स्त्री-पुरुष दोनों को समान रूप से जीविकोपार्जन के लिए पर्याप्त साधन प्राप्त करने का अधिकार हो।
- समाज के भौतिक साधनों का न्यायसंगत विभाजन हो, ताकि समस्त समाज का हित संभव हो।
- आर्थिक व्यवस्था इस प्रकार जारी रहे कि धन और उत्पादन के साधनों का अहितकारी केंद्रीकरण न हो।
- समान कार्य करने पर स्त्री और पुरुष दोनों के पारिश्रमिक में अंतर न हो अर्थात् दोनों को समान वेतन देने की व्यवस्था हो।
- श्रमिक पुरुषों, महिलाओं और बच्चों की शक्ति तथा स्वास्थ्य के लिए ऐसी व्यवस्था हो, जिससे उनकी शक्ति और स्वास्थ्य का दुष्प्रयोग न हो सके अर्थात् आर्थिक आवश्यकता पूरी करने के लिए विवश होकर नागरिकों को ऐसे रोजगारों की ओर न जाना पड़े, जो उनकी आयु और शक्ति के अनुकूल न हों।
- बालकों को विकास के अवसर तथा सुविधाएं उपलब्ध हों तथा उनका शोषण से संरक्षण हो सके।

संशोधित एवं परिवर्द्धित नीति-निदेशक तत्त्व

- अनुच्छेद-39 के बाद एक नया अनुच्छेद-39 (क) जोड़ा गया है, जिसमें समान न्याय और नि:शुल्क विधि सहायता का प्रावधान है।
- 42वें संवैधानिक संशोधन द्वारा अनुच्छेद-39 (च) को बदल दिया गया है। इसका उद्देश्य बच्चों और नवयुवकों को शोषण से बचाना और उनके स्वास्थ्य के लिए उपयुक्त अवसर एवं सुविधाएँ उपलब्ध कराना है।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

● अनुच्छेद-43 के बाद अनुच्छेद-43(क) जोड़ा गया, जिसमें उद्योगों के प्रबंध में कर्मकारों के भाग लेने की व्यवस्था है।

● 44वें संशोधन द्वारा अनुच्छेद-38 में एक खंड जोड़ दिया गया है, जिसके आधार पर राज्य, विशेषत: आय की असमानताओं को कम करने और व्यष्टियों के बीच तथा विभिन्न क्षेत्रों में रहनेवाले और विभिन्न व्यवसायों में लगे हुए लोगों के समूहों के बीच प्रतिष्ठा, सुविधाओं और अवसरों की असमानता समाप्त करने का प्रयास करेगा।

● नए अनुच्छेद-48 (क) के अंतर्गत पर्यावरण-संरक्षण एवं वन्य जीवों की रक्षा का प्रावधानहै।

● 86वें संविधान-संशोधन, 2002 द्वारा संविधान के अनुच्छेद-45 में संशोधन किया गया है और उसके स्थान पर अंकित वैकल्पिक अनुच्छेद के अनुसार 6 वर्ष तक के सभी बच्चों के लिए स्वास्थ्य एवं शिक्षा का प्रावधान करना राज्य का दायित्व होगा।

इस नीति पर चलकर समाज का अधिकाधिक हित करना ही राज्य का लक्ष्य होना चाहिए। यह सिद्धांत समाजवाद के अत्यन्त निकट है।

समान न्याय और नि:शुल्क विधिक सहायता

संविधान के अनुच्छेद-39 (क) के अनुसार, राज्य यह सुनिश्चित करेगा कि विधिक तंत्र के अंतर्गत सभी को न्याय सुलभ हो। कोई नागरिक आर्थिक या अन्य किसी कारण से न्याय प्राप्त करने के अवसर से वंचित न रह जाए। उपयुक्त विधान या योजना के द्वारा अथवा किसी अन्य रीति से नि:शुल्क विधिक सहायता उपलब्ध कराना राज्य का कर्तव्य होगा।

ग्राम पंचायतों का संगठन

अनुच्छेद-40 के अनुसार, राज्य ग्राम पंचायतों के संगठन के लिए अग्रसर होगा और उन्हें ऐसी शक्तियाँ प्रदान करेगा, जो उन्हें स्वायत्त शासन की इकाइयों के रूप में कार्य करने योग्य बनाने के लिए आवश्यक हैं। यह सिद्धांत महात्मा गांधी के ग्रामोद्धार तथा वर्तमान पंचायतराज प्रणाली के काफी निकट है, जिसका उद्देश्य विकेंद्रीकृत शासन तथा स्वयं स्वावलंबी इकाइयों की स्थापना करना है।

कार्य एवं शिक्षा के कुछ मामलों में जन-सहायता

अनुच्छेद-41 के अंतर्गत राज्यों को यह निर्देश दिया गया है कि वे अपनी आर्थिक क्षमता के आधार पर ऐसी व्यवस्था करें, जिससे राज्य के सभी व्यक्तियों को उनकी योग्यता के अनुसार शिक्षा और काम मिल सके। इतना ही नहीं, बेकारी, वृद्धावस्था, बीमारी तथा नि:शक्तता की दशाओं में राज्य सरकार उनकी सहायता कर सके।

कार्य तथा प्रसूति-सहायता के लिए न्यायोचित व्यवस्था

अनुच्छेद-42 के अंतर्गत यह निर्दिष्ट है कि राज्य कार्य एवं प्रसूति-सहायता के लिए न्यायोचित एवं मानवीय स्थितियों को सुरक्षित रखने का प्रयत्न करेगा। किसी भी व्यक्ति को उसकी क्षमता से अधिक काम न करना पड़े। राज्य नागरिकों के स्वास्थ्य एवं मनोरंजन की भी उचित व्यवस्था करे। प्रसूति की अवस्था में महिलाओं को उचित सहायता देना भी राज्य का कर्तव्य है। नागरिकों के स्वास्थ्य एवं जीवन की सुरक्षा करना भी राज्य के दायित्वों में गिना जाता है।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

श्रमिकों के लिए जीवन पारिश्रमिक

अनुच्छेद-43 के अंतर्गत राज्यों को यह निर्देश दिया गया है कि वे प्रत्येक श्रमजीवी को इतना वेतन अवश्य उपलब्ध कराएँ, जिससे श्रमिकों का जीवन ठीक प्रकार से व्यतीत हो सके और वे अपने व्यक्तित्व का समुचित विकास कर सकें।

इस प्रकार उक्त अनुच्छेद में नागरिकों के जीवन-स्तर की सुरक्षा का विधान है। राज्य का कर्तव्य है कि वह अपने नागरिकों के सर्वांगीण विकास के लिए उपयुक्त वातावरण बनाए और कुटीर उद्योग-धंधों की उन्नति तथा विकास में सहायक बने।

उद्योगों के प्रबंध में कर्मकारों का भाग लेना

संविधान के अनुच्छेद-43(क) के अनुसार, राज्य किसी उद्योग में लगे हुए उपक्रमों, स्थापनों या अन्य संगठनों के प्रबंध में कर्मकारों का भाग लेना सुनिश्चित करने के लिए उपयुक्त विधान द्वारा या किसी अन्य रीति से कदम उठाएगा।

नागरिकों के लिए समान सिविल-संहिता

अनुच्छेद-44 के अंतर्गत निर्दिष्ट है कि राज्य सभी भारतीय नागरिकों के लिए समान व्यवहार-संहिता सुरक्षित करने का प्रयास करेंगे अर्थात् नियम समान होंगे, चाहे वे किसी भी धर्म, जाति या संप्रदाय के हों।

नीति-निदेशक सिद्धांतों से संबंधित अनुच्छेद

अनुच्छेद :36

विषयवस्तु :राज्य की परिभाषा

अनुच्छेद :37

विषयवस्तु :इस भाग में समाहित सिद्धांतों को लागू करना

अनुच्छेद :38

विषयवस्तु :राज्य द्वारा जन-कल्याण के लिए सामाजिक व्यवस्था को बढ़ावा देना

अनुच्छेद :39

विषयवस्तु :राज्य द्वारा अनुसरण किए जाने वाले कुछ नीति सिद्धांत

अनुच्छेद :39 क

विषयवस्तु :समान न्याय एवं नि:शुल्क कानूनी सहायता

अनुच्छेद :40

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

विषयवस्तु :ग्राम पंचायतों का संगठन

अनुच्छेद :41

विषयवस्तु :कुछ मामलों में काम का अधिकार, शिक्षा का अधिकार तथा सार्वजनिक सहायता पाने का अधिकार

अनुच्छेद :42

विषयवस्तु :न्यायोचित एवं मानवीय कार्य दशाओं तथा मातृत्व सहायता के लिए प्रावधान

अनुच्छेद :43

विषयवस्तु :कर्मकारी के लिए निर्वाह मजदूरी आदि

अनुच्छेद :43 क

विषयवस्तु :उद्योगों के प्रबन्ध में कर्मचारियों की सहभागिता

अनुच्छेद :43 ख

विषयवस्तु :सहकारी समितियों को प्रोत्साहन

अनुच्छेद :44

विषयवस्तु :नागरिकों के लिए समान नागरिक संहिता

अनुच्छेद :45

विषयवस्तु :बालकों के लिए नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा

अनुच्छेद :46

विषयवस्तु :अनु. जाति, अनु. जनजाति तथा अन्य कमजोर वर्गों के शैक्षिक तथा आर्थिक हितों को बढ़ावा देना

अनुच्छेद :47

विषयवस्तु :पोषाहार का स्तर बढ़ाने, जीवन स्तर सुधारने तथा जन-स्वास्थ्य की स्थिति बेहतर करने संबंधी सरकार का कर्त्तव्य

अनुच्छेद :48

विषयवस्तु :कृषि एवं पशुपालन का संगठन

अनुच्छेद :48 क

विषयवस्तु :पर्यावरण संरक्षण एवं संवर्द्धन तथा वन एवं वन्य जीवों की सुरक्षा

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

अनुच्छेद :49

विषयवस्तु :राष्ट्रीय महत्त्व के स्मारकों, स्थानों एवं वस्तुओं का संरक्षण

अनुच्छेद :50

विषयवस्तु :न्यायपालिका का कार्यपालिका से पृथक्करण

अनुच्छेद :51

विषयवस्तु :अंतरराष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा को प्रोत्साहन

बच्चों के लिए निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा

अनुच्छेद-45 के अंतर्गत यह निर्दिष्ट है कि संविधान लागू होने के पश्चात् राज्य 10 वर्ष के अंदर 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों के लिए अनिवार्य एवं नि:शुल्क शिक्षा देने का प्रबंध करेगा, जिससे गरीब बच्चे भी आसानी से पढ़ सकेंगे।

दुर्बल वर्गों के शिक्षा तथा अर्थ संबंधी हितों की उन्नति

अनुच्छेद-46 के अनुसार, राज्य शिक्षा तथा धन से संबंधित हितों को प्रोत्साहन देगा। इससे अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के साथ-साथ अन्य दुर्बल वर्गों का भी विकास हो सकेगा। इसके अतिरिक्त सामाजिक अन्याय तथा अन्य प्रकार के शोषण से उनकी रक्षा करना भी राज्य का दायित्व है।

जनसाधारण के स्वास्थ्य में सुधार का प्रयत्न

अनुच्छेद-47 के अंतर्गत राज्य को यह निर्देश दिया गया है कि राज्य अपने नागरिकों के जीवन-स्तर को ऊँचा उठाने और उनके स्वास्थ्य की रक्षा करने के लिए प्रयत्न करेगा। औषधीय प्रयोजन को छोड़कर इस संदर्भ में वह ऐसे मादक पदार्थों के सेवन को प्रतिबंधित कर सकता है, जो नागरिकों के स्वास्थ्य के लिए हानिकारक हों।

कृषि तथा पशु-पालन का संगठन

अनुच्छेद-48 के अनुसार, राज्य का कर्तव्य है कि वह कृषि तथा पशु-पालन को नए ढंग से विकसित करने का प्रयास करे, और गायों, बछड़ों दूध देनेवाले और कृषि योग्य पशुओं की नस्ल की उन्नति और संरक्षण का प्रयास करे तथा उनके वध को बंद करने के लिए कदम उठाए।

पर्यावरण-संरक्षण एवं वन्य जीव-रक्षा

अनुच्छेद-48 (क) के अनुसार, देश के पर्यावरण संरक्षण, संवद्‌र्धन और वन तथा वन्य जीवों की रक्षा के लिए राज्य प्रयास करेगा।

राष्ट्रीय महत्त्व के स्थानों और वस्तुओं का संरक्षण

अनुच्छेद-49 के अंतर्गत राज्य का यह कर्तव्य होगा कि वह राष्ट्रीय महत्त्व के स्मारकों, स्थानों और वस्तुओं को नष्ट तथा खराब होने से बचाए, उनकी सुरक्षा करे और उनके संरक्षण की समुचित व्यवस्था करे। इनकी सुरक्षा के

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

लिए संसद् भी अलग से कानून बना सकती है, जिनका पालन करना राज्य सरकर के लिए अनिवार्य होगा।

कार्यपालिका से न्यायपालिका का पृथक्करण

संविधान के अनुच्छेद-50 के अंतर्गत यह निर्दिष्ट है कि राज्य की लोकसेवाओं में न्यायपालिका को कार्यपालिका से पृथक् करने के लिए राज्य कदम उठाएगा।

अंतरराष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा की उन्नति

अनुच्छेद-51 के अंतर्गत राज्य निम्नलिखित लक्ष्यों की पूर्ति के लिए प्रयत्नशील रहेगा—

1. अंतरराष्ट्रीय शांति एवं सुरक्षा हेतु प्रोत्साहन।
2. राष्ट्रों के बीच न्यायपूर्ण एवं सम्मानपूर्ण संबंध।
3. अंतरराष्ट्रीय विधि के प्रति सम्मान की घोषणा तथा संगठित लोक के परस्पर व्यवहारों में संधि का सम्मान।
4. अंतरराष्ट्रीय झगड़ों में पंचाट द्वारा समझौते को प्रोत्साहन देना आदि।

निदेशक तत्त्व बनाम मौलिक अधिकार

अनुच्छेद 37, के अनुसार निदेशक तत्त्वों का न्यायालय के द्वारा पालन करने का आदेश नहीं दिया जा सकता। पर आजकल न्यायालय निदेशक तत्त्वों को कार्यान्वित करने के लिए विशेष महत्त्व दे रहे हैं, विशेषत: जबकि निदेशक तत्त्वों को लागू न करने से मौलिक अधिकारों का हनन होता है। (उनी कृष्णा बनाम आंध्र प्रदेश राज्य), (1993)एस.सी.सी 645; अत: आजकल यह एक स्वर्णिम सिद्धांत है कि निदेशक तत्त्वों तथा मौलिक अधिकारों में कोई एक दूसरे से श्रेष्ठ नहीं हैं। अधिनियम या विधान की व्याख्या इस प्रकार की जाय कि किसी का उल्लंघन न हो।

संवैधानिक संशोधनों द्वारा संशोधित एवं परिवर्धित नीति-निदेशक तत्त्व

- 42वें संवैधानिक संशोधन द्वारा अनुच्छेद 39(च) को बदल दिया गया है। इसका उद्देश्य बच्चों और नवयुवकों को शोषण से बचाना और उनके स्वास्थ्य के लिए उपयुक्त अवसर एवं सुविधाएं उपलब्ध कराना है।
- अनुच्छेद 39 के बाद एक नया अनुच्छेद 39 (क) जोड़ा गया है, जिसमें समान न्याय और नि:शुल्क विविध सहायता का प्रावधान है।
- अनुच्छेद 43 के बाद अनुच्छेद 43 (क) जोड़ा गया, जिसमें उद्योगों के प्रबंध में कर्मकारों के भाग लेने की व्यवस्था है।
- नए अनुच्छेद 48 (क) में पर्यावरण-संरक्षण एवं वन्य जीवों की रक्षा का प्रावधान है।
- 86वें संविधान संशोधन, 2002 द्वारा संविधान के अनुच्छेद 45 में संशोधन किया गया है और उसके स्थान पर अंकित वैकल्पिक अनुच्छेद के अनुसार 14 वर्ष तक के सभी बच्चों के लिए स्वास्थ्य एवं शिक्षा का प्रावधान करना राज्य का दायित्व होगा।
- 44वें संशोधन द्वारा अनुच्छेद 38 में एक खंड जोड़ दिया गया है, जिसके आधार पर राज्य, विशेषत: आय की असमानताओं को कम करने और व्यष्टियों के बीच तथा विभिन्न क्षेत्रों में रहने वाले और विभिन्न व्यवसायों में लगे हुए लोगों के समूहों के बीच प्रतिष्ठा, सुविधाओं और अवसरों की असमानता समाप्त करने का प्रयास करेगा।

इसके अलावा, (i) अनुच्छेद-31 (ग) में संशोधन किया गया कि निदेशक तत्त्वों को प्रभावी करनेवाली विधि

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

अनुच्छेद-14 या 19 के अंतर्गत किसी भी मूल अधिकार का उल्लंघन करने के कारण शून्य नहीं होगी और (ii) एक नए अनुच्छेद-31 (घ) में विशिष्ट रूप से प्रावधान किया गया है कि राष्ट्रविरोधी क्रियाकलापों या संगमों के निवारण या प्रतिषेध का अधिकार प्रदान करनेवाली कोई विधि इस आधार पर शून्य नहीं होगी कि वह अनुच्छेद-14, 19 और 31 के अंतर्गत किसी मूल अधिकार से असंगत है।

आपात काल के दौरान सन् 1976 में 42वाँ संविधान संशोधन विधेयक पारित किया गया था। इस विधेयक के खंड-4 में यह प्रावधान था कि निदेशक तत्त्वों को लागू करने के लिए संसद् जिन विधियों की रचना करे, उन्हें इस आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती कि ये विधियाँ संविधान में दिए गए किसी अधिकार को सीमित या समाप्त करती हैं।

सन् 1979 में मिनर्वा मिल केस में उच्चतम न्यायालय में 42वें संशोधन विधेयक के कुछ खंडों को चुनौती दी गई थी। 31 जुलाई, 1980 को लंबी सुनवाई के बाद उच्चतम न्यायालय ने इस संशोधन के दो प्रावधानों (खंड-4 व खंड-55) को अवैध घोषित कर दिया था, क्योंकि इनसे संविधान के मूल तत्त्वों को आघात पहुँच सकता था। वर्तमान स्थिति यह है कि संविधान के अनुच्छेद-39 के भाग 'ख' और 'ग' (आर्थिक और सामाजिक न्याय से संबंधित तत्त्व) के क्रियान्वयन के लिए मौलिक अधिकारों को सीमित किया जा सकता है, लेकिन अन्य निदेशक तत्त्वों के क्रियान्वयन के लिए किसी विधि की रचना नहीं की जा सकती, जो मौलिक अधिकारों को सीमित या संशोधित करे।

❑

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

11. मूल कर्तव्य

(भाग-4-क अनुच्छेद—51-क)

अधिकारों के साथ-साथ कर्तव्यों का घनिष्ठ संबंध है। जहाँ अधिकार होंगे, वहाँ कर्तव्यों का होना भी अनिवार्य माना जाता है। साम्यवादी देशों के संविधानों में अधिकारों की अपेक्षा नागरिकों के मूल कर्तव्यों पर विशेष बल दिया गया है, जैसा कि गांधीजी का कहना है, ''अधिकार का स्रोत कर्तव्य है। यदि हम सब अपने कर्तव्यों का पालन करें तो अधिकारों को खोजने हमें दूर नहीं जाना पड़ेगा। यदि अपने कर्तव्यों को पूरा किए बिना हम अधिकारों के पीछे भागेंगे तो वे छलावे की तरह हमसे दूर रहेंगे, जितना हम उनका पीछा करेंगे वह उतनी ही दूर उड़ते जाएँगे। ...जीवित रहने का अधिकार भी हमें तभी प्राप्त होता है जब हम विश्व की नागरिकता के कर्तव्य को पूरा करते हैं।''

विश्व के प्रमुख लोकतांत्रिक देशों के संविधानों में मूल कर्तव्यों का कोई स्पष्ट उल्लेख नहीं है। भारत के अंगीकृत संविधान में भी नागरिकों के मूल अधिकारों का उल्लेख तो किया गया था, किंतु उनके कर्तव्यों का निर्धारण नहीं किया गया। हालाँकि भारतीय परंपराओं एवं चिंतनधाराओं ने सदियों से कर्तव्यों पर बहुत बल दिया है।

मूल कर्तव्यों के क्रियान्वयन के लिए भारत सरकार द्वारा गठित वर्मा समिति (1999) ने भी इस ओर संकेत किया है, ''अनुच्छेद-51(क) का गहन मूल्यांकन यह प्रदर्शित करता है कि ये धाराएँ ऐसे मूल्यों की अभिव्यक्ति हैं, जो भारतीय परंपरा, मिथकों, धर्मों तथा व्यवहारों में विद्यमान रही हैं। आज इतिहास के इस मोड़ पर राष्ट्र अति आवश्यक रूप से इनको पुन: इस प्रकार महत्त्व प्रदान करने की आवश्यकता अनुभव कर रहा है कि सारी पीढ़ियाँ इसे स्वीकार तथा आत्मसात् कर सकें। इस उद्देश्य को प्राप्त करने हेतु, यह आवश्यक होगा कि व्यक्ति में इस अवधारणा को स्वीकार तथा आत्मसात् करने की जागरूकता उत्पन्न करें, जिसमें वैज्ञानिक दृष्टिकोण हो और जो तनावों और विक्षोभ से मुक्त हो।''

मौलिक कर्तव्यों में वृद्धि

86वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2002 द्वारा संविधान के अनुच्छेद 51ए में संशोधन करके (भ) के बाद नया अनुच्छेद (ट) जोड़ा गया है, ''जिसमें 14 साल तक आयु के बच्चे के माता-पिता को अपने बच्चे को शिक्षा दिलाने के लिए अवसर उपलब्ध कराने का प्रावधान है।

- मूल कर्तव्यों का समावेश डॉ. स्वर्ण सिंह समिति (1974) की सिफारिशों के आधार पर किया गया था।
- भारतीय संविधान में नागरिकों के लिए मूल कर्तव्यों की प्रेरणा पूर्व सोवियत संघ के संविधान से मिली थी।
- मूल कर्तव्य के पालन न किए जाने पर दंड की कोई व्यवस्था न होने पर मूल कर्तव्यों को न्यायालय में वाद योग्य नहीं बनाया जा सकता है।
- मूल कर्तव्यों को भंग करने के लिए यद्यपि संविधान में कोई व्यवस्था नहीं की गई है लेकिन संसद् को यह शक्ति प्राप्त है कि वह कानून बनाकर मूल कर्तव्यों के उल्लंघन की दशा में दोषी व्यक्तियों के लिए दंड की व्यवस्था करें।
- मूल कर्तव्य सभी कम्युनिस्ट देशों विशेषकर चीन, रूस के संविधान में मिलते हैं।
- भारत के अतिरिक्त दूसरा प्रजातांत्रिक देश जापान है जहां पर मूल कर्तव्यों को संविधान में उल्लेखित किया गया है।

कर्तव्यों के इस महत्त्व को देखते हुए ही संभवत: स्वर्ण सिंह समिति की सिफारिशों के आधार पर सन् 1976 में

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

संविधान के 42वें संशोधन के दौरान, संविधान के चतुर्थ भाग के बाद चतुर्थ (क) जोड़ा गया, जिसमें मूल कर्तव्यों की व्यवस्था की गई, लेकिन विडंबना यह है कि मूल कर्तव्यों की कोई अधिशास्ति नहीं है। उनका पालन करने या न करने का दबाव कोई नहीं डाल सकता। इन कर्तव्यों का उल्लंघन करने पर दंड देने के लिए कोई उपबंध नहीं है।

वस्तुत: संविधान में मूल कर्तव्यों का समावेश करने का उद्देश्य नागरिकों को उनके सामाजिक एवं आर्थिक दायित्वों के प्रति सचेत करना था। इसके साथ ही नागरिकों को अपने हित में कुछ करने, न करने की चेतावनी देना भी था।

42वें संविधान संशोधन अधिनियम में संसद् को यह शक्ति प्रदान की गई है कि वह विधि बनाकर मूल कर्तव्यों के उल्लंघन की दशा में दोषी व्यक्तियों के लिए दंड की व्यवस्था कर सकती है। 86वें संवैधानिक संशोधन अधिनियम, 2002 द्वारा अनुच्छेद-51 में संशोधन करके खंड (ञ) के बाद जोड़े गए नए खंड के अनुसार, आरंभिक शिक्षा को सर्वव्यापी बनाने के उद्देश्य से अभिभावकों के लिए भी यह कर्तव्य निर्धारित किया गया कि वे 6 से 14 वर्ष तक के अपने बच्चों को शिक्षा का अवसर प्रदान करें।

मूल कर्तव्य

संविधान के भाग-4 (क) के अनुच्छेद-51 में उल्लिखित नागरिकों के कर्तव्य इस प्रकार हैं—

संविधान का पालन एवं आदर करना

भारतीय संविधान के अंतर्गत नागरिकों का पहला मूल कर्तव्य है कि वे निष्ठापूर्वक संविधान के अनुदेशों का पालन करें, क्योंकि यही देश का सर्वोच्च कानून है। इसके साथ ही संविधान के आदर्शों (लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता, समाजवाद आदि), संस्थाओं (संसद्, कार्यपालिका, न्यायपालिका आदि) राष्ट्रीय ध्वज और राष्ट्रीय गान का आदर करना भी इसी मूल कर्तव्य के अंतर्गत आता है।

ध्वज गौरव का प्रतीक होता है, इसीलिए उसका आदर करना राष्ट्र का आदर करना है। यह आदर ध्वजोत्तोलन के समय सावधान की अवस्था में प्रकट किया जाता है। इसी प्रकार राष्ट्रगान भी राष्ट्रीय गौरव का प्रतीक है। राष्ट्रगान के समय भी नागरिकों को सावधान की अवस्था में खड़े होकर सम्मान प्रकट करना चाहिए।

स्वतंत्रता के लिए प्रेरक उच्च आदर्शों का पालन

स्वतंत्रता प्राप्ति के लिए राष्ट्रीय आंदोलन की जो भूमिका रही है, उसकी प्रासंगिकता आज भी यथावत् विद्यमान है। यह राष्ट्रीय आंदोलन स्वतंत्रता, समानता, बंधुत्व, धर्मनिरपेक्षता एवं साम्राज्यवाद का विरोध प्रभृति आदर्शों से प्रेरित रहा था। ये आदर्श आज भारतीय लोकतंत्र में भी प्रेरक हैं।

इसीलिए संविधान में व्यवस्था दी गई है कि प्रत्येक नागरिक का यह कर्तव्य है कि वह राष्ट्रीय आंदोलन को प्रेरित करनेवाले उच्च आदर्शों को अपने हृदय में सँजोकर रखे और उन्हें प्रेरित करे।

भारत की प्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा

भारतीय संविधान के अंतर्गत भारत की प्रभुता, एकता और अखंडता की रक्षा करना प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है। इतना ही नहीं, उसे अक्षुण्ण रखना भी उसका कर्तव्य है। यहाँ प्रभुसत्ता या प्रभुता से तात्पर्य है कि राज्य में कोई भी व्यक्ति, समुदाय या संस्था ऐसी नहीं है, जिसकी शक्ति राज्य के समकक्ष हो। नागरिक के लिए राज्य ही सर्वोपरि

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

है। प्रत्येक नागरिक को राज्य के आदेशों का पालन करना है। यह आंतरिक प्रभुता के अंतर्गत आता है। बाह्य प्रभुता का अर्थ है कि राज्य किसी दूसरे राज्य से आदेश ग्रहण न करे।

वस्तुत: जब कोई राज्य भारत पर आक्रमण करता है, तो वह हमारी प्रभुता को चुनौती देता है। ऐसी दशा में प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि वह उस चुनौती को स्वीकार कर राज्य की रक्षा, एकता और अखंडता बनाए रखने में योगदान दे। देश की एकता को बनाए रखने के लिए नागरिकों को ऐसा व्यवहार करना चाहिए, जिससे उनमें संगठन प्रतीत हो।

देश की रक्षा करना

देश की रक्षा में ही नागरिकों की रक्षा निहित है। इसलिए देश की रक्षा करना और आह्वान किए जाने पर राष्ट्र की सेवा करना प्रत्येक नागरिक का परम कर्तव्य है। राष्ट्रीय संकट की स्थिति में नागरिकों को व्यक्तिगत स्वार्थ और पारस्परिक भेदभाव भुलाकर राष्ट्र की रक्षा में लगे रहना चाहिए।

युद्धकाल में यदि देश को सैनिकों की आवश्यकता है, तो बिना किसी दबाव के स्वेच्छा से सेना में भर्ती होना चाहिए, वैसे राज्य भी संकटकाल में कानून बनाकर स्वस्थ नागरिकों से अनिवार्य सैनिक सेवा की माँग कर सकता है।

समरसता और समान भ्रातृत्व की भावना विकसित करना

संविधान के अनुसार, प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि वह लोगों में समरसता और समान भ्रातृत्व की ऐसी भावना विकसित करे, जो धर्म, भाषा और देश या वर्ग पर आधारित सभी भेदभाव से परे हो। यही नहीं, ऐसी प्रथाओं का त्याग करना चाहिए, जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध हैं, क्योंकि संविधान की दृष्टि में सभी नागरिक समान हैं। धर्म, भाषा, प्रदेश या वर्गभेद के आधार पर नागरिकों में किसी भी प्रकार की असमानता अपेक्षित नहीं है।

सामासिक संस्कृति का महत्त्व समझना

प्रत्येक देश का अपना एक समाज होता है और समाज की एक संस्कृति होती है। भारत भी इसका अपवाद नहीं है। भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक एकता, विश्व-बंधुत्व, अतिथि सत्कार, सर्वधर्म समभाव, शरणागत की रक्षा, त्याग, बलिदान आदि आदर्शों से परिपूर्ण रही है।

भारतीय संस्कृति की इस गौरवशाली परंपरा के इन मूलभूत तत्त्वों का महत्त्व प्रत्येक नागरिक को समझना चाहिए। प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है कि इस परंपरा के महत्त्व को समझते हुए इसका संरक्षण और संवर्द्धन करे। अनुच्छेद-49 में निरूपित निदेशक तत्त्व भी स्मारकों तथा राष्ट्रीय कलात्मक एवं ऐतिहासिक महत्त्व के स्थानों और वस्तुओं को सुरक्षित रखने का निर्देश देते हैं।

प्राकृतिक पर्यावरण की रक्षा एवं उसका संरक्षण

भारतीय संविधान के अनुसार, पर्यावरण की रक्षा करना भी नागरिकों का कर्तव्य है; क्योंकि किसी देश का पर्यावरण (जिसमें वन, नदी, झील, वन्य जीव-जंतु आदि आते हैं) देश की आर्थिक वृद्धि में सहायक होता है। इसके अंतर्गत यह भी शामिल है कि प्रत्येक नागरिक में जीव मात्र के प्रति दया की भावना होनी चाहिए। वैसे भी भारतीय संस्कृति में 'जिओ और जीने दो' का आदर्श मान्य रहा है।

अनुच्छेद-48 (क) के अंतर्गत भी पर्यावरण संरक्षण, सुधार तथा वनों और वन्य जीवों की सुरक्षा के लिए निर्देश

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

दिए गए हैं। मूल कर्तव्य संबंधी वर्मा समिति ने उच्चतम न्यायालय के ऐसे 138 निर्णयों की सूची दी है, जिनमें पर्यावरण संरक्षण पर विचार हुआ।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास

संविधान के अनुसार, नागरिकों का यह कर्तव्य है कि वे वैज्ञानिक दृष्टिकोण का विकास करें। किसी भी व्यक्ति को हिंदू, मुसलिम, सिख या ईसाई अथवा ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र अथवा धनी या निर्धन आदि रूपों में न देखकर केवल मनुष्य के रूप में देखें। वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ-साथ यह मानववादी भी होना आवश्यक है। प्रत्येक नागरिक को निरंतर अपना ज्ञान बढ़ाते रहना चाहिए। साथ ही उसमें सुधारवादी दृष्टिकोण का भी विकास करते रहना चाहिए।

सार्वजनिक संपत्ति की सुरक्षा

सार्वजनिक संपत्तियों की रक्षा करना प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य है। इसके लिए उन्हें कोई ऐसा काम नहीं करना चाहिए, जिससे सार्वजनिक संपत्ति को क्षति पहुँचे। सार्वजनिक संपत्ति जनता की संपत्ति होती है, उसे क्षति पहुँचाने का मतलब है, अपनी संपत्ति की क्षति करना और उसकी रक्षा न करना।

इस प्रकार सार्वजनिक संपत्ति पर अप्रत्यक्षत: समस्त नागरिकों का हक है। नागरिकों को भी हिंसा से दूर रहना चाहिए। यह भी इसी कर्तव्य के अंतर्गत उपबंधित है। इसका अभिप्राय है कि नागरिकों को व्यक्तिगत, सामाजिक, आर्थिक अथवा राजनीतिक किसी भी प्रकार की समस्या के लिए कभी हिंसात्मक रूप नहीं अपनाना चाहिए।

व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों का उत्कर्ष करना

भारतीय नागरिकों को व्यक्तिगत और सामूहिक गतिविधियों के सभी क्षेत्रों में विकास के लिए सदैव प्रयत्नशील रहना चाहिए, ताकि राष्ट्र निरंतर प्रगति के पथ पर अग्रसर रहते हुए उपलब्धियों की नई ऊँचाइयों को छू सके। इससे नागरिक तथा राष्ट्र—दोनों का उत्थान होगा।

मूल कर्तव्यों का अनुपालन

निम्नलिखित मामलों में मूल कर्तव्यों के प्रवर्तन के लिए वैधानिक प्रावधानों की व्यवस्था है—

- राष्ट्रीय ध्वज, भारतीय संविधान और राष्ट्रगीत की कोई अवमानना न की जाए। राष्ट्रीय सम्मान की अवमानना पर रोक संबंधी विधेयक सन् 1971 में पारित किया गया था।
- राष्ट्रीय प्रतीक और नाम के अनुचित उपयोग पर रोक संबंधी विधेयक सन् 1950 में पारित कर दिया गया था। इसके उद्देश्यों में राष्ट्रीय ध्वज और राष्ट्रगीत का अनुचित उपयोग रोकना भी शामिल है।
- राष्ट्रीय ध्वज के प्रदर्शन में सही ढंग से बरताव किया जाए, यह सुनिश्चित करने के लिए समय-समय पर दिए गए निर्देश 'भारतीय ध्वज संहिता' में संकलित हैं।
- वर्तमान आपराधिक कानूनों के अंतर्गत यह सुनिश्चित करनेवाले कई प्रावधान विद्यमान हैं कि जिन गतिविधियों से विभिन्न जनसमूहों के बीच धर्म, नस्ल, जन्म-स्थान, निवास, भाषा आदि आधारों पर शत्रुता को प्रोत्साहन मिलता हो, उन्हें उचित सजा के दायरे में लाया जा सके। ऐसा लेखन, भाषण, हाव-भाव, गतिविधियाँ, अभ्यास, अंग-संचालन आदि जिससे अन्य समुदायों के बीच असुरक्षा अथवा दुर्भावना पैदा होती हो, भारतीय दंड संहिता (आई.पी.सी.) की धारा-153(क) के अंतर्गत वर्जित है।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

- राष्ट्रीय एकता के प्रति दुराग्रहपूर्ण आरोप और दावे आई.पी.सी. की धारा- 153(ख) के तहत दंडनीय हैं।
- गैर-कानूनी गतिविधि (निवारक) अधिनियम, 1967 के तहत किसी सांप्रदायिक संगठन को एक गैर-कानूनी संगठन घोषित किया जा सकता है।
- धर्म से जुड़ी आक्रामक गतिविधियाँ आई.पी.सी. की धाराओं-295-298 (अध्याय 15) के अंतर्गत आती हैं।
- नागरिक अधिकार अधिनियम, 1955 (पहले अस्पृश्यता निवारक अधिनियम, 1955) के संरक्षण का प्रावधान।
- जनप्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा-123(3) और (3-क) यह घोषित करती हैं कि धर्म के आधार पर और भारतीय नागरिकों के विविध वर्गों के बीच धर्म, जाति, समुदाय अथवा भाषा को आधार बनाते हुए शत्रुता और घृणा की भावना फैलाकर वोट माँगना एक भ्रष्ट व्यवहार है। भ्रष्ट व्यवहार में संलग्न कोई भी व्यक्ति जनप्रतिनिधित्व अधिनियम की धारा-8(क) के तहत संसद् अथवा किसी राज्य विधानसभा की सदस्यता के अयोग्य ठहराया जा सकता है।

नवीन ध्वज संहिता

- कोई भी व्यक्ति केवल सूर्योदय से सूर्यास्त तक ही झंडा फहरा सकता है।
- झंडे की चौढ़ाई व लंबाई का अनुपात 2 : 3 होना चाहिए।
- इसे वस्त्र, गद्दे या नैपकिन पर प्रिंट नहीं करना चाहिए।
- अंत्येष्टि के कफन के रूप में इसका प्रयोग न करें।
- वाहनों पर झंडा न लपेटें।
- इसका ऊपरी भाग नीचे (अर्थात् उल्टा) करके न फहराएं।
- इसे जमीन से स्पर्श नहीं करना चाहिए।
- संयुक्त राष्ट्र व अन्य देशों के झंडों को छोड़कर इसे सभी झंडों से ऊंचा फहराना चाहिए।
- क्षतिग्रस्त झंडे को न फहराएं।
- संशोधित संहिता 26 जनवरी, 2003 से लागू की गई।

झंडा विवाद तथा नवीन ध्वज संहिता

- पुरानी ध्वज संहिता, जिसमें प्राचीन कालीन प्रावधानों की एक लंबी सूची थी, मं झंडा फहराने का अधिकार कुछ ही व्यक्तियों का विशेषाधिकार था।
- वर्ष 2002 में जिंदल समूह के उपाध्यक्ष नवीन जिंदल ने झंडा फहराने के अपने अधिकार पर प्रतिबंध को चुनौती देते हुए दिल्ली उच्च न्यायालय में जनहित याचिका दायर की।
- दिल्ली उच्च न्यायालय के आदेश कि 'तिरंगा फहराना मौलिक अधिकार है' तथा इसके बाद ध्वज संहिता के उदारीकरण के प्रश्न के परीक्षण हेतु समिति गठित करने के सर्वोच्च न्यायालय की अनुशंसा के पश्चात् सरकार ने समिति गठित की। समिति की अनुशंसा के आधार पर केंद्रीय मंत्रिमंडल ने तिरंगा फहराने से संबंधित अनावश्यक कठोर नियमों में छूट देने का निर्णय लिया है।

नागरिकों से संविधान की अपेक्षा

भारतीय संविधान नागरिकों से अपेक्षा करता है कि वे अपने दायित्वों का निर्वाह पूरी निष्ठा एवं लगन के साथ करेंगे। सभी नागरिकों को न केवल कर्तव्यों का ज्ञान होना चाहिए, अपितु उनके पालन के प्रति भी पूर्णत: सचेत

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

रहना चाहिए। एक अच्छा नागरिक विधि का सम्मान करता है। जागरूक नागरिकता की माँग है कि जनहित को व्यक्तिगत स्वार्थ से ऊपर रखा जाए। वस्तुत: नागरिकों के मूल कर्तव्य मूलभूत आदेश हैं। हर नागरिक नैतिक दृष्टि से इन कर्तव्यों से बँधा है। इसलिए संविधान की यह भी अपेक्षा है कि नागरिक संविधान के सभी अनुच्छेदों के शब्दों और भावनाओं का पालन करें।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

12. संघीय कार्यपालिका

(भाग-5, अध्याय-1, अनुच्छेद-52 से 78 तक)

भारत एक संघ राज्य है, जिसकी शक्ति को तीन भागों में विभाजित किया गया है—कार्यपालिका, विधायिका और न्यायपालिका। यह विभाजन शक्तियों के पृथक्करण के सिद्धांत पर आधारित है।

संघीय कार्यपालिका के अंतर्गत राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति एवं प्रधानमंत्री के नेतृत्व में एक मंत्रिपरिषद् होती है, जो राष्ट्रपति को सलाह देती है। कार्यपालिका की शक्ति राष्ट्रपति में निहित रहती है।

राष्ट्रपति

भारतीय संविधान के अंतर्गत राष्ट्रपति देश का संवैधानिक प्रधान होता है, किंतु शासन की वास्तविक सत्ता उसके हाथों में नहीं रहती। वह केवल वही करता है, जिसके लिए मंत्रिपरिषद् सलाह देती है। वह देश का प्रथम नागरिक कहलाता है।

डॉ. अंबेडकर के शब्दों में, ''राष्ट्रपति राज्य का प्रधान है, कार्यपालिका का नहीं। वह राज्य का प्रतिनिधित्व करता है, शासन का नहीं।''

इस प्रकार भारतीय संविधान में राष्ट्रपति का पद ब्रिटेन के राजा के पद के समान 'वैधानिक प्रधान' के रूप में रखा गया है। वह राज्य का प्रतीक (मुखिया) मात्र है। अंतरराष्ट्रीय स्तर पर उसे ही भारतीय राष्ट्र के प्रतीक के रूप में माना जाता है। वह नाममात्र की कार्यपालिका है, क्योंकि उसका कोई वास्तविक अधिकार नहीं है। वास्तविक कार्यपालिका मंत्रिमंडल है। राष्ट्रपति मंत्रिमंडल के परामर्श पर कार्य करता है।

प्रथम राष्ट्रपति का निर्वाचन

संविधान में कहा गया था कि जब तक संविधान लागू होने के बाद आम चुनाव न हो जाएँ, तब तक के लिए बहुमत के अनुसार राष्ट्र-प्रमुख चुन लिया जाए, अतः संविधान-सभा की एक विशेष बैठक में सर्वसम्मति से डॉ. राजेंद्र प्रसाद को भारत का पहला राष्ट्रपति चुना गया। यह बैठक 25 जनवरी, 1950 को आयोजित की गई थी। अगले दिन यानी 26 जनवरी, 1950 को गवर्नमेंट हाउस के दरबार हॉल में आयोजित एक विशेष समारोह में डॉ. राजेंद्र प्रसाद ने राष्ट्रपति पद की शपथ ली।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-52 के अंतर्गत यह उल्लिखित है कि भारत का एक राष्ट्रपति होगा। अनुच्छेद-53 के अनुसार, संघीय कार्यपालिका की सभी शक्तियाँ उसी में निहित होंगी, जिनका प्रयोग वह स्वयं या अपने अधीनस्थ अधिकारियों द्वारा संविधान के अनुसार करेगा। राष्ट्रपति को सलाह देने के लिए एक मंत्रिपरिषद् होगी।

संविधान में यह व्यवस्था राष्ट्रपति को तानाशाह बनने से रोकती है। यदि संविधान में यह व्यवस्था न की गई होती, तो भारत में लोकतांत्रिक शासन की समस्त योजनाएँ विफल हो जातीं। इसीलिए डॉ. अंबेडकर ने कहा था, ''भारत का राष्ट्रपति राज्य का प्रभावशाली प्रधान न होकर भारत की एकता का प्रतीक है।''

राष्ट्रपति के निर्वाचन के लिए निर्वाचक मंडल

अनुच्छेद-54 के अंतर्गत राष्ट्रपति के निर्वाचन के लिए निर्वाचक मंडल का उल्लेख किया गया है, जिसमें

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

राज्यसभा, लोकसभा और राज्यों की विधानसभाओं के निर्वाचित सदस्य रहते हैं। यहाँ उल्लेखनीय है कि संघ या राज्य किसी के, किसी भी सदन के नाम निर्दिष्ट सदस्य निर्वाचक नहीं होते। नवीनतम व्यवस्था के अनुसार, अनुच्छेद-54 और अनुच्छेद-55 में उल्लिखित, 'राज्य' के अंतर्गत पुदुचेरी विधानसभा तथा दिल्ली की विधानसभा के निर्वाचित सदस्य को भी सम्मिलित किया गया है। इन सदस्यों को 1 जून, 1995 से 70वें संवैधानिक संशोधन के पश्चात् जोड़ा गया है।

राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार के लिए निर्वाचक मंडल के 50 सदस्य प्रस्तावक तथा 50 सदस्य अनुमोदक होते हैं।

एक ही व्यक्ति जितनी बार चाहे राष्ट्रपति के पद पर निर्वाचित हो सकता है।

अनुच्छेद-55(3) के अनुसार, राष्ट्रपति का निर्वाचन आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर एकल हस्तांतरणीय पद्धति से होता है। इसका अभिप्राय है कि राष्ट्रपति पद के उम्मीदवार को विजयी होने के लिए अनुपात के आधार पर नहीं, 50 प्रतिशत से अधिक मत प्राप्त करने होते हैं। यह न्यूनतम संख्या, स्थानों की संख्या पर विचार करके तय की जाती है, जिसे 'कोटा' कहते हैं। इसका सूत्र है—

(डाले गए कुल मतों की संख्या/स्थानों की संख्या +1)+1 = कोटा

कोटा निर्धारित करना इस चयन पद्धति का पहला कदम है। मतदान के दौरान मतदाता मतपत्र में प्रत्याशियों के नाम के आगे 1, 2, 3 आदि लिखकर अपना अभिमत प्रकट करता है। अभ्यर्थी द्वारा उसके अतिरिक्त मत अन्य प्रत्याशियों को अंतरित कर दिए जाते हैं। प्रत्येक मतदाता का एक मत होता है, किंतु उसका मत उस प्रत्याशी को अंतरित हो जाता है, जिसे उसकी आवश्यकता नहीं है और जो कोटा तक नहीं पहुँच पाया है। यही 'एकल संक्रमणीय मत प्रणाली' कहलाती है।

मत का एक संक्रमण और कोटा तय करने के लिए विस्तृत विवरण राष्ट्रपतीय एवं उपराष्ट्रपतीय विवरण, 1952 में उल्लिखित है।

इस प्रकरण में 'आनुपातिक प्रतिनिधित्व' पदावली का उपयोग उचित नहीं प्रतीत होता, क्योंकि इसका प्रयोग तब होता है, जब दो या दो से अधिक स्थान भरे जाने हों।

अनुच्छेद-55 के अनुसार, प्रत्येक सांसद और विधायक के मत को एक मूल्य दिया जाता है। विधायक के मत का मूल्य-निर्धारण इस सूत्र के आधार पर होता है—

इसी प्रकार संसद् सदस्यों के मत का मूल्य-निर्धारण इस सूत्र के आधार पर होता है—

$$\frac{\text{राज्य की कुल जनसंख्या}}{\text{राज्य विधानसभा के निर्वाचित सदस्यों की कुल संख्या}} \div 1000$$

$$\frac{\text{राज्यों की विधानसभाओं के लिए नियत मतों की कुल संख्या}}{\text{संसद् के दोनों सदनों के निर्वाचित सदस्यों की संख्या}}$$

उपर्युक्त पद्धति के आधार निम्नलिखित सिद्धांत हैं—

1. संसद् के सदस्यों को मिलाकर जो मत मिलेगा वह कुल राज्यों की विधानसभाओं के सदस्यों के कुल मत के बराबर होगा।

2. बड़े राज्यों की विधानसभाओं (जनसंख्या के अनुसार) के प्रत्येक सदस्य को छोटे राज्यों के प्रत्येक सदस्य के

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

मत से अधिक मतदान का अधिकार होगा।

राष्ट्रपति के निर्वाचन से संबंधित विवादों का निपटारा उच्चतम न्यायालय द्वारा किया जाएगा। निर्वाचन अवैध घोषित होने पर उसके द्वारा किए गए कार्य अवैध नहीं होते हैं।

कार्यकाल

संविधान के अनुच्छेद-56 के अंतर्गत राष्ट्रपति का कार्यकाल 5 वर्ष निर्धारित किया गया है, जिसका अभिप्राय है कि राष्ट्रपति अपने पद-ग्रहण की तारीख से 5 वर्ष की अवधि तक पद पर प्रतिष्ठित रहेंगे।

राष्ट्रपति अपने पद-ग्रहण की तिथि से पाँच वर्ष की अवधि तक पद धारण करेगा। अपने पद की अवधि की समाप्ति के बाद भी वह पद पर तब तक बना रहेगा जब तक उसका उत्तराधिकारी पद ग्रहण नहीं कर लेता। गौरतलब है कि राष्ट्रपति पद की रिक्ति को छह महीने के अंदर भरना होता है।

राष्ट्रपति पद की पदावधि (पाँच वर्ष) की समाप्ति से हुई रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचन पदावधि की समाप्ति से पहले ही पूर्ण कर लिया जाएगा (अनुच्छेद-62), किंतु यदि उसे पूरा करने में कोई विलंब हो जाता है तो 'राज अंतराल' न होने पाए, इसीलिए यह उपबंध है कि राष्ट्रपति अपने पद की अवधि समाप्त हो जाने पर तब तक पद पर बना रहेगा, जब तक उसका उत्तराधिकारी पद धारण नहीं कर लेता है। ऐसी दशा में उपराष्ट्रपति, राष्ट्रपति के रूप में कार्य नहीं कर सकेगा। पद धारण करने से पूर्व राष्ट्रपति को एक निर्धारित प्रपत्र पर भारत के मुख्य न्यायाधीश अथवा उनकी अनुपस्थिति में उच्चतम न्यायालय के वरिष्ठतम न्यायाधीश के सम्मुख शपथ लेनी पड़ती है।

भारत के राष्ट्रपति और उनका कार्यकाल

राष्ट्रपति: डॉ. राजेंद्र प्रसाद (1884-1963)

कार्यकाल: 26.1.1950—12.5.1957

राष्ट्रपति: डॉ. राजेंद्र प्रसाद (पुनर्निर्वाचित)

कार्यकाल: 13.5.1957—13.5.1962

राष्ट्रपति: डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन (1888-1975)

कार्यकाल: 13.5.1962—13.5.1967

राष्ट्रपति: डॉ. जाकिर हुसैन (1897-1969)

कार्यकाल: 13.5.1967—3.5.1969

राष्ट्रपति: वराह गिरि वेंकट गिरि (1894-1980)

कार्यकाल: 3.5.1969—20.7.1969

राष्ट्रपति: एम. हिदायतुल्ला (1905-1992)(कार्यवाहक)

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

कार्यकाल: 20.7.1969—24.8.1969

राष्ट्रपति: वराह गिरि वेंकट गिरि (1894-1980)

कार्यकाल: 24.8.1969—24.8.1974

राष्ट्रपति: फखरुद्दीन अली अहमद (1905-1977)

कार्यकाल: 24.8.1974—11.2.1977

राष्ट्रपति: बी.डी. जत्ती (1913-2002) (कार्यवाहक)

कार्यकाल: 11.2.1977—25.7.1977

राष्ट्रपति: नीलम संजीव रेड्डी (1913-1996)

कार्यकाल: 25.7.1977—25.7.1982

राष्ट्रपति: ज्ञानी जैलसिंह (1916-1994)

कार्यकाल: 25.7.1982—25.7.1987

राष्ट्रपति: रामस्वामी वेंकटरामन (1910-2009)

कार्यकाल: 25.7.1987—25.7.1992

राष्ट्रपति: डॉ. शंकर दयाल शर्मा (1918-1999)

कार्यकाल: 25.7.1992—25.7.1997

राष्ट्रपति: डॉ. के.आर. नारायणन (1920-2005)

कार्यकाल: 25.7.1997—25.7. 2002

राष्ट्रपति: डॉ. ए.पी.जे. अब्दुल कलाम (1931-2015)

कार्यकाल: 25.7. 2002—25.7.2007

राष्ट्रपति: श्रीमती प्रतिभा पाटिल (1931)

कार्यकाल: 25.7. 2007—25.7.2012

राष्ट्रपति: प्रणव मुखर्जी (1935)

कार्यकाल: 25.7. 2012—25.7.2017

राष्ट्रपति: रामनाथ कोविंद (1945)

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

कार्यकाल: 25.7.2017 (अब तक)

पदत्याग

राष्ट्रपति निम्नलिखित दशाओं में पाँच वर्ष से पहले भी पदत्याग सकता है—

- उपराष्ट्रपति को संबोधित अपने त्यागपत्र द्वारा।
- संविधान का अतिक्रमण होने पर राष्ट्रपति को अनुच्छेद-61 में उपबंधित रीति से किए गए महाभियोग द्वारा हटाया जा सकता है।

राष्ट्रपति पर महाभियोग लगाने की प्रक्रिया

संविधान के अनुच्छेद-51 के अंतर्गत राष्ट्रपति पर महाभियोग चलाने की व्यवस्था की गई है। महाभियोग की दशा में राष्ट्रपति को कार्यकाल पूर्ण होने से पूर्व भी हटाया जा सकता है। राष्ट्रपति पर महाभियोग संविधान के अतिक्रमण के लिए चलाया जा सकता है। ऐसा होने पर संसद् का कोई भी सदन उन पर दोषारोपण कर सकता है। महाभियोग द्वारा राष्ट्रपति को पद से हटाए जाने की प्रक्रिया इस प्रकार है—

- संसद् के किसी भी सदन के कम-से-कम एक चौथाई सदस्य प्रस्ताव की लिखित सूचना देने के चौदह दिन बाद राष्ट्रपति पर महाभियोग लगाने का प्रस्ताव करें।
- सदन के कम-से-कम दो तिहाई सदस्य प्रस्ताव का समर्थन करें।
- संसद् के किसी सदन द्वारा दोषारोपण का यह प्रस्ताव पारित होने के बाद दूसरा सदन इसकी जाँच-पड़ताल करेगा। जाँच-पड़ताल के दौरान राष्ट्रपति को यह अधिकार होगा कि वह अनुसंधान में स्वयं उपस्थित हो या अपना प्रतिनिधि भेजे।
- यदि जाँच-पड़ताल के बाद दोषारोपण सिद्ध हो जाता है और प्रस्ताव उस सदन के कम-से-कम दो तिहाई सदस्यों द्वारा समर्थन मिल जाने पर स्वीकार कर लिया जाता हे, तो राष्ट्रपति को उसी दिन पद से मुक्त कर दिया जाएगा।

पुनर्निर्वाचन के लिए पात्रता

सन् 1961 में संसद् में तत्कालीन प्रधानमंत्री पं. जवाहरलाल नेहरू ने राष्ट्रपति के कार्यकाल की ओर संकेत करते हुए कहा था कि कोई व्यक्ति दो पदावधियों से अधिक राष्ट्रपति नहीं रहेगा और ऐसा करने के लिए संविधान में संशोधन करने की आवश्यकता नहीं है। वैसे संविधान के अनुच्छेद-57 के अंतर्गत भी यह व्यवस्था है कि राष्ट्रपति के कार्यकाल को पुनर्निर्वाचन के द्वारा बढ़ाया जा सकता है। इसके लिए यह आवश्यक है कि वह राष्ट्रपति के रूप में कार्य करते हुए, इस संविधान के अन्य उपबंधों के अधीन हो।

योग्यताएँ

अनुच्छेद-58 के अंतर्गत राष्ट्रपति निर्वाचित होने के लिए किसी भी व्यक्ति में निम्नलिखित योग्यताएँ होनी चाहिए —

1. वह भारत का नागरिक हो।
2. वह 35 वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो।
3. वह लोकसभा का सदस्य निर्वाचित होने की योग्यता रखता हो।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

ऐसा कोई व्यक्ति राष्ट्रपति पद के लिए प्रत्याशी नहीं हो सकता, जो भारत सरकार अथवा किसी राज्य सरकार के अधीन किसी लाभदायक पद पर कार्यरत हो। उपराष्ट्रपति, राज्य के राज्यपाल, संघ अथवा राज्य के मंत्री पद पर कार्यरत व्यक्ति पर यह प्रतिबंध लागू नहीं होगा। इन पदों पर कार्यरत व्यक्ति भी राष्ट्रपति पद के लिए प्रत्याशी हो सकते हैं।

5 जून, 1997 को राष्ट्रपति पद के चुनाव में अगंभीर प्रत्याशियों को हतोत्साहित करने के लिए एक महत्त्वपूर्ण अध्यादेश जारी किया गया था, जिसके तहत राष्ट्रपति पद के प्रत्याशी के लिए अब 2,500 रुपए की जगह 15,000 रुपए की जमानत राशि कर दी गई और उसके नाम के प्रस्तावकों तथा अनुमोदकों की संख्या 10 से बढ़ाकर 50 कर दी गई।

पद की शर्तें

अनुच्छेद-59 में राष्ट्रपति पद के लिए निम्नलिखित शर्तें निर्धारित की गई हैं—

- राष्ट्रपति संसद् के किसी भी सदन और राज्य के विधानमंडल के सदस्य नहीं होंगे, लेकिन, यदि संसद् के किसी सदन अथवा राज्य के विधानमंडल का सदस्य राष्ट्रपति पद के लिए निर्वाचित हो जाए तो यह समझा जाएगा कि जिस तारीख से उसने राष्ट्रपति का पद ग्रहण किया है, उस दिन से उसने सदन की सदस्यता छोड़ दी है।
- राष्ट्रपति बिना किराया दिए अपने पदावासों के उपभोग के हकदार होंगे। साथ ही ऐसी उपलब्धियों, भत्तों तथा विशेष अधिकारों के अधिकारी भी होंगे, जिन्हें संसद् समय-समय पर कानून द्वारा निर्धारित करेगी।
- राष्ट्रपति अन्य किसी लाभ का पद ग्रहण नहीं करेंगे।
- राष्ट्रपति की उपलब्धियाँ और भत्ते घटाए नहीं जाएँगे।

शपथ-ग्रहण या प्रतिज्ञान

प्रत्येक व्यक्ति, जो राष्ट्रपति के रूप में कार्य कर रहा है अथवा उसके कृत्यों का निर्वहन करता है, अपने पद ग्रहण करने से पूर्व भारत के मुख्य न्यायाधिपति अथवा उनकी अनुपस्थिति में उच्चतम न्यायालय के अग्रतम न्यायाधीश के समक्ष निम्नलिखित रूप में शपथ या प्रतिज्ञान करेगा और उस पर अपना हस्ताक्षर करेगा।

''मैं सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं श्रद्धापूर्वक भारत के राष्ट्रपति पद का कार्यपालन (अथवा राष्ट्रपति के कृत्यों का निर्वहन) करूँगा तथा अपनी पूरी योग्यता से संविधान और विधि का परिरक्षण, संरक्षण और प्रतिरक्षण करूँगा और मैं भारत की जनता की सेवा और कल्याण में निरत रहूँगा।''

वेतन एवं भत्ते

राष्ट्रपति का वर्तमान मासिक वेतन डेढ़ लाख रुपए निर्धारित है। उनका वेतन आयकर से मुक्त होता है। उनके नि:शुल्क निवास-स्थान व संसद् द्वारा स्वीकृत अन्य भत्ते होते हैं। उनके कार्यकाल के दौरान उनके वेतन तथा भत्ते में किसी प्रकार की कमी नहीं की जा सकती है। राष्ट्रपति के लिए 9 लाख रुपए वार्षिक पेंशन निर्धारित की गई है।

विमुक्तियाँ

राष्ट्रपति पद की मर्यादा बनाए रखने के लिए राष्ट्रपति को कुछ विमुक्तियाँ प्रदान की गई हैं। अपने कार्यकाल के दौरान राष्ट्रपति अपने अधिकारों और शक्तियों का प्रयोग करते हुए, जो भी कार्य करेगा, उसके विरुद्ध किसी भी न्यायालय में मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। उसके कार्यकाल के दौरान उस पर दीवानी और फौजदारी की

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

अदालत में कोई मुकदमा नहीं चलाया जा सकता। इस अवधि में उसे न तो गिरफ्तार किया जा सकता है और न ही उसके विरुद्ध गिरफ्तारी वारंट जारी किए जा सकते हैं।

राष्ट्रपति के अधिकार

भारतीय संविधान के अंतर्गत राष्ट्रपति का पद मूलत: गरिमा का सूचक, सर्वोच्च, प्रतिष्ठित एवं सम्मानित है। उन्हें वे समस्त अधिकार दिए गए हैं, जो ब्रिटिश शासन के अंतर्गत गवर्नर जनरल को प्राप्त थे। इन अधिकारों को वह या तो स्वयं प्रयोग कर सकते हैं अथवा अधीनस्थ कर्मचारियों द्वारा प्रयोग कर सकते हैं। संविधान द्वारा प्रदत्त राष्ट्रपति के अधिकारों को निम्नलिखित वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

प्रशासनिक अधिकार

राष्ट्रपति प्रशासन के औपचारिक प्रधान होते हैं। इसलिए संघ की कार्यपालिका के सभी कार्य राष्ट्रपति के नाम से किए जाते हैं। प्रशासनिक अधिकार के अंतर्गत राष्ट्रपति भारत के प्रधानमंत्री की नियुक्ति करते हैं और बाद में प्रधानमंत्री के परामर्श पर अन्य मंत्रियों की नियुक्ति करते हैं। संविधान के अनुच्छेद-75 में यह व्यवस्था की गई है कि सभी मंत्री राष्ट्रपति के प्रसादपर्यंत ही पद धारण करते हैं।

इनके अतिरिक्त राष्ट्रपति निम्नलिखित अधिकारियों को भी नियुक्ति करते हैं—भारत का महान्यायवादी, भारत का नियंत्रक महालेखा परीक्षक, उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश, राज्यों के उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश, राज्यों के राज्यपाल, जल आयोग के अध्यक्ष, वित्त आयोग के अध्यक्ष, संघ लोक सेवा आयोग तथा निर्वाचन आयोग के अध्यक्ष एवं सदस्य, अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजातियों के विशेष अधिकारी, अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन पर रिपोर्ट देने के लिए गठित आयोग के अध्यक्ष, राजभाषा आयोग के अध्यक्ष और भाषायी अल्पसंख्यक आयोग के अध्यक्ष आदि।

आवश्यकता पड़ने पर राष्ट्रपति लोकसभा के अस्थायी अध्यक्ष एवं राज्यसभा के कार्यकारी सभापति की भी नियुक्ति करते हैं। राज्यसभा के लिए साहित्य, विज्ञान, कला और समाज-सेवा के क्षेत्रों से संबंधित 12 सदस्यों का नामांकन भी राष्ट्रपति ही करते हैं। लोकसभा में ऐंग्लो-इंडियन समुदाय का उचित प्रतिनिधित्व करने के लिए दो सदस्यों का नामांकन करना भी राष्ट्रपति के प्रशासनिक अधिकार में आता है। यद्यपि ये समस्त नियुक्तियाँ राष्ट्रपति की ओर से की जाती हैं, लेकिन इनके नाम मंत्रिपरिषद् प्रस्तावित करती है। यदि किसी नाम विशेष के लिए राष्ट्रपति की सहमति न हो, तो उसके संबंध में राष्ट्रपति उसे पुनर्विचार के लिए मंत्रिपरिषद् के पास भेज सकते हैं। इन नियुक्तियों के संबंध में संविधान के अनुच्छेद-320 (3) में यह व्यवस्था की गई है कि राष्ट्रपति के लिए नियुक्तियों के मामले में संघ लोक सेवा आयोग से परामर्श कर लेना आवश्यक होगा। कुछ ही पद इसके अपवाद हैं। यदि किसी मामले में राष्ट्रपति संघ लोक सेवा आयोग का परामर्श मानने में असमर्थ हैं, तो सरकार को उसका स्पष्टीकरण संसद् में देना होगा।

विधायी शक्तियाँ

यद्यपि राष्ट्रपति मंत्रिमंडल की सलाह पर कार्य करने के लिए बाध्य हैं, तथापि उन्हें कुछ विधायी शक्तियाँ भी प्रदान की गई हैं, जैसे—

- वह संसद् के सदनों को बुलाने, उनका सत्रावसान करने तथा लोकसभा का विघटन करने—किसी प्रश्न पर दोनों सदनों में गतिरोध पैदा होने पर दोनों सदनों की बैठक बुला सकते हैं।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

- प्रतिवर्ष प्रथम सत्र के आरंभ में तथा प्रत्येक आम चुनाव के पश्चात् दोनों सदनों के संयुक्त अधिवेशन को राष्ट्रपति संबोधित करते हैं।
- राष्ट्रपति दोनों सदनों को संदेश भेज सकते हैं और दोनों को संबोधित भी कर सकते हैं।
- संसद् के दोनों सदनों द्वारा पारित सभी विधेयकों को राष्ट्रपति की स्वीकृति के पश्चात् ही कानून का रूप दिया जा सकता है।
- धन विधेयक को राष्ट्रपति की सिफारिश से ही लागू किया जाता है।
- किसी विषय पर जब तत्काल कार्यवाही करनी हो और संसद् के दोनों सदनों के सत्र चल रहे हों, तो राष्ट्रपति को यह अधिकार है कि वह अध्यादेश जारी कर सके। ये अध्यादेश संसद् द्वारा पारित अधिनियमों के समान ही प्रभावशाली होते हैं।
- राष्ट्रपति प्रतिवर्ष संसद् में सरकार का बजट प्रस्तुत करवाते हैं।

न्यायिक अधिकार

संविधान के अनुच्छेद-72 के अंतर्गत राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया गया है कि वे निम्नांकित व्यक्तियों को न्यायिक क्षमादान कर सकते हैं—

1. न्यायालय द्वारा मृत्युदंड पाए व्यक्ति को।
2. सैन्य न्यायालय द्वारा दंडित सभी व्यक्तियों को।
3. संघ और समवर्ती सूची के अंतर्गत बनाई गई विधियों के अधीन अपराधियोंको।

राष्ट्रपति से संबंधित अनुच्छेद : एक नजर में

अनुच्छेद :52

विषयवस्तु :भारत के राष्ट्रपति

अनुच्छेद :53

विषयवस्तु :संघ की कार्यपालक शक्ति

अनुच्छेद :54

विषयवस्तु :राष्ट्रपति का चुनाव

अनुच्छेद :55

विषयवस्तु :राष्ट्रपति के चुनाव का तरीका

अनुच्छेद :56

विषयवस्तु :राष्ट्रपति का कार्यकाल

अनुच्छेद :57

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

विषयवस्तु :पुनर्चुनाव के लिए अर्हता

अनुच्छेद :58

विषयवस्तु :राष्ट्रपति चुने जाने के लिए योग्यता

अनुच्छेद :59

विषयवस्तु :राष्ट्रपति के पद के लिए शर्तें

अनुच्छेद :60

विषयवस्तु :राष्ट्रपति द्वारा शपथ ग्रहण

अनुच्छेद :61

विषयवस्तु :राष्ट्रपति पर महाभियोग की प्रक्रिया

अनुच्छेद :62

विषयवस्तु :राष्ट्रपति पद की रिक्ति की पूर्ति के लिए चुनाव कराने का समय

अनुच्छेद :65

विषयवस्तु :उपराष्ट्रपति का राष्ट्रपति के रूप में कार्य करना

अनुच्छेद :71

विषयवस्तु :राष्ट्रपति के चुनाव से संबंधित मामले

अनुच्छेद :72

विषयवस्तु :राष्ट्रपति की क्षमादान इत्यादि की शक्ति तथा कतिपय मामलों में दंड का स्थगन, माफी अथवा कम कर देना

अनुच्छेद :74

विषयवस्तु :मंत्रिपरिषद् का राष्ट्रपति को परामर्श एवं सहयोग प्रदान करना

अनुच्छेद :75

विषयवस्तु :मंत्रियों से संबंधित अन्य प्रावधान, जैसे—नियुक्ति, कार्यकाल, वेतन इत्यादि

अनुच्छेद :76

विषयवस्तु :भारत के महान्यायवादी

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

अनुच्छेद :77

विषयवस्तु :भारत सरकार द्वारा कार्यवाही का संचालन

अनुच्छेद :78

विषयवस्तु :राष्ट्रपति को सूचना प्रदान करने से संबंधित प्रधानमंत्री के दायित्व इत्यादि

अनुच्छेद :85

विषयवस्तु :संसद् के सत्र, सत्रावसान तथा भंग करना

अनुच्छेद :111

विषयवस्तु :संसद् द्वारा पारित विधेयकों पर सहमति प्रदान करना

अनुच्छेद :112

विषयवस्तु :संघीय बजट (वार्षिक वित्तीय विवरण)

अनुच्छेद :123

विषयवस्तु :राष्ट्रपति की अध्यादेश जारी करने की शक्ति

अनुच्छेद :143

विषयवस्तु :राष्ट्रपति की सर्वोच्च न्यायालय से सलाह लेने की शक्ति

यहाँ यह गौरतलब है कि राष्ट्रपति किसी अपीलीय न्यायालय के रूप में कार्य नहीं करते। उन्हें किसी भी याचिका पर सुनवाई करने के लिए विवश नहीं किया जा सकता। राष्ट्रपति के निर्णय में न्यायालय भी हस्तक्षेप नहीं कर सकता है। राष्ट्रपति का यह अधिकार उनके विवेक पर आधारित है, वे न्यायालय का मुँह नहीं ताकते। पर आजकल उच्चतम न्यायालय में राष्ट्रति के न्यायिक फैसलों पर भी आक्षेप होने लगे हैं।

सैन्य संबंधी अधिकार

राष्ट्रपति सेना के सर्वोच्च कमांडर होते हैं, इसलिए उनमें सेना की सर्वोच्च शक्तियाँ सन्निहित होती हैं, किंतु वह इनका उपयोग विधिसम्मत नियमों के अंतर्गत ही कर सकते हैं। वह संसद् के परामर्श पर युद्ध या शांति की घोषणा कर सकते हैं।

राजनयिक अधिकार

यद्यपि राजनयिक प्रतिनिधित्व का विषय संसद् का है, किंतु राष्ट्र का प्रधान होने के कारण राष्ट्रपति क्रियाकलापों में भारत का प्रतिनिधित्व करते हैं। वे अन्य देशों में भारत के प्रतिनिधि या राजदूत नियुक्ति करते हैं। भारत में दूसरे देशों के राजनयिक प्रतिनिधि भारतीय राष्ट्रपति के समक्ष ही अपना परिचय-पत्र प्रस्तुत करते हैं।

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

आपातकालीन अधिकार

संविधान के अंतर्गत राष्ट्रपति को निम्नलिखित तीन परिस्थितियों में देश में आपात्काल घोषित करने का अधिकार है—

● यह प्रतीत होने पर कि कोई देश भारत पर हमला कर सकता है अथवा सशस्त्र विद्रोह से भारत या उसके राज्यक्षेत्रों के किसी भाग की सुरक्षा खतरे में पड़ सकती है, अनुच्छेद-352 के अंतर्गत राष्ट्रपति देश में आपातकाल की घोषणा कर सकते हैं।

● अनुच्छेद-356 के अंतर्गत यदि राष्ट्रपति को यह प्रतीत हो कि किसी राज्य का शासन संविधान के अनुसार नहीं चलाया जा रहा है, तो वे उस राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू कर सकते हैं और राज्य की सारी शक्तियाँ अपने हाथ में ले सकते हैं।

● अनुच्छेद-360 के अंतर्गत राष्ट्रपति को वित्तीय आपात्काल घोषित करने का अधिकार दिया गया है। इस घोषणा का उद्देश्य राज्य का व्यय नियंत्रित करके लोकसेवकों के वेतन घटाकर तथा आवश्यकता के अनुसार अन्य उपाय करके वित्तीय स्थायित्व को बनाए रखना है।

कुछ रोचक तथ्य

● राष्ट्रपति पद के लिए अब तक 15 बार निर्वाचन हो चुके हैं।

● डॉ. नीलम संजीव रेड्डी एकमात्र ऐसे व्यक्ति थे, जिन्हें सन् 1977 में निर्विरोध राष्ट्रपति चुना गया।

● राष्ट्रपति पद के लिए सर्वाधिक रोमांचकारी निर्वाचन श्री वी.वी. गिरि का था, जब द्वितीय अधिमानी वोटों की गणना करनी पड़ी थी।

● डॉ. राजेंद्र प्रसाद एकमात्र ऐसे व्यक्ति थे, जिन्हें दो बार राष्ट्रपति पद के लिए चुना गया।

● उच्चतम न्यायालय के अनुसार, राष्ट्रपति पद के लिए निर्वाचन को इस आधार पर न तो स्थगित किया जा सकता है और न ही अवैध ठहराया जा सकता है कि किसी राज्य विधानसभा को भंग कर दिए जाने के कारण निर्वाचक नामावली अधूरी थी या विधानसभा पूरी तरह गठित नहीं हुई थी।

● भारत की प्रथम महिला राष्ट्रपति प्रतिभा देवी सिंह पाटिल थीं।

राष्ट्रपति शासन लगाना (1951-2016)

राज्य/केंद्रशासित :आंध्र प्रदेश

कितनी बार :3

किस वर्ष लगाया :1954, 1973, 2014

राज्य/केंद्रशासित :अरुणाचल प्रदेश

कितनी बार :2

किस वर्ष लगाया :1979, 2016

राज्य/केंद्रशासित :असम

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

कितनी बार :4

किस वर्ष लगाया :1979, 1981, 1982, 1990

राज्य/केंद्रशासित :बिहार

कितनी बार :8

किस वर्ष लगाया :1968-69, 1972, 1977, 1980, 1995, 1999, 2005

राज्य/केंद्रशासित :छत्तीसगढ़

कितनी बार :-

किस वर्ष लगाया :-

राज्य/केंद्रशासित :गोवा

कितनी बार :5

किस वर्ष लगाया :1966, 1979, 1990, 1999, 2005

राज्य/केंद्रशासित :गुजरात

कितनी बार :5

किस वर्ष लगाया :1971, 1974, 1976, 1980, 1996

राज्य/केंद्रशासित :हरियाणा

कितनी बार :3

किस वर्ष लगाया :1967, 1977, 1991

राज्य/केंद्रशासित :हिमाचल प्रदेश

कितनी बार :2

किस वर्ष लगाया :1977, 1992

राज्य/केंद्रशासित :जम्मू व कश्मीर

कितनी बार :7

किस वर्ष लगाया :1977, 1986, 1990, 2002, 2008, 2015, 2016

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

*राज्य/केंद्रशासित :*झारखंड

*कितनी बार :*3

*किस वर्ष लगाया :*2009, 2010, 2013

*राज्य/केंद्रशासित :*कर्नाटक

*कितनी बार :*6

*किस वर्ष लगाया :*1971, 1977, 1989, 1990, 2007, 2007

*राज्य/केंद्रशासित :*केरल

*कितनी बार :*5

*किस वर्ष लगाया :*1956, 1959, 1964,1970, 1979

*राज्य/केंद्रशासित :*मध्य प्रदेश

*कितनी बार :*3

*किस वर्ष लगाया :*1974, 1980, 1992

*राज्य/केंद्रशासित :*महाराष्ट्र

*कितनी बार :*2

*किस वर्ष लगाया :*1980, 2014

*राज्य/केंद्रशासित :*मेघालय

*कितनी बार :*2

*किस वर्ष लगाया :*1991, 2009

*राज्य/केंद्रशासित :*मिजोरम

*कितनी बार :*3

*किस वर्ष लगाया :*1977, 1978, 1988

*राज्य/केंद्रशासित :*नगालैंड

*कितनी बार :*4

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

किस वर्ष लगाया :1975, 1988, 1992, 2008

राज्य/केंद्रशासित :ओडिशा

कितनी बार :6

किस वर्ष लगाया :1961, 1971, 1973, 1976, 1977, 1980

राज्य/केंद्रशासित :पंजाब

कितनी बार :8

किस वर्ष लगाया :1957, 1966, 1968, 1971, 1977, 1980, 1983, 1987

राज्य/केंद्रशासित :राजस्थान

कितनी बार :4

किस वर्ष लगाया :1967, 1947, 1980, 1992

राज्य/केंद्रशासित :सिक्किम

कितनी बार :2

किस वर्ष लगाया :1978, 1984

राज्य/केंद्रशासित :तमिलनाडु

कितनी बार :4

किस वर्ष लगाया :1976, 1980, 1988, 1991

राज्य/केंद्रशासित :तेलंगाना

कितनी बार :-

किस वर्ष लगाया :-

राज्य/केंद्रशासित :त्रिपुरा

कितनी बार :3

किस वर्ष लगाया :1971, 1977, 1993

राज्य/केंद्रशासित :उत्तराखंड

Novels English & Hind

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

कितनी बार :2

किस वर्ष लगाया :2016, 2016

राज्य/केंद्रशासित :उत्तर प्रदेश

कितनी बार :9

किस वर्ष लगाया :1966, 1970, 1973, 1975, 1977, 1980, 1992, 1995, 2002

राज्य/केंद्रशासित :पश्चिम बंगाल

कितनी बार :4

किस वर्ष लगाया :1962, 1968, 1970, 1971

राज्य/केंद्रशासित :दिल्ली

कितनी बार :1

किस वर्ष लगाया :2014

राज्य/केंद्रशासित :पुदुचेरी

कितनी बार :6

किस वर्ष लगाया :1968, 1974, 1974,1978, 1983, 1991

उपराष्ट्रपति

भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में उपराष्ट्रपति की कोई विशेष भूमिका नहीं है। राष्ट्रपति के उपरांत पदेन वरीयता क्रम में उपराष्ट्रपति द्वितीय स्थान पर आते हैं। भारतीय संविधान के अनुच्छेद-63 के अंतर्गत यह उल्लेख किया गया है कि भारत का एक उपराष्ट्रपतिहोगा।

अनुच्छेद-64 के अनुसार, उपराष्ट्रपति पदेन संसद् के द्वितीय सदन (राज्यसभा) के सभापति भी होंगे। वे कोई अन्य लाभदायक पद ग्रहण नहीं करेंगे। जिस अवधि में उपराष्ट्रपति राष्ट्रपति के रूप में कार्य करते हैं अथवा अनुच्छेद-65 के अधीन राष्ट्रपति के कार्यों का निर्वहन करते हैं, तब वे राज्यसभा के सभापति के कार्य नहीं कर सकते। उन्हें अनुच्छेद-97 के अधीन सभापति को दिए जानेवाले वेतन या किसी भत्ते को लेने का हक नहीं होगा। राष्ट्रपति की अनुपस्थिति में उपराष्ट्रपति ही उनके कार्य सँभालते हैं।

योग्यताएँ

उपराष्ट्रपति बनने के लिए निम्नलिखित योग्यताएँ अपेक्षित हैं—

1. वह भारत का नागरिक हो।
2. वह 35 वर्ष की आयु पूरी कर चुका हो।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

3. वह राज्यसभा का सदस्य निर्वाचित होने की योग्यता रखता हो।
4. वह भारत सरकार अथवा किसी राज्य सरकार के अधीन लाभदायक पद पर प्रतिष्ठित न हो।

निर्वाचन

मूल संविधान में यह उपबंध था कि उपराष्ट्रपति का निर्वाचन संसद् के दोनों सदनों के संयुक्त अधिवेशन में होगा, किंतु 11वें संविधान संशोधन, 1961 द्वारा यह दुरूह प्रक्रिया समाप्त कर दी गई है। संशोधन के बाद दोनों सदनों के सदस्य मतदाता हैं। वे संयुक्त अधिवेशन में समवेत हुए बिना गुप्त मतदान द्वारा उपराष्ट्रपति का निर्वाचन करते हैं। राष्ट्रपति के समान ही उपराष्ट्रपति का चुनाव भी आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा संपन्न किया जाता है। यह अप्रत्यक्ष पद्धति है।

भारत के उपराष्ट्रपति और उनका कार्यकाल

उपराष्ट्रपति :डॉ. सर्वपल्ली राधाकृष्णन (1888-1975)

कार्यकाल :1952-1962

उपराष्ट्रपति :डॉ. जाकिर हुसैन (1897-1969)

कार्यकाल :1962-1967

उपराष्ट्रपति :वी.वी. गिरि (1894-1980)

कार्यकाल :1967-1969

उपराष्ट्रपति :गोपाल स्वरूप पाठक (1896-1982)

कार्यकाल :1969-1974

उपराष्ट्रपति :बी.डी. जत्ती (1913-2002)

कार्यकाल :1974-1979

उपराष्ट्रपति :एम. हिदायतुल्ला (1905-1992)

कार्यकाल :1979-1984

उपराष्ट्रपति :रामस्वामी वेंकटरामन (1910-2009)

कार्यकाल :1984-1987

उपराष्ट्रपति :डॉ. शंकर दयाल शर्मा (1918-1999)

कार्यकाल :1987-1992

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

उपराष्ट्रपति :के.आर. नारायणन (1920-2005)

कार्यकाल :1992-1997

उपराष्ट्रपति :कृष्णकांत (1927-2002)

कार्यकाल :1997-2002

उपराष्ट्रपति :भैरोसिंह शेखावत (1923)

कार्यकाल :2002-2007

उपराष्ट्रपति :हामिद अंसारी (1937)

कार्यकाल :2007-2017

उपराष्ट्रपति : वैंकैया नायडू (1949)

कार्यकाल : 2017 (जारी)

राष्ट्रपति एवं उपराष्ट्रपति की चुनाव-पद्धति में मुख्य अंतर निर्वाचक मंडल का होता है। राष्ट्रपति के चुनाव में जहाँ संसद् सदस्यों के अतिरिक्त विधानमंडलों (विधान परिषद् नहीं) के सदस्य भी भाग लेते हैं, वहीं उपराष्ट्रपति के चुनाव में संसद् के दोनों सदनों के सदस्य तो भाग लेते हैं, किंतु राज्य विधानमंडलों के सदस्य भाग नहीं लेते। लोकसभा और राज्यसभा के सदस्य संयुक्त रूप से उपराष्ट्रपति का चुनाव करते हैं।

उपराष्ट्रपति पद के चुनाव में अगंभीर प्रत्याशियों को हतोत्साहित करने के लिए 5 जून, 1997 को एक महत्त्वपूर्ण अध्यादेश जारी किया गया था, जिसके तहत उपराष्ट्रपति पद के प्रत्याशी के लिए अब 2,500 रुपए की जगह 15,000 की जमानत राशि कर दी गई है और उनके नाम के प्रस्तावकों तथा अनुमोदकों की संख्या 10-10 से बढ़ाकर 20-20 कर दी गई है।

पद की रिक्तता

उपराष्ट्रपति को अपना पद ग्रहण करने से पूर्व राष्ट्रपति अथवा उनके द्वारा नियुक्त किसी व्यक्ति के समक्ष निम्नलिखित रूप में शपथ लेनी होती है। इस शपथ-पत्र पर उनके हस्ताक्षर भी अनिवार्य हैं—

''मैं... ईश्वर की शपथ लेता हूँ सत्यनिष्ठा से प्रतिज्ञान करता हूँ कि मैं विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूँगा तथा जिस पद को मैं ग्रहण करने वाला हूँ, उसके कर्तव्यों का निष्ठापूर्वक निर्वहन करूँगा।''

कार्यकाल

राष्ट्रपति के समान ही उपराष्ट्रपति का कार्यकाल भी 5 वर्ष का होता है, लेकिन यदि राज्यसभा चाहे तो उन्हें पहले भी हटा सकती है। इसके लिए राज्यसभा को अपने कुल सदस्यों के बहुमत से एक प्रस्ताव पारित करना होगा, जिसके लोकसभा द्वारा स्वीकृत होने पर उपराष्ट्रपति को अपना पद छोड़ना होगा।

गौरतलब है कि उपराष्ट्रपति को उसके पद से हटाने के लिए महाभियोग लगाने की आवश्यकता नहीं होती।

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

संविधान में इस बात का कोई उल्लेख नहीं किया गया है कि एक व्यक्ति कितनी बार उपराष्ट्रपति बन सकता है। वैसे परंपरागत रूप में डॉ. राधाकृष्णन् और हामिद अंसरी ही दो ऐसे उपराष्ट्रपति रहे, जो दो-दो बार सन् 1952 में और दूसरी बार सन् 1957 में उपराष्ट्रपति चुने गए।

कार्य

भारतीय संविधान के अनुसार, उपराष्ट्रपति के दो मुख्य कार्य हैं। प्रथमत: उपराष्ट्रपति राज्यसभा के पदेन सभापति के रूप में कार्य करते हैं। राज्यसभा के सभापति के रूप में उनका चुनाव राज्यसभा के सदस्य ही नहीं, बल्कि संसद् के दोनों सदनों के सदस्य संयुक्त रूप से करते हैं। साथ ही वे राज्यसभा सचिवालय से संबंधित प्रशासनिक दायित्वों का भी निर्वाह करते हैं।

उपराष्ट्रपति से संबंधित अनुच्छेद

अनुच्छेद :63

विषयवस्तु :भारत के उपराष्ट्रपति

अनुच्छेद :64

विषयवस्तु :उपराष्ट्रपति का राज्य सभा का पदेन सभापति होना

अनुच्छेद :65

विषयवस्तु :उपराष्ट्रपति का आकस्मिक रिक्तियों अथवा राष्ट्रपति की अनुपस्थिति में राष्ट्रपति के कर्तव्यों का निर्वहन

अनुच्छेद :66

विषयवस्तु :उपराष्ट्रपति का चुनाव

अनुच्छेद :67

विषयवस्तु :उपराष्ट्रपति का कार्यकाल

अनुच्छेद :68

विषयवस्तु :उपराष्ट्रपति कार्यालय की रिक्ति की पूर्ति के लिए चुनाव का समय निर्धारण तथा आकस्मिक रिक्ति की पूर्ति के लिए चुने गए व्यक्ति का कार्यकाल

अनुच्छेद :69

विषयवस्तु :उपराष्ट्रपति द्वारा शपथ ग्रहण

अनुच्छेद :70

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

विषयवस्तु :अन्य आकस्मिकताओं में राष्ट्रपति के कर्तव्यों का निर्वहन

अनुच्छेद :71

विषयवस्तु :उपराष्ट्रपति के चुनाव संबधी अथवा उससे जुड़े मामले

उपराष्ट्रपति का दूसरा महत्त्वपूर्ण कार्य यह है कि वह राष्ट्रपति की अनुपस्थिति में उनके सभी दायित्वों का निर्वाह करते हैं। उनका यह दायित्व-निर्वाह राष्ट्रपति के चुने जाने तक जारी रहता है। इस दौरान वे राष्ट्रपति की समस्त शक्तियों तथा विशेषाधिकारों के अधिकारी होते हैं।

कार्य की दृष्टि से यदि देखा जाए, तो उपराष्ट्रपति का पद प्रमुखतः एक आलंकारिक पद ही कहा जाएगा। इसीलिए कुछ राजनीतिज्ञ उपराष्ट्रपति के पद को समाप्त करने की माँग भी करते रहे हैं। ऐसे राजनीतिज्ञों के अनुसार, राष्ट्रपति के उक्त दोनों कार्यों में से पहला यानी राज्यसभा के सभापति का कार्य, लोकसभा के अध्यक्ष की तरह राज्यसभा का अध्यक्ष चुनकर संपन्न हो सकता है। अर्थात् जैसे लोकसभा का अध्यक्ष चुना जाता है, वैसे ही राज्यसभा का भी अध्यक्ष चुना जाना चाहिए। यह अध्यक्ष ही सभापति का कार्य कर सकता है। वैसे भी सभापति का कार्य लोकसभा के अध्यक्ष के समान ही होता है।

जहाँ तक राष्ट्रपति की अनुपस्थिति में उनके दायित्वों को निभाने का प्रश्न है, उसे भी कोई अन्य पदाधिकारी, जैसे—लोकसभा के अध्यक्ष अथवा सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश निभा सकते हैं। वैसे भी राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति की अनुपस्थिति में सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश ही राष्ट्रपति के दायित्वों का निर्वाह करते हैं। स्वतंत्र भारत में यह स्थिति पहली बार उस समय आई थी, जब डॉ. जाकिर हुसैन की मृत्यु के पश्चात् तत्कालीन उपराष्ट्रपति श्री वी.वी. गिरि राष्ट्रपति के रूप में कार्य कर रहे थे, लेकिन जैसे ही श्री गिरि राष्ट्रपति पद के प्रत्याशी बने, वैसे ही उन्हें अपने पद से त्यागपत्र देना पड़ा था। ऐसी स्थिति में सन् 1969 में सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश श्री हिदायतुल्ला ने उपराष्ट्रपति के कार्यों का निर्वहन किया था।

संघीय कार्यकारिणी (मंत्रिपरिषद्)

संविधान के अनुसार, भारतीय संघ की वास्तविक कार्यपालिका की शक्ति मंत्रिपरिषद् में ही निहित है। वस्तुतः संसदीय प्रणाली में मंत्रिपरिषद् एक संयोजक समिति है, जो राज्य के विधायिका अंग से कार्यपालिका अंग को जोड़ती है। औपचारिक रूप में मंत्रिपरिषद् संसद् की सेविका होती है, परंतु वास्तव में वह उसका नेतृत्व करती है, क्योंकि उसका गठन संसद् के बहुमत से ही किया जाता है।

संविधान के अनुच्छेद-74 के अनुसार, राष्ट्रपति को अपने कार्यों के संपादन में सहायता तथा मंत्रणा देने के लिए एक मंत्रिपरिषद् होगी। 'एक मंत्रिपरिषद् होगी' का अभिप्राय है कि मंत्रिपरिषद् का अस्तित्व सदैव रहेगा। अर्थात् संविधान देश में ऐसी स्थिति नहीं लाना चाहता जिसमें न तो कोई प्रधानमंत्री हो और न कोई मंत्रिपरिषद् हो। मंत्रिपरिषद् का प्रमुख प्रधानमंत्री होगा। मंत्रिपरिषद् द्वारा राष्ट्रपति को दी जानेवाली मंत्रणा एवं सहायता को न्यायालय के समक्ष विवादित नहीं किया जाएगा।

42वें तथा 44वें संशोधनों के बाद राष्ट्रपति के लिए यह अनिवार्य कर दिया गया है कि वह मंत्रिपरिषद् के परामर्श को स्वीकार कर लें। 44वें संविधान संशोधन द्वारा राष्ट्रपति को यह अवसर प्रदान किया गया है कि वे मंत्रिपरिषद् को चेतावनी दें और किसी मामले या किसी विषय में पुनर्विचार करने का आग्रह करें। उसके बाद प्रस्तावित कार्यविधि को स्वीकार करके अपने अनुमोदन का ठप्पा लगाएँ।

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

अक्तूबर, 1997 में राष्ट्रपति के.आर. नारायणन ने उत्तर प्रदेश में राष्ट्रपति शासन लागू करने तथा 25 सितंबर, 1998 को बिहार की राबड़ी देवी सरकार को बरखास्त करके राष्ट्रपति शासन लागू करने की केंद्रीय मंत्रिमंडल की सिफारिश को पुनर्विचार हेतु लौटा दिया था।

मंत्रिपरिषद् का संगठन

संविधान के अनुच्छेद-97 के अनुसार, प्रधानमंत्री की नियुक्ति राष्ट्रपति करते हैं। प्रधानमंत्री के परामर्श पर अन्य मंत्रियों को भी वही नियुक्त करते हैं। ये नियुक्तियाँ केवल औपचारिकता ही हैं, व्यवहार में लोकसभा के बहुमत प्राप्त दल के नेता को ही प्रधानमंत्री नियुक्त किया जाता रहा है। यदि राष्ट्रपति ऐसा न कर स्वेच्छा से किसी भी व्यक्ति को प्रधानमंत्री नियुक्त कर दें, तो लोकसभा में बहुमत के अभाव के कारण वह व्यक्ति शासन नहीं चला सकेगा।

फलत: उसके मंत्रिमंडल को शीघ्र ही त्यागपत्र देना पड़ेगा। यदि कभी लोकसभा में किसी एक दल को स्पष्ट बहुमत प्राप्त नहीं हो पाता, तो राष्ट्रपति ऐसे व्यक्ति को प्रधानमंत्री नियुक्त करते हैं, जो उन्हें शीघ्र ही लोकसभा में अपना बहुमत सिद्‍ध करने का आश्वासन देते हैं।

अन्य मंत्रियों की नियुक्ति

संविधान के अनुसार, राष्ट्रपति प्रधानमंत्री के परामर्श से अन्य मंत्रियों की नियुक्ति करते हैं। वे प्रधानमंत्री के परामर्श के बिना किसी भी व्यक्ति की नियुक्ति नहीं कर सकते। मंत्रिपरिषद् के लिए प्रधानमंत्री अपने दल (या गठबंधन) के प्रमुख नेताओं की सूची राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत करते हैं। राष्ट्रपति सहज ही इस सूची को स्वीकार कर लेते हैं। इस प्रकार मंत्रिपरिषद् का संगठन हो जाता है।

मंत्रियों की योग्यताएँ

संविधान के अनुसार, मंत्री बनने के लिए संसद् के किसी सदन का सदस्य होना अनिवार्य है। यदि किसी ऐसे व्यक्ति को मंत्री बनाया जाता है, जो पद-ग्रहण के समय किसी भी सदन का सदस्य नहीं हो, तो उसे अनिवार्यत: पद-ग्रहण की तिथि से 6 माह के अंदर दोनों में से किसी एक सदन का सदस्य होना पड़ेगा, अन्यथा वह मंत्री पद से हटा दिया जाएगा।

कार्यकाल

संविधान के अनुसार मंत्रिगण राष्ट्रपति के प्रसादपर्यंत अपने पद पर कार्यरत रहेंगे, किंतु व्यवहार में यह उपबंध केवल औपचारिक सा प्रतीत होता है। वस्तुत: मंत्रिपरिषद् का कार्यकाल लोकसभा पर निर्भर करता है अर्थात् लोकसभा का विश्वास प्राप्त रहने तक वह अपने पद पर रह सकता है।

मंत्रिपरिषद् अपने कार्यकाल के लिए प्रधानमंत्री पर निर्भर करती है, क्योंकि प्रधानमंत्री का त्यागपत्र समस्त मंत्रिपरिषद् का त्यागपत्र माना जाता है। इस रूप में मंत्रिपरिषद् की कोई समय-सीमा निश्‍चित नहीं है।

सामान्यत: संविधान के अनुसार लोकसभा का कार्यकाल 5 वर्ष निर्धारित किया गया है, इसलिए मंत्रिपरिषद् का कार्यकाल भी 5 वर्ष माना जा सकता है। यदि लोकसभा 5 वर्ष से पूर्व ही किसी कारणवश भंग हो जाए, तो मंत्रिपरिषद् का कार्यकाल भी उसी के साथ समाप्त हो जाएगा।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

मंत्रियों की संख्या

संविधान के अंतर्गत मंत्रियों की संख्या और मंत्रिपरिषद् के आकार पर कोई प्रतिबंध नहीं है। यह प्रधानमंत्री की इच्छा पर निर्भर करता है कि वह अपनी मंत्रिपरिषद् में कितने मंत्रियों को स्थान दे। समसामयिक परिस्थितियों में प्रधानमंत्री मंत्रिपरिषद् का आकार घटा-बढ़ा सकता है।

मंत्रिपरिषद् का गठन करते हुए उसे इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि वह मंत्रिपरिषद् में सभी महत्त्वपूर्ण राज्यों और संप्रदायों का प्रतिनिधित्व बनाए रखे, तब वह दल के प्रभावशाली नेताओं की उपेक्षा भी नहीं कर सकता। वैसे सामान्य परिस्थितियों में सांसदों की संख्या के दस प्रतिशत से अधिक संख्या में मंत्री नहीं हो सकते। पं. जवाहरलाल नेहरू के प्रधानमंत्रित्व में सन् 1961 के अंत में मंत्रिपरिषद् की सदस्य संख्या 47 थी। सन् 1975 के अंत तक मंत्रिपरिषद् की सदस्य संख्या 60 तक पहुँच गई थी और सन् 1977 में घटकर केवल 24 रह गई। फरवरी, 1988 में एक बार फिर मंत्रिपरिषद् में मंत्रियों की संख्या 60 तक हो गई।

मंत्रिपरिषद् और मंत्रिमंडल

यद्यपि संविधान में 'मंत्रिमंडल' शब्द का प्रयोग मंत्रिपरिषद् के लिए नहीं किया गया है, किंतु व्यवहार में प्राय: 'मंत्रिमंडल' शब्द का ही प्रयोग प्रचलित है। मंत्रिपरिषद् और मंत्रिमंडल में अंतर होता है।

प्रधानमंत्री मंत्रिपरिषद् के साथ ही विचार-विमर्श करता है, मंत्रिमंडल के सभी सदस्यों के साथ नहीं, क्योंकि मंत्रिपरिषद् में केवल कैबिनेट मंत्री होते हैं, जबकि मंत्रिमंडल में कैबिनेट मंत्री, राज्यमंत्री, उपमंत्री आदि भी शामिल होते हैं।

मंत्रियों का वर्गीकरण

मंत्रिमंडल में मुख्यत: निम्नलिखित स्तरों के मंत्री होते हैं—

- *कैबिनेट मंत्री* : इस वर्ग के मंत्रियों में उन्हीं मंत्रियों को लिया जाता है, जो अपेक्षाकृत अधिक अनुभवी, वरिष्ठ और प्रभावशाली हों तथा जिनके साथ गोपनीय विषयों पर भी विचार-विमर्श किया जा सके। ये मंत्री अपने विभाग के अध्यक्ष होते हैं और तत्संबंधी नीति का निर्धारण करते हैं।
- *राज्यमंत्री* : ये मंत्रिमंडल के सदस्य तो होते हैं, किंतु इन्हें कैबिनेट मंत्रियों के समान महत्त्व नहीं दिया जाता। हाँ, विशेष अवसरों पर इन्हें कैबिनेट की बैठकों में बुलाया जा सकता है। इन्हें अलग से विभाग भी सौंपा जा सकता है और किसी कैबिनेट मंत्री का सहायक भी बनाया जा सकता है।
- *उपमंत्री* : राज्यमंत्री या कबीना मंत्री की सहायता के लिए उपमंत्री बनाए जाते हैं। मंत्रिमंडल के सदस्य होते हुए भी ये कैबिनेट की बैठकों में भाग नहीं ले पाते।

इन तीन स्तरों के अतिरिक्त स्वतंत्र प्रभार वाले मंत्री भी मंत्रिमंडल में रखे जाते हैं। इन सभी प्रकार के मंत्रियों के मंत्रालयों का बँटवारा प्रधानमंत्री के परामर्श पर राष्ट्रपति करते हैं। एक मंत्री को एक से अधिक मंत्रालय भी सौंपे जा सकते हैं। आमतौर पर एक कैबिनेट मंत्री की सहायता के लिए एक राज्यमंत्री रखा जाता है। सामान्यत: प्रत्येक मंत्रालय के लिए सचिव पद का एक अधिकारी भी रहता है। यह सचिव नीति तथा सामान्य प्रशासन संबंधी मामलों में मंत्री को परामर्श देता है। सरकार के सभी निर्णय सचिव द्वारा निर्गत होते हैं।

मंत्रिपरिषद् से संबंधित अनुच्छेद : एक नजर में

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

*अनुच्छेद :*74

*विषयवस्तु :*मंत्रिपरिषद् द्वारा राष्ट्रपति को सहायता एवं सलाह देना

*अनुच्छेद :*75

*विषयवस्तु :*मंत्रियों से संबंधित अन्य प्रावधान

*अनुच्छेद :*77

*विषयवस्तु :*भारत सरकार के कार्य का संचालन

*अनुच्छेद :*78

*विषयवस्तु :*राष्ट्रपति को सूचनाएं प्रदान करने से संबंधित प्रधानमंत्री के कर्त्तव्य

मंत्रिमंडलीय सचिवालय उच्चतम स्तर पर निर्णय लेने की प्रक्रिया में समन्वय बनाए रखने में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह सचिवालय प्रधानमंत्री के निर्देशन में कार्य करता है। इसके प्रमुख कार्यों में मंत्रिमंडल एवं उसकी समितियों के सामने मामले प्रस्तुत करना, उन पर किए गए निर्णयों के रिकॉर्ड तैयार करना और उन पर अमल करना आदि शामिल हैं। यह सचिवालय प्रधानमंत्री के निर्देश और राष्ट्रपति की सहमति से विभिन्न मंत्रालयों और विभागों के बीच सरकारी कामकाजों का बँटवारा करता है।

विभिन्न मंत्रालय एवं उनके विभाग

भारत सरकार कार्य-संचालन नियम 1961 के अंतर्गत 25 मई, 2004 से मंत्रालय एवं उनके विभाग इस प्रकार हैं —

1. कृषि मंत्रालय
- (क) कृषि और सहकारिता विभाग
- (ख) कृषि अनुसंधान और शिक्षा विभाग
- (ग) पशुपालन और डेयरी विभाग

2. कृषि एवं ग्रामीण उद्योग मंत्रालय

3. रसायन और उर्वरक मंत्रालय
- (क) रसायन और पेट्रो-रसायन विभाग
- (ख) उर्वरक विभाग

4. नागर विमानन मंत्रालय

5. कोयला और खान मंत्रालय
- (क) कोयला विभाग
- (ख) खान विभाग

6. वाणिज्य और उद्योग मंत्रालय
- (क) वाणिज्य विभाग
- (ख) औद्योगिक नीति और संवर्धन विभाग

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

7. संचार और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय
(क) दूरसंचार विभाग
(ख) डाक विभाग
(ग) सूचना प्रौद्योगिकी विभाग
8. संस्कृति मंत्रालय
9. रक्षा मंत्रालय
(क) रक्षा विभाग
(ख) रक्षा उत्पाद और आपूर्ति विभाग
(ग) रक्षा अनुसंधान और विकास विभाग
10. पर्यावरण और वन मंत्रालय
11. विदेश मंत्रालय
12. वित्त मंत्रालय
(क) आर्थिक कार्य विभाग
(ख) व्यय विभाग
(ग) विनिवेश विभाग
13. कंपनी कार्य मंत्रालय
14. उपभोक्ता मामले, खाद्य और सार्वजनिक वितरण मंत्रालय
(क) उपभोक्ता मामलों का विभाग
(ख) खाद्य और सार्वजनिक वितरण विभाग
15. खाद्य प्रसंस्करण उद्योग विभाग
16. स्वास्थ्य और परिवार कल्याण संस्थान
(क) स्वास्थ्य विभाग
(ख) परिवार कल्याण विभाग
(ग) भारतीय चिकित्सा पद्धति और होमियोपैथी विभाग
17. भारी उद्योग और लोक उद्यम मंत्रालय
(क) भारी उद्योग विभाग
(ख) लोक उद्यम विभाग
18. गृह मंत्रालय
(क) आंतरिक सुरक्षा विभाग
(ख) राज्य विभाग
(ग) राजभाषा विभाग
(घ) गृह विभाग
(ड) जम्मू और कश्मीर विभाग
19. मानव संसाधन विकास मंत्रालय
(क) प्रारंभिक शिक्षा और साक्षरता विभाग

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

(ख) माध्यमिक शिक्षा और उच्चतर शिक्षा विभाग
(ग) महिला और बाल विकास विभाग

20. सूचना और प्रसारण मंत्रालय
21. श्रम मंत्रालय
22. विधि और न्याय मंत्रालय
(क) विधि कार्य विभाग
(ख) विधायी विभाग
(ग) न्याय विभाग

23. अपारंपरिक ऊर्जा स्रोत मंत्रालय
24. आप्रवासी भारतीयों के मामलों का मंत्रालय
25. संसदीय कार्य मंत्रालय
26. कार्मिक, लोक शिकायत तथा पेंशन मंत्रालय
(क) कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग
(ख) प्रशासनिक सुधार और लोक शिकायत विभाग
(ग) पेंशन और पेंशनभोगी कल्याण विभाग

27. पेट्रोलियम और प्राकृतिक गैस मंत्रालय
28. योजना मंत्रालय
29. विद्युत मंत्रालय
30. रेल मंत्रालय
31. सड़क परिवहन और राजमार्ग मंत्रालय
32. ग्रामीण विकास मंत्रालय
(क) ग्रामीण विकास विभाग
(ख) भूमि संसाधन विभाग
(ग) पेयजल आपूर्ति विभाग

33. विज्ञान और प्रौद्योगिकी मंत्रालय
(क) विज्ञान और प्रौद्योगिकी विभाग
(ख) विज्ञान और औद्योगिक अनुसंधान विभाग
(ग) बायो टेक्नोलॉजी विभाग

34. लघु उद्योग मंत्रालय
35. सांख्यिकी और कार्यक्रम कार्यान्वयन मंत्रालय
36. जहाजरानी मंत्रालय
37. इस्पात मंत्रालय
38. कपड़ा मंत्रालय
39. पर्यटन मंत्रालय
40. जनजाति कार्य मंत्रालय

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

41. शहरी विकास मंत्रालय
42. शहरी रोजगार और गरीबी उपशमन मंत्रालय
43. जल संसाधन मंत्रालय
44. सामाजिक न्याय और अधिकारिता मंत्रालय
45. युवा कार्यक्रम और खेल मंत्रालय
46. परमाणु ऊर्जा और खेल मंत्रालय
47. महासागर विकास विभाग
48. अंतरिक्ष विभाग
49. मंत्रिमंडल सचिवालय
50. प्रधानमंत्री कार्यालय
51. उत्तर-पूर्वी क्षेत्र विकास विभाग

भारत के प्रधानमंत्री और उनके कार्यकाल

प्रधानमंत्री :जवाहरलाल नेहरू (1889-1964)

कार्यकाल :15.8.1947—27.5.1964

प्रधानमंत्री :गुलजारीलाल नंदा (1898) (कार्यवाहक)

कार्यकाल :27.5.1964—9.6.1964

प्रधानमंत्री :लालबहादुर शस्त्री (1904-1996)

कार्यकाल :9.6.1964—11.1.1966

प्रधानमंत्री :गुलजारीलाल नंदा (कार्यवाहक)

कार्यकाल :11.1.1966—24.1.1966

प्रधानमंत्री :श्रीमती इंदिरा गांधी (1917-1984)

कार्यकाल :24.1.1966—24.3.1977

प्रधानमंत्री :मोरारजी देसाई (1896-1995)

कार्यकाल :24.3.1977—28.7.1979

प्रधानमंत्री :चौधरी चरण सिंह (1902-1987)

कार्यकाल :28.7.1979—14.1.1980

प्रधानमंत्री :श्रीमती इंदिरा गांधी (1917-1984)

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

कार्यकाल :14.1.1980—31.10.1984

प्रधानमंत्री :राजीव गांधी (1944-1991)

कार्यकाल :31.10.1984—2.12.1989

प्रधानमंत्री :विश्वनाथ प्रताप सिंह (1931-2008)

कार्यकाल :2.12.1989—10.11.1990

प्रधानमंत्री :चंद्रशेखर (1927-2007)

कार्यकाल :10.11.1990—21.6.1991

प्रधानमंत्री :पी.वी. नरसिम्हा राव (1921-2004)

कार्यकाल :21.6.1991—16.5.1996

प्रधानमंत्री :अटल बिहारी वाजपेयी (1924)

कार्यकाल :16.5.1996—1.6.1996

प्रधानमंत्री :एच.डी. देवगौड़ा (1933)

कार्यकाल :1.6.1996—21.4.1997

प्रधानमंत्री :इंद्रकुमार गुजराल (1919)

कार्यकाल :21.4.1997—19.3.1998

प्रधानमंत्री :अटल बिहारी वाजपेयी (1924)

कार्यकाल :19.3.1998—13.10.1999

प्रधानमंत्री :अटल बिहारी वाजपेयी (1924)

कार्यकाल :13.10.1999-22.5.2004

प्रधानमंत्री :डॉ. मनमोहन सिंह (1932)

कार्यकाल :22.5.2004-22.5.2009

प्रधानमंत्री :डॉ. मनमोहन सिंह (1932)

कार्यकाल :22.5.2009-17.5.2014

प्रधानमंत्री :नरेंद्र मोदी (1950)

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

कार्यकाल :26.5.2014 (जारी)

मंत्रिपरिषद् के कार्य

मंत्रिपरिषद् के निम्नलिखित कार्य हैं—

राष्ट्र की कार्यपालिका का नियंत्रण

संविधान में कार्यपालिका-शक्ति को राष्ट्रपति में निहित किया गया है, पर वास्तव में इसका उपयोग मंत्रिपरिषद् करती है। इन मंत्रियों को अपने-अपने विभागों को उत्तरदायित्व के अनुसार चलाना पड़ता है। वे निर्धारित नीतियों के अनुसार विभागों का नियंत्रण करते हैं और शासन चलाते हैं तथा कैबिनेट (मंत्रिपरिषद्) के मंत्रियों का नियंत्रण करता है।

विभागों के बीच एकता और समन्वय

कैबिनेट विभागों के बीच एकता और समन्वय स्थापित करता है। शासन के विभागों के बीच कोई विभाजक दीवार नहीं खींची जा सकती; हर विभाग एक-दूसरे विभाग से संबंधित है। एक विभाग दूसरे विभाग पर प्रभाव डाल सकता है। सामान्यतया प्रत्येक महत्त्वपूर्ण विषय का प्रभाव कई मामलों पर पड़ता है। ऐसी परिस्थिति में कैबिनेट ही विभागों के बीच समन्वय स्थापित करता है। विभाग आपसी विवादों को स्वयं निपटा लेते हैं, किंतु उलझन की अवस्था में प्रधानमंत्री ही इन विवादों को निबटाते हैं। कैबिनेट का कार्य काफी कठिन होता है। सामान्यत: सप्ताह में केवल एक बार ही कैबिनेट की बैठक होती है और वह भी केवल कुछ घंटों के लिए। मंत्री अपने विभागीय कार्यों में ही इतने व्यस्त रहते हैं कि उन्हें इन बैठकों के लिए मुश्किल से समय मिलता है। यही कारण है कि आजकल कैबिनेट की समितियाँ स्थापित की गई हैं। इनके दो मुख्य कार्य होते हैं—

प्रथम, वे उन विषयों पर वाद-विवाद करके कैबिनेट को प्रतिवेदन देती हैं, जिनका अंतिम निर्णय कैबिनेट को ही करना है। इन समितियों में ही विषयों पर विस्तार और सूक्ष्मता से अवलोकन और वाद-विवाद कर उनके गुण और दोषों की सूची बनाई जाती है।

द्वितीय, कुछ कम महत्त्वपूर्ण विषय, जो समितियों के अभाव में पहले कैबिनेट में तय किए जाते थे, अब समितियों द्वारा ही उन पर निर्णय किया जाता है।

हस्तांतरित विधि-रचना

आजकल वाद-विवाद में उलझे रहने के कारण संसद् को बहुत कम समय मिलता है, इसलिए वह अपने कुछ विधायी कार्य कार्यपालिका को हस्तांतरित कर देती है। इसके अतिरिक्त संसद्-रचित विधियाँ तो केवल ढाँचा मात्र होती हैं, जिनमें कैबिनेट द्वारा नियम और उपनियमों को भरकर इस ढाँचे को माँसल कलेवर प्रदान किया जाता है। कार्यपालिका द्वारा रचित यह नियम-उपनियम आदि संसद् की विधियों को सक्रिय बनाते हैं। समग्र रूप से यह प्रशासनिक विधि कहलाता है।

वित्त पर नियंत्रण

कार्यपालिका राष्ट्रीय वित्त प्रशासन के लिए उत्तरदायी है। वह राष्ट्र के शासन के लिए राजस्व वसूल करने और इस आय को समुचित रूप से व्यय करने के लिए उत्तरदायी है। आय-व्यय का प्रस्ताव एक ऐसा विषय है, जो

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

आर्थिक और राजनीतिक—दोनों समस्याओं से संबंध रखता है, इसलिए कैबिनेट इसको संसद् में पेश करने से पहले विस्तार से वाद-विवाद कर लेता है।

विभिन्न उच्च पदों पर नियुक्तियाँ

विभिन्न उच्च पदों पर नियुक्तियाँ यद्यपि राष्ट्रपति के नाम पर होती हैं, किंतु इनके लिए सिफारिश मंत्रिपरिषद् की ही होती है। साधारण नियुक्तियाँ प्राय: विभाग स्वयं कर लेते हैं, किंतु सारे उच्च पदों पर नियुक्तियों से पहले कैबिनेट की बैठकों में विचार-विमर्श कर लिया जाता है।

संसद् का नेतृत्व

मंत्रिपरिषद् के सदस्य ही संसद् में सारे महत्त्वपूर्ण विधेयकों, प्रस्तावों और संकलनों को रखते हैं तथा संसद् के वाद-विवादों में नेतृत्व करते हैं, संसद् का मार्गदर्शन करते हैं, सदस्यों के प्रश्नों का उत्तर देकर उनकी जिज्ञासा शांत करते हैं।

कैबिनेट का एक सचिवालय भी होता है, जो बैठकों के लिए कार्यों की सूची बनाता है, कैबिनेट के निर्णयों को लिपिबद्ध करता है और उन निर्णयों से विभागों को सूचित करता है। यह कैबिनेट के वाद-विवादों के लिए सामग्री भी जुटाता है।

मंत्रिपरिषद् की बैठक

सामान्यत: मंत्रिपरिषद् की बैठक सप्ताह में एक दिन होने का नियम है, किंतु आवश्यकता पड़ने पर यह बैठक एक से अधिक बार भी हो सकती है। मंत्रिपरिषद् की बैठकों की अध्यक्षता प्रधानमंत्री करते हैं। मंत्रिपरिषद् की बैठकों में नीति-निर्धारण जैसे विषयों पर विचार-विमर्श किया जाता है। इन बैठकों तथा कार्यवाहियों को गोपनीय रखा जाता है, इसीलिए मंत्रियों को पद-ग्रहण करने से पूर्व गोपनीयता की शपथ दिलाई जाती है। मंत्रिपरिषद् की इन बैठकों के समस्त वाद-विवाद गुप्त रखे जाते हैं। केवल अंतिम निर्णय ही जनता के समक्ष घोषित किए जाते हैं। मंत्रिपरिषद् की बैठकों में होनेवाले निर्णय सभी मंत्रियों के लिए मान्य होते हैं। यदि कोई मंत्री निर्णय को मानने से इनकार करता है अथवा उसका विरोध करता है, तो उसे समझा-बुझाकर ऊँच-नीच दिखाकर सहमत कर लिया जाता है। यदि कोई मंत्री, मंत्री परिषद् के निर्णय से सहमत नहीं होता है तो उसे त्यागपत्र दे देना चाहिए न कि सार्वजनिक रूप से अपना विरोध प्रकट करना चाहिए।

मंत्रिपरिषद् में मंत्रियों की पर्याप्त संख्या होती है, जिनके मध्य सभी विषयों पर उचित निर्णय आसानी से नहीं लिए जा सकते। इसलिए मंत्रिपरिषद् में प्रधानमंत्री एवं अन्य एक-दो महत्त्वपूर्ण मंत्रियों की एक अंतरंग मंत्रिपरिषद् बन जाती है, जिसमें महत्त्वपूर्ण विषयों पर बैठक से पूर्व ही विचार-विमर्श कर लिया जाता है और एक तरह से उन विषयों पर निर्णय भी हो जाता है। यह अंतरंग परिषद् सभी मंत्रियों का प्रभाव समान न होने के कारण बनाई जाती है।

मंत्रिपरिषद् का अपना अलग एक सचिवालय होता है, जिसमें एक संयुक्त सचिव, दो उपसचिव, दो सहकारी सचिव, एक सहायक सचिव आदि होते हैं। यह सचिवालय प्रधानमंत्री के आदेशानुसार कार्यक्रम तैयार करता है, उनके नियमों का रिकॉर्ड रखता है और ऐसी सूचनाएँ संगृहीत करता है, जिनकी आवश्यकता किसी भी समय पड़ सकती है।

प्रधानमंत्री

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

भारतीय संविधान के अंतर्गत प्रधानमंत्री को राष्ट्रपति से कहीं अधिक शक्ति प्रदान की गई है। राष्ट्रपति के समस्त अधिकार केवल शोभा हैं, किंतु प्रधानमंत्री संघीय सरकार में महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं, क्योंकि मंत्रिपरिषद् के अध्यक्ष प्रधानमंत्री होते हैं। समस्त सत्ता उन्हीं के हाथों में होती है। वे राष्ट्रपति और मंत्रिपरिषद् के बीच सेतु या कड़ी का कार्य करते हैं।

कार्य

भारतीय संविधान के अंतर्गत प्रधानमंत्री को जितनी शक्तियाँ और अधिकार प्रदान किए गए हैं, उतने विश्व के किसी संवैधानिक शासक को प्राप्त नहीं हैं। प्रधानमंत्री के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं—

वैधानिक कार्य

प्रधानमंत्री का कर्तव्य है कि शासन संबंधी समस्त निर्णयों की सूचना यथासमय राष्ट्रपति को दें। यदि राष्ट्रपति इस संदर्भ में प्रधानमंत्री से कोई विचार-विमर्श करना चाहते हैं अथवा कोई अन्य सूचना लेना चाहते हैं तो प्रधानमंत्री का यह कर्तव्य है कि वे राष्ट्रपति को अपेक्षित विवरण उपलब्ध कराएँ।

मंत्रिपरिषद् का गठन

जैसा पूर्वोल्लिखित है, प्रधानमंत्री के परामर्श पर ही राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् के मंत्रियों की नियुक्ति करते हैं; अतः स्पष्ट है कि प्रधानमंत्री ही संघीय सरकार के विभिन्न मंत्रियों की नियुक्ति में बहुत बड़ा हाथ रखते हैं। किसे कैबिनेट मंत्री, राज्यमंत्री या उपमंत्री बनाया जाए, किस मंत्री को कौन सा मंत्रालय दिया जाए, यह तय करना भी प्रधानमंत्री का ही कार्य है। यह बात अलग है कि इस कार्य के लिए वह अपने दल के प्रमुख व्यक्तियों से उचित विचार-विमर्श करें। यूँ तो वैधानिक दृष्टि से प्रधानमंत्री की स्थिति अन्य मंत्रियों के समान ही होती है, किंतु फिर भी वे 'समानों के बीच प्रथम' की उक्ति चरितार्थ करते हैं।

प्रधानमंत्री से संबंधित अनुच्छेद : एक नजर में

अनुच्छेद :74

विषयवस्तु :मंत्रिपरिषद् द्वारा राष्ट्रपति को सहायता एवं परामर्श देना
अनुच्छेद :75

विषयवस्तु :प्रधानमंत्री की नियुक्ति
अनुच्छेद :77

विषयवस्तु :भारत सरकार के कार्य का संचालन
अनुच्छेद :78

विषयवस्तु :प्रधानमंत्री का राष्ट्रपति को जानकारी प्रदान करने संबंधी कर्तव्य

डॉ. अंबेडकर के शब्दों में, ''प्रधानमंत्री वास्तव में मंत्रिमंडल के वृत्तखंड की प्रमुख शिला हैं। जब तक उक्त पद को इतनी अधिकारपूर्ण स्थिति प्रदान न की जाए कि वह स्वेच्छा से मंत्रियों को नियुक्त या पदच्युत कर सकें, तब तक मंत्रिमंडल का सामूहिक उत्तरदायित्व प्राप्त नहीं हो सकता।''

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

मंत्रियों के कार्यों का विभाजन

मंत्रियों के राजकीय विभागों का निर्धारण प्रधानमंत्री द्वारा ही किया जाता है। अधीनस्थ कर्मचारियों की नियुक्ति में वे अन्य मंत्रियों को परामर्श एवं सहायता देते हैं।

मंत्रिपरिषद् का अध्यक्ष

प्रधानमंत्री कैबिनेट की बैठकों की अध्यक्षता भी करते हैं। वस्तुत: उन्हीं के आदेशानुसार मंत्रिपरिषद् की समस्त कार्यवाही की जाती है।

मंत्रियों को एकता के सूत्र में बाँधना

यद्यपि प्रधानमंत्री का पद अविभागीय होता है, फिर भी प्रधानमंत्री चाहें तो कुछ संवेदनशील विभाग जैसे परमाणु शक्ति विभाग अपने पास रख सकते हैं। विभिन्न मंत्रियों को एकता के सूत्र में बाँधे रखना उनका प्रमुख कार्य है। वे मंत्रिपरिषद् के कार्यों का निरीक्षण करते हुए उसे उचित निर्देशन भी देते हैं। विभिन्न मंत्रियों के बीच उत्पन्न मतभेदों को दूर करना प्रधानमंत्री का ही कार्य है।

शासकीय नीति का निर्धारण

विभिन्न राजकीय विभागों की नीति के निर्धारण में प्रधानमंत्री के दिशा-निर्देशन की सर्वोच्च वरीयता रहती है अर्थात् कोई भी मंत्री उनकी इच्छा के विरुद्ध कार्य नहीं कर सकता। यहाँ यह भी गौरतलब है कि प्रधानमंत्री भी मंत्री के परामर्श के बिना किसी भी महत्त्वपूर्ण नीति का निर्धारण नहीं कर सकते।

विभिन्न नियुक्तियों के संबंध में राष्ट्रपति को परामर्श

यद्यपि संविधान की दृष्टि में राज्यपालों, सर्वोच्च न्यायालय तथा उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश, एटॉर्नी जनरल आदि की नियुक्ति राष्ट्रपति करते हैं, किंतु इसके लिए उन्हें परामर्श प्रधानमंत्री ही देते हैं। इसी प्रकार राज्यसभा के लिए राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत किए जानेवाले 12 सदस्यों के नाम प्रधानमंत्री ही सुझाते हैं।

संसदीय नेता के रूप में कार्य

लोकसभा में बहुमतवाले दल का नेता होने के कारण प्रधानमंत्री का ही यह कर्तव्य है कि वे संसद् की कार्यप्रणाली संबंधी महत्त्वपूर्ण नीतियाँ निर्धारित करें। यदि कोई मंत्री अपने भाषण या नीतियों के माध्यम से सांसदों को संतुष्ट नहीं कर पाते तो प्रधानमंत्री का ही यह कर्तव्य है कि वह संसद् को संतुष्ट करें। इस प्रकार प्रधानमंत्री संसद् का नेतृत्व करते हैं।

दल के नेता के रूप में कार्य

संसद् में बहुमत वाले दल के नेता होने के कारण प्रधानमंत्री का यह भी कर्तव्य है कि वे दलीय नीतियों एवं कार्यक्रमों से जनता को अवगत कराएँ।

राष्ट्र का नेतृत्व

राष्ट्र के अध्यक्ष राष्ट्रपति भले ही हों, किंतु उसके नेता प्रधानमंत्री ही होते हैं। वे राष्ट्रीय महत्त्व के प्रश्नों पर

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

सबका मार्गदर्शन करते हैं। युद्धकाल अथवा गृहकलह के दौरान प्रधानमंत्री देश का नेतृत्व करते हुए जनता में नैतिक साहस तथा जनता का समर्थन बनाए रखने का प्रयास करते हैं। इतना ही नहीं, अंतरराष्ट्रीय राजनीति में भी प्रधानमंत्री की महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है। यह प्रधानमंत्री के व्यक्तित्व पर भी निर्भर करता है।

महान्यायवादी

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-76 में भारत के महान्यायवादी पद का निरूपण किया गया है। महान्यायवादी भारत सरकार के सर्वोच्च विधि अधिकारी होते हैं। महान्यायवादी भारत सरकार को विधि संबंधी मामलों में सलाह देते हैं और ऐसे अन्य कार्यों का निर्वहन करते हैं, जो राष्ट्रपति उनको समय-समय पर निर्देशित करते हैं। भारत के महान्यायवादी मंत्रिमंडल के सदस्य नहीं होते हैं, फिर भी उन्हें किसी सदन में या उसकी समिति की बैठक में बोलने का अधिकार प्राप्त है, परंतु उन्हें मत देने का अधिकार नहीं है। महान्यायवादी को अपने कर्तव्यों के पालन में भारत के राज्यक्षेत्र में सभी न्यायालयों में सुनवाई कराने का अधिकार प्राप्त है।

महान्यायवादी की नियुक्ति राष्ट्रपति के द्वारा की जाती है तथा वह राष्ट्रपति के प्रसादपर्यंत ही पद धारण करते हैं। उनकी नियुक्ति के लिए वे ही अर्हताएँ निर्धारित हैं, जो उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति के लिए अपेक्षित हैं।

महान्यायवादी लोकसभा के पूर्णकालीन अधिकारी नहीं होते। उन्हें निजी प्रैक्टिस करने से नहीं रोका जा सकता। हाँ, इतना अवश्य प्रतिबंधित है कि वे भारत सरकार के विरुद्ध न तो सलाह दे सकते हैं और न ही उसके विरुद्ध वकालत कर सकते हैं।

सरकारी कार्य का संचालन

संविधान के रचनाकारों के समक्ष यह महत्त्वपूर्ण प्रश्न था कि उपमहाद्वीप की गरिमा वाले भारत के सरकारी कार्यों के लिए क्या व्यवस्था की जाए? इसी संदर्भ में संविधान के अनुच्छेद-77 का निर्देश है कि भारत सरकार की समस्त कार्यपालिका की कार्यवाही राष्ट्रपति के नाम से की जाएगी। भारत सरकार का कार्य अधिकाधिक सुविधापूर्वक किए जाने और मंत्रियों में उक्त कार्य के आवंटन के लिए राष्ट्रपति नियम बनाएँगे।

अनुच्छेद-78 में यह भी निर्दिष्ट है कि

(क) प्रधानमंत्री संघ के कार्य-कलाप के प्रशासन और विधान संबंधी, मंत्रिपरिषद् के सभी निर्णय एवं निश्चय राष्ट्रपति को सूचित करेंगे।

(ख) संघ के कार्य-कलाप के प्रशासन और विधान संबंधी जो जानकारी राष्ट्रपति माँगें, वह दें।

(ग) किसी विषय को, जिस पर किसी मंत्री ने निश्चय व्यक्त कर दिया है, किंतु मंत्रिपरिषद् ने विचार नहीं किया है, राष्ट्रपति द्वारा अपेक्षा किए जाने पर परिषद् के समक्ष विचार के लिए रखें।

अपने शासनकाल में राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह ने 9 मार्च, 1987 को एक अहम मुद्दा उठाया था कि राष्ट्रपति को देश की गतिविधियों की जानकारी प्राप्त करने का अधिकार है और जानकारी देने का संवैधानिक दायित्व प्रधानमंत्री का है।

इसके जवाब में तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी ने यह प्रतिपादित करने का प्रयास किया था कि राष्ट्रपति को कितनी जानकारी मिलनी चाहिए, यह फैसला प्रधानमंत्री ही करेंगे। इस प्रकरण में यह उल्लेखनीय है कि राष्ट्रपति ने एक पत्र लिखकर प्रधानमंत्री को स्पष्ट रूप से सूचित किया था, ''असम, पंजाब और मिजोरम के बारे में समझौता करते समय मुझे किसी भी स्तर पर कोई जानकारी नहीं दी गई।'' यह एक विवादास्पद बिन्दु है।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

13. भारतीय संसद्

(भाग-5, अध्याय-2, अनुच्छेद-79 से 122 तक)

'संसद्' शब्द को फ्रेंच भाषा में 'पार्ले' शब्द से लिया गया है, जिसका अर्थ है, बोलना अथवा विचार-विमर्श करना। राष्ट्रमंडल के सदस्यों ने संसदीय शासन व्यवस्था को अपनाया है। संयुक्त राज्य अमेरिका में संसद् को कांग्रेस, जापान में डाइट और जर्मनी में इसे बंडेस्टडे कहा जाता है।

ब्रिटेन में एंग्लो-सेक्सन राजाओं के शासन काल में वर्तमान संसदीय व्यवस्था का जन्म हुआ। राजा को 1215 ई. में मैग्नाकार्टा अधिकारों का घोषणा-पत्र स्वीकार करना पड़ा। तभी से संसदीय व्यवस्था का निरंतर विकास होता रहा है।

स्टुवर्ट वंश के शासन काल में राजा और संसद् के बीच संघर्ष के परिणामस्वरूप राजा चार्ल्स प्रथम (1649) को प्राण दंड दिया गया व राजा जेम्स द्वितीय को 'बिना खूनी क्रांति' के गद्दी से (1688) हटा दिया।

'कैबिनेट' शब्द का अर्थ होता है छोटा कमरा अथवा बंद चैंबर। राजा जार्ज की अंग्रेजी बोलने में असमर्थता एवं अनुपस्थिति के कारण एक मंत्री को कैबिनेट मीटिंग की अध्यक्षता करनी पड़ती थी। फलस्वरूप प्रधानमंत्री पद की उत्पत्ति हुई।

ब्रिटेन का उपनिवेश होने के कारण भारत में संसीय सरकार का विकास होना स्वाभाविक था।

संसदीय सरकार की निम्नलिखित विशेषताएँ हैं—

1. संसद् की सर्वोच्चता 2. संसद् के प्रति कार्यपालिका का उत्तरदायित्व
3. एकरूपता एवं दल 4. प्रधानमंत्री की प्रमुखता
5. सत्ता का संयोजन 6. मंत्रियों की नेतृत्वकारी भूमिका
7. अभिसमय

गार्नर का कहना है कि संसदात्मक सरकार वह शासन प्रणाली है, जिसमें वास्तविक कार्यपालिका अर्थात् मंत्रिमंडल व्यवस्थापिका अथवा उसके लोकप्रिय सदन के प्रति और अंतिम रूप से निर्वाचक मंडल के प्रति अपनी राजनीतिक नीतियों तथा प्रशासनिक कार्यों के लिए कानूनी रूप से उत्तरदायी होती है व राज्य का प्रधान नाममात्र का एवं उत्तरदायी है।

भारतीय संविधान के अंतर्गत देश में संसदीय प्रणाली की व्यवस्था की गई है, जिसके संघीय विधानमंडल की संज्ञा 'संसद्' है। राज्य के शासन में संसद् का प्रमुख स्थान है। यही देश की राजनीतिक व्यवस्था की केंद्र है। इसी में जनता की प्रभुसत्ता का समावेश है। इसीलिए भारतीय संसद् संघ क्षेत्र में एक सार्वभौमिक संस्था है।

संसद् के अंग

संविधान के अनुच्छेद-79 के अंतर्गत यह कहा गया है कि संघ के लिए एक संसद् होगी, जिसमें राष्ट्रपति, राज्यसभा और लोकसभा सम्मिलित होंगे। इस प्रकार भारतीय संसद् द्विसदनीय है।

राज्यसभा

राज्यसभा संघ के विभिन्न राज्यों के प्रतिनिधियों की संस्था है। संविधान के अनुच्छेद-80 के अंतर्गत राज्यसभा के

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

सदस्यों की अधिकतम संख्या 250 निर्धारित की गई है, जिनमें से 238 सदस्य अप्रत्यक्ष निर्वाचन पद्धति से चुने जाएँगे। शेष 12 सदस्य राष्ट्रपति द्वारा ऐसे लोगों में से मनोनीत होंगे, जिन्हें साहित्य, विज्ञान, कला और समाजसेवा के संबंध में विशेष ज्ञान या व्यावहारिक अनुभव हो।

राज्यसभा राज्यों के प्रतिनिधित्व के सिद्धांत पर आधारित है, फिर भी यह विडंबना है कि इसमें सभी राज्यों को समान रूप से प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया है, क्योंकि इसके प्रतिनिधित्व के लिए जनसंख्या का आधार स्वीकार किया गया है। राज्यसभा में राज्यों तथा संघशासित प्रदेशों की विधानसभाओं के लिए आवंटित सीटों को संविधान की चतुर्थ अनुसूची में निर्दिष्ट किया गया है। संप्रति राज्यसभा में 233 सदस्य हैं।

वैसे राज्यसभा के सदस्यों की प्रभावी संख्या अभी 245 है, जिसमें 233 सदस्य राज्यों/केंद्रशासित प्रदेशों की विधानसभाओं से चुनकर आते हैं तथा शेष 12 सदस्य राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत होते हैं।

इस आधार पर किसी राज्य से 50 लाख की जनसंख्या पर पाँच प्रतिनिधि यानी प्रत्येक 10 लाख की जनसंख्या पर एक प्रतिनिधि आ सकते हैं। यदि किसी राज्य की जनसंख्या 50 लाख से अधिक है तो 50 लाख से अधिक प्रत्येक 20 लाख की जनसंख्या पर एक प्रतिनिधि भेजा जाएगा।

राज्यसभा के सदस्यों का निर्वाचन

राज्यसभा के सदस्यों का निर्वाचन परोक्ष रूप से किया जाता है। जिन राज्यों के विधानमंडलों में केवल एक सदन की व्यवस्था है, उनमें उसी सदन द्वारा राज्यसभा के सदस्यों का निर्वाचन होता है, किंतु जिन राज्यों के विधानमंडल में 2 सदनों की व्यवस्था है, उनमें से निम्न सदन ही राज्यसभा के लिए प्रतिनिधि का चुनाव करता है। राज्यसभा के सदस्यों के निर्वाचन के लिए समानुपाती प्रतिनिधित्व प्रणाली अपनाई जाती है।

राज्यों में विधानसभा के निर्वाचित सदस्य राज्यसभा के सदस्यों को चुनने के लिए निर्वाचित सभा का कार्य करते हैं। इसके विपरीत जो राज्य संघशासित हैं, उनके प्रतिनिधियों के निर्वाचन की पद्धति संसद् द्वारा निर्धारित की जाती है। राज्यसभा का गठन सर्वप्रथम 3 अप्रैल, 1952 को हुआ था और उसकी पहली बैठक 5 मई, 1952 को हुई थी। इस प्रकार राज्यसभा के सदस्यों के पहले समूह की सेवा-निवृत्ति 2 अप्रैल, 1954 को हुई थी।

अप्रैल, 2003 में जनप्रतिनिधित्व संशोधन विधेयक द्वारा प्रावधान किया गया कि राज्यसभा के लिए प्रत्याशी को राज्य विशेष का निवासी होना अनिवार्य नहीं है। इसके साथ ही चुनाव में धन तथा बाहुबल पर रोक व क्रॉस वोटिंग के लिए खुले मतदान का भी प्रावधान किया गया है।

राज्यसभा के सदस्यों की योग्यताएँ

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-84 के अंतर्गत राज्यसभा की सदस्यता के लिए निम्नलिखित योग्यताएँ निर्धारित की गई हैं—

1. वह भारत का नागरिक हो।
2. वह 30 वर्ष से कम आयु का न हो।

राज्यसभा के सदस्यों की निर्योग्यताएँ

राज्यसभा के लिए उस व्यक्ति को नहीं चुना जा सकता,

1. जो भारत सरकार अथवा राज्य सरकार में किसी लाभदायक पद पर आसीन हो। यह बात अलग है कि इस संबंध में संसद् के कुछ पदों को मुक्त कर दिया गया है।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

2. जो व्यक्ति पागल हो।
3. जो व्यक्ति दिवालिया हो।
4. जो व्यक्ति देश की नागरिकता से वंचित हो या विदेसी हो।
5. जिस व्यक्ति को संसद् ने अयोग्य घोषित कर दिया हो।

सदस्यों की पदरिक्तता

यदि कोई व्यक्ति संसद् के दोनों सदनों का सदस्य निर्वाचित हो जाए, तो उसे एक ही सदन की सदस्यता स्वीकार करनी पड़ेगी, दूसरे से उसे त्यागपत्र देना पड़ेगा। कोई भी व्यक्ति राज्यसभा और राज्य विधानमंडल—दोनों का सदस्य एक साथ नहीं रह सकता। यदि कोई सदस्य अपने पद से त्यागपत्र दे दे तो उसका पद रिक्त हो जाता है। यदि कोई सदस्य संसद् की अनुमति के बिना 30 दिनों तक अनुपस्थित रहता है तो उसका पद रिक्त माना जाता है।

राज्यसभा का कार्यकाल

स्थायी सदन होने के कारण राज्यसभा कभी भंग नहीं की जा सकती। सामान्यत: राज्यसभा के सदस्यों का निर्वाचन 6 वर्षों के लिए होता है, किंतु इसके एक तिहाई सदस्य हर दूसरे वर्ष अवकाश ग्रहण करते हैं।

राज्यसभा के पदाधिकारी

देश के उपराष्ट्रपति राज्यसभा के पदेन सभापति होते हैं। इसके अतिरिक्त राज्यसभा के सदस्य एक उपसभापति का चुनाव करते हैं, जो सभापति की अनुपस्थिति में सभापति का कार्य सँभालते हैं। इसके बाद सभापति-तालिका या महासचिव/सचिव आदि पदाधिकारियों का भी चयन किया जाता है।

राज्यों और संघ राज्य-क्षेत्रों का राज्यसभा में प्रतिनिधित्व

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :असम

सदस्यों की संख्या :7

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :आंध्र प्रदेश

सदस्यों की संख्या :11

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :तेलंगाना

सदस्यों की संख्या :7

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :उत्तरांचल

सदस्यों की संख्या :3

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :कर्नाटक

सदस्यों की संख्या :12

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

*राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :*गुजरात

*सदस्यों की संख्या :*11

*राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :*गोआ

*सदस्यों की संख्या :*1

*राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :*झारखंड

*सदस्यों की संख्या :*6

*राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :*तमिलनाडु

*सदस्यों की संख्या :*18

*राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :*पंजाब

*सदस्यों की संख्या :*7

*राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :*मणिपुर

*सदस्यों की संख्या :*1

*राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :*मध्य प्रदेश

*सदस्यों की संख्या :*11

*राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :*मिजोरम

*सदस्यों की संख्या :*1

*राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :*सिक्किम

*सदस्यों की संख्या :*1

*राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :*हिमाचल प्रदेश

*सदस्यों की संख्या :*3

*राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :*दिल्ली

*सदस्यों की संख्या :*3

*राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :*अरुणाचल प्रदेश

*सदस्यों की संख्या :*1

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :उत्तर प्रदेश

सदस्यों की संख्या :31

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :उड़ीसा

सदस्यों की संख्या :10

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :केरल

सदस्यों की संख्या :9

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :छत्तीसगढ़

सदस्यों की संख्या :5

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :जम्मू व कश्मीर

सदस्यों की संख्या :4

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :नगालैंड

सदस्यों की संख्या :1

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :पश्चिम बंगाल

सदस्यों की संख्या :16

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :बिहार

सदस्यों की संख्या :16

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :महाराष्ट्र

सदस्यों की संख्या :19

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :मेघालय

सदस्यों की संख्या :-

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :राजस्थान

सदस्यों की संख्या :10

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :हरियाणा

सदस्यों की संख्या :5

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :त्रिपुरा

सदस्यों की संख्या :1

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :पुदुचेरी

सदस्यों की संख्या :1

राज्य/केंद्र शासित प्रदेश :कुल

सदस्यों की संख्या :245

संविधान के अनुच्छेद-93 के अनुसार, राज्यसभा अपने सदस्यों में से उपसभापति का चुनाव यथाशीघ्र करती है। अनुच्छेद-94 के अनुसार राज्यसभा के उपसभापति के रूप में पद धारण करनेवाला व्यक्ति किसी भी सभा का सदस्य नहीं रहता है।

राज्यसभा का सभापति सभापति-तालिका के लिए सदस्यों का मनोनयन करता है। इस तालिका के सदस्य सदन की बैठक में सभापति और उपसभापति की अनुपस्थिति में अध्यक्षता करते हैं। इन पीठासीन अधिकारियों के बाद सदन में महत्त्वपूर्ण अधिकारी महासचिव/सचिव होता है। महासचिव सदन का गैर-निर्वाचित स्थायी अधिकारी होता है। इन पीठासीन अधिकारियों का दायित्व शांतिपूर्ण ढंग से सदन की कार्यवाही का संचालन करना होता है।

गणपूर्ति

राज्यसभा की बैठकों में कार्यवाही के लिए उसकी कुल सदस्य-संख्या के दसवें भाग का उपस्थित होना आवश्यक है।

राज्यसभा के कार्य एवं शक्तियाँ

राज्यसभा के कार्य एवं शक्तियाँ इस प्रकार हैं—

विधायिनी शक्तियाँ

संविधान के अंतर्गत संघ सूची एवं समवर्ती सूची के विभिन्न विषयों पर विधि बनाने का अधिकार संसद् को दिया गया है। उल्लेखनीय है कि कोई भी विधेयक तब तक विधि नहीं बन सकता, जब तक संसद् के दोनों सदन उसे पारित न कर दें। वित्तीय विधेयक के अतिरिक्त अन्य सभी विधेयक राज्यसभा में प्रस्तुत किए जा सकते हैं।

अगर किसी विधेयक पर दोनों सदनों में मतभेद हो, तो राष्ट्रपति दोनों सदनों की संयुक्त बैठक आमंत्रित करते हैं और दोनों सदनों के बहुमत के आधार पर अंतिम निर्णय घोषित करते हैं। इससे प्रतीत होता है कि राज्यसभा की विधायी शक्तियाँ लोकसभा के समान ही हैं।

यह बात अलग है कि व्यावहारिक रूप में लोकसभा को अपेक्षाकृत अधिक शक्तिशाली समझा जाता है, क्योंकि लोकसभा की सदस्य-संख्या राज्यसभा से अधिक होती है। राज्यसभा में किसी साधारण विधेयक को पारित करने के लिए अधिक-से-अधिक 6 महीने तक विलंबित किया जा सकता है।

वित्तीय शक्तियाँ

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

राज्यसभा की वित्त संबंधी शक्तियाँ नाममात्र की होती हैं। संविधान के अनुसार, वित्त संबंधी सभी विधेयक लोकसभा में ही प्रस्तुत किए जाते हैं; वहाँ से पारित होने के बाद ही उन्हें राज्यसभा में भेजा जाता है।

राज्यसभा को वित्त विधेयकों में संशोधन करने अथवा उन्हें अस्वीकार करने का कोई अधिकार नहीं होता। हाँ, वह संशोधन के लिए कुछ सुझाव दे सकती है, लेकिन उसके लिए सुझाव अधिक-से-अधिक 14 दिनों के अंदर ही लोकसभा के पास पहुँच जाने चाहिए। राज्यसभा द्वारा दिए गए सुझाव मानने के लिए लोकसभा बाध्य नहीं है। वह उन्हें अस्वीकार भी कर सकती है।

संवैधानिक शक्तियाँ

इस प्रकार की शक्तियों में प्रमुख रूप से संविधान में संशोधन करने जैसी शक्तियाँ आती हैं। संविधान में संशोधन की प्रक्रिया के अंतर्गत संशोधन विधेयक को दोनों सदनों की सदस्य-संख्या के बहुमत तथा उपस्थित और मतदान में भाग लेने वाले सदस्यों के दो तिहाई बहुमत से पारित होना चाहिए। इस दृष्टि से राज्यसभा को लोकसभा के समान ही शक्ति दी गई है।

प्रशासनिक शक्तियाँ

राज्यसभा को कुछ प्रशासनिक शक्तियाँ भी दी गई हैं, लेकिन ये शक्तियाँ बहुत ही साधारण हैं। इस शक्ति के माध्यम से राज्यसभा मंत्रिमंडल को नियंत्रित रख सकती है, लेकिन यह नियंत्रण भी प्रश्नों, कामरोको प्रस्तावों, वाद-विवादों आदि तक सीमित है।

राष्ट्रपति संबंधी शक्तियाँ

राज्यसभा के सभी निर्वाचित सदस्य राष्ट्रपति के निर्वाचन में सक्रिय भाग ले सकते हैं। उन पर महाभियोग लगाने के लिए राज्यसभा सक्षम है। राष्ट्रपति द्वारा की गई घोषणा को दो महीने से अधिक जारी रखने के लिए राज्यसभा की स्वीकृति अनिवार्य है।

न्यायपालिका संबंधी शक्तियाँ

किसी कारण यदि कभी सर्वोच्च या उच्च न्यायालय के न्यायाधीश को पद से हटाया जाता है, तो इसके लिए लोकसभा के साथ-साथ राज्यसभा की भी स्वीकृति अनिवार्य है।

राष्ट्रीय महत्त्व संबंधी शक्तियाँ

संविधान में राज्यसभा को यह शक्ति दी गई है कि वह राज्य सूची के किसी भी विषय को राष्ट्रहित की दृष्टि से महत्त्व का घोषित कर सकती है।

इस प्रकार समग्रत: कहा जा सकता है कि लोकसभा की तुलना में कम शक्तिशाली होते हुए भी राज्यसभा लोकतंत्र की सफलता के लिए निरर्थक नहीं है।

लोकसभा

लोकसभा संसद् का निम्न सदन है। यह देश के नागरिकों का 'प्रतिनिधि सदन' भी कहा जाता है। भारतीय संविधान के 14वें संशोधन के अनुसार, लोकसभा सदस्यों की संख्या अधिक-से-अधिक 525 हो सकती थी।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

इनमें से 500 सदस्य राज्यों से जनता द्वारा प्रत्यक्ष निर्वाचन के आधार पर चुने जाते थे और शेष 25 सदस्य संघ प्रदेशों से। यह संशोधन सन् 1962 में किया गया था। 9 मई, 1973 को भारतीय संविधान के 32वें संशोधन में लोकसभा के कुल सदस्यों की संख्या 525 से बढ़ाकर 545 कर दी गई। सन् 2001 में जनसंख्या संबंधी आँकड़े उपलब्ध होने से पहले तक लोकसभा में सीटों का निर्धारण सन् 1971 की जनगणना के आधार पर किया गया था, जिसे 42वें संविधान संशोधन अधिनियम (1976) के अनुसार बढ़ा दिया गया था। 84वें संविधान संशोधन, 2002 के अनुसार, लोकसभा में सीटों की संख्या सन् 2026 तक के लिए निर्धारित कर दी गई है। इसमें कोई परिवर्तन संभव नहीं है। इस विधेयक के प्रावधानों के अनुसार, सीटों की संख्या यथावत् रखते हुए राज्यों में निर्वाचन-क्षेत्रों का पुनर्सीमन किया जा सकेगा, जो सन् 1991 की जनगणना पर आधारित होगा।

87वें संविधान संशोधन, 2003 द्वारा निर्वाचन क्षेत्रों के पुनर्निर्धारण का प्रावधान हो गया है। इसके अनुसार, अब सन् 2001 की जनगणना के आधार पर अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के निर्वाचन क्षेत्रों सहित अन्य सभी निर्वाचन क्षेत्रों को, राज्यों को आवंटित स्थानों की पूर्व संख्या में बगैर कोई परिवर्तन किए, राज्यों में लोकसभा के निर्वाचन क्षेत्रों को परिवर्तित तथा पुनर्गठित किया जा सकेगा।

अद्यतन संशोधनों के आधार पर लोकसभा की अधिकतम संख्या 552 हो सकती है। राज्यों के अधिकतम 530 प्रतिनिधि हो सकते हैं, जो वयस्क मताधिकार के आधार पर राज्य की जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से चुने जाते हैं। अधिकतम 20 प्रतिनिधि संघ राज्य-क्षेत्रों से होंगे, जो प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा वयस्क मताधिकार के आधार पर चुने जाएँगे। राष्ट्रपति द्वारा ऐंग्लो-इंडियन समुदाय के अधिकतम 2 प्रतिनिधि मनोनीत किए जाएँगे, यदि राष्ट्रपति को ऐसा लगता है कि उनका पर्याप्त प्रतिनिधित्व संसद् में नहीं है।

लोकसभा के लिए विभिन्न राज्यों की सदस्य-संख्या का निर्धारण इस प्रकार किया गया है कि राज्य के लिए निर्धारित सीटों की संख्या और उस राज्य की जनसंख्या का अनुपात सभी राज्यों के मामलों में समान और व्यावहारिक हो। वर्तमान में लोकसभा की अधिकतम संख्या 545 है, जिसमें से 530 सदस्य राज्यों से तथा 13 सदस्य संघ क्षेत्रों से निर्वाचित होंगे तथा राष्ट्रपति द्वारा मनोनीत दो सदस्य होंगे।

लोकसभा में स्थानों का आवंटन

राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :अरुणाचल प्रदेश

कुल :2

अनु.जाति :-

अनु.जनजाति :2

राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :असम

कुल :14

अनु.जाति :1

अनु.जनजाति :2

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*आंध्र प्रदेश

*कुल :*25

*अनु.जाति :*6

*अनु.जनजाति :*2

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*ओडिशा

*कुल :*21

*अनु.जाति :*4

*अनु.जनजाति :*5

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*उत्तर प्रदेश

*कुल :*80

*अनु.जाति :*17

*अनु.जनजाति :*1

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*उत्तराखंड

*कुल :*5

*अनु.जाति :*1

अनु.जनजाति :-

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*कर्नाटक

*कुल :*28

*अनु.जाति :*4

*अनु.जनजाति :*1

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*केरल

*कुल :*20

*अनु.जाति :*2

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

अनु.जनजाति :-

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*गुजरात

*कुल :*26

*अनु.जाति :*2

*अनु.जनजाति :*4

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*गोवा

*कुल :*2

अनु.जाति : -

अनु.जनजाति :-

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*छत्तीसगढ़

*कुल :*11

*अनु.जाति :*2

*अनु.जनजाति :*4

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*जम्मू-कश्मीर

*कुल :*6

अनु.जाति : -

अनु.जनजाति :-

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*झारखंड

*कुल :*14

*अनु.जाति :*1

*अनु.जनजाति :*5

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*तमिलनाडु

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

*कुल :*39

*अनु.जाति :*7

अनु.जनजाति :-

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*तेलंगाना

*कुल :*17

*अनु.जाति :*3

*अनु.जनजाति :*2

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*नगालैंड

*कुल :*1

अनु.जाति : -

अनु.जनजाति :-

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*पंजाब

*कुल :*13

*अनु.जाति :*4

अनु.जनजाति :-

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*पश्चिम बंगाल

*कुल :*42

*अनु.जाति :*8

*अनु.जनजाति :*2

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*बिहार

*कुल :*40

*अनु.जाति :*7

अनु.जनजाति :-

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*मणिपुर

*कुल :*2

अनु.जाति : -

*अनु.जनजाति :*1

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*मध्य प्रदेश

*कुल :*29

*अनु.जाति :*4

*अनु.जनजाति :*5

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*महाराष्ट्र

*कुल :*48

*अनु.जाति :*3

*अनु.जनजाति :*4

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*मिजोरम

*कुल :*1

अनु.जाति : -

*अनु.जनजाति :*1

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*मेघालय

*कुल :*2

अनु.जाति :-

*अनु.जनजाति :*2

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*राजस्थान

*कुल :*25

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

*अनु.जाति :*4

*अनु.जनजाति :*3

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*सिक्किम

*कुल :*1

अनु.जाति : -

अनु.जनजाति :-

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*हरियाणा

*कुल :*10

*अनु.जाति :*2

अनु.जनजाति :-

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*हिमाचल प्रदेश

*कुल :*4

*अनु.जाति :*1

अनु.जनजाति :-

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*त्रिपुरा

*कुल :*2

अनु.जाति : -

*अनु.जनजाति :*1

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*अंडमान और निकोबार

*कुल :*1

अनु.जाति : -

अनु.जनजाति :-

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*चंडीगढ़

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

*कुल :*1

अनु.जाति : -

अनु.जनजाति :-

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*दमन और दीव

*कुल :*1

अनु.जाति : -

अनु.जनजाति :-

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*दादर और नागर हवेली

*कुल :*1

अनु.जाति : -

*अनु.जनजाति :*1

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*दिल्ली

कुल :7

*अनु.जाति :*1

अनु.जनजाति :-

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*पुदुचेरी

*कुल :*1

अनु.जाति : -

अनु.जनजाति :-

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*लक्षद्वीप

*कुल :*1

अनु.जाति : -

*अनु.जनजाति :*1

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

*राज्य/संघ राज्य-क्षेत्र :*कुल

*कुल :*543

*अनु.जाति :*81

*अनु.जनजाति :*49

लोकसभा सदस्यों के लिए योग्यताएँ

1. वे भारत के नागरिक हों।
2. उनकी उम्र 25 वर्ष से कम न हो।
3. वे भारत सरकार या किसी राज्य सरकार के अंतर्गत किसी लाभ के पद पर न हों।
4. संसद् द्वारा निर्धारित योग्यता उनके पास हो।

सदस्यों का निर्वाचन

भारतीय संविधान के अनुसार, लोकसभा सदस्यों का निर्वाचन प्रत्यक्ष चुनाव द्वारा होता है अर्थात् लोकसभा सदस्यों का निर्वाचन जनता करती है। इस चुनाव में वयस्क स्त्री-पुरुष भाग लेते हैं। क्षेत्रवार मतदाताओं की सूची चुनाव कार्यालय द्वारा तैयार की जाती है। लोकसभा का कार्यकाल समाप्त होने पर अथवा बहुमत के अभाव में राष्ट्रपति द्वारा लोकसभा भंग किए जाने पर चुनाव आयुक्त चुनाव संबंधी घोषणा जारी करते हैं, जिसके आधार पर राजनीतिक दलों के उम्मीदवार तथा स्वतंत्र उम्मीदवार अपने-अपने पर्चे दाखिल करते हैं। उसे वे अपने-अपने क्षेत्र के जिलाधिकारी, जो चुनाव अधिकारी भी होते हैं, के समक्ष प्रस्तुत करते हैं।

उम्मीदवारों के नामांकन की तिथि चुनाव आयोग द्वारा पूर्व निर्धारित रहती है। इसके साथ-साथ नाम वापस लेने की तिथि भी चुनाव आयोग निर्धारित कर देता है, जिसके बाद शेष प्रत्याशी चुनाव-प्रचार में जुट जाते हैं। मतदान होने से 24 घंटे पहले उन्हें अपने क्षेत्र में चुनाव-प्रचार बंद कर देना पड़ता है।

निर्धारित तिथि को मतदान केंद्रों पर जाकर मतदाता अपने प्रिय उम्मीदवार का चयन करते हुए मतदान करते हैं। पहले यह मतदान एक मतपत्र पर 'सतिए' की मोहर लगाकर संपन्न किया जाता था, जिस पर क्षेत्र के सभी उम्मीदवारों के चुनाव चिह्न अंकित होते थे। इस मतपत्र को मतदाता मतपेटिका में डाल देता था। अब वैज्ञानिक प्रगति के फलस्वरूप निर्वाचन कार्य के लिए इलेक्ट्रॉनिक मशीनें उपलब्ध हो गई हैं, जिन पर उम्मीदवारों के नाम और चुनाव चिह्न अंकित रहते हैं। मतदाता अपने अपेक्षित चुनाव चिह्न का बटन दबाकर मतदान करता है। तत्पश्चात् निर्वाचन अधिकारी मतदान का रिकॉर्ड कड़ी सुरक्षा व्यवस्था में निर्दिष्ट सुरक्षित स्थान पर पहुँचवा देते हैं। चुनाव आयोग द्वारा निर्धारित मतगणना-तिथि पर मतगणना की जाती है। मतगणना के दौरान प्रत्येक उम्मीदवार स्वयं उपस्थित हो सकता है अथवा अपने प्रतिनिधियों को भेज सकता है।

यह व्यवस्था इसलिए की गई है, ताकि कोई भी उम्मीदवार यह आरोप न लगा सके कि मतगणना के दौरान किसी प्रकार का पक्षपात किया गया है या अनियमितता बरती गई है। मतगणना पूरी होने पर चुनाव अधिकारी सर्वाधिक मत पानेवाले उम्मीदवार को विजयी घोषित करता है। वह इसकी लिखित सूचना चुनाव आयोग को देता है।

Novels English & Hind

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

लोकसभा का कार्यकाल

लोकसभा के लिए चुने हुए जनप्रतिनिधि लोकसभा सदस्य या सांसद कहलाते हैं। सभी निर्वाचन क्षेत्रों के चुनाव परिणाम घोषित होने के बाद ये प्रतिनिधि देश की राजधानी दिल्ली में पहुँचते हैं। वहाँ बहुमत प्राप्त दल अपने नेता का चयन करता है, जो राष्ट्रपति के समक्ष उपस्थित होकर सरकार बनाने का दावा प्रस्तुत करते हैं। राष्ट्रपति उनके प्रस्ताव को स्वीकार करते हुए सरकार बनाने के लिए उन्हें आमंत्रित करते हैं।

इस प्रकार दल के नेता प्रधानमंत्री के रूप में प्रतिष्ठित होकर अपने दल का गठन करते हैं और फिर नव-निर्वाचित लोकसभा सदस्यों की बैठक राष्ट्रपति के निर्देश पर संसद् भवन में होती है, जिसे 'सत्र' या 'अधिवेशन' कहते हैं। लोकसभा का कार्यकाल इस प्रथम अधिवेशन से ही अगले पाँच पर्ष तक माना जाता है।

भारतीय संविधान के अंतर्गत लोकसभा का कार्यकाल प्रथम अधिवेशन से सामान्यत: 5 वर्ष निर्धारित किया गया है, लेकिन इससे पहले भी यदि राष्ट्रपति को यह विश्वास हो जाए कि लोकसभा में सत्तारूढ़ दल अपना विश्वास खो बैठा है, तो वे लोकसभा को भंग कर नए निर्वाचन का आदेश दे सकते हैं।

यूँ तो सामान्यत: लोकसभा का कार्यकाल नहीं बढ़ाया जा सकता, किंतु आपात्काल के दौरान संसद् इस विषय में कानून बनाकर लोकसभा का कार्यकाल एक वर्ष के लिए बढ़ा सकती है। आवश्यकता पड़ने पर इस अवधि की पुनरावृत्ति भी की जा सकती है। आपातकाल समाप्त होने के बाद यह अवधि 6 महीने से अधिक नहीं बढ़ाई जा सकती।

लोकसभा का विघटन

राजनीतिशास्त्र में 'विघटन' शब्द उसके कार्यकाल की समाप्ति का सूचक होता है। अपनी निर्धारित अवधि पूर्ण कर लेने के पश्चात् लोकसभा स्वत: विघटित हो जाती है। लोकसभा का इस प्रकार विघटित होना एक संवैधानिक प्रक्रिया है। यदि सूक्ष्म दृष्टि से देखा जाए, तो कार्यपालिका द्वारा लोकसभा या विधानसभा का कार्यकाल पूरा होने से पूर्व उसे समाप्त करने की कार्यवाही भी विघटन की सूचक है।

संविधान के अनुच्छेद-83 (2) में उल्लिखित है—''लोकसभा यदि पहले ही विघटित न कर दी जाए, तो अपने प्रथम अधिवेशन के लिए निर्धारित तारीख से पाँच वर्ष तक चालू रहेगी; इससे अधिक नहीं तथा पाँच वर्ष की उक्त अवधि की समाप्ति का परिणाम लोकसभा का विघटन होगा, परंतु उक्त अवधि को, जब तक आपात् की उद्घोषणा प्रवर्तन में है, तब संसद् विधि द्वारा किसी अवधि के लिए बढ़ा सकेगी, जो एक बार में एक वर्ष से अधिक विस्तृत नहीं होगी।''

संविधान के अनुच्छेद-85(2) (ख) में उपबंधित है कि राष्ट्रपति समय-समय पर लोकसभा का विघटन कर सकेंगे। इस प्रकार—

1. लोकसभा की सामान्य अवधि पाँच वर्ष है,
2. लोकसभा के प्रथम अधिवेशन के लिए निर्धारित तारीख से 5 वर्ष की अवधि-समाप्ति पर स्वत: ही इसका विघटन होगा,
3. राष्ट्रपति सभा को अवधि पूर्ण होने से पूर्व भी विघटित कर सकेंगे,
4. आपातकाल के दौरान संसद् विधि द्वारा लोकसभा की अवधि बढ़ा सकेगी, जो एक बार में एक वर्ष की होगी।
5. किन्तु उसके एक सत्र की अंतिम बैठक और आगामी सत्र की प्रथम बैठक के बीच छह मास का अंतर नहीं

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

होगा।

लोकसभा का पुनर्गठन

विघटन के पश्चात् लोक-प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के अंतर्गत नई लोकसभा का गठन करना होता है, जिसके लिए उपबंधित है—''नई लोकसभा गठित करने के लिए साधारण निर्वाचन वर्तमान सदन की अस्तित्व-अवधि की समाप्ति या उसके विघटन पर किया जाएगा और यह भी कि उक्त प्रयोजन के लिए राष्ट्रपति ऐसी तारीख या तारीखों, जिनकी सिफारिश निर्वाचन आयोग द्वारा की जाए, को भारत के राजपत्र में प्रकाशित एक या अधिक अधिसूचनाओं द्वारा सब संसदीय निर्वाचन-क्षेत्रों से अपेक्षा करेगा कि वे इस अधिनियम के उपबंधों के अनुसार सदस्य निर्वाचित करें, परंतु जहाँ वर्तमान लोकसभा का निर्वाचन विघटन के कारण नहीं, साधारणत: होता है, वहाँ ऐसी अधिसूचना उस तारीख, जिसको सदन की अस्तित्वावधि की समाप्ति होती है, से छह मास से पहले नहीं निकाली जाएगी।''

लोक-प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के अंतर्गत लोकसभा के लिए साधारण निर्वाचन विद्यमान लोकसभा की अवधि की समाप्ति से छ: मास पूर्व आयोजित किए जा सकते हैं, यद्यपि नई लोकसभा का गठन केवल विद्यमानसभा के विघटन के पश्चात् ही होता है। यह ब्रिटेन में अपनाई जा रही प्रथा से भिन्न है, जहाँ विद्यमान लोकसभा का विघटन पहले होता है और तत्पश्चात् नए हाउस ऑफ कॉमंस के गठन के लिए आम निर्वाचन आयोजित होते हैं। लोक-प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा-73 में अन्य बातों के साथ-साथ यह भी उपबंधित है कि निर्वाचन आयोग द्वारा सभा के लिए निर्वाचित सदस्यों के नाम शासकीय राजपत्र में अधिसूचित किए जाने पर समझा जाएगा कि लोकसभा 'सम्यक् रूप से गठित हो गई है' और इस प्रकार एक बार जब सभा का गठन हो जाता है, तो यह विघटन योग्य बन जाती है, अर्थात् इसको अधिवेशन के लिए बुलाने या कार्य-संचालन करने से पूर्व विघटित किया जा सकता है।

लोकसभा का कार्यकाल बढ़ाने के लिए संसद् ने 4 फरवरी, 1976 को एक अधिनियम पारित किया, जिसे 'लोकसभा (कालावधि विस्तार) अधिनियम, 1976' के नाम से जाना जाता है। इस अधिनियम के आधार पर पाँचवीं लोकसभा का कार्यकाल 1 वर्ष बढ़ा दिया गया था। फिर दूसरी बार एक साल के लिए यह कार्यकाल बढ़ाया गया। उल्लेखनीय है कि लोकसभा के कार्यकाल में यह वृद्धि आपात्काल की घोषणा के कारण की गई थी।

यह एक रोचक तथ्य है कि संविधान लागू होने के बाद से अब तक लोकसभा ने कभी अपना कार्यकाल पूरा नहीं किया और उसे समय से पूर्व ही विघटित कर दिया गया। यद्यपि पाँचवीं लोकसभा का कार्यकाल विशेष परिस्थितियों में अधिनियम बनाकर एक-एक कर दो बार बढ़ा दिया गया था, किंतु वह भी अपने बढ़े हुए कार्यकाल को पूरा नहीं कर पाई थी। इस प्रकार तकनीकी और विधिक दृष्टि से कहा जाए, तो प्रथम से लेकर चतुर्दश लोकसभा तक अनुच्छेद-83(2) के अधीन पाँच वर्ष की सामान्य सीमा के परे स्वत: कभी विघटित नहीं हुई।

लोकसभा के अधिवेशन

यूँ तो राष्ट्रपति लोकसभा का अधिवेशन कभी भी बुला सकते हैं, किंतु मोटे तौर पर वर्ष भर में प्राय: 3 अधिवेशन हो जाते हैं, जिन्हें बजट अधिवेशन या सत्र (फरवरी-मई), वर्षाकालीन अधिवेशन या सत्र (जुलाई-सितंबर) और शीतकालीन अधिवेशन या सत्र (नवंबर-दिसंबर) कहा जाता है। प्रतिवर्ष बजट सत्र के अंतर्गत प्राय: 26 फरवरी को रेल बजट और 28 फरवरी को आम बजट प्रस्तुत करने की परंपरा रही है। अब यह परंपरा बदल गई है।

राज्यसभा के संदर्भ में बजट सत्र दो सत्रों में विभाजित हो जाता है। इन दोनों सत्रों के बीच 3-4 सप्ताहों का

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

अंतराल रहता है। संविधान के अनुसार, लोकसभा का अधिवेशन वर्ष में कम-से-कम दो बार होना अनिवार्य है। एक अधिवेशन की अंतिम बैठक और दूसरे अधिवेशन की पहली बैठक में 6 महीने से अधिक का अंतर नहीं होना चाहिए।

लोकसभा के कार्य

लोकसभा के निम्नलिखित कार्य हैं—

राजनीतिक नियंत्रण

संसद् का बहुमत ही सरकार को नियंत्रित करता है। जब तक लोकसभा में सांसदों का बहुमत सरकार के साथ है, तब तक ही सरकार सत्तारूढ़ रह सकती है। जिस दिन सदन में सत्तारूढ़ दल के प्रति अविश्वास प्रस्ताव पारित हो जाता है, उसी दिन सत्तारूढ़ दल की सरकार को त्यागपत्र देना पड़ता है।

अभिप्राय यह है कि अपने बहुमत से सदन किसी भी समय सरकार को हटाने का निर्णय ले सकता है। इसके लिए किसी भी प्रकार के तर्क, प्रमाण आदि की आवश्यकता नहीं पड़ती। सरकार के प्रति अविश्वास प्रस्ताव निम्नलिखित रूप में हो सकता है—

1. मंत्रिपरिषद् में अविश्वास का मूल प्रस्ताव पारित करके।
2. नीति संबंधी किसी विशेष विषय पर सरकार को पराजित करके।
3. स्थगन प्रस्ताव पारित करके।
4. अनुदानों के पक्ष में मतदान करने से मना करके।
5. किसी वित्तीय उपाय पर सरकार को पराजित करके।

वित्तीय नियंत्रण

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-75, 114, 115, 116 और 265 के अंतर्गत बजट पर संसद् का नियंत्रण रहेगा। अनुमानित आय और व्यय का वार्षिक विवरण संसद् के समक्ष रखा जाता है। इस विवरण में उस धनराशि का उल्लेख आवश्यक होता है, जिसकी विभिन्न प्रयोजनों के लिए आवश्यकता होती है। संसद् राष्ट्रपति को यह सुझाव देने के लिए स्वतंत्र है कि अनुमानित व्यय को पूरा करने के लिए किस प्रकार राजस्व जुटाया जाए। इस प्रकार वित्तीय मामलों में सरकार पहल भले ही करती हो, किंतु सार्वजनिक वित्त पर नियंत्रण की शक्ति संसद् के पास सुरक्षित रहती है।

प्रशासन पर निगरानी

यूँ तो देश का प्रशासन स्थायी सिविल सेवा के अधिकारियों के हाथों में होता है, किंतु उस पर नियंत्रण संसद् का होता है। यह नियंत्रण प्राय: अप्रत्यक्ष रूप से ही होता है अर्थात् संसद् प्रशासनिक कार्यों में दिन-प्रतिदिन हस्तक्षेप नहीं करती।

उसका यह नियंत्रण कार्योत्तर नियंत्रण होता है अर्थात् कुछ काम किए जाने के बाद, काम समाप्त होने पर। चूँकि संसद् अथवा उसके मंत्रिगण प्रशासन पर सीधे नियंत्रण नहीं रखते, इसलिए कार्यान्वयन के दौरान कोई गलती हो जाने पर अधिकारियों से जवाब तलब किया जाता है, मंत्रियों से नहीं।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

सूचना संबंधी कार्य

संसद् के किसी भी कार्य को प्रभावी ढंग से पूर्ण करने के लिए यह अनिवार्य है कि संसद् को सूचना प्राप्त करने का अधिकार दिया जाए। संसद् को विभिन्न स्रोतों से सूचना प्राप्त होती है, लेकिन संसद् तथा इसके सदस्यों की सूचना संबंधी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए सरकारी विभागों पर बहुत हद तक निर्भर रहना पड़ता है। संसद् का यह अधिकार असीमित है। देश की सुरक्षा अथवा राष्ट्रीय हित में प्रतिकूल प्रभाव पड़ने की संभावना को देखते हुए इस पर विशेष आग्रह नहीं किया जा सकता।

शिकायत-निवारण तथा परामर्शदायी कार्य

आधुनिक लोकतंत्र में संसद् का प्रमुख कार्य जनता का प्रतिनिधित्व करना है। इसीलिए जनता इसके माध्यम से अपनी आकांक्षाओं, इच्छाओं और आशाओं के साथ-साथ शिकायतों और कठिनाइयों को प्रकाश में लाने का प्रयास करती है।

राष्ट्रीय एकीकरण संबंधी कार्य

विभिन्न प्रतियोगी तत्त्वों के बीच विचारों, हितों और शक्ति के लिए संघर्ष करना मनुष्य की एक स्वाभाविक प्रवृत्ति है। राजनीतिक संघर्ष भी इसका अपवाद नहीं है। इन विभिन्न संघर्षों का संवैधानिक समाधान संसद् करती है।

राष्ट्रीय एकीकरण में भी संसद् की महत्त्वपूर्ण भूमिका से इनकार नहीं किया जा सकता। विभिन्न प्रदेशों में होनेवाली विभाजन की माँगों, नदियों के जल-बँटवारे के उठे विवादों आदि का समाधान करने के लिए संसद् की महत्त्वपूर्ण भूमिका है। इस प्रकार संसद् राष्ट्रीय एकता की स्थापना करने वाली विशिष्ट संस्था है।

विधि-रचना, सामाजिक विकास और विधायीकरण का कार्य

विधि-रचना संसद् का पारंपरिक कार्य कहा गया है। संविधान में राष्ट्रीय स्तर पर संसद् को सर्वोच्च वैधानिक विधाय की श्रेणी में रखा गया है। संविधान के अनुच्छेद-245 और 246 तथा सप्तम् अनुसूची में दी गई संघ और समवर्ती सूची में उल्लिखित विषयों के संबंध में संसद् कानून बना सकती है। इसके अतिरिक्त संसद् राज्यों को विशेष रूप से न सौंपे गए विषयों के संबंध में भी कानून बना सकती है।

संविधायी कार्य

संविधान के अनुच्छेद-368 के अंतर्गत संसद् को संविधान में संशोधन का अधिकार सौंपा गया है।

संसद् में विभिन्न प्रकार के प्रस्ताव

- अविश्वास प्रस्ताव : लोक सभा के प्रक्रिया और कार्य संचालन संबंधी नियमों में इसका प्रावधान है और इसे केवल लोक सभा में ही पुन:स्थापित किया जा सकता है।
- इसकी पुन:स्थापना के लिए इसे लोक सभा के कम से कम 50 सदस्यों का समर्थन प्राप्त होना चाहिए।
- एक बार गृहीत हो जाने पर इसको लोक सभा की सभी मौजूदा कार्यवाही के ऊपर वरीयता दी जाती है।
- इसे विरोधी दल द्वारा सरकार में अविश्वास व्यक्त करने के लिए लाया जाता है।
- अविश्वास प्रस्ताव के तहत सरकार की किसी भी नीति, किसी भी भूल या कार्य पर चर्चा हो सकती है।
- लोक सभा द्वारा इस प्रस्ताव के पारित हो जाने पर मंत्रिपरिषद को त्याग पत्र देना जरूरी होता है।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

● विश्वास प्रस्ताव : इसका प्रावधान न ही संविधान में है और न ही लोक सभा के प्रक्रिया और कार्य संचालन संबंधी नियमों में। इसकी उत्पत्ति भारत की संसदीय प्रथा में स्वत: हुई है।

● यह अविश्वास प्रस्ताव की तरह ही है सिर्फ ये छोड़कर कि यह प्रस्ताव सरकार द्वारा लोक सभा का विश्वास प्राप्त करने के लिए पेश किया जाता है।

● निंदा प्रस्ताव : इसका प्रावधान लोक सभा के प्रक्रिया और कार्य संचालन संबंधी नियमों में है।

● सरकार की किसी विशिष्ट नीति या कार्य के निरानुमोदन के लिए विपक्ष द्वारा इसे लोक सभा भी पुनर्स्थापित किया जा सकता है। इस प्रस्ताव में केवल उस विशिष्ट नीति या कार्य पर ही चर्चा होती है।

● लोक सभा द्वारा इस प्रस्ताव के पारित हो जाने का मतलब सरकार की निंदा करना होता है और सरकार को तुरंत एक विश्वास प्रस्ताव लाकर सदन का विश्वास प्राप्त करना जरूरी होता है।

● संरचनात्मक अविश्वास प्रस्ताव : यह दो प्रस्तावों से मिलकर बना होता है, एक जो सरकार में अविश्वास व्यक्त करता है और दूसरा जो विपक्ष में विश्वास व्यक्त करता है। दोनों प्रस्ताव एक ही साथ स्वीकृत या अस्वीकृत होते हैं। यह प्रथा जर्मनी में प्रचलित है।

● स्थगत प्रस्ताव : यह किसी अविलंबनीय लोक महत्व के मामले पर सदन में चर्चा करने के लिए सदन की कार्यवाही को स्थगित करने का प्रस्ताव है। यह प्रस्ताव, लोक सभा एवं राज्य सभा दोनों में पेश किया जा सकता है। सदन का कोई भी सदस्य इस प्रस्ताव को पेश कर सकता है।

● ध्यानाकर्षण प्रस्ताव : इस प्रताव द्वारा, सदन का कोई सदस्य, सदन के पीठासीन अधिकारी की अग्रिम अनुमति से, किसी मंत्री का ध्यान, अविलंबनीय लोक महत्व के किसी मामले पर आकृष्ट कर सकता है। मंत्री उस मामले पर एक संक्षिप्त वक्तव्य दे सकता है या बाद की किसी तिथि को वक्तव्य देने के लिए समय मांग सकता है।

● विशेषाधिकार प्रस्ताव : यह किसी सदस्य द्वारा पेश किया गया है, जब सदस्य यह महसूस करता है कि सही तथ्यों को प्रकट नहीं कर या गलत सूचना देकर किसी मंत्री ने सदन या सदन के एक या अधिक सदस्यों के विशेषाधिकार का उल्लंघन किया है।

लोकसभा के अधिकारी

किसी भी विभाग, संस्थान या सदन को व्यवस्थित रूप से चलाने के लिए समुचित प्राधिकारियों का होना आवश्यक है। संविधान में लोकसभा के लिए अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, सभापति-तालिका तथा महासचिव/सचिव आदि पदाधिकारियों की व्यवस्था इसी उद्देश्य से की गई है।

अध्यक्ष

संविधान के अनुच्छेद-93 के अनुसार, लोकसभा की प्रथम बैठक के बाद इसके नवनिर्वाचित सदस्य यथाशीघ्र अपने अध्यक्ष का चुनाव करते हैं। लोकसभा में अध्यक्ष की अनुपस्थिति में उनके दायित्व का निर्वाह उपाध्यक्ष करते हैं।

लोकसभा अध्यक्ष का चयन होने के बाद अध्यक्ष सभापति-तालिका के लिए सदस्यों का मनोनयन करते हैं। इस तालिका के सदस्य अध्यक्ष और उपाध्यक्ष की अनुपस्थिति में सदन की बैठक की अध्यक्षता करते हैं। इन पीठासीन अधिकारियों के बाद सदन में महत्त्वपूर्ण अधिकारी महासचिव/सचिव होता है। महासचिव सदन का गैर-निर्वाचित स्थायी अधिकारी होता है। इन पीठासीन अधिकारियों का दायित्व शांतिपूर्ण ढंग से सदन की कार्यवाही का संचालन करना होता है।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

लोकसभा अध्यक्ष का स्थान वरीयता क्रम में राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति और प्रधानमंत्री के बाद आता है। इस दृष्टि से लोकसभा अध्यक्ष का पद मंत्रिपरिषद् के सभी मंत्रियों से ऊँचा होता है। उनके वेतन और भत्ते भारत की संचित निधि से दिए जाते हैं, जिसके लिए संसद् से स्वीकृति होना अनिवार्य नहीं होता।

लोकसभा अध्यक्ष व उनके कार्यकाल

अध्यक्ष :जी.वी. मावलंकर

कार्यकाल :15 मई, 1952-27 फरवरी, 1956

अध्यक्ष :एम.ए. आयंगार

कार्यकाल :8 मार्च, 1956- 16 अप्रैल, 1962

अध्यक्ष :सरदार हुकम सिंह

कार्यकाल :17 अप्रैल, 1962- 16 मार्च, 1967

अध्यक्ष :नीलम संजीव रेड्डी

कार्यकाल :17 मार्च, 1967 - 19 जुलाई, 1969

अध्यक्ष :जी. एस. ढिल्लों

कार्यकाल :8 अगस्त, 1969 - 1 दिसंबर, 1975

अध्यक्ष :बलीराम भगत

कार्यकाल :15 जनवरी, 1976 - 25 मार्च, 1977

अध्यक्ष :नीलम संजीव रेड्डी

कार्यकाल :26 मार्च, 1977 - 13 जुलाई, 1977

अध्यक्ष :के.एस. हेगड़े

कार्यकाल :21 जुलाई, 1977 - 21 जनवरी, 1980

अध्यक्ष :बलराम जाखड़

कार्यकाल :22 जनवरी, 1980 - 18 दिसंबर, 1989

अध्यक्ष :रवि राय

कार्यकाल :19 दिसंबर, 1989 - 9 जुलाई, 1991

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

अध्यक्ष :शिवराज पाटिल

कार्यकाल :10 जुलाई, 1991 - 22 मई, 1996

अध्यक्ष :पी.ए. संगमा

कार्यकाल :25 मई, 1996 - 23 मार्च, 1998

अध्यक्ष :जी.एम.सी. बालायोगी

कार्यकाल :24 मार्च, 1998 - 3 मार्च, 2002

अध्यक्ष :मनोहर जोशी

कार्यकाल :10 मई, 2002 - 2 जून, 2004

अध्यक्ष :सोमनाथ चटर्जी

कार्यकाल :4 जून, 2004 - 30 मई, 2009

अध्यक्ष :मीरा कुमार

कार्यकाल :4 जून, 2009 - 4 जून, 2014

अध्यक्ष :सुमित्रा महाजन

कार्यकाल :6 जून, 2014 - अब तक

लोकसभा अध्यक्ष सदन के कार्यों का संचालन करते हुए, उसकी कार्यवाहियों को नियमित करते हैं। समस्त संसदीय मामलों में उनका निर्णय ही अंतिम रूप से मान्य होता है। सदन में शांति-व्यवस्था बनाए रखने के लिए अध्यक्ष को अनेक अधिकार प्राप्त हैं, जिनके अंतर्गत कोई सदस्य सदन में अध्यक्ष की अनुमति के बिना नहीं बोल सकता। सदस्य किस क्रम से बोलेंगे और उन्हें कितने समय तक बोलना है, इसका फैसला भी अध्यक्ष ही करते हैं। किसी सदस्य को बोलने से मना करने का अधिकार भी अध्यक्ष को प्राप्त रहता है।

सदन की कार्यवाही का वृत्तांत भी अध्यक्ष के निर्देश पर तैयार किया जाता है अर्थात् अध्यक्ष किसी सदस्य के वक्तव्य अथवा उसके किसी अंश को कार्यवाही से बाहर रखने का आदेश दे सकते हैं। ऐसे अंश को प्रकाशित-प्रसारित करने का अधिकार मीडिया को भी नहीं है। सदन में अव्यवस्था के लिए जिम्मेदार सदस्य को अध्यक्ष एक दिन या दिन के किसी भाग विशेष के लिए सदन से चले जाने का आदेश दे सकते हैं और गंभीर अपराध होने पर उसे सदन से निलंबित भी कर सकते हैं।

सदस्यों को अनुशासित रखना अध्यक्ष का ही काम है। सदन में किसी सदस्य की मानहानि न हो—इसका भी ध्यान अध्यक्ष रखते हैं। दोषारोपण करनेवाले वक्तव्यों से व्यक्तियों के सम्मान की रक्षा करना अध्यक्ष का काम है। सदन के वातावरण के प्रति अध्यक्ष विशेष संवेदनशील होते हैं। सदन में उत्तेजना, शोर-शराबा अथवा अंतर्बाधा होने पर उसे दूर करने के लिए उन्हें कभी-कभी स्वस्थ मनोविनोद का सहारा लेना पड़ता है।

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

सदन के सदस्यों से प्राप्त प्रस्तावों, प्रश्नों आदि की सूचनाओं को स्वीकार करने या न करने पर विचार करते समय अध्यक्ष को इस बात का ध्यान रखना पड़ता है कि उनमें से महत्त्वपूर्ण विषय कौन-कौन से हैं, जिन्हें लिया जाना चाहिए। वह अपने कर्तव्यों या शक्तियों का उपयोग सदन के अंग के रूप में करते हैं। सदन के बेहतर कार्य-संचालन के लिए उन्हें शक्तियाँ दी जाती हैं।

अध्यक्ष को 'सदन का सेवक' कहा जाता है, स्वामी नहीं। यदि लोकसभा का कोई सदस्य किसी अपराध में गिरफ्तार किया जाता है अथवा दंडित किया जाता है या कार्यपालिका के किसी आदेश पर उसे नजरबंद किया जाता है, तो इसकी सूचना दंडाधिकारी या कार्यपालक प्राधिकारी द्वारा अध्यक्ष को दी जानी चाहिए। अध्यक्ष की अनुमति के बिना सदन के परिसर में किसी भी व्यक्ति को गिरफ्तार नहीं किया जा सकता। लोकसभा सचिवालय अध्यक्ष के निर्देशन एवं नियंत्रण में कार्य करता है। सचिवालय के कर्मचारियों, सदन के परिसर और संसद् भवन संपदा पर अध्यक्ष का अधिकार होता है, जिसका प्रयोग वह लोकसभा के महासचिव की सहायता से करता है।

लोकसभा अध्यक्ष के इतने महत्त्वपूर्ण एवं उत्तरदायित्वपूर्ण पद को देखते हुए जवाहरलाल नेहरू ने 8 मार्च, 1958 को कहा था, ''अध्यक्ष सदन का प्रतिनिधित्व करता है। वह सदन की गरिमा, सदन की स्वतंत्रता का प्रतिनिधित्व करता है और सदन चूँकि राष्ट्र का प्रतिनिधित्व करता है, इसलिए अध्यक्ष एक प्रकार से राष्ट्र की स्वतंत्रता का प्रतीक बन जाता है। अत: यह उचित है कि यह सम्मान का पद हो, स्वतंत्र हो और सदा ऐसे व्यक्तियों से सुशोभित हो, जो असाधारण योग्यता रखते हों और असाधारण रूप से निष्पक्ष हों।''

गवर्नर जनरल ने पहली बार 3 फरवरी, 1921 को फ्रेडरिक ह्वाइट को सभा का प्रथम अध्यक्ष नियुक्त किया था। इससे पूर्व भारत के गवर्नर जनरल ही विधान परिषद् की बैठकों की अध्यक्षता किया करते थे।

विट्ठल भाई जे. पटेल पहले ऐसे गैर-सरकारी व्यक्ति थे, जिन्हें 24 अगस्त, 1925 को सभा का अध्यक्ष चुना गया था। इसके बाद 20 फरवरी, 1927 को वे पुन: अध्यक्ष पद पर निर्वाचित हुए।

इस प्रकार पटेलजी को केंद्रीय विधानमंडल का प्रथम भारतीय और प्रथम निर्वाचित अध्यक्ष होने का गौरव प्राप्त है। स्वाधीनता प्राप्त करने के पश्चात् पहले आम चुनाव के फलस्वरूप गठित प्रथम संसद् का प्रथम अध्यक्ष होने का गौरव जी. वी. मावलंकर को प्राप्त हुआ था।

लोकसभा अध्यक्ष की शक्तियाँ

1. अध्यक्ष सदन की बैठकों का सभापतित्व करते हैं।
2. सदन की कार्यवाही का संचालन करते हैं।
3. गणपूर्ति (कोरम) के अभाव में वे सदन को स्थगित कर सकते हैं।
4. संसद् के दोनों सदनों के संयुक्त अधिवेशन की अध्यक्षता वही करते हैं।
5. कोई विधेयक धन विधेयक है या नहीं, इस पर अध्यक्ष का ही विनिश्चय अंतिम होता है।

उपाध्यक्ष

आजकल लोकसभा की बैठक साल में लगभग 7 महीने होती है। हर बैठक लगभग 7 घंटे तक चलती है। ऐसी दशा में लगातार उसमें भाग लेना अध्यक्ष के लिए व्यावहारिक नहीं है। दूसरे कर्तव्यों का पालन करने के लिए उन्हें अक्सर अपने आसन से उठना पड़ता है, तब उनकी अनुपस्थिति में साधारणत: उपाध्यक्ष ही बैठक की अध्यक्षता करते हैं।

इसके अतिरिक्त जब भी अध्यक्ष का पद रिक्त रहता है, तो उपाध्यक्ष को ही उसका पदभार सँभालना पड़ता है।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

संघ के पदेन वरीयता क्रम में उपाध्यक्ष का स्थान 16वाँ है। वह बजट समिति का सभापित होता है। वस्तुत: उपाध्यक्ष पीठासीन उपाधिकारी होता है।

लोकसभा सचिवालय, उसके अधिकारियों और कर्मचारियों के प्रति उपाध्यक्ष का कोई सीधा उत्तरदायित्व नहीं होता। सदन की बैठकों में अधिकांशत: अध्यक्षता उपाध्यक्ष को ही करनी पड़ती है, क्योंकि उस दौरान अध्यक्ष अन्य संसदीय मामलों में व्यस्त रहता है। प्राय: विपक्ष के किसी सदस्य को ही उपाध्यक्ष चुना जाता है। वे दलीय राजनीति में भाग तो ले सकते हैं, लेकिन सदन में अपनी निष्पक्षता बनाए रखने के लिए वे साधारण विवादास्पद मामलों से अपने को दूर ही रखते हैं।

सभापति-तालिका

सभापति-तालिका में 6 सदस्य होते हैं, जिन्हें अध्यक्ष मनोनीत करते हैं। अध्यक्ष और उपाध्यक्ष की अनुपस्थिति में इन्हीं छह सदस्यों में से कोई सदस्य सदन की अध्यक्षता करते हैं। उपाध्यक्ष की तरह सभापति-तालिका के सदस्य को भी अध्यक्षता करते समय अध्यक्ष की सभी शक्तियाँ प्राप्त हो जाती हैं, फिर भी ऐसा कोई सभापति किसी महत्त्वपूर्ण मामले को अध्यक्ष के निर्णय के लिए सुरक्षित रख सकता है।

सभापति-तालिका के लिए सदस्यों का चयन अध्यक्ष दोनों पक्षों—सत्तारूढ़ दल और विपक्षी दल में से करते हैं। अध्यक्ष इस बात का भी ध्यान रखते हैं कि सभापति-तालिका में महिला सदस्यों का भी प्रतिनिधित्व बना रहे। सभापति-तालिका के सदस्य की कार्यावधि सामान्यत: 1 वर्ष की होती है, किंतु कोई सदस्य बार-बार भी मनोनीत किया जा सकता है।

महासचिव/सचिव

लोकसभा में महासचिव/सचिव की स्थिति अत्यंत असाधारण मानी गई है। उनसे यह आशा की जाती है कि उन्हें लोकसभा और उसके कार्यों से संबंधित सभी बातों का ज्ञान आवश्यक रूप से होगा। सदन में चाहे जैसी समस्या उपस्थित हो, सदस्य महासचिव/सचिव से यह अपेक्षा रखते हैं कि वे उन्हें तत्काल अधिकृत राय दें। यूँ देखा जाए तो लोकसभा का सुचारु रूप से चलना बहुत हद तक महासचिव/सचिव पर ही निर्भर करता है।

संसद् के समस्त कार्यकलापों में महासचिव/सचिव को अध्यक्ष, सदन और सदस्यों का सलाहकार माना जा सकता है। वे सभापटल के प्रमुख अधिकारी होते हैं। संसदीय ग्रंथालय, शोधसंदर्भ, प्रलेखन एवं सूचना-सेवाएँ महासचिव के अधीन ही कार्य करती हैं। वह संसद् भवन तथा संबंधित संपत्तियों के रखरखाव और उनकी मरम्मत के लिए उत्तरदायी होते हैं। एक प्रकार से उन्हें 'संसद् की विरासत का रक्षक' कहा जा सकता है। वे विधायी सेवाओं और सदन के सचिवालय के प्रमुख अधिकारी भी होते हैं।

महासचिव/सचिव का कर्तव्य है कि वह समय-समय पर रिक्त होनेवाले पदों को भरने के लिए पर्याप्त कर्मचारियों को प्रशिक्षित करें। महासचिव/सचिव का राजनीति से कोई व्यावहारिक संबंध नहीं रहता। वे दलगत स्वार्थों से सदैव दूर रहते हैं। महासचिव/सचिव का चयन और उनकी नियुक्ति अध्यक्ष करते हैं। एक बार नियुक्त होने पर वे निर्धारित सेवा-निवृत्ति तक अपने पद पर कार्यरत रहते हैं। वे सदन के अध्यक्ष के प्रति उत्तरदायी होते हैं, इसलिए सदन में उनकी कोई आलोचना नहीं की जा सकती।

महासचिव/सचिव सदन के अधिवेशन में उपस्थित होने के लिए राष्ट्रपति की ओर से सदस्यों को आमंत्रित करते हैं। वे अध्यक्ष की अनुमति से विधेयक को प्रमाणित करते हैं। वह सदन की ओर से संदेश भेजते हैं और आनेवाले संदेश को प्राप्त भी करते हैं।

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

14 दिनों की पूर्वसूचना देकर लोकसभा के वर्तमान समस्त सदस्यों के बहुमत से पारित संकल्प द्वारा अध्यक्ष या उपाध्यक्ष को पद से हटाया जा सकता है। जिस बैठक में अध्यक्ष के विरुद्ध प्रस्ताव लाया गया हो, उसकी अध्यक्षता वे नहीं करेंगे, परंतु वह उसकी कार्यवाहियों में अपना पक्ष रख सकते हैं तथा मतदान कर सकते हैं। मत बराबर होने की स्थिति में वे निर्णायक मत नहीं दे सकते हैं।

अनुच्छेद-94 के अनुसार, लोकसभा अध्यक्ष नवनिर्वाचित लोकसभा के प्रथम अधिवेशन से पहले तक अपने पद पर कार्यरत माने जाएँगे।

राज्यसभा और लोकसभा का संबंध

संविधान के अनुसार, राज्यसभा और लोकसभा—दोनों ही सदन संसद् के महत्त्वपूर्ण अंग हैं। दोनों को ही समान स्थान प्राप्त हैं, किंतु व्यवहार में राज्यसभा की अपेक्षा लोकसभा अधिक लोकप्रिय और शक्तिशाली है। इसका मूल कारण यह है कि दोनों सदनों की कार्य विधि समान भले ही हो, किंतु राज्यसभा में साधारण विधेयक ही प्रस्तुत किए जा सकते हैं, जबकि लोकसभा में साधारण विधेयकों के साथ-साथ वित्तीय विधेयक भी प्रस्तुत किए जाते हैं।

इस प्रकार लोकसभा में वित्तीय विधेयक की प्रस्तुति उसे अपेक्षाकृत शक्तिशाली और उच्च स्थान प्रदान करती है। इसके अनंतर यह महत्त्वपूर्ण बात भी ध्यान देने योग्य है कि वित्तीय विधेयक लोकसभा में प्रस्तुत भले ही किए जाते हैं, किंतु उन्हें राज्यसभा द्वारा भी पारित किया जाना अनिवार्य है। इस प्रकार राज्यसभा तथा लोकसभा का घनिष्ठ संबंध है। उन्हें एक-दूसरे से ऊँचा-नीचा, छोटा-बड़ा या कम-ज्यादा शक्तिशाली कहना उचित नहीं है। दोनों का ही अपना-अपना स्थान तथा महत्त्व है।

इस संदर्भ में जवाहरलाल नेहरू का कथन गौरतलब है, ''हमारे संविधान के अंतर्गत संसद् दो सदनों से मिलकर बनती है और उनमें से प्रत्येक सदन संविधान द्वारा निर्धारित क्षेत्र के अंतर्गत कार्य करता है। हमें अपने अधिकार उस संविधान से प्राप्त होते हैं। कभी-कभी हम ब्रिटेन की संसद् के दोनों सदनों की प्रथाओं और परंपराओं का उल्लेख करते हैं और भ्रमवश इन्हें उच्च सदन या निम्न सदन के नाम से पुकारने लगते हैं...इनमें से किसी भी सदन को उच्च अथवा निम्न सदन कहना उचित नहीं है। कोई भी सदन अकेले 'संसद्' नहीं कहला सकता, दोनों ही सदन मिलकर भारत की 'संसद्' का गठन करते हैं...संविधान में वित्त संबंधी कुछ मामलों को छोड़कर जिन पर लोकसभा का एकमात्र अधिकार है, अन्य समस्त विषयों में दोनों सदनों को बराबर माना गया है।''

भारतीय संसद् की सर्वोच्चता

भारत की संसदीय प्रणाली इंग्लैंड की संसदीय प्रणाली को लक्ष्य करके निर्धारित की गई है। इंग्लैंड की सर्वोच्च सत्ता राजायुक्त संसद् में निहित है। राजा के अधिकार नगण्य हैं। अत: वहाँ संसद् को ही सर्वोच्च सत्ता माना जाता है।

भारतीय संविधान गणराज्य पर लागू होता है और अपने अधिकार-क्षेत्र में भारतीय संसद् का अधिकार पूर्ण है। इसके साथ ही यह भी द्रष्टव्य है कि भारत का संविधान इंग्लैंड के संविधान की भाँति अलिखित नहीं, बल्कि लिखित संविधान है और उसमें न्यायपालिका का स्वतंत्र अस्तित्व है, संसद् के समकक्ष ही न्यायपालिका की स्वतंत्रता का स्थान है।

भारत की न्यायपालिका को संविधान की व्याख्या करने का अधिकार है। वह संसद् द्वारा पारित अधिनियम को संविधान की भावना के अनुरूप न पाकर अवैधानिक घोषित कर सकती है। संघीय व्याख्या के अनुकूल यह प्रावधान सर्वथा उचित है। इसके अतिरिक्त भारतीय संसद् पर एक और प्रतिबंध है, वह है नागरिकों के मौलिक

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

अधिकारों का प्रावधान।

केशवानन्द भारती मुकदमे में सर्वोच्च न्यायालय के निर्णय के अनुसार, भारतीय संसद् मौलिक अधिकारों को समाप्त नहीं कर सकती है तथा संविधान के मूल ढाँचे में परिवर्तन भी नहीं कर सकती है। आपातकाल में मौलिक अधिकारों को निलंबित तो किया जा सकता है, किंतु सदैव के लिए किसी भी दशा में समाप्त नहीं किया जा सकता है। कहने का तात्पर्य यह है कि भारतीय संसद् को संविधान की सीमा में व्यापक अधिकार प्राप्त हैं, परंतु किसी भी दशा में उसे असीमित अधिकारों का उपयोग करके निरंकुश होने का अधिकार प्राप्त नहीं है।

पिछले कुछ वर्षों में केंद्रीय शासकों तथा सांसदों ने संसद् की सर्वोच्चता के सिद्धांत का प्रतिपादन किया है और इस दिशा में कुछ पग भी उठाए हैं। संविधान में एक नवीन (नौवाँ) अध्याय जोड़ दिया गया है और यह व्यवस्था कर दी गई है कि इस अध्याय में रखे गए अधिनियमों की वैधानिकता को चुनौती नहीं दी जा सकती है। 42वें संशोधन अधिनियम के अंतर्गत संवैधानिक संशोधन प्रणाली को भी इस अध्याय में सम्मिलित कर लिया गया है। यदि प्रक्रिया संबंधी कोई भूल रह जाती है, तो सर्वोच्च न्यायालय उसे संवैधानिक घोषित कर सकता है, अन्यथा नहीं। इससे संसद् की सर्वोच्चता का मार्ग प्रशस्त हुआ है।

समग्रत: भारतीय संसद् संविधान, भारतीय नागरिकों के मूलभूत अधिकारों आदि से कानूनी रूप से सीमित है। उसका महत्त्व यद्यपि सर्वमान्य और सर्वोपरि है, तथापि राजनीतिक प्रभुता के समक्ष झुकने के लिए वह बाध्य है।

विधायी प्रकिया

विधि-रचना संसद् का प्रमुख कार्य है। विधेयकों के स्वरूप के अनुसार, सदन से उन्हें पारित करने की प्रक्रिया भी भिन्न है, जैसे—

साधारण विधेयक के संबंध में प्रक्रिया

साधारण विधेयक किसी भी सदन में पेश किए जा सकते हैं। यदि वह सदन, जिसमें विधेयक पेश किया गया है, साधारण बहुमत से विधेयक को पारित कर देता है, तो विधेयक को दूसरे सदन में पारित होने के लिए भेज दिया जाता है। यदि दूसरा सदन विधेयक को उसी रूप में स्वीकार न करे अथवा विधेयक के संबंध में दोनों में मतभेद हो जाए, तो राष्ट्रपति निश्चित तिथि को दोनों सदनों का संयुक्त अधिवेशन बुलाते हैं, जिसकी अध्यक्षता लोकसभा अध्यक्ष करते हैं।

इस अधिवेशन में बहुमत से निर्णय लिया जाता है। दोनों सदनों द्वारा पारित विधेयक राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भेज दिया जाता है। राष्ट्रपति की स्वीकृति मिलने के बाद विधेयक कानून का रूप धारण कर लेता है।

साधारण विधेयक मंत्रियों या संसद् के सदस्यों द्वारा सदन में प्रस्तुत किए जा सकते हैं। मंत्रिपरिषद् द्वारा प्रस्तुत किए गए विधेयक सीधे गजट में प्रस्तुत किए जाते हैं। उनके लिए पूर्वसूचना देना आवश्यक नहीं होता है। इसके विपरीत अन्य सांसदों द्वारा विधेयक पेश करने से पहले एक महीने का नोटिस देना अनिवार्य है। नोटिस के साथ-साथ विधेयक की एक प्रतिलिपि और विधेयक के उद्देश्यों का विवरण देना भी आवश्यक होता है। साधारण विधेयक को पारित होने के लिए निम्नलिखित अवस्थाओं से गुजरना पड़ता है—

प्रथम वाचन

सांसद द्वारा विधिवत् नोटिस मिलने पर अध्यक्ष सदन में विधेयक प्रस्तुत करने के लिए एक निश्चित तिथि निर्धारित कर देते हैं। उस पर प्रस्ताव करनेवाला सदस्य अध्यक्ष की अनुमति से सदन के समक्ष विधेयक का केवल

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels & English & Hindi

शीर्षक पढ़कर सुनाता है। यही प्रथम वाचन कहलाता है। प्रथम वाचन के पश्चात् ही विधेयक गजट में प्रकाशित किया जा सकता है।

द्वितीय वाचन

प्रथम वाचन की तिथि की तरह द्वितीय वाचन की तिथि भी पूर्व निर्धारित होती है, जिस पर प्रस्ताव करनेवाला यह निश्चित करता है कि विधेयक को प्रवर समिति को विचारार्थ सौंप दिया जाए या उसे जनमत के लिए जनता के समक्ष रखा जाए या उसी समय सदन में विचार किया जाए।

यदि विधेयक प्रवर समिति के समक्ष विचारार्थ भेजा जाता है तो प्रवर समिति की रिपोर्ट आने पर उसे चर्चा के लिए वह सदन में रखा जाता है, अन्यथा सदन उसकी प्रत्येक धारा के संबंध में वाद-विवाद करता है। व्यवहार में अधिकतर विधेयक प्रवर समिति को ही सौंपे जाते हैं। केवल अत्यावश्यक विधेयकों पर ही सदन में तत्काल विचार-विमर्श किया जाता है।

समिति अवस्था

प्रवर समिति को सौंपे जाने पर समिति उस विधेयक पर विचार-विमर्श करती है। प्रवर समिति विधेयक की प्रत्येक धारा पर गंभीरता से विचार-विमर्श करती है। वहाँ विधेयक के गुण-दोषों का आलोचनात्मक दृष्टि से विवेचन और अध्ययन किया जाता है। विचार-विमर्श के पश्चात् समिति अपनी रिपोर्ट तैयार करती है। वह रिपोर्ट सदन में प्रस्तुत की जाती है।

इस रिपोर्ट पर समिति का अध्यक्ष हस्ताक्षर करता है। इस समिति के सभी सदस्य सदन के द्वारा ही चुने जाते हैं। इसमें विधेयक का प्रस्ताव करनेवाले तथा अन्य कई सदस्य होते हैं। यदि सदन उपाध्यक्ष समिति का सदस्य होता है तो वही उसके अध्यक्ष का कार्य करता है, अन्यथा सदन का अध्यक्ष बहुमत वाले दल के किसी सदस्य को समिति का अध्यक्ष नियुक्त कर सकता है। विधेयक संबंधी इस विचार-विमर्श में संबंधित विभाग के मंत्री को भी सदस्य के रूप में सम्मिलित किया जाता है।

रिपोर्ट अवस्था

प्रवर समिति की रिपोर्ट गजट में प्रकाशित होने के पश्चात् समस्त सदस्यों को वितरित कर दी जाती है। इसके बाद विधेयक का प्रस्ताव करनेवाला सदस्य एक प्रस्ताव सदन के समक्ष प्रस्तुत करता है, तब तीन विकल्प सामने आते हैं—

अ. समिति की रिपोर्ट के मद्देनजर सदन में विधेयक पर विचार किया जाए।

ब. विधेयक को पुन: प्रवर समिति के समक्ष विचारार्थ प्रस्तुत किया जाए।

स. विधेयक को जनमत के लिए प्रचारित एवं प्रसारित किया जाए।

सदन में विचार-विमर्श की अनुमति मिलने पर विधेयक की प्रत्येक धारा के खंडों और उपखंडों पर गंभीरतापूर्वक विचार-विमर्श किया जाता है। कभी-कभी इस विचार-विमर्श के दौरान उत्तेजनात्मक और आक्रोशपूर्ण बहस भी छिड़ जाती है।

प्रत्येक संशोधन पर प्राय: बहस हो ही जाती है। उस पर सदन के सदस्यों के मत भी लिए जाते हैं। बहुमत द्वारा स्वीकृत संशोधनों को विधेयक का अंग मान लिया जाता है। इस प्रकार विधेयक की रचना संबंधी प्रक्रिया में यह अवस्था सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण होती है।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

तृतीय वाचन

चूँकि रिपोर्ट की अवस्था में विधेयक पर गंभीरतापूर्वक विचार-विमर्श हो चुका होता है, इसलिए तृतीय वाचन औपचारिकता मात्र होता है। इस अवस्था में विधेयक में कोई महत्त्वपूर्ण संशोधन न करके उसमें भाषा एवं शब्दावली संबंधी कुछ सुधार ही किए जाते हैं। अंत में विधेयक पर मतदान होता है। बहुमत मिलने पर विधेयक को सदन से पारित समझा जाता है।

दूसरे सदन में

उपर्युक्त अवस्थाओं से पारित होने के बाद विधेयक जब दूसरे सदन में भेजा जाता है, तब पूर्व सदन की प्रक्रियाएँ दोहराई जाती हैं। इस प्रकार दूसरे सदन की विभिन्न प्रक्रियाओं से गुजरते हुए जब विधेयक पारित हो जाता है, तब उसे राष्ट्रपति के पास भेज दिया जाता है। यदि किसी कारणवश दूसरे सदन में विधेयक उसी रूप में स्वीकार न किया जा सके अथवा विधेयक के संबंध में दोनों सदनों में मतभेद हो जाए तो राष्ट्रपति एक निर्धारित तिथि पर दोनों सदनों की संयुक्त बैठक बुलाकर बहुमत से विधेयक को पारित करने का प्रयास करता है।

राष्ट्रपति की स्वीकृति

दोनों सदनों से विधिवत् पारित होने के बाद जब हस्ताक्षर करने के लिए विधेयक को राष्ट्रपति के पास पहुँचाया जाता है तो राष्ट्रपति को स्वीकृति देनी पड़ती है। वैसे राष्ट्रपति यदि चाहें तो पुनर्विचार के लिए विधेयक को वापस दोनों सदनों के पास भेज सकते हैं। पुनर्विचार के पश्चात् विधेयक अधिनियम का रूप धारण कर लेता है, तब उसे सरकारी गजट में प्रकाशित कर दिया जाता है।

धन विधेयक की प्रक्रिया

संविधान के अनुच्छेद-110 में वर्णित विषयों में से किसी भी विषय से संबंधित विधेयक 'धन विधेयक' कहलाता है। ये विषय हैं—

1. कर लगाना, कर हटाना, परिवर्तन अथवा विनियमन करना।
2. भारत सरकार द्वारा ऋण लेना, गारंटी देना अथवा वित्तीय उत्तरदायित्व लेने के संबंध में कानून बनाना।
3. भारत संचित निधि अथवा आकस्मिक निधि की अधिरक्षा अथवा ऐसी किसी निधि से धन निकालना अथवा भुगतान करना।
4. भारत की संचित निधि में से धन का विनियोजन करना।
5. किसी व्यय को भारत की संचित निधि पर भारित व्यय घोषित करना या इसी प्रकार के किसी खर्च में बढ़ोतरी करना।
6. भारत की संचित निधि के कारण या भारतीय सार्वजनिक लेखा या इसकी अभिरक्षा या संघ या किसी राज्य के लेखा की परीक्षा के कारण धन की प्राप्ति।

कुल मिलाकर धन विधेयक संघ की आय-व्यय निधियों के हिसाब-किताब और उसकी जाँच-पड़ताल से संबंधित होता है। कोई विधेयक धन विधेयक है या नहीं, इस बारे में लोकसभाध्यक्ष का निर्णय अंतिम होता है। धन विधेयक केवल लोकसभा में ही प्रस्तुत किया जा सकता है। लोकसभा में पारित होने के बाद विधेयक को राज्यसभा के पास उसकी सिफारिशों के लिए भेजा जाता है। राज्यसभा को अपनी सिफारिश सहित यह विधेयक 14 दिनों के भीतर वापस भेजना होता है। राज्यसभा की सिफारिशों को मानना या न मानना लोकसभा की इच्छा पर निर्भर करता है।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

यदि राज्यसभा 14 दिनों के अंदर विधेयक को पारित नहीं करती, तो इस अवधि के पश्चात् वह उसी रूप में पारित माना जाएगा, जिस रूप में लोकसभा ने उसे पारित किया था। दोनों सदनों द्वारा पारित होने के बाद विधेयक को राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भेजा जाता है।

वित्त विधेयक संबंधी प्रक्रिया

साधारणतया वित्त विधेयक राजस्व या व्यय से संबंधित होते हैं। नए कर लगाने, कर बढ़ाने-घटाने, ऋण लेने आदि के प्रस्ताव वित्त विधेयक के माध्यम से ही रखे जाते हैं। इसका लक्ष्य सरकार की वित्तीय प्रस्थापनाओं को कार्यान्वित करना है। वित्त विधेयक भी राष्ट्रपति की पूर्वानुमति के बाद केवल लोकसभा में प्रस्तुत किया जाता है। इस विधेयक को पारित करने की शेष प्रक्रिया सामान्य विधेयक की तरह ही है।

संविधान के अनुच्छेद-112 से 117 तक के उपबंधों में विभिन्न वित्तीय विधेयकों के पारित होने की प्रक्रियाएँ निर्दिष्ट हैं, जैसे—

1. *बजट* : एक वित्तीय वर्ष में सरकारी आय-व्यय का अनुमानित लेखा-जोखा 'बजट' कहलाता है। वित्तीय वर्ष आरंभ होने से पूर्व राष्ट्रपति की ओर से उस वर्ष के आय-व्यय का विवरण वित्त मंत्री द्वारा लोकसभा में प्रस्तुत किया जाता है। इस विवरण में दो महत्त्वपूर्ण बातों पर विशेष ध्यान दिया जाता है—

(i) संचित निधि से किस-किस मद में कितना धन व्यय करना है।

(ii) अन्य सरकारी खर्चों के लिए कितने धन की आवश्यकता है।

संचित निधि में से निम्नलिखित व्यय किए जा सकते हैं—

(क) राष्ट्रपति का वेतन व भत्ते और राष्ट्रपति कार्यालय के खर्च।

(ख) राज्यसभा के सभापति, उपसभापति, लोकसभा के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष के वेतन एवं भत्ते।

(ग) ऋण-संबंधी व्यय।

(घ) सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के वेतन एवं भत्ते।

(ङ) संघीय लोक सेवा आयोग के वेतन एवं भत्ते।

(च) न्यायालय के निर्णय एवं आदेश को लागू करने के लिए होनेवाले अनिवार्य अन्य व्यय।

(छ) संविधान द्वारा या संसद् के कानून द्वारा यदि कोई अन्य सरकारी व्यय देय हो।

(ज) भारत क्षेत्र के अंतर्गत स्वाधीनता-प्राप्ति से पूर्व किसी न्यायालय के न्यायाधीश की पेंशन आदि का व्यय।

संचित निधि के अतिरिक्त अन्य व्यय के संबंध में लोकसभा की अनुमति लेना आवश्यक है। राष्ट्रपति की स्वीकृति मिलने पर अनुदान संबंधी इन माँगों को वित्त मंत्री लोकसभा के समक्ष प्रस्तुत करता है, जिन्हें लोकसभा स्वीकार या अस्वीकार या कम कर सकती है।

2. *विनियोग विधेयक* : भारत सरकार के व्यय संबंधी प्रस्ताव 'विनियोग विधेयक' कहलाते हैं। इस विधेयक के अंतर्गत यह स्पष्ट किया जाता है कि संचित निधि से अन्य खर्च किस अनुपात में किए जाएँगे। विनियोग कानून के बिना संचित निधि से कोई खर्च नहीं किया जा सकता। यूँ तो साधारण विधेयकों के समान यह विधेयक भी तीन वाचनों से गुजरकर पारित होता है, किंतु इसे प्रवर समिति के पास नहीं भेजा जा सकता।

इस विधेयक पर विचार-विमर्श केवल सदन में ही होता है। विनियोग विधेयक में धनराशि बढ़ाने का कोई प्रस्ताव सदन नहीं रख सकता। उसे केवल धनराशि घटाने का अधिकार दिया गया है, लेकिन इसके लिए भी वित्त मंत्री की अनुमति का मिलना आवश्यक है।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

3. *वित्तीय विधेयक* : भारत की आय संबंधी व्यवस्था का विवरण वित्त विधेयक में होता है। जनता पर कर लगाने या कर घटाने के संबंध में वित्त विधेयक के रूप में प्रस्ताव लोकसभा में प्रस्तुत किया जाता है। यह विधेयक बजट का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण अंश होता है। इसे 'आय विधेयक' भी कहा जा सकता है।

इस विधेयक के पारित होने पर सरकार को यह अधिकार मिल जाता है कि वह जनता पर नए कर लगाए या पुराने कर हटाए या उन्हें परिवर्तित करे। अन्य विधेयकों के समान यह विधेयक भी राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए भेजा जाता है। किसी कारणवश वह धन विधेयक को पुनर्विचार के लिए तो लौटा सकता है, किंतु अंततः उसे स्वीकृति देनी ही पड़ती है।

4. *विविध अनुदान* : प्रतिवर्ष सरकार के सामने कुछ ऐसी समस्याएँ आ जाती हैं, जिनके समाधान के लिए अचानक अतिरिक्त धन की आवश्यकता पड़ जाती है। उनका आम बजट में न तो कोई उल्लेख होता है और न ही उस समय अनुमान लगाया जा सकता है; जैसे—अकाल, बाढ़, ओलावृष्टि, भूकंप आदि। ऐसे खर्चों के संबंध में सरकार लोकसभा के समक्ष पूरक बजट प्रस्तुत करती है। इसमें पूरक माँगें रखी जाती हैं।

धन विधेयक एवं वित्त विधेयक में अंतर

धन विधेयक और वित्त विधेयक में निम्नलिखित अंतर हैं—

धन विधेयक

1. प्रत्येक धन विधेयक वित्त विधेयक होता है।
2. अनुच्छेद-110 में वर्णित विषय ही धन विधेयक की श्रेणी में आते हैं।
3. धन विधेयक राज्यसभा में पुनः स्थापित नहीं किया जा सकता है।
4. धन विधेयक के पुनः स्थापित होने से पूर्व राष्ट्रपति की अनुमति का मिलना आवश्यक होता है।
5. अन्य स्थितियों में धन विधेयक सामान्य विधेयक की श्रेणी में नहीं आते।
6. धन विधेयक राज्यसभा में पारित न भी हो, तो उस पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।
7. धन विधेयक के संबंध में दोनों सदनों में गतिरोध होने पर भी कोई प्रभाव नहीं पड़ता।

वित्त विधेयक

1. प्रत्येक वित्त विधेयक धन विधेयक नहीं होता।
2. वित्त विधेयक इन विषयों के साथ-साथ अन्य विषयों से भी संबंधित रहता है।
3. वित्त विधेयक भी राज्यसभा में पुनर्स्थापित नहीं किया जा सकता।
4. वित्त विधेयक के भी पुनर्स्थापित होने से पूर्व राष्ट्रपति की अनुमति का मिलना आवश्यक है।
5. वित्त विधेयक सामान्य विधेयक की ही भाँति है। इसे संसद् के दोनों सदनों द्वारा स्वीकृत होना चाहिए।

देश की संचित निधि पर भारित व्यय

अनुच्छेद-112 के अनुसार, निम्नलिखित व्यय देश की संचित निधि पर भारित हैं; इस पर संसद् में मतदान नहीं होता है—

1. राष्ट्रपति के वेतन, भत्ते एवं व्यय।
2. राज्यसभा के सभापति तथा लोकसभा के अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष के वेतन, भत्ते आदि।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

3. ऐसे ऋण-भार, जिनका दायित्व भारत सरकार पर हो।

4. उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालय, के न्यायाधीशों के वेतन, भत्ते एवं पेंशन।

5. भारत के नियंत्रक महालेखा परीक्षक के वेतन, भत्ते एवं पेंशन।

6. किसी न्यायालय या मध्यस्थ अधिकरण के निर्णय, डिक्री या पंचाट की तुष्टि के लिए आवश्यक राशियाँ। कोई अन्य व्यय, जो संविधान द्वारा या संसद् की विधि द्वारा इस प्रकार भारित घोषित किया जाए।

संसदीय समितियाँ

संसदीय कार्यों में विविधता एवं विस्तार को देखते हुए समयाभाव स्वाभाविक है। फलत: विभिन्न विधायी मामलों में गहन विचार-विमर्श संदिग्ध हो जाता है। इसीलिए संविधान में विभिन्न संसदीय समितियों की व्यवस्था की गई है, ताकि संसद् का कार्य करने में कुछ सहयोग मिल सके। ये संसदीय समितियाँ संविधान के अनुच्छेद-118(1) के अंतर्गत दोनों सदनों द्वार बनाए गए नियमों की धाराओं के तहत नियमित होती हैं। ये किसी एक सदन में नहीं, दोनों सदनों में होती हैं और अपवाद छोड़कर उनकी संरचना भी प्राय: समान है। इन समितियों में नियुक्ति, कार्यकाल, कार्य एवं कार्य-संचालन की प्रक्रिया लगभग समान ही रहती है। मोटे तौर पर संसदीय समितियों को दो भागों में विभाजित किया जा सकता है—

1. स्थायी समितियाँ,
2. तदर्थ समितियाँ।

जैसा दोनों नामों से स्पष्ट है, स्थायी समितियाँ वर्ष-दर-वर्ष चलती रहती हैं। उनमें केवल सदस्य बदलते रहते हैं। इसके विपरीत तदर्थ समितियाँ आवश्यकतानुसार समय-समय पर गठित होती रहती हैं और काम पूरा होने के बाद उन्हें समाप्त कर दिया जाता है।

संसद् की कुछ महत्त्वपूर्ण समितियाँ इस प्रकार हैं—

कार्यमंत्रणा समिति

इस समिति के सदस्य लोकसभा अध्यक्ष द्वारा मनोनीत किए जाते हैं। इसमें अध्यक्ष सहित 15 सदस्य हो सकते हैं तथा अध्यक्ष ही इसके सभापति होते हैं। यह समिति ऐसे सरकारी विधेयकों के प्रक्रम तथा अन्य सरकारी कार्य पर चर्चा के लिए समय के बँटवारे की सिफारिश करती है, जिन्हें अध्यक्ष सदन के नेता के परामर्श से समिति को सौंपे जाने का निर्देश दे।

गैर-सरकारी सदस्यों के विधेयकों की समिति

इस समिति में अध्यक्ष द्वारा 15 सदस्य मनोनीत किए जाते हैं। इसकी अधिकतम अवधि एक वर्ष की होती है। इसके निम्नलिखित कार्य हैं—

क. कार्यसूची में विधेयक को पुनर्स्थापित करने से पूर्व प्रत्येक ऐसे विधेयक की जाँच करना, जो संविधान में संशोधन करना चाहता हो और जिसकी सूचना गैर-सरकारी सदस्य द्वारा दी गई हो।

ख. गैर-सरकारी सदस्यों के सब विधेयकों की, उसके पुनर्स्थापित किए जाने के बाद तथा सभा में उन पर विचार किए जाने से पूर्व जाँच करना और उन्हें उनके स्वरूप तथा महत्त्व के अनुसार दो वर्गों में विभाजित करना।

ग. यह सिफारिश करना कि गैर-सरकारी सदस्यों के प्रत्येक विधेयक पर चर्चा के लिए कितना समय निर्धारित किया जाए।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

घ. ऐसे सभी विधेयकों की जाँच करना, जिनका विरोध इस आधार पर सभा में किया जाए कि उनके द्वारा ऐसे विधान का सूत्रपात होता है, जो सभा की विधायिनी सूक्ष्मता से परे है और अध्यक्ष ऐसी आपत्ति को ऊपरी दृष्टि से ठीक समझे।

ङ. गैर-सरकारी संकल्पों की चर्चा के लिए समय निर्धारित करना तथा ऐसे संकल्पों के संबंध में अन्य ऐसे कृत्य करना, जो समय-समय पर अध्यक्ष उसे सौंपते हों।

विधेयकों के लिए प्रवर समितियाँ

किसी विधेयक के लिए प्रवर समितियों में वे व्यक्ति भी शामिल किए जा सकते हैं, जो सदस्य नहीं हैं। समिति के सभापति की आज्ञा से ऐसे मंत्री जो समिति के सदस्य हों, समिति में भाषण दे सकते हैं। इस समिति में विधेयकों की गवाहियाँ और बयान लिए जाते हैं। इसमें उन वर्गों, हितों और व्यक्तियों के भी विचार सुने जाते हैं, जो इस समिति के कार्यों से प्रभावित हों। समिति का कोई भी सदस्य उसके निश्चयों से सहमत न होकर अपना मतभेद अलग से प्रस्तुत कर सकता है।

याचिका या शिकायतों से संबंधित समिति

अध्यक्ष कम-से-कम 15 सदस्यों की यह समिति गठित करते हैं। कोई मंत्री इसका सदस्य नहीं हो सकता। यह समिति उन याचिकाओं या शिकायतों पर विचार करती है, जो इसके पास भेजी जाती हैं।

लोकलेखा समिति

यह समिति सरकारी आय-व्यय के लेखे की जाँच करती है। संसद् सरकारी खर्च के लिए जो राशि विनियोग अधिनियम के रूप में स्वीकार करती है, उसके अनुसार सरकार ने खर्च किया या नहीं—यह देखना इस समिति का कार्य होता है।

इस समिति की अधिकतम सदस्य संख्या-22 निर्धारित की गई है, जिनमें से 15 सदस्य लोकसभा से होते हैं, जिन्हें सदन हर वर्ष अपने सदस्यों में अनुपाती प्रतिनिधित्व के सिद्धांत के आधार पर एकल संक्रमणीय मत द्वारा चुनता है। इस समिति का सदस्य कोई मंत्री नहीं बन सकता है। इसके सदस्यों की अवधि अधिक-से-अधिक एक वर्ष की होती है।

प्राक्कलन समिति

यह समिति सरकारी व्यय से संबंधित अनुमानित राशि या प्राक्कलनों की जाँच करती है, जिन्हें सदन या अध्यक्ष द्वारा उसे विशेष जाँच-पड़ताल के लिए सौंपा जाए। इस समिति के निम्नलिखित कार्य होते हैं—

अ. अनुमानित व्यय में मितव्ययिताएँ, सरकार के संगठन में सुधार या सरकार की कार्यकुशलता से संबंधित सुधार आदि संबंधी प्रतिवेदन देना।

ब. प्रशासन में कार्यपटुता और मितव्ययिता लाने के लिए वैकल्पिक नीतियों का सुझाव देना।

स. प्राक्कलनों में अंतर्निहित नीति की सीमा में रहते हुए धन ठीक ढंग से खर्च किया गया है या नहीं, इसकी जाँच करना।

द. संसद् में प्राक्कलन के स्वरूप संबंधी सुझाव देना।

इस समिति के सदस्यों की संख्या 30 से अधिक नहीं होती। इन्हें सदन हर वर्ष अपने सदस्यों में से आनुपातिक

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

प्रतिनिधित्व के अधिकार पर निर्वाचित करता है।

विशेषाधिकार समिति

यह समिति अधिकतम 15 सदस्यों की होती है, जिसे अध्यक्ष विशेषाधिकार भंग होने के मामलों की जाँच करने के लिए गठित करता है।

अधीनस्थ विधान संबंधी समिति

यह समिति सरकार द्वारा बनाए गए अधीनस्थ या हस्तांतरित अधिनियमों के औचित्य और व्यावहारिकता की जाँच करती है। इसमें 15 से अधिक सदस्य नहीं होने चाहिए, जिन्हें अध्यक्ष मनोनीत करता है।

सरकारी आश्वासनों से संबंधित समिति

यह समिति अभी तक केवल भारत में ही स्थापित की गई है; अन्य देशों में ऐसी कोई समिति नहीं है। यही एक ऐसी समिति है, जिसकी अध्यक्षता विरोधी पक्ष का एक प्रमुख सदस्य करता है।

इसका कार्य यह देखना है कि सभा के अंदर मंत्रियों द्वारा समय-समय पर दिए गए आश्वासनों, प्रतिज्ञाओं, वचनों आदि का पालन कहाँ तक किया गया और यह परिपालन उस प्रयोजन के लिए आवश्यक न्यूनतम समय के भीतर हुआ है या नहीं। इसमें अधिक-से-अधिक 15 सदस्य होते हैं, जिन्हें अध्यक्ष मनोनीत करते हैं। कोई मंत्री इसका सदस्य नहीं हो सकता।

बैठकों से सदस्यों की अनुपस्थिति संबंधी समिति

यह समिति सभा की बैठकों से अनुपस्थित रहने की अनुमति के लिए सदस्यों के सभी आवेदन-पत्रों पर विचार करती है और जो सदस्य आज्ञा के बिना सभा की बैठकों से 60 दिन या अधिक समय तक अनुपस्थित रहा है, उसकी जाँच करती है और उसके विरुद्ध कार्यवाही करने के लिए प्रतिवेदन प्रस्तुत करती है। इसमें अध्यक्ष द्वारा मनोनीत 15 सदस्य होते हैं।

नियम समिति

सभा की प्रक्रिया तथा कार्य-संचालन के मामलों पर विचार करके और तत्संबंधी नियमों में उचित संशोधनों की सिफारिश करने के लिए इस समिति का गठन किया जाता है।

सामान्य प्रयोजन समिति

इसमें अध्यक्ष, उपाध्यक्ष तथा विभिन्न समितियों के सभापति, संसद् द्वारा मान्यताप्राप्त गुट और दल के नेता तथा अन्य ऐसे सदस्य होते हैं, जिन्हें अध्यक्ष मनोनीत करें। अध्यक्ष इस समिति के पदेन सभापति होते हैं। इस समिति का काम लोकसभा से संबंधित ऐसे मामलों पर विचार करना और परामर्श देना है, जिन्हें अध्यक्ष समय-समय पर सौंपता है।

आवास समिति

यह समिति अधिकाधिक 12 सदस्यों की होती है। यह लोकसभा के सदस्यों के निवास-स्थान संबंधी सभी प्रश्नों पर कार्यवाही करती है तथा दिल्ली में सदस्यों के निवास-स्थानों आदि में दी गई आवास, भोजन, चिकित्सा-सहायता

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

आदि सुविधाओं की देखभाल करती है। इस समिति का कार्य केवल मंत्रणा करना होता है।

पुस्तकालय समिति

यह समिति संसद् के पुस्तकालय से संबंधित मामलों की जाँच करती है। इसमें उपाध्यक्ष, लोकसभा के 5 सदस्य और राज्यपरिषद् के 3 सदस्य होते हैं। समिति के सदस्य लोकसभा अध्यक्ष द्वारा नियुक्त किए जाते हैं। इस समिति का कार्यकाल एक वर्ष के लिए होता है। अध्यक्ष इस समिति के पदेन सभापति होते हैं। इस प्रकार संसदीय लोकतंत्र में विधेयकों के सूत्रपात तथा प्रशासन की देखभाल करने में ये समितियाँ महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। इस प्रकार संसदीय लोकतंत्र में विधेयकों के सूत्रपात तथा प्रशासन की देखभाल करने में ये समितियां महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं। समितियों की बैठकों में सदस्यों का सारा व्यवहार ही बदल जाता है, क्योंकि वहां वे दल के अनुशासन व दल-सचेतक के बंधन में भी नहीं होते।

संसद् से संबंधित अनुच्छेद : एक नजर में

अनुच्छेद विषयवस्तु

सामान्य

79 संसद् का गठन

80 राज्यसभा की सरंचना

81 लोकसभा की सरंचना

82 प्रत्येक जनगणना के पश्चात् पुनर्समाययोजन

83 संसद् के सदनों की अवधि

84 संसद् की सदस्यता के लिए योग्यता

85 संसद् के सत्र, सत्रावसान एवं विघटन (भंग)

86 राष्ट्रपति का सदनों को संबोधित करने तथा संदेश देने का अधिकार

87 राष्ट्रपति का विशेष संबोधन

88 सदनों के प्रति मंत्रियों एवं अटार्नी जनरल के अधिकार

संसद् के पदाधिकारी गण

89 राज्यसभा का सभापति तथा उपसभापति

90 राज्यसभा के उपसभापति पद की रिक्ति, त्यागपत्र तथा पद से हटाया जाना

91 सभापति के कर्तव्यों के निर्वहन अथवा सभापति के रूप में कार्य करने की उपसभापति या अन्य व्यक्ति की शक्ति

92 सभापति अथवा उपसभापति का सदन की अध्यक्षता से विरत रहना, जबकि उनको पद से हटाने संबंधी कोई प्रस्ताव विचाराधीन है

93 लोकसभा का अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष

94 लोकसभाध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष पद की रिक्ति, त्यागपत्र तथा पद से हटाया जाना

95 लोकसभा उपाध्यक्ष अथवा किसी अन्य व्यक्ति का लोकसभा अध्यक्ष के कर्तव्यों का निर्वहन अथवा लोकसभा अध्यक्ष के रूप में कार्य करने की शक्ति

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

96 लोकसभा अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष का सदन की अध्यक्षता से विरत रहना, जबकि उनको पद से हटाने संबंधी कोई प्रस्ताव विचाराधीन है

97 सभापति एवं उपसभापति तथा लोकसभा अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष के वेतन एवं भत्ते

98 संसद् का सचिवालय

कार्यवाही का संचालन

99 सदस्यों द्वारा शपथ ग्रहण

100 रिक्तियों तथा कोरम की पूर्ति के बिना भी सदनों का कार्य करने का अधिकार तथा मतदान

सदस्यों की अयोग्यता

101 सीटों की रिक्ति

102 सदस्यता से अयोग्य ठहरना

103 सदस्यों की अयोग्यता से संबंधित प्रश्नों पर निर्णय

104 अनुच्छेद-99 के अंतर्गत शपथ ग्रहण करने के पहले स्थान ग्रहण करने तथा मतदान देने अथवा जब योग्यता नहीं हो अथवा जब अयोग्य ठहराया गया हो पर दंड।

संसद् तथा इसके सदस्यों की शक्तियां, विशेषाधिकार तथा प्रतिरक्षा

105 संसद् के सदनों तथा इसके सदस्यों एवं समितियों की शक्तियां , विशेषाधिकार आदि

106 सदस्यों के वेतन एवं भत्ते

विधायी प्रक्रिया

107 विधेयकों की प्रस्तुति एवं उन्हें पारित करने संबंधी प्रावधान

108 कतिपय मामलों में दोनों सदनों की संयुक्त बैठक

109 धन विधेयकों के मामले में विशेष प्रक्रिया

110 धन विधेयक की परिभाषा

111 विधेयकों पर अनुमति

वित्तीय मामलों में प्रक्रिया

112 वार्षिक वित्तीय विवरण

113 संसद् में प्राक्कलनों से संबंधित प्रक्रिया

114 विनियोग विधेयक

115 पूरक, अतिरिक्त तथा अधिक अनुदान

116 लेखा पर मतदान, ऋण एवं असाधारण अनुदानों पर मतदान

117 वित्तीय विधेयकों संबंधी विशेष प्रावधान

सामान्य प्रक्रिया

118 प्रक्रिया संबंधी नियम

119 संसद् में वित्तीय कार्यवाहियों से संबंधित विनियमन

120 संसद् में उपयोग की जानेवाली भाषा

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

121 संसद् में चर्चा पर प्रतिबंध

122 संसद् की कार्यवाहियों के बार में न्यायालय पूछताछ नहीं कर सकता

राष्ट्रपति की विधायी शक्तियां

123 संसद् के अवकाश काल में राष्ट्रपति की अध्यादेश जारी करने की शक्ति

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

14. संघ की न्यायपालिका

(भाग-5, अध्याय-4, अनुच्छेद-124 से 147 तक)

भारतीय संविधान के अंतर्गत नागरिकों को उचित न्याय दिलाने के लिए एक स्वतंत्र एवं निष्पक्ष न्यायालय की स्थापना की गई है। इस न्यायपालिका को न्यायिक पुनर्निरीक्षण का अधिकार भी प्रदान किया गया है, ताकि वह संविधान व कानूनों की रक्षा कर सके तथा सरकार के द्वारा बनाए गए गलत कानूनों एवं आदेशों को निरस्त कर सके। राज्यों के मध्य शक्ति-विभाजन को संघ न्यायोचित सुनिश्चित कर सके और नागरिकों के मौलिक अधिकारों की रक्षा कर सके।

न्यायपालिका को कार्यपालिका एवं प्रशासन से अलग तथा स्वायत्त रखा गया है। न्यायालयों की कार्यवाही पूर्णत: खुली और निष्पक्ष होती है। संभवत: इसीलिए संविधान-रचना के बाद से आज तक जनता की आस्था न्यायपालिका पर काफी हद तक बनी हुई है। किसी भी लोकतंत्रात्मक देश में एक स्वतंत्र तथा योग्य न्यायपालिका का संगठन जनता की स्वतंत्रता तथा उसके मौलिक अधिकारों के लिए नितांत आवश्यक समझा जाता है। न्यायपालिका ही सरकार के विभिन्न अंगों को मनमानी करने से रोकती है और जनता को दमन तथा अत्याचारों से बचाती है।

भारतीय संविधान के अंतर्गत न्याय की सर्वोच्च अदालत को 'उच्चतम न्यायालय' या 'सर्वोच्च न्यायालय' कहा गया है, जिसे विश्व के सभी देशों की उच्चतम अदालतों से अधिक अधिकार प्रदान किए गए हैं। सन् 1935 के अधिनियम के आधार पर भारत में एक फेडरल कोर्ट की स्थापना की गई थी, जिसे संविधान लागू करने के पश्चात् भंग कर दिया और उसके स्थान पर उच्चतम न्यायालय की स्थापना की गई। फेडरल कोर्ट के न्यायाधीश ही इस न्यायालय के न्यायाधीश नियुक्त किए गए।

संघ राज्य की सफलता के लिए स्वतंत्र न्यायमंडल की आवश्यकता होती है। भारतीय संविधान में एकीकृत न्यायपालिका की व्यवस्था की गई है। राष्ट्र की न्याय व्यवस्था में सबसे ऊपर है—सर्वोच्च न्यायालय, जिसके निर्णय देश के सभी न्यायालयों के लिए मान्य हैं। डॉ. अंबेडकर के शब्दों में—''हमारे संघ-राज्य का न्यायमंडल एकीकृत है, उसका क्षेत्राधिकार संवैधानिक कानून, दीवानी कानून तथा फौजदारी कानून के अंतर्गत सभी मामलों तक विस्तृत है। वह सबमें उपचार की व्यवस्था कर सकता है।''

भारतीय संविधान के भाग-5 के चौथे अध्याय में अनुच्छेद-124 से 147 तक संघीय न्यायपालिका से संबंधित उपबंध उल्लिखित हैं। संघीय न्यायपालिका का आशय मोटे तौर पर सर्वोच्च न्यायालय से है, जो दिल्ली में स्थित है। राष्ट्रपति मुख्य न्यायाधीश से परामर्श कर सर्वोच्च न्यायालय की पीठ को देश में कहीं भी स्थापित कर सकते हैं।

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-124 के अनुसार, (1950 में) सर्वोच्च न्यायालय में एक मुख्य न्यायाधीश तथा अधिकतम 7 अन्य न्यायाधीशों के पदों का प्रावधान किया गया। इसके साथ-साथ यह भी प्रावधान किया गया कि संसद् न्यायाधीशों की संख्या में समय-समय पर वृद्धि कर सकती है। सन् 1956 में इनकी संख्या बढ़ाकर 10, सन् 1960 में 13, सन् 1977 में 17 और सन् 1985 में 25 कर दी गई। वर्तमान में सर्वोच्च न्यायालय में एक मुख्य न्यायाधीश तथा 25 अन्य न्यायाधीश हैं। इनकी नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है।

भारतीय न्यायपालिका के अंतर्गत उच्चतम न्यायालय शीर्षस्थ है। शासन शक्ति एवं शासित जन-समाज के मध्य उसकी स्थिति पंच के समान मानी जा सकती है। उसे 'संविधान का संरक्षक' भी कहा गया है। यदि संघ अथवा राज्य के विधानमंडल संविधान के विरुद्ध कोई विधि बना दें, तो उच्चतम न्यायालय उस विधि को अवैध घोषित

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

कर सकता है। वह नागरिकों के मौलिक अधिकारों का भी संरक्षक है।

उच्चतम न्यायालय कई रूपों में कार्य करता है; जैसे—संघीय न्यायालय के रूप में, संविधान के रक्षक के रूप में, अपीलीय न्यायालय के रूप में, सलाहकार निकाय के रूप में तथा एकीकृत न्यायालय के रूप में।

उच्चतम न्यायालय की कार्यविधि

संविधान के अंतर्गत उच्चतम न्यायालय की कार्यविधि संबंधी नियम बनाने का अधिकार संसद् को सौंपा गया है। जिन संदर्भों में संविधान में कोई नियम उल्लिखित नहीं है, उनसे संबंधित नियम स्वयं उच्चतम न्यायालय की अनुमति से कानून बन सकता है। उच्चतम न्यायालय की कार्यविधि संबंधी निम्नलिखित व्यवस्थाएँ हैं—

1. जिन मामलों में संविधान की व्याख्या आवश्यक हो अथवा कोई संवैधानिक समस्या उत्पन्न हो गई हो अथवा कानून का स्पष्टीकरण करना हो अथवा जिन विषयों पर विचार करने का कार्य राष्ट्रपति द्वारा सौंपा गया हो—ऐसे सभी मामलों की सुनवाई उच्चतम न्यायालय के कम-से-कम 5 न्यायाधीशों द्वारा की जाएगी।

2. संविधान की व्याख्या अथवा कानून के स्पष्टीकरण से संबंधित याचिकाओं की सुनवाई आरंभ में कम-से-कम 5 न्यायाधीशों द्वारा की जा सकती है।

3. उच्चतम न्यायालय द्वारा समस्त निर्णय खुले तौर पर किए जाएँगे।

4. उच्चतम न्यायालय के निर्णय का आधार प्रमुखत: न्यायाधीशों का बहुमत होगा, लेकिन यदि कोई न्यायाधीश बहुमत वाले निर्णय से सहमत नहीं है, तो वह अपना अलग निर्णय दे सकता है। यह बात अलग है कि बहुमत वाला निर्णय ही मान्य होगा।

नियुक्तियाँ

सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति राष्ट्रपति सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों के ऐसे न्यायाधीशों से परामर्श करने के पश्चात् करते हैं, जिनका परामर्श लेना वे इस प्रयोजन के लिए आवश्यक समझते हैं। अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति वे एक चयन समिति, जिसमें सर्वोच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के अतिरिक्त चार वरिष्ठतर न्यायाधीश होते हैं, से परामर्श लेकर करते हैं।

शपथ

अपने कार्य का पदभार ग्रहण करने से पूर्व न्यायाधीश को राष्ट्रपति अथवा उनके द्वारा नियुक्त किसी पदाधिकारी के समक्ष पद एवं गोपनीयता की शपथ लेनी पड़ती है। इस शपथ का संवैधानिक प्रारूप इस प्रकार है—

''मैं...ईश्वर की शपथ लेता हूँ या सत्य निष्ठापूर्वक प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति सच्ची श्रद्धा और निष्ठा रखूँगा, मैं भारत की प्रभुता और अखंडता अक्षुण्ण रखूंगा और अपनी पूर्ण योग्यता, जानकारी और विवेक से ठीक-ठीक तथा वफादारी के साथ बिना भय या पक्षपात, द्वेष या प्रीति के अपने कर्तव्य को पूरा करूँगा और संविधान तथा कानून का मान कायम रखूँगा।''

न्यायाधीश होने के लिए योग्यताएँ

सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश होने के लिए अपेक्षित योग्यताएँ हैं—

1. वे भारत के नागरिक हों।

2. एक या एक से अधिक उच्च न्यायालयों में कम-से-कम 5 वर्ष तक लगातार न्यायाधीश रह चुके हों या किसी

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

उच्च न्यायालय में कम-से-कम 10 वर्ष तक अधिवक्ता रह चुके हों या राष्ट्रपति की राय में पारंगत विधिवेत्ता हों।

कार्यकाल

सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश तब तक अपने पद पर कार्य कर सकते हैं, जब तक उनकी आयु पैंसठ वर्ष न हो जाए। वैसे इससे पहले भी वह त्यागपत्र देकर पद से अलग हो सकते हैं। किसी न्यायाधीश के विरुद्ध यदि साबित दुराचार या अक्षमता का आरोप लगाया गया हो तो ऐसा प्रस्ताव अनुच्छेद 124(4) के अनुसार संसद् में प्रस्तुत किया जाना चाहिए। यह प्रस्ताव संसद् के प्रत्येक सदन के कुल सदस्यों के बहुमत तथा उपस्थित एवं मत देनेवाले सदस्यों के दो तिहाई बहुमत से अलग-अलग पारित होना अनिवार्य है, तभी राष्ट्रपति उन्हें पद से हटा सकते हैं। इसे 'महाभियोग' (Impeachment) भी कहते हैं।

भारत के मुख्य न्यायाधीश

नाम :हरिलाल जे. कानिया

अवधि :26 जनवरी, 1950-6 नवंबर, 1951

नाम :एम. पतंजलि शास्त्री

अवधि :7 नवंबर, 1951-3 जनवरी, 1954

नाम :मेहरचंद महाजन

अवधि :4 जनवरी, 1954— 22 दिसंबर, 1954

नाम :बी.के. मुखर्जी

अवधि :23 दिसंबर, 1954—31 जनवरी, 1956

नाम :एस.आर. दास

अवधि :1 फरवरी, 1956—30 सितंबर, 1959

नाम :भुवनेश्वर प्रसाद सिन्हा

अवधि :1 अक्तूबर, 1959—31 जनवरी, 1964

नाम :पी.बी. गजेंद्रगडकर

अवधि :1 फरवरी, 1964—15 मार्च, 1966

नाम :ए.के. सरकार

अवधि :16 मार्च, 1966—29 जून, 1966

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

नाम :के. सुब्बाराव

अवधि :30 जून, 1966—11 अप्रैल, 1967

नाम :के.एन. वांचू

अवधि :12 अप्रैल, 1967—24 फरवरी, 1968

नाम :एम. हिदायतुल्ला

अवधि :25 फरवरी, 1968—16 दिसंबर, 1970

नाम :जे.सी. शाह

अवधि :17 दिसंबर, 1970— 21 जनवरी, 1971

नाम :एम.एम. सीकरी

अवधि :22 जनवरी, 1971—25 अप्रैल, 1973

नाम :ए.एन. रे

अवधि :26 अप्रैल, 1973—27 जनवरी, 1977

नाम :एम.एच. बेग

अवधि :28 जनवरी, 1977—21 फरवरी, 1978

नाम :वाई.वी. चंद्रचूड़

अवधि :22 फरवरी, 1978—11 जुलाई, 1985

नाम :पी.एन. भगवती

अवधि :12 जुलाई, 1985—20 दिसंबर, 1986

नाम :रघुनंदन स्वरूप पाठक

अवधि :21 दिसंबर, 1986—18 जून, 1989

नाम :ई.एस. वेंकटरमैया

अवधि :19 जून, 1989—17 दिसंबर, 1989

नाम :एस. मुखर्जी

अवधि :18 दिसंबर, 1989—25 सितंबर, 1990

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

नाम :रंगनाथ मिश्र

अवधि :26 सितंबर, 1990— 24 नवंबर, 1991

नाम :के.एन. सिंह

अवधि :25 नवंबर, 1991—12 दिसंबर, 1991

नाम :एम.एच. कानिया

अवधि :13 दिसंबर, 1991—17 नवंबर, 1992

नाम :एल.एम. शर्मा

अवधि :18 नवंबर, 1992—11 फरवरी, 1993

नाम :एम.एन. वेंकटचलैया

अवधि :12 फरवरी, 1993—24 अक्तूबर, 1994

नाम :ए.एम. अहमदी

अवधि :25 अक्तूबर, 1994—24 मार्च, 1997

नाम :जे.एम. वर्मा

अवधि :25 मार्च, 1997—17 जनवरी, 1998

नाम :एम.एस. पुंछी

अवधि :18 जनवरी, 1998—9 अक्तूबर, 1998

नाम :ए.एम. आनंद

अवधि :10 अक्तूबर, 1998—31 अक्तूबर, 2001

नाम :सैम पिरोज भरूचा

अवधि :1 नवंबर, 2001-5 मई, 2002

नाम :बी.एन. किरपाल

अवधि :6 मई, 2002-7 नवंबर, 2002

नाम :जी.बी. पटनायक

अवधि :8 नवंबर, 2002-18 दिसंबर, 2002

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

नाम :वी.एन. खरे

अवधि :19 दिसंबर, 2002-2 मई, 2004

नाम :एस. राजेंद्र बाबू

अवधि :3 मई, 2004-31 मई, 2004

नाम :आर.सी. लहोटी

अवधि :1 जून, 2004-1 नवंबर, 2005

नाम :वाई.के. सभरवाल

अवधि :2 नवंबर, 2005-13 जनवरी, 2007

नाम :के.जी. बालकृष्णन

अवधि :14 जनवरी, 2007-11 मई, 2010

नाम :एस.एच. कपाड़िया

अवधि :12 मई, 2010-28 सितंबर, 2012

नाम :अल्तमश कबीर

अवधि :29 सितंबर, 2012-18 जुलाई, 2013

नाम :पी. सदाशिवम

अवधि :19 जुलाई, 2013-26 अप्रैल, 2014

नाम :राजेंद्रमल लोढ़ा

अवधि :26 अप्रैल, 2014-27 सितंबर, 2014

नाम :एच.एल. दत्तू

अवधि :28 सितंबर, 2014-2 दिसंबर, 2015

नाम :तीरथ सिंह ठाकुर

अवधि :3 दिसंबर, 2015-3 जनवरी, 2017

नाम :जगदीश सिंह खेहर

अवधि :4 जनवरी, 2017-26 अगस्त, 2017

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

नाम :दीपक मिश्रा

अवधि :27 अगस्त, 2017-अब तक

सर्वोच्च न्यायालय का क्षेत्राधिकार

सर्वोच्च न्यायालय देश की सर्वोच्च न्यायिक पीठ है। इसलिए इसके क्षेत्राधिकार को मोटे तौर पर निम्नवत् वर्गीकृत किया जा सकता है—

सलाहकारी क्षेत्राधिकार

राष्ट्रपति द्वारा सार्वजनिक महत्त्व के विधि तथा तथ्य के प्रश्न पर सलाह माँगे जाने पर सर्वोच्च न्यायालय अपनी सलाह दे सकता है, परंतु न तो सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दी गई सलाह बाध्यकारी है और न ही सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दी गई सलाह मानना राष्ट्रपति के लिए बाध्यकारी है। सर्वोच्च न्यायालय ने अभी तक सलाह देने से इनकार नहीं किया है।

संविधान लागू होने के समय से लेकर अब तक उच्चतम न्यायालय ने निम्नलिखित मामलों में परामर्श दिया है—

- सन् 1951 में इन री देहली लाज एक्ट
- सन् 1958 में इन री केरल एजुकेशन बिल
- सन् 1956 में इन री बेरूबारी
- सन् 1952 में इन री दी सी कस्टम एक्ट
- सन् 1965 में केशव सिंह के मामले में
- सन् 1951 में री स्पेशल कोर्ट रिफरेंस, दि कावेरी विवाद अधिकरण, अयोध्या राम मंदिर तथा उच्चतम न्यायालय व उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति एवं स्थानांतरण।

उच्चतम न्यायालय के सदस्यों की संविधान पीठ ने सर्वसम्मति से अयोध्या विवाद पर राष्ट्रपति को अपनी सलाह देने से इनकार कर दिया था, इसे प्राय: राजनीतिक मुद्दा माना गया है।

प्रारंभिक क्षेत्राधिकार

संविधान के अनुच्छेद-131 के अनुसार सर्वोच्च न्यायालय के प्रारंभिक क्षेत्राधिकार में ऐसे मामलों को शामिल किया जाता है, जिनकी सुनवाई उच्च न्यायालयों एवं अधीनस्थ न्यायालयों के अधिकार-क्षेत्र में शामिल नहीं है। तदनुरूप सर्वोच्च न्यायालय को निम्नलिखित मामलों में प्रारंभिक क्षेत्राधिकार प्राप्त है—

1. भारत सरकार तथा एक या एक से अधिक राज्यों के बीच उत्पन्न विवादों में।
2. भारत सरकार और कोई राज्य या राज्यों तथा कोई एक या एक से अधिक राज्यों के बीच उत्पन्न विवादों में।
3. दो या दो से अधिक राज्यों के बीच ऐसे विवादों में, जिनमें उनके वैधानिक अधिकारों का प्रश्न निहित हो।

प्रारंभिक क्षेत्राधिकार के अंतर्गत सर्वोच्च न्यायालय उसी विवाद को सुनवाई के लिए मंजूर करेगा, जिसमें कोई तथ्य या विधि संबंधी प्रश्न शामिल हो।

अपीलीय क्षेत्राधिकार

संविधान के अनुच्छेद-132 से 154 तक के अनुसार, उच्चतम न्यायालय में निम्नलिखित मामलों में अपीलें की

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

जा सकती हैं—

1. *संवैधानिक अपीलें*: यदि उच्च न्यायालय इस बात का प्रमाण-पत्र दे दे कि अमुक विवाद (विवाद दंड या सिविल या अन्य प्रकृति का हो सकता है) में संविधान की व्याख्या से संबंधित कानून का कोई महत्त्वपूर्ण प्रश्न निहित है, तो सर्वोच्च न्यायालय में अपील हो सकती है।

2. *दीवानी अपीलें* : यदि उच्च न्यायालय इस बात का प्रमाण-पत्र दे दे कि अमुक दीवानी मामले में विधि के सार्वजनिक महत्त्व का कोई प्रश्न निहित है, जिसकी व्याख्या सर्वोच्च न्यायालय द्वारा होना आवश्यक है, तो ऐसे दीवानी मामलों में अपील सर्वोच्च न्यायालय में हो सकती है।

3. *फौजदारी अपीलें*: फौजदारी मामलों में निम्नलिखित स्थितियों में अपील हो सकती है—

(क) यदि उच्च न्यायालय ने अधीनस्थ न्यायालय के दोषमुक्ति के आदेश को अपील में या मृत्युदंड में बदल दिया हो।

(ख) यदि उच्च न्यायालय ने मामले को अधीनस्थ न्यायालय से मँगाकर स्वयं विचार कर मृत्युदंड दिया हो।

(ग) यदि उच्च न्यायालय प्रमाण-पत्र दे दे कि मामला सर्वोच्च न्यायालय में अपील योग्य है।

अन्य अधिकार

- अपील के लिए विशेष अनुमति देने का अधिकार (अनु. 136) : सशस्त्र बलों के न्यायालयों एवं न्यायाधिकरणों को छोड़कर देश के सभी न्यायालयों, न्यायाधिकरणों द्वारा दिए गए फैसले, दंडादेश एवं आदेश के खिलाफ सर्वोच्च न्यायालय अपील के लिए विशेष अनुमति दे सकता है।
- मूलाधिकारों के मामले में भी सर्वोच्च न्यायालय को प्रारंभिक क्षेत्राधिकार प्राप्त है।
- सर्वोच्च न्यायालय को संविधान की व्याख्या का अधिकार है, वह संविधान का संरक्षक भी है।
- सर्वोच्च न्यायालय एक अभिलेख न्यायालय है। इसका निर्णय देश के सभी न्यायालयों में मान्य है। अपनी मानहानि के विरुद्ध दंड देने का भी अधिकार इसे प्राप्त है।
- अनुच्छेद-137 के अनुसार, इसे अपने फैसले पर पुनर्विलोकन करने का भी अधिकार प्राप्त है।
- इसे न्यायिक पुनर्विलोकन की शक्ति प्राप्त है। इस शक्ति के अधीन सर्वोच्च न्यायालय विधायिका द्वारा पारित किसी विधि की वैधता की जाँच करता है। वह वैसे कानूनों को असंवैधानिक घोषित कर सकता है।

न्यायपालिका की स्वतंत्रता

संविधान में न्यायपालिका की स्वतंत्रता के लिए निम्नांकित उपबंध हैं—

- अनुच्छेद-50 में न्यायपालिका को कार्यपालिका से अलग रखने का निर्देश है।
- न्यायाधीशों के अवकाश-ग्रहण की आयु निश्चित है एवं उन्हें हटाने का तरीका कठिन है।
- न्यायाधीशों के वेतन, भत्ते आदि संचित निधि पर भारित हैं।
- संसद् सर्वोच्च न्यायालय का अधिकार-क्षेत्र बढ़ा सकती है, किंतु कम नहीं कर सकती है।
- अनुच्छेद-121 के अनुसार न्यायाधीशों के आचरण पर संसद् या विधानमंडल में चर्चा नहीं की जा सकती है।
- न्यायालय को अपनी अवमानना के लिए दंड देने की शक्ति प्राप्त है।

निम्नलिखित बातें सर्वोच्च न्यायालय की स्वतंत्रता के विपरीत हैं—

- मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति वरिष्ठता के आधार पर करने का कोई लिखित उपबंध नहीं है।

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

- न्यायाधीश को सेवानिवृत्ति के बाद आयोगों एवं समितियों का सदस्य या अध्यक्ष बनाए जाने से रोकने का उपबंध नहीं है।

उच्चतम न्यायालय से संबंधित अनुच्छेद

अनुच्छेद विषयवस्तु

124 उच्चतम न्यायालय की स्थापना तथा गठन
124 ए राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग
124 ब आयोग के कार्य
124 स संसद् की कानून बनाने की शक्ति
125 न्यायाधीशों का वेतन इत्यादि
126 कार्यकारी मुख्य न्यायाधीश की नियुक्ति
127 तदर्थ न्यायाधीशों की नियुक्ति
128 उच्चतम न्यायालय की बैठकों में सेवानिवृत्त न्यायाधीशों की उपस्थिति
129 अभिलेख न्यायालय के रूप में उच्चतम न्यायालय
130 उच्चतम न्यायालय का आसन
131 उच्चतम न्यायालय का मूल प्रारंभिक क्षेत्राधिकार
132 उच्चतम न्यायालय का कुछ मामलों में उच्च न्यायालयों से अपील के मामले में अपीलीय क्षेत्राधिकार
133 सिविल मामलों में उच्च न्यायालय से अपील से संबंधित उच्चतम न्यायालय का अपीलीय क्षेत्राधिकार
134 उच्चतम न्यायालय का आपराधिक मामलों में अपीलीय क्षेत्राधिकार
134 ए उच्चतम न्यायालय में अपील के लिए प्रमाण-पत्र
135 उच्चतम न्यायालय द्वारा विद्यमान कानूनों के अंतर्गत फेडरल न्यायालय के क्षेत्राधिकार तथा शक्तियों का उपयोग
136 उच्चतम न्यायालय द्वारा अपील के लिए विशेष इजाजत
137 उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्णयों अथवा आदेशों की समीक्षा
138 उच्चतम न्यायालय के क्षेत्राधिकार को विस्तारित करना
139 कतिपय विषयों पर रिट जारी करने की उच्चतम न्यायालय की शक्ति
139 ए कुछ मामलों का स्थानांतरण
140 उच्चतम न्यायालय की आनुषंगिक शक्तियां
141 उच्चतम न्यायालय द्वारा घोषित कानून का सभी न्यायालयों पर लागू करना
142 उच्चतम न्यायालय के डिक्रियों, डिक्री,आदेशों तथा अन्वेषण आदि से संबंधित आदेशों का प्रवर्तन करना
143 राष्ट्रपति की उच्चतम न्यायालय से सलाह करने की शक्ति
144 सिविल तथा न्यायिक अधिकारियों का उच्चतम न्यायालय की सहायता में कार्य किया जाना होना
145 न्यायालय के नियम इत्यादि
146 उच्चतम न्यायालय के अधिकारी तथा सेवक एवं व्यय इत्यादि
147 व्याख्या

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

भारत का नियंत्रक-महालेखा परीक्षक

भारत सरकार की वित्तीय व्यवस्था एवं उसके अनावश्यक व्यय को नियंत्रित रखने के उद्देश्य से संविधान के रचनाकारों ने महान्यायवादी के समान ही नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक पद की व्यवस्था की थी। नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक संघ और राज्य दोनों की वित्तीय प्रणाली का नियंत्रण करता है।

संविधान की प्रारूप समिति के अध्यक्ष डॉ. भीमराव अंबेडकर के अनुसार, ''भारत का नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक भारत के संविधान के अधीन सर्वाधिक महत्त्व का अधिकारी है। उसका कर्तव्य है कि वह देखे कि देश या राज्य की संचित निधि में से समुचित विधान के प्राधिकार के बिना एक पैसा भी खर्च न किया जाए। एक तरह से वह भारत की संपरीक्षा एवं लेखा प्रणालियों का निष्पक्ष प्रधान है। वह अपने कर्तव्य का पालन उचित रूप से कर सके, इसलिए उसका पद कार्यपालिका के नियंत्रण में और उसके अधीन नहीं रखा गया है।''

ऐसा प्रतीत होता है कि भारतीय संविधान में नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक के पद का सृजन भारत अधिनियम, 1935 के अधीन महालेखा परीक्षक के आधार पर किया गया है। नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक को उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के समकक्ष माना जाता है।

संविधान के अनुच्छेद-148 के अंतर्गत नियंत्रक महालेखा परीक्षक की व्यवस्था की गई है, जिसके आधार पर नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक की नियुक्ति राष्ट्रपति अपने हस्ताक्षर एवं सील सहित करते हैं। नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक को उसके पद से उसी तरह हटाया जा सकता है, जिस तरह और जिन आधारों पर उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को हटाया जाता है। इस रूप में वह इस साधारण नियम का अपवाद है कि संघ के सभी सिविल सेवक राष्ट्रपति के प्रसादपर्यंत पद धारण करते हैं।

नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक के वेतन और सेवा की शर्तें विधि द्वारा निर्धारित हैं। कार्यकाल के दौरान उनमें कोई अलाभकारी बदलाव नहीं किया जाएगा। इस शक्ति के अधीन संसद् ने नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक अधिनियम, 1971 अधिनियमित किया है।

सन् 1976 में यह अधिनियम संशोधित किया गया था, जिसके आधार पर नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक का कार्यकाल छह वर्ष निर्धारित किया गया है, किंतु निम्नलिखित स्थितियों में उसका कार्यकाल छह वर्ष से पूर्व भी समाप्त हो सकता है—

- 65 वर्ष की आयु प्राप्त कर लेने पर छह वर्ष की अवधि की समाप्ति से पूर्व पद रिक्त हो जाएगा।
- वह किसी भी समय राष्ट्रपति को संबोधित अपने हस्ताक्षरयुक्त पत्र द्वारा पद त्याग सकेगा।
- उसे महाभियोग द्वारा हटाया जा सकेगा इत्यादि। [(अनुच्छेद-148 (1), 124(4))]

नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक का वेतन उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के बराबर होगा। अन्य विषयों में उसकी सेवा की शर्तें उन्हीं नियमों से अवधारित होंगी, जो भारत सरकार के सचिव की पंक्ति के भारतीय प्रशासनिक सेवा के सदस्य को लागू होती हैं।

नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक सेवानिवृत्ति के पश्चात् भारत सरकार के अधीन कोई अन्य पद धारण करने का पात्र नहीं होगा, ताकि उसे संघ या राज्य की कार्यपालिका को प्रसन्न करने के लिए कोई लालच न हो। नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक और उसके कर्मचारियों के वेतन और प्रशासनिक व्यय भारत की संचित निधि पर भारित होंगे और इन पर मतदान नहीं होगा (अनुच्छेद-148)।

अन्य बातों के विषय में नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक की स्थिति उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश के समान होगी।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक संघ के और राज्यों के लेखाओं के संबंध में ऐसे कर्तव्यों का पालन और ऐसी शक्तियों का प्रयोग करेगा, जो संसद् द्वारा विहित किए जाएँ। इस शक्ति के प्रयोग में संसद् ने नियंत्रक एवं महालेखा परिषद (कर्तव्य, शक्तियाँ और सेवा की शर्तें) अधिनियम, 1971 अधिनियमित किया है।

सन् 1976 में संशोधित इस अधिनियम द्वारा उसे संघ के लेखाओं को संकलित करने के संविधान के पूर्व के कर्तव्य से मुक्ति मिल गई है। राज्य भी इसी प्रकार के पूर्व अनुमोदन से विधान बना सकते हैं और राज्य स्तर पर लेखाओं को संपरीक्षा से अलग कर सकते हैं तथा नियंत्रक महालेखा परीक्षक को लेखा तैयार करने के विषय में राज्य और संघ दोनों के स्तर पर मुक्ति दे सकते हैं।

नियंत्रक-महालेखा परीक्षक के कर्तव्य

नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक के कर्तव्यों के विषय में इस अधिनियम के तात्त्विक उपबंध इस प्रकार हैं—

- भारत और प्रत्येक राज्य तथा प्रत्येक संघ राज्यक्षेत्र की संचित निधि से सभी व्यय की संपरीक्षा और उन पर यह प्रतिवेदन कि क्या ऐसा कोई व्यय विधि के अनुसार है।
- इसी प्रकार संघ और राज्यों की आकस्मिकता निधि और लोक लेखाओं से सभी व्यय की संपरीक्षा और उन पर प्रतिवेदन।
- संघ या राज्य के विभाग द्वारा किए गए सभी व्यापार और विनिर्माण के हानि और लाभ-हानि लेखाओं की संपरीक्षा और उन पर प्रतिवेदन।
- संघ और प्रत्येक राज्य की आय और व्यय की संपरीक्षा जिससे उसका यह समाधान हो जाए कि राजस्व के निर्धारण, संग्रहण और उचित आवंटन के लिए पर्याप्त जाँच करने के लिए इस निमित्त नियम और प्रक्रियाएँ बनाई गई हैं।
- 1. संघ और राज्य के राजस्वों से पर्याप्त रूप से वित्त-पोषित सभी निकायों और प्राधिकारियों की, 2. सरकारी कंपनियों की, 3. अन्य निगमों या निकायों की जब ऐसे निगमों या निकायों से संबंधित विधि द्वारा इस प्रकार अपेक्षित हो, प्राप्ति और व्यय की संपरीक्षा और उस पर प्रतिवेदन।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

15. राज्य की कार्यपालिका

(भाग-6, अध्याय-1 व 2, अनुच्छेद-152 से 167 तक)

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-153 के अंतर्गत प्रत्येक राज्य में एक राज्यपाल की व्यवस्था उसी प्रकार की गई है, जिस प्रकार संघ की कार्यकारिणी में राष्ट्रपति की अर्थात् राज्यपाल राज्य की कार्यकारिणी का प्रधान एवं वैधानिक अध्यक्ष होता है। राज्य के समस्त कार्य उन्हीं के नाम पर किए जाते हैं। राज्य की कार्यकारिणी की समस्त शक्ति राज्यपाल के पद में निहित है। आरंभिक दौर में राज्यपाल का पद गाड़ी का पाँचवाँ पहिया बनकर रह गया था। पद्‌मजा नायडू की दृष्टि में राज्यपाल 'सोने के पिंजड़े में रहने वाली चिड़िया' के समान था। लोकसभा के चौथे आम चुनाव के बाद यह मत जोर पकड़ने लगा था कि राज्यपाल का प्रतिष्ठित पद परम श्रेष्ठ सामाजिक संस्था और वैधानिक आवश्यकता है।

राज्यपाल

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-153 में कहा गया है कि प्रत्येक राज्य के लिए एक राज्यपाल होगा, किंतु सन् 1956 में किए गए एक संशोधन के द्वारा संविधान में यह प्रावधान किया गया कि एक ही व्यक्ति को दो या अधिक राज्यों का राज्यपाल नियुक्त किया जा सकता है।

अनुच्छेद-154 के अनुसार, राज्य की कार्यपालिका शक्ति राज्यपाल में निहित होगी, जिसका प्रयोग वह संविधान के अनुसार स्वयं व अपने अधीनस्थ अधिकारियों द्वारा करेंगे।

नियुक्ति तथा कार्यकाल

अनुच्छेद-155 के अनुसार, राज्य के राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति अपने हस्ताक्षर एवं मुद्रा सहित अधिपत्र द्वारा करेंगे। सामान्यत: राज्यपाल का कार्यकाल 5 वर्ष का होता है, लेकिन अनुच्छेद-156 के अनुसार, चूँकि वह राष्ट्रपति के प्रसादपर्यंत पद धारण करते हैं, इसलिए राष्ट्रपति उन्हें कभी भी हटा सकते हैं या उनका स्थानांतरण दूसरे राज्य के राज्यपाल के रूप में कर सकते हैं।

राष्ट्रपति राज्यपाल को किस आधार पर हटा सकते हैं, इसका संविधान में उल्लेख नहीं है। फिर भी इतना स्पष्ट है कि इस शक्ति का प्रयोग कम-से-कम और गंभीर अपराधों में ही किया जाएगा, जैसे—घूसखोरी, भ्रष्ट आचरण, राजद्रोह या संविधान का उल्लंघन।

इस सिद्‌धांत का अपवाद सन् 1989 में सामने आया। तत्कालीन राष्ट्रीय मोर्चा सरकार में प्रधानमंत्री विश्वनाथ प्रताप सिंह की सलाह पर राष्ट्रपति ने राज्यपालों से त्यागपत्र देने के लिए कहा था। यह बात अलग है कि बाद में कुछ राज्यपालों से त्यागपत्र न देने के लिए कह दिया गया। राज्यपाल राष्ट्रपति को संबोधित अपने त्यागपत्र द्वारा भी अपना पदत्याग कर सकते हैं। कोई भी व्यक्ति एक से अधिक बार राज्यपाल हो सकता है। सन् 1958 में श्री वी. वी. गिरि को उत्तर प्रदेश का राज्यपाल नियुक्त किया गया था। वे अपना कार्यकाल पूरा नहीं कर पाए थे कि सन् 1960 में उन्हें केरल का राज्यपाल नियुक्त कर दिया गया था। जून, 1962 में उन्हें दूसरी अवधि के लिए केरल का राज्यपाल नियुक्त किया गया। इसी प्रकार श्रीमती पद्‌मजा नायडू को दूसरी अवधि के लिए प. बंगाल का राज्यपाल नियुक्त किया गया था।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

योग्यताएँ

राज्यपाल पद के लिए अनुच्छेद-157 के अंतर्गत निर्देश है कि—

1. वे भारत के नागरिक हों।
2. 35 वर्ष की आयु पूरी कर चुके हों।
3. लाभ का कोई पद नहीं धारण किया हो।

संसद् के किसी सदन का या किसी राज्य के विधानमंडल का कोई सदस्य यदि राज्यपाल नियुक्त होता है तो नियुक्ति की तिथि से ही सदन में उसका स्थान रिक्त माना जाएगा।

वेतन एवं भत्ते

राज्यपाल के वेतन एवं भत्ते संचित निधि पर भारित होने के कारण मत-निरपेक्ष हैं। यदि एक ही व्यक्ति दो या अधिक राज्यों के राज्यपाल नियुक्त किए जाते हैं तो राज्यपाल के वेतन एवं भत्ते तथा अन्य सुविधाएं को उन राज्यों के बीच ऐसे अनुपात में बाँट दिया जाता है, जो राष्ट्रपति आदेश द्वारा निर्धारित करें।

शपथ

राज्यपाल अपना पद ग्रहण करने से पूर्व राज्य के उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के समक्ष पद एवं गोपनीयता की शपथ लेते हैं। इस शपथ का संवैधानिक स्वरूप इस प्रकार है— ''मैं...ईश्वर की शपथ लेता हूँ/या सत्य निष्ठा से प्रतिज्ञा करता हूँ कि मैं श्रद्धापूर्वक (राज्य का नाम) के राज्यपाल के पद का कार्यपालन करूँगा तथा अपनी पूरी योग्यता से संविधान और विधि का संरक्षण, रक्षण और प्रतिरक्षण करूँगा और मैं (राज्य का नाम) की जनता की सेवा और कल्याण में निरत रहूँगा।''

राज्यपाल के अधिकार

राज्यपाल के निम्नलिखित अधिकार होते हैं—

कार्यपालिका संबंधी अधिकार

इसके अंतर्गत राज्यपाल को कुछ अधिकारी नियुक्त तथा उन्हें पदमुक्त करने का अधिकार प्राप्त है। राज्यपाल राज्य के मुख्यमंत्री की नियुक्ति करते हैं। राज्यपाल महाधिवक्ता, राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष तथा सदस्यों की नियुक्ति भी करते हैं। प्रदेश के उच्च न्यायालय के न्यायाधीश की नियुक्ति में राष्ट्रपति वहाँ के राज्यपाल से सलाह ले सकते हैं।

राज्यपाल राज्य विधानसभा में ऐंग्लो-इंडियन समुदाय से अधिकतम एक व्यक्ति की नियुक्ति भी कर सकते हैं। जिन राज्यों में विधान परिषद् है, वहाँ राज्यपाल साहित्य, कला, विज्ञान, सहकारिता आंदोलन एवं समाजसेवा में विशिष्ट ज्ञान अथवा अनुभव रखनेवाले अधिकतम 1/6 सदस्यों को मनोनीत कर सकते हैं। राज्य के सभी मंत्री व्यक्तिगत रूप से राज्यपाल के प्रति जवाबदेह होते हैं, इसलिए राज्यपाल किसी मंत्री को हटा सकते हैं।

विधायी अधिकार

राज्यपाल राज्य की व्यवस्थापिका के अंग होते हैं। वे व्यवस्थापिका का अधिवेशन बुलाते हैं, स्थगित करते हैं और निम्न सदन (विधानसभा) का विघटन भी कर सकते हैं। वह राज्य विधानमंडल की पहली बैठक में तथा

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

प्रत्येक सत्र के प्रारंभ में विधानमंडल के संयुक्त अधिवेशन में अभिभाषण करते हैं।

राज्य विधानमंडल द्वारा पारित किसी विधेयक पर राज्यपाल की स्वीकृति लेना अनिवार्य है। वे विधेयक को अस्वीकृत कर सकते हैं या पुनर्विचार के लिए वापस भेज सकते हैं, लेकिन यदि विधानमंडल विधेयक दूसरी बार पारित कर दे तो राज्यपाल को स्वीकृति देनी होगी। राज्यपाल जरूरत पड़ने पर अध्यादेश भी जारी कर सकते हैं।

वित्तीय अधिकार

राज्यपाल की पूर्व स्वीकृति के बिना राज्य विधानसभा में कोई भी धन विधेयक प्रस्तुत नहीं किया जा सकता है। वह विधान-मंडल के समक्ष प्रतिवर्ष बजट पेश करवाता है। राज्य की संचित निधि राज्यपाल के ही अधिकार में रहती है। वह इस निधि से किसी भी उचित व्यय की अनुमति दे सकता है।

आपात् अधिकार

राष्ट्रपति के समान राज्यपाल के पास कोई आपात् अधिकार नहीं होता, किंतु यदि राज्यपाल को लगता है कि राज्य का शासन संविधान के उपबंधों के अनुसार नहीं चलाया जा रहा है तो वह अनुच्छेद-356 के तहत राष्ट्रपति को इसकी रपट भेज सकते हैं।

न्यायिक अधिकार

अनुच्छेद 161 के अंतर्गत राज्यपाल किसी दंड को क्षमा, उसका प्रविलंबन, विराम या परिहार कर सकेंगे या किसी दंडादेश का निलंबन, परिहार या लघुकरण कर सकेंगे।

स्वविवेक का अधिकार

संविधान के अनुच्छेद-163 में राज्यपाल के स्वविवेक के अधिकार का निरूपण है। ऐसी स्थितियाँ आ सकती हैं, जब राज्यपाल को अपने विवेक से निर्णय लेना पड़े। निम्नलिखित परिस्थितियों में राज्यपाल अपने विवेक का इस्तेमाल कर सकते हैं—

अ. मंत्रिपरिषद् की नियुक्ति से पूर्व समर्थन का आकलन।

ब. अनुच्छेद-356 के तहत राज्य में आपात् उद्घोषणा के लिए राष्ट्रपति को अपना प्रतिवेदन दे सकते हैं।

स. राज्यपाल उस मंत्रिपरिषद् को भंग कर सकते हैं, जिसे वे अल्पमत में हुआ समझते हों।

राज्यपाल द्वारा संविधान के अधीन अपने विवेकानुसार किए जाने के लिए अपेक्षित कृत्यों के उदाहरण हैं—असम के राज्यपाल की छठी अनुसूची के पैरा 9 के अधीन शक्तियाँ, अनुच्छेद-239(2) के अधीन किसी संघ राज्य-क्षेत्र का प्रशासक नियुक्त किए गए राज्यपाल के कृत्य, अनुच्छेद-371 (2), 371क(1)(ख), 371 ग(1), 371 च(छ)।

अनुच्छेद-163 यह स्पष्ट कर देता है कि उन मामलों को छोड़कर, जहाँ राज्यपाल से यह अपेक्षा है कि वह स्वविवेकानुसार कार्य करेगा, वह मंत्रिमंडल की सलाह पर ही कार्य करेगा।

अनुच्छेद-356(1) के अधीन राज्यपाल का प्रतिवेदन मंत्रिपरिषद् की सलाह पर नहीं दिया जा सकता, विशेषकर तब, जब प्रतिवेदन के कारण मंत्रिमंडल का पतन होनेवाला हो।

राज्यपाल को कोई राजनयिक और सैन्य अधिकार प्राप्त नहीं हैं।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

सरकारिया आयोग की सिफारिशें

सरकारिया आयोग के अनुसार राज्यपाल के रूप में चुने जानेवाले प्रत्येक व्यक्ति को निम्नलिखित मानदंडों पर खरा उतरना चाहिए—

- वह कुछ पेशों में दक्ष हो।
- वह राज्य के बाहर का व्यक्ति हो।
- वह असंपृक्त व्यक्ति हो तथा राज्य की स्थानीय राजनीति के साथ अधिक आत्मीयता से न जुड़ा हो।
- वह ऐसा व्यक्ति हो, जो सामान्य रूप से तथा विशेष रूप से हाल ही में राजनीति की मुख्य धारा से न जुड़ा रहा हो।
- उपर्युक्त मानदंड के अनुसार किसी राज्यपाल का चयन करते समय अल्पसंख्यक वर्ग के व्यक्तियों को उसी प्रकार अवसर दिए जाते रहें, जिस प्रकार अब तक दिए जाते रहे हैं।
- राज्यपाल के रूप में किसी व्यक्ति का चयन करने के लिए राज्य के मुख्यमंत्री से प्रभावी सलाह-मशवरा सुनिश्चित करने की प्रक्रिया अनुच्छेद-153 में समुचित संशोधन करके संविधान में ही निर्धारित की जानी चाहिए।
- यह वांछनीय होगा कि ऐसे किसी व्यक्ति को ऐसे किसी राज्य के राज्यपाल के रूप में नियुक्त न किया जाए, जो केंद्र में सत्तारूढ़ पार्टी का राजनीतिज्ञ हो, जिस राज्य का शासन किसी अन्य पार्टी द्वारा चलाया जा रहा हो अथवा अन्य पार्टियों के मेलजोल से चलाया जा रहा हो।

सरकारिया आयोग (केंद्र-राज्य संबंध आयोग) ने अपने प्रतिवेदन में स्पष्ट लिखा है, ''हमारी स्वतंत्रता-प्राप्ति से अक्तूबर, 1984 तक की अवधि में राज्यपालों की हुई नियुक्तियों के सर्वेक्षण से स्पष्ट होता है कि राज्यपालों की कुल संख्या के 60 प्रतिशत से अधिक ने राजनीति में सक्रिय भाग लिया था, उनमें से अधिकांश ने तो अपनी नियुक्ति से कुछ वर्ष पूर्व तक ऐसा किया। राज्यपाल के रूप में नियुक्त ऐसे व्यक्ति, जो अन्य पेशों में दक्ष थे, उनकी संख्या 50 प्रतिशत से भी कम थी। प्रशासनिक सुधार आयोग की भारत सरकार द्वारा सिफारिशें स्वीकार करने के अनंतर सन् 1980 के बाद के आँकड़ों की तुलना नेहरू काल के आँकड़ों से करने पर इस प्रतिशतता में और भी कमी नजर आती है।''

अंतर्राज्यीय परिषद् की सातवीं बैठक (16 नवंबर, 2001) में सरकारिया आयोग की महत्त्वपूर्ण सिफारिश को नजरअंदाज करते हुए तय किया गया कि कोई भी राज्यपाल दूसरे कार्यकाल के लिए तो पात्र होगा, लेकिन उनसे यह अपेक्षा की जाती है कि वे सक्रिय राजनीति में नहीं लौटें। वे राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति का चुनाव लड़ सकते हैं। बैठक में सर्वसम्मति से यह फैसला भी किया गया कि किसी राज्य में राज्यपाल की नियुक्ति से पहले उस राज्य की सहमति लेना केंद्र के लिए अनिवार्य होगा।

सन् 1981 में तमिलनाडु के राज्यपाल प्रभुदास पटवारी, राजस्थान के राज्यपाल रघुकुल तिलक, 1991 में बिहार के राज्यपाल यूनुस सलीम और अप्रैल, 1992 में नगालैंड के राज्यपाल एम.एम. थॉमस को राष्ट्रपति द्वारा बर्खास्त किया गया, जो अप्रत्याशित और अभूतपूर्व है। तिलक अपने पाँच वर्ष के कार्यकाल की समाप्ति पर थे। प्रसादपर्यंत यानी राष्ट्रपति की इच्छा के प्रावधान द्वारा राज्यपालों की बर्खास्तगी का विवादकारी सिलसिला चला है। राष्ट्रपति के प्रसाद या इच्छा के प्रयोग की यह परिपाटी अनुचित और अवांछनीय है। केंद्र में सरकार बदलने अथवा विरोधी दल के सत्तारूढ़ होने पर राज्यपालों के पदत्याग की प्रथा नहीं है। राज्यपालों की बर्खास्तगी की प्रथा की विपरीत परिणति यह होगी कि देश के योग्य और आत्मसम्मान के धनी इस पद के साथ जुड़ी बर्खास्तगी की आशंका के कारण इसे स्वीकार करने में झिझकेंगे।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

राज्यपाल से संबंधित अनुच्छेद : एक नजर में

अनुच्छेद विषयवस्तु

153 राज्यों के राज्यपाल

154 राज्य की कार्यपालक शक्ति

155 राज्यपाल की नियुक्ति

156 राज्यपाल का कार्यकाल

157 राज्यपाल के नियुक्त होने के लिए अर्हताएँ

158 राज्यपाल कार्यालय के लिए शर्तें

159 राज्यपाल द्वारा शपथ

160 कतिपय आकस्मिक परिस्थितियों में राज्यपाल के कार्य

161 राज्यपाल को क्षमादान आदि की शक्ति

162 राज्य की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार

163 मंत्रिपरिषद् का राज्यपाल को सहायता तथा सलाह देना

164 मंत्रियों से संबंधित अन्य प्रावधान, जैसे—नियुक्ति, कार्यकाल तथा वेतन इत्यादि

165 राज्य का महाधिवक्ता

166 राज्य की सरकार के कार्य का संचालन

167 राज्यपाल को सूचना देने इत्यादि का मुख्यमंत्री का कर्तव्य

174 राज्य विधायिका का सत्र, सत्रावसान तथा उसका भंग होना

175 राज्यपाल का राज्य विधायिका के किसी अथवा दोनों सदनों को संबोधित करने अथवा संदेश देने का अधिकार

176 राज्यपाल द्वारा विशेष अभिभाषण

200 विधेयकों पर सहमति (राज्यपाल द्वारा राज्य विधायिका द्वारा पारित विधेयकों पर स्वीकृति प्रदान करना)

201 राज्यपाल द्वारा विधेयक को राष्ट्रपति के विचारार्थ सुरक्षित रख लेना

213 राज्यपाल की अध्यादेश जारी करने की शक्ति

217 राज्यपाल की उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की नियुक्ति के मामले में राष्ट्रपति को सलाह देना

233 राज्यपाल द्वारा जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति

234 राज्यपाल द्वारा न्यायिक सेवा के लिए नियुक्ति (जिला न्यायाधीशों को छोड़कर)

राज्यों की मंत्रिपरिषद्

संविधान के अनुच्छेद-163 के अनुसार, राज्यपाल की सहायता और सलाह देने के लिए एक मंत्रिपरिषद् की व्यवस्था की गई है, जिसका प्रधान मुख्यमंत्री होता है।

मंत्रिपरिषद् का गठन

संविधान के अनुसार मुख्यमंत्री की नियुक्ति राज्यपाल करते हैं, परंतु व्यवहार में उनके लिए यह बाध्यता है कि वह बहुमत वाले दल के नेता को ही मुख्यमंत्री नियुक्त करें। हाँ, यदि राज्य विधानमंडल में किसी भी दल को स्पष्ट बहुमत नहीं मिले तो राज्यपाल अपने विवेक का इस्तेमाल कर सकते हैं। राज्यपाल अन्य मंत्रियों की नियुक्ति

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

मुख्यमंत्री की सलाह से ही करते हैं।

मंत्रियों की योग्यताएँ

मुख्यमंत्री सहित प्रत्येक मंत्री के लिए यह अनिवार्य है कि वे विधानमंडल के किसी-न-किसी सदन के सदस्य हों। वैसे, यदि मुख्यमंत्री चाहें तो किसी भी योग्य व्यक्ति को मंत्री बनाने के लिए राज्यपाल से सिफारिश कर सकते हैं, किंतु ऐसे व्यक्ति के लिए 6 महीने के अंदर विधानमंडल के किसी सदन का सदस्य बनना अनिवार्य है, अन्यथा 6 महीने बाद उन्हें (मंत्री को) त्यागपत्र देना होगा।

दिनांक 21 सितंबर, 2001 के अपने निर्णय में उच्चतम न्यायालय ने अन्नाद्रमुक प्रमुख सुश्री जयललिता की तमिलनाडु के मुख्यमंत्री पद पर नियुक्ति को असंवैधानिक घोषित करते हुए खारिज कर दिया। न्यायालय के अनुसार, संविधान के अनुच्छेद-164 के अंतर्गत बिना विधायक रहे किसी व्यक्ति को मंत्री या मुख्यमंत्री तो बनाया जा सकता है, लेकिन यह तभी संभव है, जब वह अनुच्छेद-173 की सभी शर्तें पूरी करता हो और उसे संविधान के प्रावधानों के अंतर्गत अयोग्य घोषित न किया गया हो। न्यायालय के अनुसार किसी आपराधिक मामले में सजा प्राप्त व्यक्ति को मंत्री या मुख्यमंत्री पद पर नियुक्त करना संवैधानिक प्रावधानों के प्रतिकूल है।

राज्य मंत्रिपरिषद से संबंधित अनुच्छेद : एक नजर में

अनुच्छेद विषयवस्तु

163 मंत्रिपरिषद् द्वारा राज्यपाल को सहायता एवं सलाह देना
164 मंत्रियों से संबंधित अन्य प्रावधान
166 राज्य सरकार द्वारा कार्य संचालन
167 मुख्यमंत्री का राज्यपाल को जानकारी देने आदि का कर्तव्य

शपथ

मंत्रिपरिषद् के प्रत्येक मंत्री को पद एवं गोपनीयता की शपथ राज्यपाल दिलवाते हैं।

मंत्रियों के वेतन एवं भत्ते

मंत्रियों के वेतन एवं भत्तों का निर्धारण राज्य का विधानमंडल करता है। एक बार वेतन निश्चित हो जाने पर मंत्रित्वकाल में उसे कम नहीं किया जा सकता। विभिन्न राज्यों के विधानमंडलों ने अपने-अपने मंत्रियों का वेतन अलग-अलग निश्चित किया है। केंद्रीय मंत्रिमंडल की तरह राज्य की मंत्रिपरिषद् में भी चार प्रकार के मंत्री रहते हैं—कैबिनेट मंत्री, राज्य मंत्री और उपमंत्री, स्वतंत्र प्रभार वाले मंत्री।

कार्यकाल

मंत्रिपरिषद् तब तक अपना अस्तित्व बनाए रख सकती है, जब तक उसे विधानसभा में बहुमत प्राप्त हो। वैसे मंत्रिपरिषद् का सामान्य कार्यकाल पाँच वर्ष का होता है।

मंत्रिपरिषद् के कार्य

संविधान के अंतर्गत मंत्रिपरिषद् का कार्य होता है—राज्यपाल को उनके कार्यों में परामर्श तथा सहायता देना।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

कहने के लिए तो राज्य की कार्यकारिणी के प्रमुख राज्यपाल होते हैं, किंतु व्यावहारिक रूप में यह कार्य मंत्रिपरिषद् निम्न प्रकार से करती है—

अ. राज्य शासन की नीति का निर्धारण मंत्रिपरिषद् ही करती है।
ब. मंत्रियों के द्वारा ही विधानमंडल में विधेयक पेश किए जाते हैं।
स. मंत्रिपरिषद् ही राज्य का वार्षिक बजट तैयार करती है।
द. महत्त्वपूर्ण प्रशासकीय नियुक्तियाँ राज्यपाल मंत्रिपरिषद् की सलाह से ही करते हैं।

मुख्यमंत्री की स्थिति

मुख्यमंत्री राज्य मंत्रिपरिषद् के प्रधान होते हैं। वे उसकी बैठकों की अध्यक्षता करते हैं। वे मंत्रियों के बीच विभागों का वितरण करते हैं। मुख्यमंत्री कभी भी किसी मंत्री से त्यागपत्र माँग सकते हैं। मुख्यमंत्री राज्यपाल को शासन के समस्त निर्णयों से अवगत कराते हैं। मुख्यमंत्री के परामर्श पर ही राज्यपाल विधानसभा भंग कर सकते हैं। राज्य प्रशासन में मुख्यमंत्री की लगभग वही स्थिति है, जो केंद्र में प्रधानमंत्री की है।

राज्य का विधानमंडल

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-168 में यह उपबंध किया गया है कि प्रत्येक राज्य में एक विधानमंडल होगा, जो राज्यपाल तथा कुछ राज्यों में दो सदन तथा कुछ में एक सदन से मिलकर बनेगा। दोनों सदनों के नाम क्रमश: विधानसभा और विधान परिषद् होंगे।

संविधान के अनुसार, अधिक जनसंख्या वाले राज्य में दो सदनों की व्यवस्था की गई थी और कम जनसंख्या वाले राज्यों में एक सदन की। इसी आधार पर आंध्र प्रदेश, बिहार, मध्य प्रदेश, तमिलनाडु, महाराष्ट्र, कर्नाटक, पंजाब, उत्तर प्रदेश तथा पश्चिमी बंगाल में दो सदनवाले विधानमंडल की व्यवस्था की गई थी और शेष राज्यों में एक सदनीय विधानमंडल की।

बाद में कुछ राज्यों ने यह अनुभव किया कि उनके लिए विधान परिषद् की कोई विशेष उपयोगिता नहीं है। उन्होंने संसद् से अपने राज्य में विधान परिषद् हटाने के लिए अनुरोध किया, जिस पर गंभीरता से विचार करते हुए विधि बनाकर उन राज्यों में विधान परिषद् की व्यवस्था समाप्त कर दी। ये राज्य हैं—आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, पंजाब और पश्चिमी बंगाल। मध्य प्रदेश में कोई विधान परिषद् गठित नहीं की जा सकी, क्योंकि तत्संबंधी संशोधन विधेयक लागू नहीं किया जा सका था।

वर्तमान काल में दो सदन वाले केवल 5 राज्य हैं—बिहार, महाराष्ट्र, कर्नाटक, जम्मू-कश्मीर एवं उत्तर प्रदेश।

विधान परिषद्

विधान परिषद् की सदस्य संख्या विधानसभा की सदस्य संख्या पर निर्भर करती है, क्योंकि संविधान के अनुसार विधान परिषद् की सदस्य संख्या उस राज्य की विधानसभा के कुल सदस्यों के एक तिहाई से अधिक नहीं होगी, किंतु कम-से-कम 40 होगी।

भारतीय संविधान में यह कहा गया है कि विधान परिषद् अंशत: नाम निर्दिष्ट और अंशत: निर्वाचित संस्था होगी। निर्वाचन अप्रत्यक्ष होगा और आनुपातिक प्रतिनिधित्व पद्धति के अनुसार एकल संक्रमणीय मत द्वारा होगा। सामान्यत: परिषद् की कुल सदस्य-संख्या के 5/6 सदस्य अप्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होंगे और 1/6 सदस्य राज्यपाल द्वारा निर्दिष्ट होंगे। निर्वाचित सदस्य निम्नलिखित स्रोतों से लिए जाते हैं—

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

अ. परिषद् की कुल सदस्य-संख्या का 1/3 भाग स्थानीय निकायों के सदस्यों से मिलकर बननेवाले निर्वाचक मंडलों द्वारा (जैसे—नगरपालिका, जल बोर्ड आदि) निर्वाचित होगा।

ब. 1/3 भाग राज्य की विधानसभा के सदस्यों द्वारा ऐसे व्यक्तियों से निर्वाचित होगा, जो विधानसभा के सदस्य नहीं हैं।

स. 1/14 भाग राज्य में कम-से-कम तीन वर्ष के स्नातकों से मिलकर बनने वाले निर्वाचक मंडल द्वारा निर्वाचित होंगे।

द. 1/12 भाग राज्य के भीतर माध्यमिक पाठशाला से उच्च स्तर की शिक्षण संस्था में कम-से-कम तीन वर्ष से अध्यापन कार्य में रत व्यक्तियों से मिलकर बनने वाले निर्वाचक मंडल द्वारा निर्वाचित होंगे।

य. 1/6 सदस्य राज्यपाल द्वारा ऐसे व्यक्तियों में से मनोनीत किए जाएँगे, जिनके साहित्य, कला, विज्ञान, सहकारी आंदोलन या सामाजिक सेवा के क्षेत्र में विशेष ज्ञान एवं व्यावहारिक अनुभव रहे हों।

सदस्यता के लिए योग्यताएँ

अ. वे भारत के नागरिक हों।

ब. उनकी आयु 30 वर्ष से कम न हो।

स. उनमें वे समस्त योग्यताएँ हों, जो समय-समय पर संसद् विधि द्वारा निर्धारित करतीहै।

लोक प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 में यह उपबंध है कि व्यक्ति को विधानसभा या विधान परिषद् में निर्वाचित होने के लिए उसका उस राज्य के किसी विधानसभा निर्वाचन क्षेत्र का मतदाता होना जरूरी है।

सदस्यता के लिए अयोग्यताएँ

कोई व्यक्ति राज्य की विधानसभा या विधान परिषद् में सदस्य चुने जाने के लिए निम्नलिखित कारणों से अयोग्य होगा—

1. यदि वह भारत सरकार या राज्य सरकार के अधीन कोई लाभ का पद धारण करता है।
2. यदि वह सक्षम न्यायालय द्वारा घोषित विकृत चित्त या पागल हो।
3. यदि वह दिवालिया हो।
4. यदि उसने किसी विदेशी राज्य की नागरिकता अर्जित कर ली है।
5. यदि वह संसद् द्वारा बनाई गई किसी विधि द्वारा या उसके अधीन अयोग्य घोषित कर दिया जाता है।

कार्यकाल

विधान परिषद् एक स्थायी सदन है, जिसे भंग नहीं किया जा सकता। इसके प्रत्येक सदस्य के कार्यकाल की अवधि 6 वर्ष होती है और एक तिहाई सदस्य प्रत्येक द्वितीय वर्ष की समाप्ति पर अवकाश ग्रहण कर लेते हैं।

राज्यों की विधानसभाओं में सदस्य संख्या

राज्य :आंध्र प्रदेश

सदस्य संख्या :175

राज्य :असम

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

सदस्य संख्या :126

राज्य :छत्तीसगढ़

सदस्य संख्या :90

राज्य :गुजरात

सदस्य संख्या :182

राज्य :राजस्थान

सदस्य संख्या :200

राज्य :उत्तर प्रदेश

सदस्य संख्या :403

राज्य :उत्तराखंड

सदस्य संख्या :70

राज्य :महाराष्ट्र

सदस्य संख्या :288

राज्य :कर्नाटक

सदस्य संख्या :224

राज्य :मेघालय

सदस्य संख्या :60

राज्य :नागालैंड

सदस्य संख्या :40

राज्य :मध्य प्रदेश

सदस्य संख्या :230

राज्य :पंजाब

सदस्य संख्या :117

राज्य :झारखंड

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

सदस्य संख्या :81

राज्य :दिल्ली

सदस्य संख्या :70

राज्य :अरुणाचल प्रदेश

सदस्य संख्या :60

राज्य :बिहार

सदस्य संख्या :243

राज्य :गोआ

सदस्य संख्या :40

राज्य :हरियाणा

सदस्य संख्या :90

राज्य :तमिलनाडु

सदस्य संख्या :234

राज्य :हिमाचल प्रदेश

सदस्य संख्या :68

राज्य :पश्चिम बंगाल

सदस्य संख्या :294

राज्य :जम्मू एवं कश्मीर

सदस्य संख्या :70

राज्य :मणिपुर

सदस्य संख्या :60

राज्य :मिजोरम

सदस्य संख्या :40

राज्य :केरल

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

सदस्य संख्या :140

राज्य :उड़ीसा

सदस्य संख्या :147

राज्य :सिक्किम

सदस्य संख्या :32

राज्य :त्रिपुरा

सदस्य संख्या :60

राज्य :पांडिचेरी

सदस्य संख्या :30

राज्य :तेलंगाना

सदस्य संख्या :120

गणपूर्ति

विधानसभा और परिषद् की बैठकों में कुल सदस्य संख्या का 1/10 भाग उपस्थित होना अनिवार्य है। यदि कोई सदस्य बिना सदन की अनुमति के लगातार 60 दिनों तक उसकी बैठकों से अनुपस्थित रहे तो सदन उसके स्थान को रिक्त घोषित कर सकता है।

विधान परिषद् अपने सदस्यों में से ही एक सभापति तथा एक उपसभापति का चुनाव करती है, जो उसकी कार्यवाहियों का संचालन करते हैं।

सभापति व उपसभापति को परिषद् द्वारा कुल सदस्यों के बहुमत से पारित एक प्रस्ताव के द्वारा पद से हटाया जा सकता है। ऐसे प्रस्ताव को प्रस्तावित करने की सूचना 14 दिन पूर्व देनी आवश्यक है।

विधान परिषद् के अधिकार

राज्य विधान परिषद् अपेक्षाकृत एक कमजोर सदन है। यहाँ तक कि राज्य विधानसभा विशेष बहुमत से पारित प्रस्ताव के द्वारा इसे समाप्त करने की सिफारिश भी संसद् से कर सकती है।

- धन विधेयक के बारे में विधान परिषद् को केवल यह अधिकार प्राप्त है कि यह विधानसभा को संशोधनों की सिफारिश करे या विधेयक प्राप्त होने की तारीख से 14 दिनों तक उसे रोके रखे। विधानसभा परिषद् की सिफारिशों को मानने के लिए बाध्य नहीं है। 14 दिनों के पश्चात् विधेयक पारित मान लिया जाता है।
- अन्य विधेयकों के बारे में परिषद् को एकमात्र अधिकार यह दिया गया है कि तीन मास की अवधि तक विधेयक को पारित होने से निलंबित कर दे। यदि परिषद् किसी विधेयक से असहमत है तो वह विधेयक विधानसभा को दुबारा भेजा जाएगा, किंतु अंत में विधानसभा का मत ही प्रभावी होगा। दूसरी बार में एक मास से अधिक समय के लिए रोके रखने का विधान परिषद् को अधिकार नहीं होगा।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

इस प्रकार स्पष्ट है कि विधानपरिषद् सिर्फ एक निलंबनकारी सदन है।

विधान परिषद् के पदाधिकारी

विधान परिषद् के मुख्य पदाधिकारी हैं—सभापति और उपसभापति। इन दोनों पदाधिकारियों का चयन विधान परिषद् के सदस्यों में से किया जाता है। विधान परिषद् के सभापति के प्रायः वही कार्य हैं, जो राज्यसभा के सभापति के होते हैं। किसी भी विषय में समान मत की स्थिति आने पर उसे निर्णायक मत देने का अधिकार होता है। सभापति की अनुपस्थिति में उपसभापति उनका कार्यभार सँभालते हैं।

इन दोनों पदाधिकारियों को परिषद् द्वारा कुल सदस्यों के बहुमत से एक प्रस्ताव पारित करके हटाया जा सकता है, लेकिन इसके कम-से-कम 14 दिन पूर्व सदन में इस आशय का प्रस्ताव प्रस्तुत किया जाना अनिवार्य है। ऐसे प्रस्ताव की चर्चा के दौरान सभापति बैठक की अध्यक्षता नहीं करते।

विधानसभा

भारतीय संविधान के अंतर्गत प्रत्येक राज्य की अपनी-अपनी विधानसभाएँ हैं। किस राज्य की विधानसभा में कितने सदस्य हो सकते हैं—यह संविधान द्वारा निर्धारित नहीं है। संविधान के अनुच्छेद-170 में केवल यह निर्दिष्ट है कि विधानसभा में कम-से-कम 60 और अधिक से अधिक 500 सदस्य हो सकते हैं।

कुछ छोटे राज्यों के गठन के बाद उन राज्यों के लिए यह न्यूनतम संख्या घटा दी गई है, जिसके आधार पर अनुच्छेद-171 (च), अनुच्छेद-371 (ज), अनुच्छेद-371 (झ) द्वारा अरुणाचल प्रदेश, सिक्किम और गोवा में न्यूनतम 30 विधायकों की व्यवस्था की गई है।

अनुच्छेद-371 (छ) के अंतर्गत मिजोरम के लिए यह संख्या 40 निर्धारित की गई है। वर्तमान काल में सबसे छोटी (32 सदस्यीय) विधानसभा सिक्किम की है और सबसे बड़ी (403 सदस्यीय) उत्तर प्रदेश की।

विधानसभा के सदस्यों का निर्वाचन प्रत्यक्ष रूप से वयस्क मताधिकार के आधार पर होता है। निर्वाचन के लिए प्रत्येक राज्य को विभिन्न निर्वाचन-क्षेत्रों में बाँटा गया है। 75 हजार की जनसंख्या वाले एक निर्वाचन-क्षेत्र से केवल एक प्रतिनिधि का चयन होता है।

सदस्यों की योग्यताएँ

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-173 में विधानसभा के सदस्यों के लिए निम्नलिखित योग्यताएँ निर्धारित की गई हैं —

- वे भारत के नागरिक हों।
- वे 25 वर्ष से कम आयु के न हों।
- समय-समय पर संसद् द्वारा निर्धारित समस्त योग्यताएँ रखते हों।
- कोई भी व्यक्ति विधानमंडल के दोनों सदनों का अथवा दो या अधिक विधानमंडलों का एक ही समय में सदस्य नहीं रह सकता।

सदस्यों की निर्योग्यताएँ

संविधान के अनुच्छेद-174 के अंतर्गत विधानसभा सदस्य बनने के लिए उम्मीदवार निम्नलिखित दशाओं में योग्य नहीं माना जाता है—

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

- वह भारत सरकार अथवा किसी राज्य की सरकार के अधीन लाभदायक पद पर प्रतिष्ठित हो।
- वह किसी भी न्यायालय द्वारा पागल घोषित कर दिया गया हो।
- वह किसी भी न्यायालय द्वारा दिवालिया घोषित कर दिया गया हो।
- वह संसद् द्वारा पारित किसी अधिनियम के अंतर्गत अयोग्य घोषित कर दिया गया हो।
- वह भारत का नागरिक न हो या उसने स्वेच्छा से किसी अन्य राज्य की नागरिकता प्राप्त कर ली हो।

विधानसभा का कार्यकाल

सामान्यत: राज्य विधानसभा का कार्यकाल 5 वर्ष निर्धारित किया गया है। वैसे सत्तारूढ़ दल के प्रति अविश्वास प्रस्ताव पास हो जाने पर अथवा उसके पूर्ण बहुमत में न होने की दशा में विधानसभा को 5 वर्ष की अवधि पूरी होने से पूर्व भंग करने का अधिकार राज्यपाल को है। यहाँ यह उल्लेखनीय है कि संसद् को यह अधिकार दिया गया है कि वह कानून बनाकर, आपात्काल की घोषणा के समय विधानसभा का कार्यकाल एक वर्ष के लिए बढ़ा सकती है, किंतु आपातकाल की समाप्ति के पश्चात् यह समय-सीमा 6 महीने से अधिक नहीं बढ़ाई जा सकती। मार्च, 1977 में लोकसभा के लिए हुए चुनावों में जनता पार्टी को विजय मिली थी और कांग्रेस को पराजय। इस जनमत को देखते हुए केंद्र की सरकार ने कहा कि कांग्रेस दल को 9 राज्यों में सत्ता में बने रहने का अब कोई नैतिक अधिकार नहीं है। ये 9 राज्य थे—बिहार, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, मध्य प्रदेश, उड़ीसा, पंजाब, राजस्थान, उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल। जनता सरकार के गृहमंत्री चौधरी चरण सिंह ने 9 राज्यों के मुख्यमंत्रियों को विधानसभा विघटित करने की सलाह देते हुए जून, 1977 तक चुनाव कराने की बात कही थी। किंतु कांग्रेस के मुख्यमंत्रियों को यह सलाह अनुचित प्रतीत हुई, उन्होंने न्यायालय में भारत संघ के विरुद्ध याचिका दायर कर दी, किंतु 7 न्यायाधीशों की पीठ ने यह याचिका खारिज कर दी।

गणपूर्ति

विधानसभा की बैठकों में गणपूर्ति के लिए कुल सदस्यों के दसवें भाग का उपस्थित रहना अनिवार्य है।

विधानसभा का अधिवेशन

विधानसभा का अधिवेशन प्रतिवर्ष कम-से-कम दो बार होना अनिवार्य है। दोनों अधिवेशनों के मध्य 6 महीने से अधिक का अंतराल नहीं रहना चाहिए। यह अंतराल एक अधिवेशन की अंतिम तिथि तथा दूसरे अधिवेशन की पहली तिथि के बीच गिना जाता है। विधानसभा के अधिवेशन बुलाने अथवा स्थगित करने का अधिकार राज्यपाल के पास होता है। विधानसभा सदस्यों को बोलने की स्वतंत्रता प्राप्त है अर्थात् विधानमंडल में अथवा उसकी किसी समिति में यदि कोई सदस्य भाषण देता है, तो उसके विरुद्ध किसी भी न्यायालय में कोई कार्यवाही संभव नहीं होगी। विधानसभा के अधिवेशन के दौरान और उसके 40 दिन आगे-पीछे तक किसी सदस्य को दीवानी कानून के अंतर्गत गिरफ्तार नहीं किया जा सकता।

वेतन एवं भत्ते

विधानसभा के सदस्यों को राज्य विधानमंडल द्वारा निर्धारित वेतन एवं भत्ते देने का प्रावधान है। अपने राज्य में वे प्रथम श्रेणी में मुफ्त रेल-यात्रा के हकदार होते हैं।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

विधानसभा के पदाधिकारी

विधानसभा अपने सदस्यों में से किसी एक को अध्यक्ष तथा एक को उपाध्यक्ष चुन लेती है। अध्यक्ष विधानसभा की विभिन्न बैठकों का सभापतित्व करते हैं। अध्यक्ष की अनुपस्थिति में यह दायित्व उपाध्यक्ष पर आ जाता है। सामान्यत: विधानसभा के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष को लोकसभा के अध्यक्ष तथा उपाध्यक्ष के समान अधिकार प्राप्त हैं। इन पदों पर प्रतिष्ठित व्यक्तियों को पदच्युत करने की प्राय: वही प्रक्रिया है, जो लोकसभा के अध्यक्ष और उपाध्यक्ष की है। इनके वेतन, भत्ते आदि संचित निधि से देने की व्यवस्था की गई है।

राज्य की विधायी प्रक्रिया

एक सदन वाले राज्यों में विधानसभा ही समस्त विधियों की रचना करती है, किंतु दो सदन वाले राज्यों में यह दायित्व विधानसभा और विधान परिषद् दोनों का होता है। विधानमंडल में विधायी प्रक्रिया संघीय संसद् की विधायी प्रक्रिया के समान होती है अर्थात् साधारण विधेयक विधानमंडल के दोनों सदनों में प्रस्तुत किए जा सकते हैं, जबकि वित्तीय विधेयक विधानसभा में। यह बात अलग है कि विधानसभा से पारित होने के बाद ऐसे विधेयकों को विधान परिषद् में भी भेजा जाता है और वहाँ से पारित होने के पश्चात् ही उन्हें राज्यपाल की स्वीकृति प्राप्त होती है। दोनों सदनों में विधेयक प्रस्तुत किए जाने के लिए प्रस्तावक सदस्य को अपने सदन से अनुमति लेनी पड़ती है। विधेयक पारित होने से पूर्व प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय वाचनों से गुजरते हुए सदन में विचार-विमर्श का विषय बनता है।

वित्त विधेयकों से संबंधित प्रक्रिया

संविधान के अनुच्छेद-199 के अंतर्गत वित्त विधेयकों की परिभाषा दी गई है, जिसके आधार पर निम्नलिखित विषयों से संबंधित विधेयक वित्त विधेयक कहला सकतेहैं—

- कर लगाना या हटाना, किसी भी मामले में छूट देना, आर्थिक मामलों में परिवर्तन करना आदि।
- राज्य द्वारा धन उधार लेना, गारंटी देना अथवा किसी पूर्व धन संबंधी विधेयक में परिवर्तन करना।
- राज्य की संचित या आकस्मिक निधि का संरक्षण या इन निधियों में धन जमा करना अथवा निकालना।
- राज्य की संचित निधि से धन का विनियोग।
- किसी व्यय को राज्य की संचित निधि पर लागू होने वाला घोषित करना या ऐसे ही किसी विषय की वृद्धि करना।
- राज्य की किसी संचित निधि के मद में धन प्राप्त करना अथवा उससे धन निकालना।

इन विषयों से संबंधित विधेयक विधानसभा द्वारा पारित होने के बाद परिषद् में भेज दिए जाते हैं, जिन्हें विधान परिषद् 14 दिनों के अंदर सुझाव सहित विधानसभा में वापस करती है। यह बात अलग है कि विधानसभा उन सुझावों को मानने के लिए बाध्य नहीं है। यदि किसी कारणवश विधान परिषद् 14 दिनों के अंदर विधेयक वापस नहीं भेजती, तो विधेयक यथावत् पारित माना जा सकता है।

❑

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

16. राज्य की न्यायपालिका

(भाग-6, अध्याय-5, अनुच्छेद-214 से 231 तक)

संविधान के अनुच्छेद-214 के अंतर्गत राज्यों में एक उच्च न्यायालय की व्यवस्था की गई है। फिर भी सभी राज्यों में उनके उच्च न्यायालय स्थित नहीं हैं। वर्तमान काल में देश में कुल 21 न्यायालय हैं, जबकि राज्य 29 और केंद्रशासित प्रदेश 7 हैं।

जिन राज्यों में उच्च न्यायालयों की व्यवस्था नहीं है, उनका उच्च न्यायालयीन क्षेत्र अन्य निकटवर्ती राज्य के उच्च न्यायालय से संबद्ध है, उदाहरण के लिए—हरियाणा में उच्च न्यायालय नहीं है, किंतु पंजाब का उच्च न्यायालय हरियाणा के न्यायिक मामले भी देखता है। इसी तरह पश्चिम बंगाल का उच्च न्यायालय अंडमान-निकोबार द्वीपसमूह के न्यायिक मामलों को भी देखता है।

उच्च न्यायालयों का संगठन

उच्च न्यायालयों में एक मुख्य न्यायाधीश तथा कुछ अन्य न्यायाधीश होते हैं। मुख्य न्यायाधीश तथा अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति राष्ट्रपति उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के परामर्श से करते हैं। उच्च न्यायालय के अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति में उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश तथा राज्य के राज्यपाल का भी परामर्श लिया जाता है।

उच्चतम न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के परामर्श से राष्ट्रपति उच्च न्यायालय के किसी भी न्यायाधीश को भारत के किसी भी अन्य राज्य-क्षेत्र में स्थानांतरित कर सकते हैं।

न्यायाधीशों की योग्यताएँ

उच्च न्यायालय का न्यायाधीश बनने के लिए संविधान द्वारा निम्नलिखित योग्यताएँ निर्धारित की गई हैं

- वे भारत के नागरिक हों।
- वे भारतीय राज्य-क्षेत्र में कम-से-कम 10 वर्षों तक किसी न्यायिक पद पर कार्य कर चुके हों या वे किसी उच्च न्यायालय या ऐसे दो या अधिक न्यायालयों में लगातार कम-से-कम 10 वर्षों तक अधिवक्ता रह चुके हों।

वेतन एवं भत्ते

उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश तथा अन्य न्यायाधीशों को निर्धारित मासिक वेतन के अतिरिक्त समय-समय पर संशोधित एवं निर्धारित समस्त भत्ते तथा सुविधाएँ दी जाती हैं। नियुक्ति के पश्चात् आपात्कालीन स्थिति को छोड़कर सामान्यत: इन न्यायाधीशों के वेतन, भत्ते आदि में कोई कटौती नहीं की जा सकती। न्यायाधीशों के वेतन आदि राज्य की संचित निधि से दिए जाते हैं।

कार्यकाल

संविधान के अंतर्गत उच्च न्यायालय के न्यायाधीश 62 वर्ष की अवस्था तक अपने पद पर कार्य कर सकते हैं। वैसे स्वेच्छा से वे कभी भी त्यागपत्र देकर अपने पद से मुक्त हो सकते हैं।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

किसी न्यायाधीश पर साबित दुराचार अथवा अयोग्यता का आरोप अनुच्छेद 124(4) के अनुसार लगाकर भी उन्हें पद से हटाया जा सकता है, लेकिन इसके लिए संसद् के दोनों सदनों में अलग-अलग उपस्थित और मत देनेवाले सदस्यों के दो-तिहाई बहुमत से इस आशय का प्रस्ताव पारित होना अनिवार्य है। ऐसे प्रस्ताव राष्ट्रपति की अनुमति से ही संसद में पेश किया जा सकता है।

शपथ

पद पर कार्य करने से पूर्व न्यायाधीश को पद की शपथ लेनी पड़ती है, जिसका स्वरूप इस प्रकार निर्धारित किया गया है—

''मैं...विधि द्वारा स्थापित भारत के संविधान के प्रति श्रद्धा और निष्ठा रखूँगा, मैं भारत की प्रभुता और अखंडता अक्षुण्ण रखूगां तथा मैं सम्यक् प्रकार से और श्रद्धापूर्वक और अपनी पूरी योग्यता, ज्ञान तथा विवेक से अपने पद के कर्तव्यों का भय या पक्षपात, अनुराग या द्वेष के बिना पालन करूँगा और मैं संविधान व विधियों की मर्यादा बनाए रखूँगा।''

उच्च न्यायालय के अधिकार

सामान्यत: उच्च न्यायालयों के क्षेत्राधिकार अपने राज्य तक ही सीमित हैं, किंतु उच्च न्यायालय का क्षेत्राधिकार संसद् द्वारा दो या दो से अधिक राज्यों में भी विस्तृत किया जा सकता है। इसके लिए संसद् में पहले कानून बनाना अनिवार्य है।

उच्च न्यायालय के प्रमुख अधिकार इस प्रकार हैं—

प्रारंभिक क्षेत्राधिकार

राज्य के दीवानी और फौजदारी मामलों पर उच्च न्यायालय पुनर्विचार कर सकता है। इस रूप में यह राज्य का सबसे बड़ा न्यायालय कहा जा सकता है। उच्च न्यायालय में दीवानी के वे सभी मामले आरंभ होते हैं, जिन पर खफीफा अदालत विचार नहीं कर सकती।

फौजदारी के सभी मुकदमे उच्च न्यायालय के द्वारा पुनर्विचार हेतु स्वीकार किए जाते हैं, जिनकी सुनवाई अन्य स्थानों पर सेशन्स कोर्ट में होती है। कोलकाता, मुंबई, दिल्ली और चेन्नई के उच्च न्यायालय ऐसे न्यायालय हैं, जिनमें दीवानी और फौजदारी के मामलों में प्रारंभिक क्षेत्राधिकार दिए गए हैं।

मौलिक अधिकारों की रक्षा के लिए उच्च न्यायालय को बंदी प्रत्यक्षीकरण का रिट, परमादेश, प्रतिषेध रिट, अधिकारपृच्छा और उत्प्रेषण रिट जारी रखने का अधिकार है। उच्च न्यायालय को विवाह-विच्छेद, विवाह-विधि, उच्च न्यायालय के अपमान आदि के संबंध में आरंभिक क्षेत्राधिकार भी प्राप्त हैं।

अपीलीय क्षेत्र

उच्च न्यायालयों को दीवानी और फौजदारी मामलों में अपने-अपने अधीन न्यायालयों के निर्णय के विरुद्ध अपील सुनने का अधिकार है। दीवानी मुकदमों की अपील के लिए यह आवश्यक है कि मामला कम-से-कम 5000 रु. की रकम का हो।

इसी प्रकार फौजदारी मामलों की अपील में भी यह जरूरी है कि मुकदमे में कानून का कोई महत्त्वपूर्ण प्रश्न अंतर्निहित हो। सत्र न्यायालय द्वारा दंडित अपराधी के निर्णय के विरुद्ध भी उच्च न्यायालय में अपील की जा

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

सकती है। सत्र न्यायालय द्वारा दिए गए मृत्युदंड का अनुमोदन उच्च न्यायालय द्वारा होना अनिवार्य है।

एक अभिलेख न्यायालय के रूप में

उच्च न्यायालय अभिलेख न्यायालय के रूप में भी कार्य करता है। अभिलेख न्यायालयों की समस्त शक्तियाँ उच्च न्यायालयों को भी प्राप्त हैं।

अधीक्षण का अधिकार

उच्च न्यायालय को यह अधिकार प्राप्त है कि वह अपने क्षेत्र के अन्य समस्त न्यायालयों पर अपना नियंत्रण रखे। इस अधिकार का प्रयोग करते हुए उच्च न्यायालय अपने अधीनस्थ न्यायालय का निरीक्षण तथा वहां से कागजात मँगवाकर उनकी जाँच-पड़ताल कर सकता है। अधीनस्थ कार्यालयों की कार्यप्रणाली के संबंध में उच्च न्यायालय नियम बना सकता है और पहले बने हुए नियमों को परिवर्तित भी कर सकता है। अधीनस्थ न्यायालय में रिकॉर्ड रखने की व्यवस्था उच्च न्यायालय द्वारा ही निर्दिष्ट होती है।

अधीनस्थ न्यायालयों में अधिकारियों की नियुक्ति, पदोन्नति, अवकाश आदि के संबंध में भी नियम बनाने का अधिकार उच्च न्यायालयों को ही है। किसी मुकदमे को एक न्यायालय से दूसरे न्यायालय में स्थानांतरित करने का अधिकार भी उच्च न्यायालय को प्राप्त है। उच्च न्यायालय ही अपने अधीनस्थ न्यायालय में शेरिफ क्लर्क व अन्य कर्मचारियों तथा वकीलों आदि की फीस का निर्धारण करते हैं।

संविधान संबधी क्षेत्राधिकार

संविधान के अनुच्छेद-228 के अंतर्गत उच्च न्यायालय को यह अधिकार दिया गया है कि वह अपने अधीनस्थ न्यायालय में विचाराधीन किसी मुकदमे में संविधान की व्याख्या की अपेक्षा होने पर उसे अपने पास मँगवा सकता है। ऐसे मुकदमों का निर्णय वह स्वयं भी कर सकता है और संविधान संबंधी व्याख्या करके मुकदमे को वापस उसी न्यायालय में भेज भी सकता है।

प्रशासनिक अधिकार

उच्च न्यायालय अपने अधीनस्थ न्यायालयों के अधिकारियों की नियुक्ति करने के लिए राज्यपाल से सिफारिश कर सकता है।

भारत में उच्च न्यायालय

राज्य :उत्तर प्रदेश

स्थापना वर्ष :1866

अधिकार क्षेत्र :उत्तर प्रदेश

स्थान :इलाहाबाद

खंडपीठ :लखनऊ

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

राज्य :आंध्र प्रदेश

स्थापना वर्ष :1954

अधिकार क्षेत्र :आंध्र प्रदेश

स्थान :हैदराबाद

खंडपीठ :-

राज्य :असम

स्थापना वर्ष :1948

अधिकार क्षेत्र :असम, मणिपुर, मेघालय, त्रिपुरा, नगालैंड, मिजोरम, अरुणाचल प्रदेश

स्थान :गुवाहाटी

खंडपीठ :कोहिमा, इंफाल, अगरतला, शिलांग

राज्य :प. बंगाल

स्थापना वर्ष :1861

अधिकार क्षेत्र :पश्चिम बंगाल, अंडमान-निकोबार

स्थान :कोलकाता

खंडपीठ :पोर्टब्लेयर

राज्य :महाराष्ट्र

स्थापना वर्ष :1861

अधिकार क्षेत्र :महाराष्ट्र, गोआ, दमन व दीव, दादर व नागर हवेली

स्थान :मुंबई

खंडपीठ :नागपुर

राज्य :गुजरात

स्थापना वर्ष :1960

अधिकार क्षेत्र :गुजरात

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

स्थान :अहमदाबाद

खंडपीठ :-

राज्य :जम्मू-कश्मीर

स्थापना वर्ष :1928

अधिकार क्षेत्र :जम्मू एवं कश्मीर

स्थान :श्रीनगर, जम्मू

खंडपीठ :-

राज्य :केरल

स्थापना वर्ष :1956

अधिकार क्षेत्र :केरल, लक्षद्वीप,

स्थान :एर्नाकुलम

खंडपीठ :तिरुअनंतपुरम

राज्य :मध्य प्रदेश

स्थापना वर्ष :1956

अधिकार क्षेत्र :मध्य प्रदेश

स्थान :जबलपुर

खंडपीठ :इंदौर ग्वालियर

राज्य :तमिलनाडु

स्थापना वर्ष :1861

अधिकार क्षेत्र :तमिलनाडु व पुदुचेरी

स्थान :चेन्नई

खंडपीठ :-

राज्य :ओडिशा

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

स्थापना वर्ष :1948

अधिकार क्षेत्र :ओडिशा

स्थान :कटक

खंडपीठ :-

राज्य :बिहार

स्थापना वर्ष :1916

अधिकार क्षेत्र :बिहार

स्थान :पटना

खंडपीठ :-

राज्य :पंजाब व हरियाणा

स्थापना वर्ष :1975

अधिकार क्षेत्र :पंजाब व हरियाणा

स्थान :चंडीगढ़

खंडपीठ :-

राज्य :राजस्थान

स्थापना वर्ष :1949

अधिकार क्षेत्र :राजस्थान

स्थान :जोधपुर

खंडपीठ :जयपुर

राज्य :कर्नाटक

स्थापना वर्ष :1884

अधिकार क्षेत्र :कर्नाटक

स्थान :बेंगलुरु

Novels English & Hind

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hind

खंडपीठ :-

राज्य :दिल्ली

स्थापना वर्ष :1966

अधिकार क्षेत्र :दिल्ली

स्थान :दिल्ली

खंडपीठ :-

राज्य :हि. प्रदेश

स्थापना वर्ष :1971

अधिकार क्षेत्र :हिमाचल प्रदेश

स्थान :शिमला

खंडपीठ :-

राज्य :सिक्किम

स्थापना वर्ष :1975

अधिकार क्षेत्र :सिक्किम

स्थान :गंगटोक

खंडपीठ :-

राज्य :छत्तीसगढ़

स्थापना वर्ष :2000

अधिकार क्षेत्र :छत्तीसगढ़

स्थान :बिलासपुर

खंडपीठ :-

राज्य :उत्तरांचल

स्थापना वर्ष :2000

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

*अधिकार क्षेत्र :*उत्तरांचल

*स्थान :*नैनीताल

खंडपीठ :-

*राज्य :*झारखंड

*स्थापना वर्ष :*2000

*अधिकार क्षेत्र :*झारखंड

*स्थान :*राँची

खंडपीठ :-

*राज्य :*मणिपुर

*स्थापना वर्ष :*2013

*अधिकार क्षेत्र :*मणिपुर

*स्थान :*इंफाल

खंडपीठ :-

*राज्य :*मेघालय

*स्थापना वर्ष :*2013

*अधिकार क्षेत्र :*मेघालय

*स्थान :*शिलांग

खंडपीठ :-

*राज्य :*त्रिपुरा

*स्थापना वर्ष :*2013

*अधिकार क्षेत्र :*त्रिपुरा

*स्थान :*अगरतला

खंडपीठ :-

Novels English & Hind

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

जिला स्तरीय न्याय-व्यवस्था

प्रत्येक राज्य में तीन प्रकार के न्यायालय होते हैं—दीवानी, फौजदारी और माल संबंधी। जिले का सबसे बड़ा न्यायालय जिला न्यायालय होता है। इस न्यायालय के न्यायाधीश को 'जिला न्यायाधीश' कहा जाता है। जिला न्यायाधीश के अधीन सिविल जजों तथा मुन्सिफों की नियुक्ति होती है। दीवानी के क्षेत्र में मुन्सिफी अदालत सबसे निचले वर्ग में आती है।

फौजदारी के क्षेत्र में सत्र न्यायाधीश की व्यवस्था की गई है, जिनकी सहायता के लिए अतिरिक्त न्यायाधीशों की नियुक्ति की जाती है। इनके अधीन तीन श्रेणियों के मजिस्ट्रेट होते हैं। माल के क्षेत्र में सबसे बड़ी अदालत, 'बोर्ड ऑफ रिवेन्यू' कहलाती है, जिसके अधीन कमिश्नर, जिलाधीश, तहसीलदार तथा नायब तहसीलदार की अदालतें होती हैं।

दीवानी न्यायालय

उच्च न्यायालय के अधीनस्थ न्यायालय

दीवानी न्यायालय :उच्च न्यायालय

फौजदारी न्यायालय :उच्च न्यायालय

राजस्व न्यायालय :उच्च न्यायालय

दीवानी न्यायालय :जिला न्यायाधीश

फौजदारी न्यायालय :दंडाधीशों का न्यायालय

राजस्व न्यायालय :राजस्व परिषद्

दीवानी न्यायालय :का न्यायालय

फौजदारी न्यायालय :—

राजस्व न्यायालय :(बोर्ड ऑफ रिवेन्यू)

दीवानी न्यायालय :सिविल न्यायाधीश

फौजदारी न्यायालय :प्रथम श्रेणी के दंडाधीश

राजस्व न्यायालय :आयुक्त का न्यायालय

दीवानी न्यायालय :का न्यालय

फौजदारी न्यायालय :का न्यायालय

राजस्व न्यायालय :

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

दीवानी न्यायालय :मुंसिफ का न्यायालय

फौजदारी न्यायालय :द्वितीय श्रेणी के

राजस्व न्यायालय :जिलाधीश का न्यायालय

दीवानी न्यायालय :दंडाधीश का न्यायालय

फौजदारी न्यायालय :—

राजस्व न्यायालय :—

दीवानी न्यायालय :—

फौजदारी न्यायालय :तृतीय श्रेणी के दंडाधीश का न्यायालय

राजस्व न्यायालय :अतिरिक्त जिलाधीश का न्यायालय

दीवानी न्यायालय के अंतर्गत निम्नलिखित न्यायालय आते हैं—

1. *जिला न्यायालय* : दीवानी क्षेत्र के अंतर्गत जिले का सबसे बड़ा न्यायालय 'जिला न्यायालय' होता है। जिला न्यायाधीश को 'सत्र न्यायाधीश' भी कहा जाता है। जिला न्यायाधीश के अधीन दीवानी क्षेत्र में अनेक न्यायाधीश होते हैं, जिन्हें दीवानी न्यायाधीश (सिविल जज) कहा जाता है। जिला न्यायाधीश की नियुक्ति उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की सिफारिश पर राज्यपाल करते हैं। जिला न्यायालय में 5000 रु. से कम मूल्य वाले दीवानी मामलों की सुनवाई होती है।

2. *दीवानी न्यायाधीश का न्यायालय* : यह न्यायालय जिला न्यायालय के अधीन कार्य करता है। इस न्यायालय पर धनराशि-संबंधी कोई प्रतिबंध नहीं है। यह केवल प्रशासनिक दृष्टि से जिला न्यायालय के अधीन कार्य करता है। राजकीय लोक सेवा आयोग की सहायता से राज्यपाल इन न्यायालयों के न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए नियम बनाते हैं और उनकी नियुक्ति करते हैं। पदोन्नति, स्थानांतरण, अवकाश आदि के अधिकार उच्च न्यायालय को दिए गए हैं। इनमें दीवानी संबंधी मुकदमों की सुनवाई की जा सकती है।

3. *मुन्सिफ के न्यायालय* : मुन्सिफ के न्यायालय दीवानी न्यायालय के अधीन कार्य करते हैं। दीवानी संबंधी सभी मुकदमों में केवल दो हजार रुपए तक के मूल्य वाले मुकदमों की सुनवाई ही मुन्सिफ करते हैं। मुन्सिफ द्वारा किए गए निर्णय की अपील जिला न्यायाधीश के यहाँ होती है। यह वित्तीय सीमा बदलती रहती है।

फौजदारी न्यायालय

फौजदारी न्यायालय के अंतर्गत जिले का सबसे बड़ा न्यायालय सत्र न्यायालय होता है, जिसके न्यायाधीश को 'सत्र न्यायाधीश' कहते हैं। सत्र न्यायाधीश की सहायता के लिए अतिरिक्त सत्र न्यायाधीश भी होते हैं, जिनकी नियुक्ति उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश की सिफारिश पर राज्यपाल द्वारा की जाती है।

सत्र न्यायालय के अधीन तीन श्रेणियों के न्यायाधीश होते हैं—

1. प्रथम श्रेणी के न्यायाधीश, जिन्हें दो साल की कैद और 1000 रुपए जुर्माना करने का अधिकार होता है।
2. द्वितीय श्रेणी के न्यायाधीश, जिन्हें छः माह की कैद और 300 रुपए जुर्माना करने का अधिकार होता है।

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

3. तृतीय श्रेणी के न्यायाधीश, जिन्हें एक माह की कैद और 50 रुपए तक जुर्माना करने का अधिकार होता है। ये न्यायाधीश वैतनिक और अवैतनिक—दोनों प्रकार के होते हैं।

फौजदारी न्यायालयों में केवल फौजदारी मुकदमे ही दायर किए जाते हैं। कत्ल तथा अन्य गंभीर मामले प्रथम श्रेणी के न्यायाधीश की अदालत में पेश किए जाते हैं। वहीं मुकदमा चलता है, गवाहियाँ होती हैं और बहस होती है।

राजस्व संबंधी न्यायालय

इस न्यायालय के अधीन कमिश्नर, जिलाधीश, तहसीलदार तथा नायब तहसीलदार की अदालतें आती हैं। जिलाधीश की मालगुजारी संबंधी अदालत जिले की सबसे बड़ी अदालत होती है। मालगुजारी संबंधी मुकदमे क्रमशः नायब तहसीलदार, तहसीलदार और परगनाधिकारी की अदालतों में पेश किए जाते हैं। उनके निर्णय के विरुद्ध जिलाधीश, कमिश्नर और राजस्व परिषद् के समक्ष क्रमशः अपील की जा सकती है। इस क्षेत्र में अंतिम अपील उच्च न्यायालय में होती है।

भारत के महान्यायवादी से संबंधित अनुच्छेद

अनुच्छेद विषयवस्तु

76 भारत के महान्यायवादी

88 महान्यायवादी के संसद के सदनों तथा इसकी समितियों से जुड़े अधिकार

105 महान्यायवादी की शक्तियां, विशेषाधिकार तथा प्रतिरक्षा

अन्य न्यायालय

अन्य अदालतों में आयकर, श्रमिक आदि अदालतें आती हैं। आयकर अधिकारी आयकर संबंधी मुकदमों का निर्णय करता है, जिनकी अपील आयकर आयुक्त और उसके बाद आयकर ट्रिब्यूनल में की जा सकती है। कुछ विशेष परिस्थितियों में आयकर ट्रिब्यूनल के फैसले की अपील राज्य के उच्च न्यायालय में हो सकती है। इसी प्रकार श्रमिक वर्ग के मामलों की सुनवाई लेबर ट्रिब्यूनलों में की जाती है।

पंचायती अदालत

स्वाधीनता-प्राप्ति के पश्चात् देश के अनेक गाँवों में ग्राम पंचायतों का गठन किया गया है और उन्हें क्षेत्रीय साधारण विवादों को निबटाने का अधिकार दिया गया है। इन अदालतों को फौजदारी या अन्य किसी मामले में किसी को कैद करने का अधिकार नहीं है। इन अदालतों के निर्णय के विरुद्ध 60 दिनों के अंदर मुन्सिफ के न्यायालय में अपील की जा सकतीहै।

परिवार न्यायालयों की स्थापना (2016)

राज्य :आंध्र प्रदेश

न्यायालयों की संख्या :14

राज्य :अरुणाचल प्रदेश

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hind

न्यायालयों की संख्या :-

राज्य :असम

न्यायालयों की संख्या :3

राज्य :बिहार

न्यायालयों की संख्या :39

राज्य :छत्तीसगढ़

न्यायालयों की संख्या :19

राज्य :दिल्ली

न्यायालयों की संख्या :15

राज्य :गोवा

न्यायालयों की संख्या :-

राज्य :गुजरात

न्यायालयों की संख्या :17

राज्य :हरियाणा

न्यायालयों की संख्या :7

राज्य :हिमाचल प्रदेश

न्यायालयों की संख्या :-

राज्य :जम्मू और कश्मीर

न्यायालयों की संख्या :-

राज्य :झारखंड

न्यायालयों की संख्या :21

राज्य :कर्नाटक

न्यायालयों की संख्या :27

राज्य :केरल

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

न्यायालयों की संख्या :28

राज्य :मध्य प्रदेश

न्यायालयों की संख्या :44

राज्य :महाराष्ट्र

न्यायालयों की संख्या :22

राज्य :मणिपुर

न्यायालयों की संख्या :5

राज्य :मेघालय

न्यायालयों की संख्या :-

राज्य :मिजोरम

न्यायालयों की संख्या :4

राज्य :नागालैंड

न्यायालयों की संख्या :2

राज्य :ओडिशा

न्यायालयों की संख्या :17

राज्य :पंजाब

न्यायालयों की संख्या :7

राज्य :पुडुचेरी

न्यायालयों की संख्या :1

राज्य :राजस्थान

न्यायालयों की संख्या :28

राज्य :सिक्किम

न्यायालयों की संख्या :4

राज्य :तमिलनाडु

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

न्यायालयों की संख्या :14

राज्य :तेलगांना

न्यायालयों की संख्या :14

राज्य :त्रिपुरा

न्यायालयों की संख्या :3

राज्य :उत्तर प्रदेश

न्यायालयों की संख्या :76

राज्य :उत्तराखंड

न्यायालयों की संख्या :7

राज्य :पश्चिम बंगाल

न्यायालयों की संख्या :2

राज्य :कुल

न्यायालयों की संख्या :438

महाधिवक्ता

संविधान के अनुच्छेद-165 के अनुसार, प्रत्येक राज्य के राज्यपाल उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की योग्यता रखनेवाले व्यक्ति को राज्य का महाधिवक्ता नियुक्त करेंगे जो राज्यपाल के प्रसादपर्यंत पद धारण करेंगे। वे ऐसे पारिश्रमिक के हकदार होंगे, जो राज्यपाल समय-समय पर अवधारित करें। उन्हें राज्य विधानमंडल के दोनों सदनों की कार्यवाहियों में बोलने एवं भाग लेने का अधिकार है, किंतु वे मतदान नहीं कर सकेंगे। वे राज्य सरकार को विधि संबंधी विषयों पर सलाह देते हैं एवं ऐसे कार्यों का निर्वहन करते हैं, जो संविधान या किसी विधि द्वारा उसके अधीन किए गए हैं।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

17. संघ राज्य-क्षेत्र

(भाग-8, अनुच्छेद-239 से 242 तक)

संघ राज्य-क्षेत्रों का शासन राष्ट्रपति के हाथों में रहता है। व्यवहार में यह शासन राष्ट्रपति के नाम पर इनके द्वारा नियुक्त प्रतिनिधि प्रशासक चलाते हैं। इस प्रतिनिधि प्रशासन की पदेन संज्ञा अलग-अलग संघ राज्य-क्षेत्रों में अलग-अलग है। दिल्ली और पुदुचेरी में उन्हें उपराज्यपाल कहा जाता है, जबकि चंडीगढ़ में उन्हें मुख्य आयुक्त के रूप में जाना जाता है। लक्षद्वीप में उन्हें 'प्रशासक' कहा जाता है। इन प्रतिनिधि प्रशासक की पदेन गरिमा प्राय: राज्यपाल के समकक्ष होती है, किंतु वे अपने संघ राज्य-क्षेत्र के अधिपति नहीं होते, बल्कि राष्ट्रपति के अभिकर्ता होते हैं।

यूँ तो विधि बनाकर संघ राज्य-क्षेत्रों की शासन-व्यवस्था को परिवर्तित करने के लिए स्वतंत्र हैं, किंतु सन् 1962 में संविधान में अनुच्छेद-239 (क) अंत:स्थापित करके संसद् को यह शक्ति भी दी गई है कि वह संघ राज्य-क्षेत्रों के लिए मंत्रिपरिषद् अथवा विधानमंडल अथवा दोनों की व्यवस्था कर सकती है। इसी शक्ति के आधार पर संसद् ने संघ राज्य-क्षेत्र अधिनियम, 1963 पारित किया। इसी अधिनियम के अंतर्गत मणिपुर, त्रिपुरा, गोवा, दमन, दीव और पुदुचेरी के संघीय क्षेत्रों में विधानसभाओं की स्थापना की गई थी।

संघीय क्षेत्र के प्रकार

संघीय क्षेत्र मोटे तौर पर दो प्रकार के हैं—

राष्ट्रपति शासन द्वारा शासित संघीय क्षेत्र

पहली प्रकार के संघीय क्षेत्रों में अंडमान-निकोबार द्वीपसमूह, दादर नागर हवेली और लक्षद्वीप आते हैं। इन तीन संघीय क्षेत्रों का शासन पूर्णत: राष्ट्रपति के हाथों में है। इन क्षेत्रों की जनता को अपने-अपने क्षेत्रों के शासन में हाथ बँटाने का अधिकार नहीं दिया गया है। राष्ट्रपति इन क्षेत्रों के शासन के लिए मुख्य आयुक्त और अन्य संघीय शासकों को नियुक्त कर सकते हैं।

विधानसभा द्वारा शासित संघीय क्षेत्र

दूसरे प्रकार के संघीय क्षेत्र वे हैं, जिनके लिए सन् 1963 में संघीय संसद् द्वारा 'गवर्नमेंट ऑफ यूनियन टेरिटरी कानून' पारित किया गया था। ये संघीय क्षेत्र हैं—मणिपुर, त्रिपुरा, गोवा, दमन, दीव, पुदुचेरी। इन क्षेत्रों में विधानसभाओं की स्थापना की गई थी, जिनकी अवधि 4 वर्ष थी। ये विधानसभाएँ अपने अध्यक्ष और उपाध्यक्ष का भी निर्वाचन कर सकती थीं। उक्त कानून के द्वारा ही इन क्षेत्रों में विधानसभाओं के प्रति उत्तरदायी रहने वाली मंत्रिपरिषदों का भी गठन किया गया था।

दादर नागर हवेली का प्रशासक दमन और दीव के कार्य भी देखता है। लक्षद्वीप का अलग प्रशासक है।

दिल्ली के लिए विशेष उपबंध

दिल्ली के लिए विधानसभा, मंत्रिपरिषद् तथा एतत् संबंधी अन्य विषयों की व्यवस्था हेतु संविधान में 69वें संशोधन द्वारा अनुच्छेद-239(क)(क) और 239(क)(ख) अंत:स्थापित किए गए। दिल्ली के लिए किए गए

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

विशेष उपबंधों की मुख्य बातें इस प्रकार हैं—

- इस राज्य-क्षेत्र का नाम होगा—दिल्ली राष्ट्रीय राजधानी राज्यक्षेत्र।
- इसका प्रशासक उपराज्यपाल कहलाएगा।
- इस राज्य-क्षेत्र की एक विधानसभा होगी।
- विधानसभा के निर्वाचन देश के निर्वाचन आयोग द्वारा संचालित किए जाएँगे।
- विधानमंडल को संविधान की राज्य सूची की प्रविष्टि 1, 2 और 18 और उनसे संबंधित विषयों को छोड़कर सभी शक्तियाँ प्राप्त हैं।
- संसद् को दिल्ली के प्रशासन हेतु अनुपूरक बनाने की शक्ति है।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

18. पंचायतें

(भाग-9, अनुच्छेद-243 से 243(ण) तक)

महात्मा गांधी और विनोबा भावे ने प्रशासनिक इकाई के रूप में ग्राम स्वराज्य को अधिक महत्त्व दिया था। उनके अनुसार, किसी भी क्षेत्र का विकास स्थानीय लोगों द्वारा किया जाना चाहिए अर्थात् विकास के लिए स्थानीय लोगों की पूरी सहभागिता अपेक्षित है। संभवत: इसीलिए संविधान के रचनाकारों ने भी राज्य के नीति-निदेशक तत्त्वों में स्थानीय प्रशासन की दृष्टि से पंचायती राज को स्थान दिया था। (अनु.-40)

सन् 1956 में बलवंत राय मेहता समिति ने भी पंचायती राज की स्थापना का सुझाव दिया था, जिसके फलस्वरूप राजस्थान एवं अन्य राज्यों में पंचायती राज का शुभारंभ हुआ। यह बात अलग है कि इस पहल के परिणाम आशा के अनुरूप नहीं थे।

सन् 1964 में सादिक अली की अध्यक्षता में एक समिति इस विफलता के कारणों की छानबीन के लिए गठित की गई। इस समिति की रिपोर्ट से पता चला कि पंचायती राज में जनता की समुचित भागीदारी नहीं थी। नतीजतन पंचायती राज के प्रति सारा उत्साह ठंडा पड़ गया।

इसके पश्चात् सन् 1987 में सरकार स्थानीय शासन के नाम पर पंचायती राज एवं नगरपालिकाओं के प्रति सचेत हुई। यहाँ गौरतलब है कि स्थानीय प्रशासन राज्य सूची की प्रविष्टि 5 का विषय है। अत: संसद् इस संदर्भ में विधि-रचना करने में प्राय: असमर्थ थी।

अंतत: 73वें संविधान संशोधन अधिनियम, 1992 द्वारा भाग-9 अंत:स्थापित किया गया, जिसमें पंचायत को संवैधानिक मान्यता देते हुए अनुपूरक विधि बनाने के लिए राज्यों का मार्गदर्शन किया गया है। नगालैंड, मेघालय और मिजोरम में पहले से ही संविधान की पाँचवीं-छठवीं अनुसूची के अधीन समानांतर संस्थाएँ हैं। अत: उक्त उपबंध उन राज्यों पर लागू नहीं होता। इनके अतिरिक्त जम्मू-कश्मीर, अरुणाचल प्रदेश तथा दिल्ली को छोड़कर देश के अन्य सभी राज्यों और केंद्रशासित प्रदेशों में पंचायती संस्थाएँ बना दी गई हैं।

संविधान (73वाँ संशोधन) अधिनियम, 1992 के पारित होने से देश के संघीय लोकतांत्रिक ढाँचे में एक नए युग का सूत्रपात हुआ है और पंचायती राज संस्थाओं को संवैधानिक दर्जा प्राप्त हुआ है। इस अधिनियम के लागू होने के परिणामस्वरूप लगभग सभी राज्यों/संघशासित प्रदेशों ने अपने संशोधित कानून बना लिए हैं।

परिणामस्वरूप देश में ग्राम स्तर पर 2,27,698 पंचायतों, मध्य स्तर पर 5,906 पंचायतों और जिला स्तर पर 474 पंचायतों के चुनाव करवा लिए हैं। ये पंचायतें सभी स्तर के लगभग 34 लाख चुने हुए प्रतिनिधियों द्वारा संचालित की जा रही हैं। इस प्रकार यह एक अत्यधिक व्यापक प्रतिनिधि आधार है, जो विश्व के किसी भी अन्य विकसित अथवा विकासशील देश में विद्यमान नहीं है।

अधिनियम की मुख्य विशेषताएँ

इस अधिनियम की मुख्य विशेषताएँ निम्नलिखित हैं—

- 20 लाख से अधिक जनसंख्या वाले सभी राज्यों के लिए पंचायती राज की अनिवार्य त्रिस्तरीय प्रणाली।
- प्रत्येक 5 वर्ष में पंचायतों के नियमित चुनाव।
- अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजातियों के लिए आनुपातिक आरक्षण और महिलाओं के लिए (सीटों का एक

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

तिहाई से कम न हो) आरक्षण।

- पंचायती राज संस्थाओं की वित्तीय शक्तियों के संबंध में सिफारिश करने के लिए वित्त आयोग की स्थापना।
- पूरे जिले के लिए विकास योजना बनाने के लिए जिला योजना समिति का गठन।

पंचायती राज प्रणाली

पंचायती राज प्रणाली में त्रिस्तरीय शासन व्यवस्था रखी गई है—

- निचली सीढ़ी पर ग्राम-सभा और ग्राम पंचायत।
- ऊपरी सीढ़ी पर जिला स्तरीय जिला पंचायत।
- बीच की सीढ़ी पर मध्यवर्ती या खंडस्तरीय पंचायत, जो जिला पंचायत और ग्राम पंचायत का प्राय: मिला-जुला रूप है। पंचायती राज का यह रूप उन राज्यों में लागू है, जिनकी जनसंख्या 20 लाख से अधिक है।

पंचायतों की संरचना

लोकतंत्र की सबसे निचली इकाई के रूप में ग्राम पंचायत ग्राम की कार्यपालिका है, जिसका निर्वाचन प्रत्यक्ष रूप से होता है। ग्राम पंचायत का अध्यक्ष मध्यवर्ती पंचायत का सदस्य होता है। जहाँ मध्यवर्ती पंचायत की व्यवस्था नहीं है, वहाँ वह जिला पंचायत का सदस्य होता है।

इसी प्रकार मध्यवर्ती पंचायत का सदस्य होता है। लोकसभा, राज्यसभा, विधानसभा और विधान परिषद् के सदस्य अपने-अपने निर्वाचन-क्षेत्रों में जिला और मध्यवर्ती पंचायतों के सदस्य होते हैं। उन्हें पंचायत की बैठकों में मतदान का अधिकार होता है।

अध्यक्ष का निर्वाचन

ग्राम पंचायत का अध्यक्ष विधि द्वारा उपबंधित रीति से निर्वाचित किया जाता है, जो साधारणत: प्रत्यक्ष होता है।

पंचायत की अवधि

सामान्यत: एक पंचायत का कार्यकाल पाँच वर्ष निर्धारित किया गया है। यह समय पंचायत की पहली बैठक से लागू माना जाता है, वैसे विशेष परिस्थितियों में पंचायत समय से पहले भी विघटित की जा सकती है। ऐसी दशा में विघटन की तिथि से 6 माह के अंदर अगली पंचायत का निर्वाचन हो जाना चाहिए।

सदस्यता के लिए अर्हता

पंचायत की सदस्यता के लिए न्यूनतम आयु-सीमा 21 वर्ष निर्धारित की गई है। अन्य अर्हताओं में वह जो राज्य विधानमंडल के सदस्य के रूप में चुने जाने के लिए आवश्यक हैं।

पंचायतों के कार्य एवं अधिकार

राज्य विधानमंडल द्वारा पंचायतों को सामान्यत: स्वायत्त शासन की संस्था के रूप में कार्य करने की शक्ति प्रदान की गई है। इस रूप में पंचायतें आर्थिक विकास एवं सामाजिक न्याय की योजनाएँ तैयार कर उन्हें कार्यान्वित कर सकती हैं। इनका कार्यक्षेत्र ग्यारहवीं अनुसूची के विषयों तक फैला है।

सामान्यत: ग्राम पंचायतों के प्रमुख कार्य इस प्रकार हैं— भूमि सुधार को कार्यान्वयन, गाँव में सफाई; सड़कों,

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

कुओं व तालाबों की देखभाल; स्वच्छ पेयजल की व्यवस्था, पाठशालाओं, पुस्तकालयों का संचालन, मेलों का आयोजन, लघु सिंचाई, पेय जल, लघु, खादी और कुटीर, ग्रामीण विद्युतीकरण, गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम, स्वास्थ्य और स्वच्छता, समाज कल्याण, सार्वजनिक वितरण प्रणाली आदि।

आय के स्रोत

पंचायतों की आय के निम्नलिखित स्रोत हैं—

- राज्य अधिनियम द्वारा अधिकृत कर लगाकर।
- राज्य सरकार द्वारा सौंपे गए पथकर, फीस आदि।
- राज्य सरकार द्वारा सहायता अनुदान।
- केंद्रीय या राज्य सरकार द्वारा विकास कार्यों के लिए आवंटित धन।
- पंचायतों के स्वयं उपायों से आमदनी या संचित निधि।

पंचायतों की वित्तीय रूपरेखा

पंचायतों द्वारा अर्जित आय और किए गए खर्चों के हिसाब-किताब की जाँच-पड़ताल के लिए तथा पंचायतों को राज्य सरकार इस देय या आवंटित धनराशि की सिफारिश के लिए राज्य सरकार प्रत्येक पाँच वर्ष बाद पंचायत वित्त आयोग का गठन करती है। यह आयोग पंचायत की वित्तीय स्थिति का आकलन करते हुए अपनी सिफारिशें भी कर सकता है।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

19. नगरपालिकाएँ

(भाग-9क, अनुच्छेद-243 (त) से 243 (य छ.) तक)

नगरों में स्थानीय स्वायत्त शासन की संस्थाओं की स्थापना के लिए 74वें संशोधन द्वारा संविधान में भाग-9(क) जोड़ा गया है। भाग-9(क) में नगरों के लिए प्राय: दो प्रकार के निकायों की व्यवस्था है—

अ. स्थानीय जनसेवा के लिए संस्थाएँ।

ब. विकास योजनाओं के लिए संस्थाएँ।

नगरपालिकाओं का गठन

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-243(थ) के अंतर्गत तीन प्रकार की नगरपालिकाओं की व्यवस्था है—

- *नगर पंचायत* : सामान्यत: 10,000 से 20,000 तक की जनसंख्या वाले नगरीय क्षेत्रों के लिए नगर पंचायत का गठन किया जाता है। प्राय: ये क्षेत्र ग्रामीण से नगरीय क्षेत्र में संक्रमणशील होते हैं।
- *नगर परिषद्* : इनका गठन प्राय: छोटे नगरों के लिए निर्दिष्ट है, जिनकी जनसंख्या 20,000 से 3 लाख तक होती है।
- *नगर निगम* : इनका संगठन महानगरों के लिए किया जाता है, जिनकी जनसंख्या 3 लाख से अधिक है।

जमशेदपुर (बिहार), भिलाई (छत्तीसगढ़) आदि औद्योगिक नगरों के लिए नगरपालिकाओं का गठन करना अनिवार्य नहीं है, क्योंकि वहाँ औद्योगिक स्थापन द्वारा नगरपालिका सेवाएँ दी जा रही हैं।

संरचना

प्रत्येक नगर को क्षेत्रीय निर्वाचन क्षेत्रों में बाँटा गया है, जिन्हें 'वार्ड' कहते हैं। नगरपालिका के सदस्य इन्हीं वार्डों में से प्रत्यक्ष निर्वाचन द्वारा चुने जाते हैं। 3 लाख से अधिक जनसंख्या होने पर एक या अधिक वार्डों के लिए समितियाँ गठित की जा सकती हैं। वैसे, राज्य का विधानमंडल कुछ अतिरिक्त समितियाँ भी गठित कर सकता है, जिनके अध्यक्षों को नगरपालिका का सदस्य बनाया जा सकता है।

नगरपालिकाओं से संबंधित अनुच्छेद

243 P परिभाषाएं

243 Q नगरपालिकाओं का गठन

243 R नगरपालिकाओं की संरचना

243 S वार्ड समितियों आदि का गठन और संरचना

243 T स्थानों का आरक्षण

243 U नगरपालिकाओं की अवधि आदि

243 V सदस्यता के लिए निर्हताएं/अयोग्यताएं

243 W नगरपालिकाओं आदि की शक्तियां, प्राधिकार और उत्तरदायित्व

243 X नगर पालिकाओं, द्वारा कर अधिरोपित करने की शक्ति और उनकी निधियां

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

243 Y वित्त आयोग
243 Z नगरपालिकाओं के लेखाओं की संपरीक्षा
243 ZC नगरपालिकाओं के लिए निर्वाचन
243 ZB संघ राज्य क्षेत्रों को लागू होना
243 ZC इस भाग का कतिपय क्षेत्रों को लागू न होना
243 ZD जिला योजना के लिए समिति
243 ZE महानगर योजना के लिए समिति
243 ZF विद्यमान विधियों और नगरपालिकाओं का बना रहना
243 ZG निर्वाचन संबंधी मामलों में न्यायालयों के हस्तक्षेप का निषेध

अवधि

सामान्यत: नगरपालिका का कार्यकाल 5 वर्ष निर्धारित किया गया है, जो उसकी पहली बैठक से आरंभ होता है। इस समय-सीमा से पूर्व भी नगरपालिका विघटित की जा सकती है। विघटन की दशा में छह महीनों के अंतर्गत चुनाव संपन्न होना अनिवार्य है।

सदस्यों के लिए अर्हताएँ

नगरपालिका के सदस्यों के लिए न्यूनतम आयु-सीमा 21 वर्ष है। इसके साथ ही उसे राज्य विधानमंडल के लिए निर्वाचन संबंधी अन्य अर्हताएँ पूरी करनी चाहिए।

नगरपालिका के कार्य एवं अधिकार

संविधान की बारहवीं अनुसूची में नगरपालिकाओं के प्रमुख कार्य हैं— भूमि उपयोग, नगर में सफाई की व्यवस्था करना, पेयजल आपूर्ति, पर्यावरण संरक्षण, नगरीय निर्धनता उन्मूलन, सड़कों का निर्माण, पुलों का निर्माण, लोक-स्वास्थ्य, अग्निशमन सेवा, उद्यानों की देखभाल एवं विकास, खेल के लिए मैदान, सड़कों पर प्रकाश, पार्किंग स्थल, जन्म और मृत्यु पंजीकरण आदि। इनके अतिरिक्त विकास एवं सामाजिक न्याय के लिए योजनाएँ बनाकर उन्हें कार्यान्वित करना भी इनका कार्य है।

आय के स्रोत

नगरपालिकाओं की आय के प्रमुख स्रोत हैं—

- विधानमंडल द्वारा प्राधिकृत कर, शुल्क आदि नगरपालिकाओं द्वारा लगाना।
- राज्य द्वारा संगृहीत कर, शुल्क आदि, जो नगरपालिका को निर्दिष्ट किए गए हैं।
- नगर की संचित निधि में से नगरपालिका की सहायता।

जिला योजना का निर्माण

प्रत्येक राज्य के विधान के अनुसार उस राज्य में जिला स्तर पर जिला योजना समिति द्वारा प्रत्येक जिले में पंचायतों और नगरपालिकाओं द्वारा सम्पूर्ण जिले के विकास के लिए समेकित जिला योजना तैयार की जाएगी, जिससे जिले का समग्र विकास संभव होगा। इस समिति में पंचायतों तथा नगरपालिकाओं के सदस्य जनसंख्या के

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

अनुपात में होंगे तथा इन विकास योजनाओं को एकीकरण करके राज्य की विकास योजना बनेगी। इस प्रकार अनुच्छेद 243ZD में विकेन्द्रीकृत योजना एवं विकास का मूल सन्निहित है।

महानगर योजना

अनुच्छेद 243ZE में जिला योजना के ढांचे पर महानगर योजना एवं विकास का प्रारूप है। इसमें वार्ड समितियों का प्रावधान है। पर महानगर योजना में विशेषज्ञ व्यक्तियों, संगठनों तथा सस्थाओं को भी सम्मिलित करने की भी व्यवस्था है। महानगर योजना समितियां भी अपनी योजनाएं राज्य सरकार को भेजेंगी जिन्हें राज्य की वार्षिक या पंचवर्षीय योजनाओं में सम्मिलित किया जाएगा। तथा उसी प्रकार विकास के लिए धनराशि आवंटित की जाएगी।

अत: विकेन्द्रीकृत योजना प्रणाली का प्रावधान संविधान में एक क्रांतिकारी कदम है।

भाग -9 (ख), सहकारी समितियों का गठन एवं संचालन (अनुच्छेद 243ZH से 243ZT)

पंचायतों एवं नगरपालिकाओं के ढांचे पर सन् 2011 में 97वें संविधान में संशोधन करके अनुच्छेद 243ZH से लेकर अनुच्छेद 243ZT जोड़े गए हैं इन प्रावधानों से सहकारी समितियों में विकेन्द्रीक्रत प्रबन्ध व्यवस्था लागू होगी तथा वे निरंतर कार्यरत रहेंगी। इन संशोधनों को लागू करने में समय लगेगा, क्योंकि राज्यों को अपने सहकारी समितियों से संबंधित अधिनियमों को संविधान के इन उपबंधों के अनुसार परिवर्तित करना पड़ेगा। पर इतना निश्चय है कि इस संवैधनिक पदक्षेप से सहकारी समितियों पर निहित स्वार्थों की पकड़ क्रमशः कम होती

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

20. संघ और राज्य के बीच संबंध

(भाग-11, अध्याय-1 व 2, अनुच्छेद-245 से 263 तक)

संविधान के आधार पर देश की राजनीतिक संरचना कुछ इस प्रकार की गई है कि देश के 29 राज्य अपनी-अपनी सरकारें बनाकर संविधान द्वारा प्रदत्त शक्तियों का उपयोग करने के लिए स्वतंत्र हैं, किंतु वे एक सूत्र में केंद्र द्वारा बँधे हुए हैं। संपूर्ण देश की सुरक्षा और शांति की स्थापना का दायित्व अंतिम रूप से केंद्रीय सरकार का है। इस प्रकार यहाँ द्वैध शासन की व्यवस्था है, यानी राज्य की अपनी सरकारें भी हैं और उन पर अंतिम अंकुश के रूप में केंद्रीय सरकार भी है।

डॉ. अंबेडकर के शब्दों में, ''संघीय संविधान एक द्वैध शासन की स्थापना करता है, जिसके केंद्र में संघ सरकार और उसके चारों तरफ घेरे में राज्य सरकारें हैं। संविधान द्वारा निश्चित अलग-अलग क्षेत्रों में इन्हें प्रभुसत्ता प्राप्त है। ये अपने-अपने क्षेत्र में एक-दूसरे के अधीन नहीं हैं और दोनों सत्ताओं में परस्पर समन्वय है।''

इस प्रकार संविधान द्वारा केंद्र और राज्यों को अलग-अलग अधिकार दिए गए हैं। दोनों के बीच शक्तियों का अपरिवर्तनीय विभाजन है, जैसी संयुक्त राज्य अमेरिका में भी व्यवस्था है।

संघ और राज्यों के संबंधों के प्रकार

भारत में संघ और राज्यों के बीच मुख्यत: तीन प्रकार के संबंध संविधान द्वारा निर्धारित किए गए हैं—

विधायी संबंध

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-245(1) के अंतर्गत संसद् को यह अधिकार दिया गया है कि वह देश के संपूर्ण राज्य-क्षेत्र अथवा उसके किसी भाग के लिए विधि बना सकेगी और किसी राज्य का विधानमंडल संपूर्ण राज्य या उसके किसी भाग के लिए विधि बना सकेगा।

संघ और राज्यों के बीच विधायी संबंधों का निरूपण अनुच्छेद-245 से 255 तक में किया गया है, जिनके प्रमुख बिंदु इस प्रकार हैं—

- संसद् द्वारा और राज्यों के विधानमंडलों द्वारा बनाई गई विधियों की विषय-वस्तु (अुनच्छेद-246)
- कुछ अतिरिक्त न्यायालयों की स्थापना का उपबंध करने की संसद् की शक्ति (अनुच्छेद-247)
- अवशिष्ट विधायी शक्तियां (अनुच्छेद-248)
- राज्य-सूची के विषय के संबंध में राष्ट्रीय हित में विधि बनाने की संसद् की शक्ति (अनुच्छेद-249) अस्तित्व
- यदि आपातकाल की घोषणा अस्तित्व में हो तो राज्य-सूची के विषय के संबंध में विधि बनाने की संसद् की शक्ति (अनुच्छेद-280)
- संसद् द्वारा अनुच्छेद-249 और अनुच्छेद-250 के अधीन बनाई गई विधियों और राज्यों के विधानमंडलों द्वारा बनाई गई विधियों में असंगति (अनुच्छेद-251)
- दो या अधिक राज्यों के लिए उनकी सहमति से विधि बनाने की संसद् की शक्ति और ऐसी विधि का किसी अन्य राज्य द्वारा अंगीकृत किया जाना (अनुच्छेद- 252)
- अंतरराष्ट्रीय करारों को प्रभावी करने के लिए विधान (अनुच्छेद-253)

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

- संसद् द्वारा बनाई गई विधियों और राज्यों के विधानमंडलों द्वारा बनाई गई विधियों में असंगति (अनुच्छेद-254)
- सिफारिशों और पूर्व मंजूरी के बारे में अपेक्षाओं को केवल प्रक्रिया के विषय मानना (अनुच्छेद-255)

भारतीय संविधान के अंतर्गत शासन-प्रणाली संबंधी समस्त विषय 3 सूचियों में विभक्त किए गए हैं-

- *संघ सूची* : इस सूची में 97 विषय रखे गए हैं जिन पर केवल संसद् ही कानून बना सकती है। इस सूची के प्रमुख विषय इस प्रकार हैं—देश की जल, थल और नौसेनाओं का नियंत्रण, रक्षा, विदेशों से संबंध, परमाणु शक्ति संधि, युद्ध और शांति, राष्ट्रीय राजमार्ग, नागरिकता, देशीयकरण, सामुद्रिक परिवहन, बंदरगाह, वायुमार्ग, डाक और तार, विदेशी विनिमय, भारत का रिजर्व बैंक, बांटों और मापों के मानक, जनगणना, सांसद और राष्ट्रपति के निर्वाचन, सर्वोच्च न्यायालय का संगठन, संघीय लोकसेवाएँ, सीमा शुल्क, कृषि को छोड़कर आयकर, वस्तु एवं सेवा कर, आदि।
- *राज्य सूची* : संघ सूची के अनुपात में राज्य सूची छोटी है, जिसमें कुल 66 विषय रखे गए हैं। संघ के अधिकार अपेक्षाकृत अधिक हैं, जबकि राज्य के अधिकार-क्षेत्र पर्याप्त सीमित हैं। उन्हें देखते हुए ऐसा लगता है कि वे एक संघ के संवैधानिक अंग नहीं, अपितु उसके अधीन प्रांत हैं। राज्य सूची के प्रमुख विषय इस प्रकार हैं—लोक व्यवस्था अर्थात् शांति व्यवस्था, पुलिस, शिक्षा, बेरोजगारी, जेल सुधार, स्थानीय शासन सार्वजनिक स्वास्थ्य और सफाई, पुस्तकालय, कृषि, सिंचाई, भूमि-व्यवस्था, वन, खनिज विकास, स्थानीय निर्वाचन, राज्य की लोकसेवाएँ, भूमि-राजस्व, बिक्री-कर, मनोरंजन-कर, वाहन-कर आदि। राज्य सूची के इन विभिन्न विषयों से संबंधित कानून बनाने का अधिकार राज्यों के विधानमंडलों को दिया गया है।
- *समवर्ती सूची* : संघ सूची में राष्ट्रीय हित के विषय सम्मिलित हैं और राज्य सूची में स्थानीय तथा राज्य क्षेत्रीय, लेकिन समवर्ती सूची में स्थानीय और राष्ट्रीय दोनों के महत्त्व के विषय सम्मिलित हैं। यह सूची राज्य सूची से भी छोटी है, अर्थात् इसमें कुल 47 विषय सम्मिलित किए गए हैं, जिनमें से प्रमुख विषय इस प्रकार हैं—फौजदारी कानून व प्रक्रिया, निवारक नजरबंदी, विवाह और विवाह-विच्छेद, गोद लेना और उत्तराधिकार, संपत्ति का हस्तांतरण, श्रमिकों का कल्याण, औद्योगिक विवाद, खाद्य पदार्थों में मिलावट, आर्थिक और सामाजिक योजनाएँ, तकनीकी शिक्षा, आर्थिक और सामाजिक योजना, विद्युत, समाचार-पत्र, पुस्तक तथा मुद्रणालय, मूल्य-नियंत्रण आदि। इस सूची के विषयों पर संघ तथा राज्य—दोनों सरकारें कानून बना सकती हैं। विवादास्पद विषयों में संघीय कानून को ही प्रधानता दी जाएगी।

अब तक गठित अंतर्राज्यीय जल विवाद न्यायाधीकरण

नाम :कृष्णा जल विवाद न्यायाधिकरण

स्थापना :1969

संबंधित राज्य :महाराष्ट्र, कर्नाटक एवं आंध्र प्रदेश।

नाम :गोदावरी जल विवाद न्यायाधिकरण

स्थापना :1969

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

संबंधित राज्य :महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, मध्य प्रदेश।

नाम :नर्मदा जल विवाद न्यायाधिकरण

स्थापना :1969

संबंधित राज्य :राजस्थान, गुजरात, मध्य प्रदेश एवं महाराष्ट्र।

नाम :रावी तथा व्यास जल विवाद न्यायाधिकरण

स्थापना :1986

संबंधित राज्य :पंजाब, हरियाणा एवं राजस्थान।

नाम :कावेरी जल विवाद न्यायाधिकरण

स्थापना :1990

संबंधित राज्य :कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु एवं पुडुचेरी।

नाम :द्वितीय कृष्णा जल विवाद न्यायाधिकरण

स्थापना :2004

संबंधित राज्य :महाराष्ट्र, कर्नाटक एवं आंध्र प्रदेश।

नाम :वंशधारा जल विवाद न्यायाधिकरण

स्थापना :2010

संबंधित राज्य :ओडिशा एवं आंध्र प्रदेश।

नाम :महानदी जल विवाद न्यायाधिकरण

स्थापना :2010

संबंधित राज्य :गोवा, कर्नाटक एवं महाराष्ट्र।

उपर्युक्त तीनों प्रकार की सूचियों में यद्यपि अधिकाधिक विषय शामिल करने का प्रयास किया गया है, किंतु कुछ विषय ऐसे भी हैं, जिनका उल्लेख इनमें से किसी सूची में नहीं है। ऐसे विषयों पर कानून बनाने का अधिकार संघ सरकार को सौंपा गया है। ये 'अवशिष्ट विषय' कहलाते हैं। इस प्रकरण में यह बात भी महत्त्वपूर्ण है कि केंद्र और राज्य को अलग-अलग विषयों पर कानून बनाने का अधिकार दिया गया है। कुछ विशेष परिस्थितियों में केंद्र राज्य सूची पर भी कानून बना सकता है। ये परिस्थितियाँ इस प्रकार हैं—

- *राष्ट्रीय हित के लिए* : राज्यसभा द्वारा दो-तिहाई बहुमत से इस आशय का प्रस्ताव पारित होने पर कि राष्ट्रीय

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

हित में अमुक विषय अनिवार्य है, इसलिए संसद् ही कानून बनाए, तब केंद्रीय सरकार उस विषय पर कानून बना सकती है। ऐसे प्रस्ताव की मान्यता अधिकतम 1 वर्ष तक रहती है। आवश्यकता पड़ने पर राज्यसभा दोबारा ऐसा प्रस्ताव पास कर सकती है। इस प्रकार के प्रस्तावों के अधीन बननेवाले कानून प्रस्ताव की अवधि समाप्त होने के बाद छह माह तक लागू रह सकते हैं।

● *राज्यों के विधानमंडलों द्वारा अनुरोध* : यदि दो या दो से अधिक राज्य-सूची के किसी विषय पर कानून बनाने में असमर्थ हों और उनके विधानमंडल दो-तिहाई बहुमत से संसद् द्वारा कानून बनाने का एक प्रस्ताव पारित कर दें, तो संसद् उस विषय में कानून बना सकती है। संसद् द्वारा बनाए गए ऐसे कानून को रद्द करने अथवा उनमें संशोधन करने का अधिकार भी संसद् के पास रहता है। राज्य विधानमंडलों को यह अधिकार प्राप्त नहीं है।

● संसद् को यह अधिकार प्राप्त है कि वह अन्य देश या देशों के साथ संघ के पालन के लिए कानून बना सकती है, भले ही ऐसे कानून का संबंध राज्य सूची के किसी विषय से हो।

● राष्ट्रपति द्वारा आपात्काल घोषित होने पर संसद् को यह अधिकार है कि वह राज्य सूची से संबंधित किसी भी विषय पर कानून बना सकती है। ऐसे कानून आपात्काल समाप्त होने के बाद अधिकतम छह महीने तक लागू रह सकते हैं।

● भारतीय संविधान के अंतर्गत राज्यपालों को कुछ विषयों में यह अधिकार दिया गया है कि वह उन विषयों से संबंधित विधेयकों को राष्ट्रपति की स्वीकृति के लिए रोक सकते हैं। इन विधेयकों में राज्य के साथ अथवा उसके भीतर व्यापार, वाणिज्य आदि पर लोकहित में प्रतिबंध लगाना होता है।

समग्रत: राज्यों पर संघ को विस्तृत विधायी अधिकार दिए गए हैं, ताकि देश में एक सबल केंद्रीय शासन की स्थापना की जा सके।

क्षेत्रीय परिषदों पर एक नजर

परिषद् :उत्तर क्षेत्रीय परिषद्

सदस्य :पंजाब, हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, राजस्थान, दिल्ली, चंडीगढ़ तथा जम्मू-कश्मीर।

मुख्यालय :नई दिल्ली

परिषद् :मध्य क्षेत्रीय परिषद्

सदस्य :मध्य प्रदेश, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड एवं छत्तीसगढ़।

मुख्यालय :इलाहाबाद

परिषद् :पूर्वी क्षेत्रीय परिषद्

सदस्य :बिहार, पश्चिम बंगाल, ओडीशा।

मुख्यालय :कोलकाता

परिषद् :पश्चिमी क्षेत्रीय परिषद्

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

सदस्य :महाराष्ट्र, गुजरात, गोवा, दमन एवं दीव तथा दादरा और नगर हवेली।

मुख्यालय :मुंबई

परिषद् :दक्षिणी क्षेत्रीय परिषद्

सदस्य :कर्नाटक, तमिलनाडु, आंध्र प्रदेश, तेलंगाना, केरल तथा पुडुचेरी।

मुख्यालय :चेन्नई

प्रशासकीय संबंध

भारतीय संविधान के अंतर्गत संघ शासन को अपने कानून कार्यान्वित करने के लिए राज्य के अधिकारियों पर निर्भर रहना पड़ता है, जबकि संघीय शासन व्यवस्था के अंतर्गत सामान्यत: संघ और राज्यों की सरकारों द्वारा बनाई गई विधियों के क्रियान्वयन के लिए अलग-अलग शासक वर्ग होने चाहिए। भारतीय संविधान में यह भी व्यवस्था है कि राष्ट्रपति किसी राज्य सरकार को किसी केंद्रीय विषय का प्रशासन सौंप सकते हैं।

प्रशासन के संबंध में संविधान के अंतर्गत संघीय कार्यपालिका को राज्यों की कार्यपालिका के लिए निर्देशन संबंधी निम्नलिखित अधिकार दिए गए हैं—

- *राज्यपाल की नियुक्ति* : राज्यों में राज्यपाल की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है। एक तरह से राज्य में राज्यपाल संघ के एजेंट के रूप में कार्य करते हैं। इसी रूप में केंद्र राज्यों पर अपना नियंत्रण बनाए रखता है। राज्यपाल की सेवाएँ राष्ट्रपति के प्रसादपर्यंत रह सकती हैं।
- *अखिल भारतीय सेवाएँ* : राज्यों में अखिल भारतीय सेवाओं के लिए नियुक्ति संघ लोक सेवा आयोग द्वारा की जाती है। इन सेवाओं के अधिकारी राज्यों में कितने ही ऊँचे पदों पर प्रतिष्ठित हो जाएँ, किंतु उनकी सेवाओं पर संघ शासन का ही अप्रत्यक्ष नियंत्रण रहता है। इस प्रकार इन सेवाओं के माध्यम से केंद्र सरकार राज्य की प्रशासनिक व्यवस्था को एक सीमा तक नियंत्रित करती है।
- *रेल-रक्षा* : भारत में रेल मार्गों का जाल बिछा है। प्रतिदिन सैकड़ों रेलगाड़ियाँ विभिन्न राज्यों में दौड़ती हैं। इनकी रक्षा से संबंधित समस्त उपायों के बारे में संघीय कार्यपालिका ही राज्य सरकारों को आवश्यक निर्देश देती है।
- *जल विवाद* : देश की कई नदियाँ विभिन्न राज्यों में प्रवाहित होती हैं। इसलिए विभिन्न राज्यों में उनके जल संबंधी बँटवारे को लेकर कभी-कभी वाद-विवाद होते रहते हैं, जिनका निपटारा केंद्र सरकार करती है। केंद्रीय संसद् को यह अधिकार है कि वह कानून द्वारा नदियों और नहरों के जल संबंधी विवादों का निपटारा करे। इन निर्णयों द्वारा भी एक प्रकार से राज्यों के प्रशासन पर केंद्र सरकार का ही नियंत्रण रहता है।
- *आर्थिक सहायता* : राज्यों की आर्थिक आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए केंद्रीय सरकार ही उन्हें वित्तीय सहायता देती है। किस राज्य को कितनी आर्थिक सहायता की आवश्यकता है, इसका निर्णय संसद् करती है। वित्तीय सहायता देते समय केंद्र सरकार राज्य की सरकारों को यथोचित आदेश दे सकती है।
- *राज्यों की शक्ति में कार्यवृद्धि करना* : संसद् को यह अधिकार दिया गया है कि वह अपने कानून द्वारा राज्य या उसके किसी अधिकारी को ऐसे अधिकार प्रदान कर सकती है, जिन पर राज्य के विधानमंडल को कानून बनाने का अधिकार नहीं है। इस दौरान नए अधिकारों के प्रयोग में होनेवाला अतिरिक्त व्यय केंद्र सरकार द्वारा वहन किया जाता है।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

- *क्षेत्रीय परिषदें* : राज्य पुनर्गठन अधिनियम, 1956 के अंतर्गत विभिन्न राज्य कुछ क्षेत्रीय परिषदों में रखे गए हैं। ये परिषदें राज्य के सामान्य हितों पर विचार करती हैं।
- *अनुसूचित जातियों और जनजातियों का कल्याण* : केंद्र सरकार का दायित्व है कि वह अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों का कल्याण करे। इस संदर्भ में केंद्रीय सरकार राज्य सरकारों को उचित सुझाव तथा निर्देश देती रहती है। अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजातियों की पहचान करना और उनकी उन्नति के लिए केंद्रीय सरकार राज्यों में आयोग का गठन कर सकती है।
- *संघ सूची के कुछ विषयों का राज्य सरकारों द्वारा क्रियान्वयन* : पासपोर्ट देने जैसे कुछ कार्य मूलत: संघ सूची के अंतर्गत आते हैं, किंतु यह कार्य राज्य सरकारों को सौंपा जा सकता है।

वित्तीय संबंध

भारतीय संविधान के अनुसार, सामान्यत: संघ और राज्य सरकारों की आय के साधन अलग-अलग हैं। कुछ अंशों में यह व्यवस्था सन् 1935 के अधिनियमों पर आधारित है। संविधान के अंतर्गत केंद्र और राज्यों के बीच आय के विभिन्न साधनों की प्रणाली इस प्रकार निर्धारित की गई है—

- *संघ की आय के साधन* : केंद्रीय सरकार द्वारा निम्नलिखित कर लगाए जा सकते हैं—कृषि आय के अतिरिक्त अन्य आय पर कर, शराब, अफीम, गाँजा, भाँग के अतिरिक्त तंबाकू, चीनी, कपास, मिट्टी का तेल आदि वस्तुओं पर उत्पादन-कर, सीमा-कर, वस्तु एवं सेवा कर आदि।
- *राज्यों की आय के साधन* : राज्यों की आय के साधन हैं—भूमि-राजस्व, कृषि भूमि पर संपत्ति कर, भूमि तथा भवन कर, बिक्री कर, विद्युत् शक्ति के उपभोग पर कर, विज्ञापन कर, वाहन कर आदि।
- *संघ तथा राज्यों के बीच आय का विभाजन* : संघ सूची के करों से पर्याप्त आय होती है, परंतु राज्य सूची के करों से लाभ की संभावना प्राय: नगण्य रहती है। इसलिए आय के निम्नलिखित साधन संघ द्वारा संगृहीत होकर भी पूर्णत: राज्यों को दिए जाते हैं—विनिमय-पत्रों, धनादेशों, प्रति-पत्रों, वहन-पत्रों, प्रत्यय-पत्रों, बीमाऋण-पत्रों, प्रतिपुरुष-पत्रों तथा रसीदों से संबंधित मुद्रांक कर।

अंतर्राज्यीय संबंधी अनुच्छेद : एक नजर में

अनुच्छेद विषय-वस्तु

लोक सेवा की पारंपरिक मान्यता आदि

261 लोक सेवा अभिलेख तथा न्यायिक प्रक्रिया।

जल संबंधी विवाद

262 अंतर-राज्यिय नदियों अथवा नदी घाटियों के जल से संबंधित विवादों के न्याय निर्णयन।

राज्यों के बीच संबंध

263 अंतर-राज्य परिषद से संबंधित प्रावधान।

अंतर राज्यीय व्यापार एवं वाणिज्य

301 व्यापार वाणिज्य तथा व्यावहारिक लेन-देन।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

302 व्यापार, वाणिज्य तथा व्यावहारिक लेन-देन पर प्रतिबंधकी संसद् की शक्तियां।
303 व्यापार एवं वाणिज्य के संबंध में केंद्र तथा राज्यों की विधायी शक्तियों पर प्रतिबंध।
304 राज्यों के बीच व्यापार, वाणिज्य एवं व्यावहारिक लेन-देन पर प्रतिबंध।
305 पहले से लागू कानूनों तथा राज्य के एकाधिकारों सेसंबंधित कानूनों की सुरक्षा।
306 पहली अनुसूची के भाग-बी में कतिपय राज्यों द्वारा व्यापार एवं वाणिज्य पर प्रतिबंध लगाने की शक्ति (निरस्त)।
307 अनुच्छेद 301 से 304 तक सन्निहित उद्देश्यों को कार्यान्वित करने के लिए प्राधिकारी की नियुक्ति।

इनके अतिरिक्त केंद्रीय सरकार द्वारा लगाए तथा वसूल किए जानेवाले इन करों से होने वाली आय उन राज्यों में बाँट दी जाती है, जिनमें ये कर वसूल किए जाते हैं—कृषि-भूमि को छोड़कर अन्य संपत्ति विषयक संपत्ति-शुल्क, स्टॉक एक्सचेंज के सौदों पर मुद्रांक करों के अतिरिक्त अन्य कर, रेल-भाड़ों पर कर, विज्ञापनकर आदि।

कुछ कर ऐसे भी हैं, जिनसे होनेवाली आय संघ और राज्यों के बीच बँट जाती है, उदाहरण के लिए—कृषि आय को छोड़कर अन्य आय पर केंद्रीय सरकार ही कर लगाएगी और वसूल भी करेगी, किंतु उससे होनेवाली आय राष्ट्रपति द्वारा निर्धारित विधि के आधार पर संघ और राज्य के बीच वितरित की जाएगी।

संविधान के अंतर्गत आयकर के विभाजन के संबंध में कहा गया है कि आयकर के केवल शुद्ध आगम का ही वितरण किया जाएगा। अभिप्राय यह है कि आयकर की वसूली में होनेवाला व्यय पहले ही काट लिया जाएगा। साथ ही संघ द्वारा अपने कर्मचारियों के वेतन, पेंशन आदि का भाग भी निकाल लिया जाएगा। शेष राशि में से राष्ट्रपति के निर्देशानुसार राज्यों का भाग दिया जाएगा।

वस्तु एवं सेवा कर

● अप्रैल, 2017 में 122वें संविधान संशोधन के द्वारा संपूर्ण देश में एकीकृत कर प्रणाली ''जीएसटी'' लागू हो गई। उसके द्वारा संविधान के 12 अनुच्छेदों के साथ-साथ छठवीं तथा सातवीं अनुसूची में आवश्यक संशोधन किये गये। जीएसटी को केन्द्र एवं राज्यों में लागू 20 से अधिक अप्रत्यक्ष करों के एवज में लाया जा रहा है। नई व्यवस्था के अंतर्गत कारोबारियों को तीन स्तरीय कर प्रणाली में रखा गया है अर्थात् सीजीएसटी, (केन्द्रीय वस्तु एवंसेवा अधिनियम), एसजीएसटी (राज्य) एवं आईजीएसटी(इंटीग्रेटेड)। यह कर सुधारों की दिशा में एक ऐतिहासिक कदम कहा जाता है जिससे कारोबारी कर विभागों के शोषण से राहत पायेंगे। पर उसमें सभी कार्यविधि सूचना प्रौद्योगिकी पर आधारित है जिसका पालन करना छोटे एवं मझोले व्यापारियों, उद्योगों तथा पेशेवर व्यक्तियों के लिए फिलहाल कठिन है। आशा है कि वस्तु एवं सेवा कर के नियमों तथा रिटर्नों का सरलीकृत किया जायेगा ताकि इस कर सुधार को भारतीय जनता सहजता से ग्रहण कर सके तथा देश में सरकारों के राजस्व में वृद्धि तथा कालाबाजारी बंद होने के साथ-साथ व्यापार, उद्योग तथा निर्यात में और वृद्धि हो।

● *राज्यों के लिए सहायता अनुदान* : केंद्रीय सरकार राज्य सरकारों को निम्नलिखित अनुदानों के रूप में सहायता देती है—

क. अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति अथवा अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन को ऊँचा उठाने हेतु प्रस्तुत विकास योजना के लिए।

ख. असम के जनजातीय क्षेत्र में विकास एवं प्रशासन को ऊँचा उठाने के लिए।

ग. राज्यों को आर्थिक संकट से बचाने हेतु पीड़ितों की सहायता करने के लिए।

● *ऋण व्यवस्था* : संविधान के अनुच्छेद-292 और 293 के अंतर्गत यह व्यवस्था है कि राज्य सरकारें अपने-अपने

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

विधानमंडलों द्वारा समय-समय पर निर्धारित सीमाओं पर अपनी संचित निधि की अमानत पर ऋण ले सकती हैं।

- *अन्य वित्तीय व्यवस्थाएँ*: अन्य वित्तीय व्यवस्थाएँ इस प्रकार हैं—

क. राज्य के क्षेत्र में स्थित संघ की संपत्ति पर राज्य सरकार कोई कर नहीं लगा सकती।

ख. संघ सरकार को भी राज्य सरकारों की संपत्ति पर कर लगाने का अधिकार नहीं है।

ग. राज्य सरकार के व्यापार पर केंद्रीय सरकार कर लगा सकती है। राज्य-क्षेत्र से बाहर होनेवाले क्रय-विक्रय अथवा आयात-निर्यात पर कर लगाने का अधिकार राज्य सरकार को नहीं है। ऐसे मामलों में केवल केंद्रीय सरकार द्वारा ही कर निर्धारित किया जा सकता है।

घ. विविध राज्यों के पारस्परिक व्यापार अथवा अंतरराज्यीय व्यापार के लिए संसद् द्वारा महत्त्वपूर्ण माल पर कर लगाने का अधिकार राज्य सरकारों को नहीं है। इस संबंध में केंद्रीय सरकार ही समुचित व्यवस्था करती है।

संचित निधि

संघ सरकार को कर एवं कर्ज द्वारा प्राप्त संचित निधि का धन केवल उसी निधि से खर्च किया जा सकता है, जिसका प्रतिपादन संविधान द्वारा या उसके अधीन बने कानून द्वारा किया गया हो। इसमें राज्य की समस्त आय ऋणों द्वारा प्राप्त धन और ऋणों के भुगतान से प्राप्त आय शामिल होगी।

आकस्मिक निधि

भारत सरकार के पास आकस्मिक निधि की भी व्यवस्था है, क्योंकि हर सरकार को प्राय: ऐसे खर्च करने पड़ते हैं, जिनकी कोई व्यवस्था बजट में नहीं होती और ऐसे मामलों में तत्काल व्यवस्थापन विभाग विचार-विमर्श करने में असमर्थ होता है। अत: ऐसे अवसरों के लिए आकस्मिक निधि सँजोई जाती है। संघ की इस आकस्मिक निधि पर राष्ट्रपति का पूर्ण नियंत्रण रहता है। इस निधि में डाली जाने वाली राशियों के लिए संसद् समय-समय पर कानून बनाती रहती है। राज्य सरकारों के पास भी ऐसी ही आकस्मिक निधि की व्यवस्था संविधान द्वारा की गई है, जिस पर राज्यपाल का नियंत्रण रहता है।

ऋण लेने की व्यवस्था

संविधान के अनुच्छेद-282-293 के अंतर्गत भारत सरकार संसद् द्वारा और राज्य सरकारें राज्यों के विधानमंडलों द्वारा समय-समय पर निर्धारित सीमाओं के भीतर अपनी संचित निधि के आधार पर ऋण ले सकती हैं।

उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट है कि सभी मामलों में केंद्रीय सरकार का महत्त्वपूर्ण स्थान है। स्वतंत्र होते हुए भी राज्यों को केंद्रीय सरकार के अधीन कार्य करना पड़ता है। इस संदर्भ में राज्य की अपेक्षा केंद्र के अधिकार व्यापक हैं।

- सरकारिया आयोग की सिफारिशों को दृष्टि में रखते हुए राष्ट्रीय मोर्चा सरकार ने 28 मई, 1990 को अंतर्राज्यीय परिषद् का गठन एक आदेश के तहत किया। परिषद् की साधारण सभा का गठन प्रधानमंत्री, सभी राज्यों के मुख्यमंत्रियों तथा 6 कैबिनेट स्तर के मंत्रियों से किया गया। अन्य संबंधित मंत्रियों को भी परिषद् की बैठक में आमंत्रित करने का प्रावधान रखा गया, जब उनके विभाग से संबंधित मामलों पर विचार हो रहा हो। दिसंबर, 1996 में गृहमंत्री की अध्यक्षता में इस परिषद् की स्थायी समिति का गठन किया गया, जो परिषद् के समक्ष विचार-विमर्श हेतु आनेवाले विभिन्न मुद्दों का गहराई से अध्ययन करने के लिए एक कोर ग्रुप के रूप में कार्य करेगी।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

- 11 नवंबर, 1999 को अंतर्राज्यीय परिषद् का पुनर्गठन किया गया। परिषद् की 20 मई, 2000 को आयोजित छठी बैठक में राज्यों की वित्तीय हालत और देश की आंतरिक सुरक्षा प्रमुख मुद्दे रहे। राज्यों ने बैठक में जहाँ केंद्रीय करों में उनका हिस्सा मौजूदा 29 प्रतिशत से बढ़ाकर 33.3 प्रतिशत करने की माँग की, वहीं केंद्र ने उन्हें आश्वस्त किया कि वित्तीय संकट से उबरने के लिए सरकारिया आयोग व वित्त आयोग की सिफारिशों से हटकर मदद की जाएगी।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

21. संघ एवं राज्यों के अधीन सेवाएँ

(भाग-14, अध्याय-1-2, अनुच्छेद-308 से 323 तक)

राज्य का कार्य केवल सुरक्षा और न्याय तक ही सीमित नहीं है, बल्कि सामाजिक कल्याण के कार्य करना भी उसी का दायित्व है, जिसके लिए उसे लोक सेवाओं की व्यवस्था करनी पड़ती है। इन्हीं सेवाओं के माध्यम से जहाँ एक ओर लोककल्याण संभव है, वहीं दूसरी ओर प्रशासन सुचारु रूप से चल सकता है।

लोक सेवाओं का महत्त्व प्रतिपादित करते हुए एच.वी. कामत ने ठीक ही कहा था, ''स्वतंत्रता प्राप्त करने के पश्चात् लोक सेवाओं की हमारी जिम्मेदारी बन गई है। लोक सेवाएँ शासन की कुशलता को बना भी सकती हैं और बिगाड़ भी सकती हैं।

शासन की मशीन देश की उन्नति, प्रगति तथा शासन के लिए अत्यंत महत्त्वपूर्ण होती है। एक कुशल लोक सेवा के बिना देश उन्नति नहीं कर सकता, चाहे देश के मामलों को सुलझाने के लिए सबसे ऊपर बैठे नेताओं की इस बारे में कितनी ही सदिच्छा हो।''

देश के विभिन्न कर्मचारियों एवं प्रबंधकर्ताओं का समूह लोकसेवकों की श्रेणी में गिना जाता है, उनके कार्यों को 'सेवा' कहा जाता है। वर्तमान राजनीतिक व्यवस्था के अंतर्गत कार्यपालिका दलबंदी के आधार पर कार्य करती है, जबकि राज्य का प्रशासन कार्यकुशल एवं अनुभवी, लोक सरकारी कर्मचारियों द्वारा संपादित होता है। कार्यपालिका कार्यनीति निर्धारित करती है, लोकसेवाएँ इन नीतियों को जनजीवन में व्यावहारिक रूप से लागू करती हैं।

लोकसेवाओं के पदाधिकारी अपने-अपने विभाग के कार्यों का गहन अध्ययन करते हैं। वे मंत्रियों के समक्ष अनेक गंभीर समस्याएँ प्रस्तुत करते हैं और उनके संबंध में समुचित तर्कयुक्त सुझाव देते हैं, जिसके आधार पर मंत्रिगण निर्णय और नीति का निर्धारण करते हैं।

इसका यह अर्थ कदापि नहीं है कि मंत्री प्रशासनिक अधिकारियों के हाथों की कठपुतली होते हैं। वस्तुत: मंत्रिगण इन अधिकारियों के परामर्श के आधार पर कार्य करते हैं। लोकसेवक अर्थात् प्रशासनिक अधिकारी एवं कर्मचारीगण सरकार के वैतनिक कर्मचारी होते हैं, जिन्हें समय-समय पर निर्धारित वेतन दिया जाता है तथा सेवानिवृत्ति पर पेंशन दी जाती है।

आधुनिक प्रशासनिक व्यवस्था के अंतर्गत लोकसेवकों के दायित्व एवं कर्तव्य अगणित हैं। वे केवल शांति और व्यवस्था बनाए रखने के लिए ही कार्य नहीं करते, अपितु वाणिज्य, बाजारों एवं व्यवसायों को भी नियंत्रित रखते हैं। इसके अतिरिक्त शासन की योजना और विकास के कार्यक्रमों का संचालन, मूल्य-नियंत्रण, विकास की योजना आदि जटिल समस्याओं को हल करते हैं।

सरकारिया आयोग के अनुसार, अखिल भारतीय सेवाएँ आज भी उतनी ही आवश्यक हैं, जितनी वे तब थीं, जबकि संविधान बनाया गया था। आयोग के अभिमत में ''अखिल भारतीय सेवाओं के सदस्यों ने स्वयं को उन भूमिकाओं को पूरा करने में योग्य सिद्ध किया है, जो संविधान निर्माताओं ने उनके लिए निर्दिष्ट की थीं।''

संसद् ने अनुच्छेद-312 के अधीन अखिल भारतीय सेवाएँ अधिनियम, 1951 बनाया और उसके अधीन पहले से ही सन् 1948 में गठित आई.ए.एस. तथा आई.पी.एस. की अखिल भारतीय सेवाओं के अलावा कतिपय अन्य अखिल भारतीय सेवाओं का गठन किया है। सन् 1966 में भारतीय वन सेवा का गठन किया गया। सन् 1977 में

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

'अखिल भारतीय न्यायिक सेवा' का सृजन हुआ पर उसका आज तक गठन न हो सका।

संघ एवं राज्यों के अधीन सेवाओं का वर्गीकरण

संघ एवं राज्यों के अधीन सेवाओं को चार वर्गों में रखा जाता है—

अखिल भारतीय सेवाएँ

ये सेवाएँ 15 अगस्त, 1947 से पूर्व देश की शीर्षस्थ सेवाओं में परिगणित की जाती थीं। इसके साथ-साथ भारतीय पुलिस सेवा भी इसी वर्ग में आती थी। ये दोनों सेवाएँ भले ही ब्रिटिश साम्राज्य की देन रही हों, किंतु देश की एकता एवं अखंडता की दृष्टि से स्वाधीनता प्राप्त होने के पश्चात् भी इन सेवाओं की आवश्यकता बरकरार रही।

संविधान के अनुच्छेद-312 में यह प्रावधान किया गया है कि संघ और राज्यों के लिए समान रूप से एक अथवा उससे अधिक अखिल भारतीय सेवाओं का गठन किया जाए। अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवा और भारतीय पुलिस सेवा संविधान के अनुच्छेद-312 के संदर्भ में संसद् द्वारा गठित समझी जानी चाहिए।

अखिल भारतीय सेवाओं की एक प्रमुख विशेषता यह है कि इन सेवाओं के कर्मचारियों की भर्ती केंद्रीय सरकार द्वारा की जाती है, किंतु इनकी सेवाएँ विभिन्न राज्यों के कैडर के तहत होती हैं। इन कर्मचारियों पर राज्य तथा केंद्र—दोनों के मातहत काम करने का दायित्व होता है।

अखिल भारतीय सेवा का यह पहलू भारतीय संघ की एकता के स्वरूप को दृढ़ बनाता है। अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवा, भारतीय पुलिस सेवा और भारतीय वन सेवा में से आई.ए.एस. कैडर के नियंत्रण का अधिकार कार्मिक लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय के पास है।

इन तीनों सेवाओं में अधिकारियों की भर्ती संघ लोक सेवा आयोग द्वारा की जाती है, जिनके प्रशिक्षण का काम केंद्रीय सरकार करती है और फिर इन्हें विभिन्न राज्यों के कैडर में भेज दिया जाता है।

वर्तमान काल में 21 कैडरों सहित तीन संयुक्त कैडर भी हैं, जैसे—1. असम और मेघालय, 2. मणिपुर और त्रिपुरा, 3. अरुणाचल प्रदेश, गोवा, मिजोरम और केंद्रशासित प्रदेश। सरकारिया आयोग के अनुसार अखिल भारतीय सेवाएँ आज भी उतनी ही प्रासंगिक एवं आवश्यक हैं जितनी वे तब थीं, जब संविधान बनाया गया था।

संविधान के अनुसार अखिल भारतीय सेवाएँ निम्नलिखित हैं—

अखिल भारतीय सेवाएँ

इसके अंतर्गत अखिल भारतीय प्रशासनिक सेवा, भारतीय पुलिस सेवा और भारतीय वन सेवा आती हैं। स्वाधीनता प्राप्त करने से पहले पहली दोनों सेवाओं को इंडियन सिविल सर्विसेज (ICS) कहा जाता था। सन् 1966 में 'भारतीय वन सेवा' के नाम से एक नई अखिल भारतीय सेवा गठित की गई। इस सेवा के अंतर्गत कर्मचारियों को केंद्र या राज्य सरकार के अधीन काम करना पड़ता है।

प्रशासनिक सेवाओं के लिए त्रिस्तरीय अखिल भारतीय परीक्षा 'संघ लोक सेवा आयोग' द्वारा आयोजित की जाती है। पहली परीक्षा प्रारंभिक स्तर पर होती है, जिसे उत्तीर्ण करने वाले प्रत्याशी उसकी मुख्य परीक्षा में बैठ सकते हैं।

मुख्य परीक्षा उत्तीर्ण कर लेने पर प्रत्याशियों को एक साक्षात्कार समिति के समक्ष उपस्थित होना पड़ता है। यहाँ भी उत्तीर्ण होने पर उन्हें मसूरी में स्थापित राष्ट्रीय प्रशासनिक अकादमी में प्रशिक्षित किया जाता है। आरंभ में इन

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

कर्मचारियों को जूनियर वेतनमान के अंतर्गत नियुक्त किया जाता है। धीरे-धीरे कार्यानुभव के आधार पर उन्हें वरिष्ठ पद का वेतनमान दिया जाने लगता है। विशेष योग्यता प्रदर्शित करनेवाले अधिकारियों को किसी डिवीजन का कमिश्नर या राजकीय विभाग का सचिव बना दिया जाता है। केंद्रीय सचिवालय में इसी श्रेणी के अधिकारीगण सचिव, संयुक्त सचिव आदि पदों पर कार्य करते हैं। यहाँ कुशलतापूर्वक कार्य करने पर उनकी पदोन्नति विभाग या मंत्रालय के सेक्रेटरी के रूप में की जा सकती है।

भारतीय विदेश सेवा

प्रमुख देशों से आर्थिक एवं राजनीतिक संपर्क सुदृढ़ बनाए रखने के लिए केंद्रीय सरकार प्राय: सभी प्रमुख देशों में अपने राजदूत और वाणिज्य दूत नियुक्त करती है। इसके अतिरिक्त छोटे-छोटे देशों में देश के प्रतिनिधि नियुक्त किए जाते हैं। विदेशों में कार्य करने के लिए ऐसे अधिकारियों और कर्मचारियों की नियुक्ति की जाती है, जिनका चयन भारतीय विदेश सेवा की विभिन्न परीक्षाओं में उत्तीर्ण होने पर किया जाता है।

अखिल भारतीय पुलिस सेवा

पुलिस के उपाधीक्षक से लेकर महानिदेशक तक के अधिकारी इसी सेवा के अंतर्गत आते हैं, जिनका चयन अखिल भारतीय पुलिस सेवा के अंतर्गत विभिन्न परीक्षाओं को उत्तीर्ण करने के बाद किया जाता है।

अखिल भारतीय लेखा निरीक्षण सेवाएँ

आयात-निर्यात और केंद्रीय उत्पादन शुल्क सेवा तथा प्रतिरक्षा विभागीय लेखा सेवा के लिए विभिन्न अधिकारियों की नियुक्ति इन्हीं सेवाओं के अंतर्गत की जाती है।

अखिल भारतीय डाक सेवा

अखिल भारतीय डाक विभाग के उच्च अधिकारी भी इसी प्रतियोगिता परीक्षा के द्वारा चयनित होते हैं।

भारतीय रेल सेवा

भारतीय रेल सेवा के अंतर्गत रेलवे के समस्त कर्मचारी एवं अधिकारी इसी सेवा के अंतर्गत नियुक्त किए जाते हैं।

अखिल भारतीय सेवा (संशोधन) अधिनियम, 1963 के आधार पर अखिल भारतीय सेवाओं की सूची में नई सेवाएँ भी सम्मिलित की गई हैं, जैसे—भारतीय इंजीनियरी सेवा, भारतीय वन सेवा और भारतीय आयुर्विज्ञान सेवा, भारतीय सांख्यिकी सेवा और भारतीय आर्थिक सेवा। उच्चतम न्यायालय ने भारत सरकार को यह निर्देश दिया है कि वह अखिल भारतीय न्यायिक सेवा की स्थापना के लिए कदम उठाए।

केंद्रीय सचिवालय सेवाएँ

केंद्रीय सचिवालय की तीन सेवाएँ हैं—केंद्रीय सचिवालय, केंद्रीय सचिवालय आशुलिपिक सेवा और केंद्रीय सचिवालय लिपिक सेवा।

राज्य सेवा

इसमें राज्य सूची में शामिल विषयों से संबंधित सेवाएँ आती हैं।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels & English & Hind

रक्षा सेवाएं

इसके अंतर्गत जल, थल एवं वायु सेना से संबंधित सेवाएं आती हैं।

संघ या राज्य के सिविल सेवकों को संरक्षण (अनु.-311)

भारतीय संविधान का अनुच्छेद-311 संघ एवं राज्य के सिविल सेवकों को तीन संरक्षण प्रदान करता है—

- नियुक्तिकर्ता के नीचे के प्राधिकारी द्वारा पदच्युत न किए जाने का।
- युक्तियुक्त सुनवाई का अवसर दिए जाने का।
- आपराधिक मामले में दोष सिद्ध होने पर या जाँचकर्ता अधिकारी द्वारा यह लिखकर दिए जाने पर कि युक्तियुक्त जाँच नहीं की जा सकती है या राज्यपाल या राष्ट्रपति द्वारा देश की सुरक्षा के हित में जाँच न करने का आदेश होने पर नहीं लागू होगा।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

22. कुछ वर्गों के संबंध में विशेष उपबंध

(भाग-16, अनुच्छेद-330 से 342 तक)

हमारे देश में कुछ ऐसे इलाके हैं, जो रहन-सहन, शिक्षा आदि की दृष्टि से प्रायः पिछड़े हुए हैं। उनका सामाजिक और भौतिक विकास नहीं हो पाया है। भारतीय संविधान के अंतर्गत भाग-16 के अनुच्छेद-330 से लेकर 342 तक ऐसे ही अनुसूचित क्षेत्रों के लिए निर्धारित हैं। राजस्थान, बिहार तथा मध्य प्रदेश के अलावा दक्षिण भारतीय कई राज्यों में ऐसे विशेष अनुसूचित क्षेत्र आज भी विद्यमान हैं।

संवैधानिक व्यवस्था

अनुसूचित क्षेत्रों के बारे में संविधान के अंतर्गत निम्नलिखित व्यवस्था की गई है—

राज्य का शासन

संविधान के अनुसार अनुसूचित क्षेत्र का शासन उसी राज्य सरकार के अधीन रहेगा, जिस राज्य के अधीन वह क्षेत्र हो, किंतु शासन पर नियंत्रण संघ सरकार का है। संघ सरकार ऐसे मामलों में राज्य सरकार को आवश्यक निर्देश देती रहती है। इन क्षेत्रों की प्रगति के संबंध में राज्यपाल द्वारा प्रतिवर्ष राष्ट्रपति के समक्ष रिपोर्ट प्रस्तुत की जाती है।

राज्य सरकार को यह अधिकार भी दिया गया है कि वह संघ सरकार की सहमति से ऐसे क्षेत्रों के लिए विशेष कानून बना सके।

ये कानून राष्ट्रपति की स्वीकृति के बाद संबंधित क्षेत्र में लागू किए जा सकते हैं। सामान्यतः संसद् या राज्य के विधानमंडलों द्वारा बनाए गए कानून अनुसूचित क्षेत्रों पर भी लागू होते हैं, किंतु यदि राज्यपाल चाहें तो वे ऐसे कानूनों का क्रियान्वयन अनुसूचित क्षेत्रों के लिए रोक सकते हैं।

राष्ट्रपति को अनुच्छेद-341 के द्वारा यह अधिकार दिया गया है कि वह किसी राज्य या संघ राज्य-क्षेत्र की जातियों, मूल वंशों या जनजातियों या उनके भागों को उस राज्य या संघ राज्य के क्षेत्र के संबंध में अनुसूचित जातियाँ निर्धारित कर सके। राज्य के संबंध में घोषणा करने से पूर्व राष्ट्रपति उस राज्य के राज्यपाल से परामर्श ले सकते हैं।

आदिवासी परामर्शदात्री परिषद्

अनुसूचित क्षेत्र वाले राज्यों में अनिवार्यतः एक आदिवासी परामर्शदात्री परिषद् का गठन किया गया है जिसकी अधिकतम सदस्य-संख्या 20 रहती है।

यह परिषद् अनुसूचित क्षेत्रों की प्रगति और कल्याण के लिए कार्य करेगी। इसके साथ ही परिषद् ऐसे क्षेत्रों में अनुशासन बनाए रखने के लिए कानून के संबंध में राज्यपाल को परामर्श भी देती है। उसके ये परामर्श अपनी ओर से नहीं, बल्कि राज्यपाल द्वारा वांछित होते हैं।

जनजातियों के संबंध में विशेष उपबंध

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

अनुच्छेद-330 के अंतर्गत पाँचवीं अनुसूची में परिगणित की गई जनजातियों के हितों की रक्षा और उनकी उन्नति के लिए निम्नलिखित व्यवस्थाएँ हैं—

- लोकसभा और विधानसभाओं में इन जातियों के लिए स्थान सुरक्षित रखे गए हैं। आरक्षित स्थानों की संख्या का अनुपात राज्य या संघ राज्य-क्षेत्र में उनकी जनसंख्या के आधार पर निर्धारित किया जाएगा। संविधान में यह आरक्षण सन् 1960 तक ही रखा गया था, क्योंकि उस समय तक यह धारणा थी कि इन 10 वर्षों में ये अनुसूचित जातियाँ और अनुसूचित जनजातियाँ विकास-पथ पर अग्रसर हो जाएँगी, किंतु जब 10 वर्षों में यह स्थिति नहीं आई तो पुनः अगले 10 वर्षों के लिए यह समय-सीमा बढ़ा दी गई। कुछ राजनीतिक कारणों से इसी प्रकार 10-10 वर्षों के लिए यह आरक्षण बढ़ता रहा। वर्तमान अवधि संविधान के अनुच्छेद-334 के अंतर्गत सन् 2010 तक के लिए निश्चित की गई थी।
- लोकसभा और विधानसभाओं के समान सरकारी नौकरियों में भी इन जातियों के लिए स्थान सुरक्षित रखने की व्यवस्था की गई है।
- संविधान ने राष्ट्रपति को अधिकृत भी किया है कि वह इन जातियों की रक्षा एवं उन्नति के लिए राज्य सरकारों को उचित आदेश दें।
- संविधान में यह भी व्यवस्था की गई है कि राष्ट्रपति द्वारा एक आयोग का गठन किया जाए, जो इन जातियों की शासन-व्यवस्था के संबंध में समय-समय पर अपनी रिपोर्ट राष्ट्रपति को दे सके।

अनुसूचित क्षेत्रों से संबंधित आदेश

आदेश का नाम :अनुसूचित क्षेत्र (भाग-अ राज्य) आदेश 1950

संबद्ध राज्यों का नाम :आंध्र प्रदेश एवं तेलंगाना

आदेश का नाम :अनुसूचित क्षेत्र (भाग-ब राज्य) आदेश 1950

संबद्ध राज्यों का नाम :आंध्र प्रदेश एवं तेलंगाना

आदेश का नाम :अनुसूचित क्षेत्र (हिमाचल प्रदेश) आदेश 1975

संबद्ध राज्यों का नाम :हिमाचल प्रदेश

आदेश का नाम :अनुसूचित क्षेत्र (बिहार, गुजरात, मध्य

संबद्ध राज्यों का नाम :गुजरात एवं ओडिशा

आदेश का नाम :प्रदेश तथा उड़ीसा) आदेश 1977

संबद्ध राज्यों का नाम :—

आदेश का नाम :अनुसूचित क्षेत्र (राजस्थान राज्य) आदेश 1981

संबद्ध राज्यों का नाम :राजस्थान

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

आदेश का नाम :अनुसूचित क्षेत्र (महाराष्ट्र) आदेश, 1985

संबद्ध राज्यों का नाम :महाराष्ट्र

आदेश का नाम :अनुसूचित क्षेत्र (छत्तीसगढ़, झारखंड और

संबद्ध राज्यों का नाम :मध्य प्रदेश

आदेश का नाम :मध्य प्रदेश) आदेश 2003

संबद्ध राज्यों का नाम :—

आदेश का नाम :अनुसूचित क्षेत्र (झारखंड राज्य) आदेश 2007

संबद्ध राज्यों का नाम :झारखंड

ऐंग्लो-इंडियन समुदाय

ऐंग्लो-इंडियन समुदाय के लिए भी संविधान में विशेष उपबंध की व्यवस्था की गई है। इस समुदाय से लोकसभा में समुचित प्रतिनिधित्व न होने पर राष्ट्रपति को यह अधिकार है कि वह इस समुदाय के दो सदस्यों को लोकसभा के लिए मनोनीत कर सकते हैं। राज्यों में यही अधिकार राज्यपालों को दिया गया है। वे ऐंग्लो-इंडियन समुदाय के एक सदस्य को विधान परिषद् में मनोनीत कर सकते हैं।

संविधान के अंतर्गत ऐंग्लो-इंडियन समुदाय की शिक्षा और विकास के लिए आर्थिक अनुदान की भी व्यवस्था की गई है। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के समान ऐंग्लो-इंडियन समुदाय के लिए भी यह आरक्षण सन् 2026 तक के लिए बढ़ा दिया गया था।

असम के जनजातीय क्षेत्र का शासन

असम की जनजातियों के संदर्भ में संविधान में अलग से व्यवस्था की गई है। इन जनजातियों के आबादी वाले क्षेत्रों को 'कबाइली क्षेत्र' कहा गया है। असम के स्वायत्त जिले में एक जिला परिषद् की स्थापना की यह व्यवस्था संविधान ने दी है। इस परिषद् में सदस्य-संख्या 24 निर्धारित की गई है। इन सदस्यों में से तीन चौथाई सदस्यों का निर्वाचन वयस्क मताधिकार के द्वारा किया जाता है। जिला परिषद् का कार्य जिले तक ही सीमित रहता है। इसलिए संविधान ने प्रत्येक स्वायत्त क्षेत्र के लिए प्रादेशिक परिषद् के गठन का भी प्रावधान रखा है।

विशेष वर्गों के लिए विशिष्ट प्रावधानों से जुड़े अनुच्छेद

अनुच्छेद संख्या :330

विषय-वस्तु :लोकसभा में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लिए सीटों का आरक्षण

अनुच्छेद संख्या :330(A)

विषय-वस्तु :विधानमंडलों में अनुसूचित जाति एवं जनजाति के लिए सीटों का आरक्षण

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

अनुच्छेद संख्या :331

विषय-वस्तु :लोकसभा में आंग्ल-भारतीय समुदाय का प्रतिनिधित्व

अनुच्छेद संख्या :332

विषय-वस्तु :राज्यों की विधानसभाओं में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लिए सीटों का आरक्षण

अनुच्छेद संख्या :333

विषय-वस्तु :राज्यों की विधानसभाओं में आंग्ल-भारतीय समुदाय का प्रतिनिधित्व

अनुच्छेद संख्या :338

विषय-वस्तु :अनुसूचित जातियों तथा अनुसूचित जनजाति के लिए राष्ट्रीय आयोग

अनुच्छेद संख्या :338(1)

विषय-वस्तु :अनुसूचित जनजातियों के लिए राष्ट्रीय आयोग

अनुच्छेद संख्या :339

विषय-वस्तु :अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन एवं अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के बारे में नियंत्रण

अनुच्छेद संख्या :340

विषय-वस्तु :पिछड़े वर्गों की स्थिति की जांच के लिए आयोग की नियुक्ति

पिछड़े वर्गों के लिए आयोग

संविधान के अनुच्छेद-340 के अंतर्गत राष्ट्रपति को यह अधिकार दिया गया है कि वे देश में पिछड़े वर्गों की जाँच करने के लिए एक आयोग का गठन करें। इस आयोग का मुख्य कार्य पिछड़े वर्गों की उन्नति के उपायों की ओर केंद्रीय और राज्य सरकारों का ध्यान आकर्षित करना है। आयोग इस कार्य के लिए उचित अनुदान की माँग कर सकता है। सन् 1953 में इस आयोग का गठन किया गया था, तब से यह आयोग निरंतर अपना कार्य करता आ रहा है।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

23. समस्या राजभाषा की

(भाग-17, अध्याय-1-4, अनुच्छेद-343 से 351 तक)

संविधान की रचना-प्रक्रिया के समय देश संक्रमण के दौर से गुजर रहा था। हाल ही में भारतीय जनता को लंबे संघर्ष के बाद ब्रिटिश शासन के शिकंजे से मुक्ति मिली थी और पाकिस्तान के रूप में भारत का एक भाग विभाजित होकर अलग हो गया था, जिसकी मर्मांतक कसक जनता में व्याप्त थी। इस दौरान हुए सांप्रदायिक दंगों ने जनसामान्य की कमर तोड़ दी थी, हजारों लोग मारे गए थे। इसके साथ ही देश भर की तमाम छोटी-छोटी रियासतों को एक ही झंडे के नीचे लाना टेढ़ी खीर लग रही थी।

संक्रमणकालीन इन तमाम समस्याओं के बीच एक और महत्त्वपूर्ण समस्या थी—राजभाषा और राष्ट्रभाषा की, जो संपूर्ण देश को एक सूत्र में पिरो सके। यों तो भारत जैसे विशाल देश में अनेक भाषाएँ और बोलियाँ अस्तित्व में थीं, किंतु मुख्य रूप से तीन भाषाओं का ही प्रभुत्व था-अंग्रेजी, हिंदुस्तानी और हिंदी। अंग्रेजी मुट्ठी भर प्रबुद्धों की भाषा बन गई थी, जो संविधान-रचना में सक्रिय होने के साथ-साथ सत्ता के लिए भी उम्मीदवार थे। 'हिंदुस्तानी' आम भारतीयों की जुबान पर चढ़ी हुई थी और हिंदी अपने नए रंग-ढंग के साथ विकास-पथ पर अग्रसर थी, जिससे भारतीय जनमानस को बहुत आशाएँथीं।

इनमें से अंग्रेजी को राजभाषा या राष्ट्रभाषा बनाने का प्रश्न ही नहीं था, क्योंकि यह विदेशी भाषा थी। मुख्य विवाद था—हिंदुस्तानी और हिंदी के बीच। संविधान-सभा की नियम समिति द्वारा बनाए गए नियम-29 में कहा गया था—''सभा में कामकाज हिंदुस्तानी (हिंदी या उर्दू) या अंग्रेजी में किया जाएगा...सभापति की अनुमति से कोई भी सदस्य सदन को अपनी मातृभाषा में संबोधित कर सकता है।'' इसके अतिरिक्त संविधान की मौलिक अधिकार उपसमिति द्वारा तैयार किए गए प्रारूप के अनुसार हिंदुस्तानी को राजभाषा का स्थान दिया गया था, जो विकल्पत: फारसी या देवनागरी में लिखी जा सकती थी।

16 जुलाई, 1947 को कांग्रेस संसदीय दल में राजभाषा के संदर्भ में विचार-विमर्श किया गया कि हिंदी और हिंदुस्तानी में से किसे राजभाषा बनाया जाए। जवाहरलाल नेहरू, मौलाना आजाद, सरदार पटेल आदि वरिष्ठ नेताओं ने 'हिंदुस्तानी' का समर्थन किया। इससे पहले महात्मा गांधी भी 'हिंदुस्तानी' का समर्थन कर चुके थे। जब कांग्रेस संसदीय दल में इस विषय पर मतदान हुआ तो हिंदी के 63 समर्थक थे और हिंदुस्तानी के 32 समर्थक। फलत: फरवरी, 1948 में जब संविधान का प्रारूप सामने आया तो उसमें राजभाषा के लिए 'हिंदी' शब्द था, 'हिंदुस्तानी' नहीं।

मुंशी-आयंगर सूत्र

संविधान-सभा में राजभाषा संबंधी भाग का प्रारूप तैयार करने के लिए एक प्रारूप समिति का गठन किया गया था, जिसमें श्यामाप्रसाद मुखर्जी, भीमराव अंबेडकर, मौलाना आजाद आदि 16 सदस्य थे। इनमें से राजभाषा भाग का प्रारूप तैयार करने में कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी और गोपाल स्वामी आयंगर ने विशेष भूमिका निभाई थी, इसीलिए संविधान के राजभाषा संबंधी भाग को 'मुंशी-आयंगर सूत्र' के नाम से भी जाना जाता है।

संविधान के राजभाषा भाग का स्वरूप

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hind

संविधान का सत्रहवाँ भाग राजभाषा से संबंधित है, जिसमें चार अध्याय हैं-

1. संघ की भाषां
2. प्रादेशिक भाषाएँ।
3. उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय आदि की भाषा।
4. विशेष निदेश।

राजभाषा के रूप में हिंदी की प्रतिष्ठा

संविधान के अनुच्छेद-343 के अंतर्गत संघ की राजभाषा के रूप में हिंदी को प्रतिष्ठित किया गया है। इसकी लिपि 'देवनागरी' मानी गई है, किंतु मजेदार बात यह है कि देवनागरी के अंक स्वीकार नहीं किए गए। संविधान में हिंदी के लिए जिन अंकों को स्वीकार किया गया है, उन्हें 'भारतीय अंकों का अंतरराष्ट्रीय रूप' कहा गया है।

यहाँ उल्लेखनीय है कि दाशमिक प्रणाली, स्थान मूल्य प्रणाली एवं 1, 2, 3, 4 आदि अंकों का आविष्कार भारत में हुआ था। बाद में अरब के लोगों ने ये अंक सीखे, जहाँ इन्हें हिंदसा (हिंद का) कहा गया। अरब से ये अंक यूरोप गए, तब यूरोपवासियों ने इन्हें 'अरबी अंक' कहा। इन्हीं अंकों को संविधान में 'भारतीय अंकों का अंतरराष्ट्रीय रूप' कहा गया है। वस्तुत: ये अंक भारतीय यानी देवनागरी हैं। यह बात अलग है कि कालांतर में इन अंकों के स्वरूप में कुछ बदलाव आ गया है, जो उनके विकास का परिणाम एवं सूचक है।

राजभाषा हिंदी बनाम अंग्रेजी

यह एक विडंबना ही है कि संविधान के अनुच्छेद-343 खंड (1) में जहाँ हिंदी को राजभाषा घोषित किया गया है, वहीं खंड (2) में यह भी कहा गया है कि संविधान के लागू होने की तिथि से 15 वर्षों तक संघ के उन सभी शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा का प्रयोग जारी रहेगा, जिनके लिए उस तारीख से पहले प्रयोग किया जा रहा था। इस प्रकार खंड (1) का सारा प्रभाव समाप्त हो जाता है।

इस उपबंध का कारण यह था कि उस समय तक सारा राजकाज अंगे्रजी में होता था। प्राय: सभी अधिकारियों पर अंग्रेजी का नशा छाया था और हिंदी में राजकाज की शब्दावली प्राय: विकसित नहीं हुई थी। संविधान के रचनाकारों की धारणा थी कि आगामी 15 वर्षों में हिंदी में राजकाज एवं विधि की शब्दावली विकसित हो जाएगी, तब अंग्रेजी स्वत: कार्यक्षेत्र से निकल जाएगी, किंतु हुआ इसके विपरीत। जिस अनुपात में हिंदी की शब्दावली विकसित हुई, प्राय: उसी अनुपात में अंग्रेजी की जड़ें और मजबूत हुईं। नतीजा सामने है। आज भी अंगे्रजी राजकाज में छाई हुई है, भले ही वह राजभाषा न हो।

अंग्रेजी के इस वर्चस्व को राजभाषा अधिनियम, 1963 ने और भी बल प्रदान किया, जिसे सन् 1967 में संशोधित भी किया गया था। इस अधिनियम की धारा-3 में अंग्रेजी के प्रयोग के पक्ष में यह खुली छूट भी दे दी गई कि उन सभी प्रयोजनों के लिए अनिश्चित काल तक अंग्रेजी का प्रयोग किया जा सकेगा, जिनके लिए उसका प्रयोग संविधान के आरंभ में किया जाता था।

इसका अर्थ यह नहीं है कि हिंदी का प्रयोग राजभाषा के रूप में नहीं होगा। वास्तव में 26 जनवरी, 1965 से ही हिंदी राजभाषा बन गई है। इन अधिनियमों द्वारा केवल वैकल्पिक रूप में अंग्रेजी के प्रयोग की सुविधा दी गई है अर्थात् अंग्रेजी को वैकल्पिक राजभाषा कहा जा सकता है।

राजभाषा आयोग

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

संविधान के अनुच्छेद-344 के अंतर्गत सन् 1955 में राजभाषा आयोग का गठन किया गया, जिसके अध्यक्ष थे श्री वी.जी. खेर। इस आयोग में विभिन्न भारतीय भाषाओं का प्रतिनिधित्व करने वाले 20 सदस्य थे। संविधान के अनुच्छेद-344 (1) के अनुसार सन् 1960 में एक अन्य आयोग का गठन किया जाना था, किंतु किन्हीं कारणों से सरकार ने इस आयोग का गठन नहीं किया।

संविधान के अनुसार, आयोग का यह कर्तव्य है कि वह निम्नलिखित मुद्दों पर राष्ट्रपति से सिफारिश करे—

- संघ के शासकीय प्रयोजनों के लिए हिंदी भाषा के अधिकाधिक प्रयोग।
- संघ के सभी या किन्हीं शासकीय प्रयोजनों के लिए अंग्रेजी भाषा के प्रयोग पर निर्बंधन।
- अनुच्छेद-348 में उल्लिखित उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों और विधेयकों में प्रयोग की जाने वाली भाषा।
- संघ के किसी एक या अधिक विनिर्दिष्ट प्रयोजनों के लिए प्रयोग किए जानेवाले अंकों के रूप।
- संघ की राजभाषा तथा संघ और किसी राज्य के बीच या एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच पत्रादि की भाषा तथा उनके प्रयोग के संबंध में राष्ट्रपति द्वारा आयोग को निर्देशित कोई अन्य विषय।

अनुच्छेद-344 में यह भी उपबंध है कि राजभाषा आयोग की जाँच करने और उस पर अपने विचार राष्ट्रपति को प्रतिवेदित करने के लिए संसदीय समिति का गठन किया जाए। इसी आधार पर सन् 1957 में तत्कालीन गृह मंत्री द्वारा प्रस्तावित संकल्प के आधार पर संसद् ने एक समिति का गठन किया था, जिसके अध्यक्ष थे गोविंद वल्लभ पंत। उक्त समिति में लोकसभा के 20 और राज्यसभा के 10 सदस्य थे।

प्रादेशिक भाषाएँ

यों तो संघ की राजभाषा हिंदी है, किंतु राज्यों की राजभाषा क्या होगी—इस संबंध में संविधान के अनुच्छेद-345 के अंतर्गत राज्यों को यह अधिकार दिया गया है कि वे राज्य में प्रयोग की जानेवाली भाषाओं में से किसी एक या अधिक को या हिंदी को विधि बनाकर राज्य की राजभाषा घोषित कर सकते हैं। इस आधार पर अधिकतर राज्यों ने राज्य की प्रमुख भाषा को राजभाषा घोषित कर दिया है, जैसे—महाराष्ट्र में मराठी, गुजरात में गुजराती, पंजाब में पंजाबी, केरल में मलयालम आदि।

राजभाषा से जुड़ी एक समस्या यह भी है कि एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच तथा एक राज्य और संघ के बीच पत्रादि की संपर्क भाषा क्या हो? संविधान का अनुच्छेद-346 इस मामले में राजभाषा का निर्देश देता है, किंतु राजभाषा अधिनियम के अनुसार अंग्रेजी का प्रयोग अनुज्ञात है। वैसे अनुच्छेद-346 के 'परंतुक' के अनुसार दो या अधिक राज्य आपस में अपने मध्य शासकीय भाषा निर्धारित कर सकते हैं।

राजभाषाएँ

1. असमिया
2. बँगला
3. गुजराती 4. हिंदी
5. कन्नड़
6. कश्मीरी
7. कोंकणी
8. मलयालम

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

9. मणिपुरी
10. मराठी
11. नेपाली
12. ओड़िया
13. पंजाबी
14. संस्कृत
15. सिंधी
16. तमिल
17. तेलुगु
18. उर्दू
19. बोडो
20. डोगरी
21. मैथिली
22. संथाली

न्यायालयों की भाषा

संविधान के अनुच्छेद-348 के अनुसार, संसद् द्वारा विधि बनाकर उपबंधित होने तक उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय की समस्त कार्यवाहियों की भाषा अंग्रेजी होगी। [संसद ने सरकार के उच्चतम स्तर के निर्णय से यह अपना अधिकार उच्चतम न्यायालय को सौंप दिया कि उनकी सिफारिश के बिना उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय में हिन्दी का प्रयोग नहीं होगा।] इन पर 15 वर्ष की समय-सीमा लागू नहीं है, किंतु राजभाषा अधिनियम 1963 (धारा 7) में उपबंधित है कि राष्ट्रपति की पूर्वानुमति से उच्च न्यायालय के निर्णयों, डिक्रियों या आदेश के लिए हिंदी या उस राज्य की राजभाषा का प्रयोग किया जा सकता है।

मातृभाषा : प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की सुविधाएं होनी चाहिए।

हिंदी भाषा के विकास के लिए निर्देश

अनुच्छेद-351 में हिंदी भाषा के विकास के लिए संघ को निर्देश दिया गया है, ताकि यह भारत की सभ्यता एवं संस्कृति के सभी तत्त्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके।

अत: संविधान में भाषा संबंधी प्रावधानों को पढ़कर यह स्पष्ट है कि संविधान निर्माताओं का अंतर्निहित उद्देश्य था, हिन्दी को भारत की राष्ट्रभाषा के रूप में स्थापित करना। हिन्दी को राष्ट्रभाषा घोषित करना एक घोषणा मात्र होगी, एक पवित्र घोषणा तथा इसके लिए संविधान में कोई संशोधन करने की आवश्यकता नहीं है। राजभाषा विषयक जो कार्य योजनाएं चल रही हैं, वे कच्छप गति से चलती रहेंगी। इसका सुफल यह होगा कि प्रगतिशील भारत को राष्ट्रध्वज और राष्ट्रीय गान के साथ एक और पहचान प्राप्त हो जाएगी, जो उसकी अस्मिता तथा एकता की प्रतीक होगी।

❑

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

24. आपात उपबंध

(भाग-18, अनुच्छेद-352 से 360 तक)

भारतीय संविधान में तीन प्रकार के आपात् या असाधारण परिस्थितियों का उल्लेख है, जिसके कारण संविधान द्वारा स्थापित सामान्य शासन-तंत्र से विचलन किया जा सकता है—

1. राष्ट्रीय आपात।
2. संवैधानिक राज्य में राष्ट्रपति शासन।
3. वित्तीय आपात।

राष्ट्रीय आपात

अनुच्छेद-352 के अनुसार, यदि राष्ट्रपति को यह विश्वास हो जाता है कि युद्ध, बाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह से भारत या उसके राज्य-क्षेत्र के किसी भाग की सुरक्षा संकट में है, तो वह आपात की उद्घोषणा कर सकता है। दूसरे प्रकार के आपात से अलग दर्शाने के लिए इसे 'राष्ट्रीय आपात' कहा जाता है।

यह उद्घोषणा वास्तव में ऐसी किसी घटना के होने से पहले भी की जा सकती है, अर्थात् जब युद्ध, बाह्य आक्रमण या सशस्त्र विद्रोह की आशंका हो। राष्ट्रपति ऐसी कोई उद्घोषणा तब तक नहीं करेंगे, जब तक प्रधानमंत्री और मंत्रिमंडल स्तर के अन्य मंत्री ऐसी घोषणा करने के लिए लिखित रूप में उनसे सिफारिश नहीं करते। इस घोषणा की संवैधानिकता को संभवत: दुर्भावनापूर्ण होने के आधार पर न्यायालय में प्रश्नगत किया जा सकता है।

ऐसी प्रत्येक उद्घोषणा को संसद् के दोनों सदनों के समक्ष रखा जाएगा और यदि दोनों सदन विशेष बहुमत द्वारा उसे पारित नहीं करते, तो उद्घोषणा की तारीख से एक मास की समाप्ति पर उद्घोषणा प्रवर्तन में नहीं रहेगी। यदि उद्घोषणा के समय या उसके एक मास के भीतर लोकसभा का विघटन हो गया, तो उस सदन के पुनर्गठन के पश्चात् पहली बैठक होने की तारीख से तीस दिनों तक उद्घोषणा प्रभावी बनी रहेगी, लेकिन इस बीच राज्यसभा से इसका अनुमोदन किया जाना आवश्यक है। संसद् के दोनों सदनों द्वारा अनुमोदित होने के पश्चात् यह उद्घोषणा 6 महीने तक प्रभावी रह सकती है। उसके बाद पुन: संसद् द्वारा इसका अनुमोदन होना अनिवार्य है।

अनुमोदन के संकल्प को पारित करने के लिए लोकसभा की विशेष बैठक बुलाने के उद्देश्य से सदन के कम-से-कम 1/10 सदस्य लोकसभा के अध्यक्ष को या राष्ट्रपति को (यदि सदन सत्र में नहीं है तो) इस प्रयोजन के लिए सदन की विशेष बैठक बुलाने के लिए लिखित सूचना दे सकते हैं। अध्यक्ष या राष्ट्रपति ऐसी सूचना प्राप्त होने की तारीख के 14 दिनों के भीतर विशेष बैठक बुलाएँगे।

आपात की उद्घोषणा का प्रभाव

आपात की उद्घोषणा का प्रभाव निम्नलिखित रूप में पड़ता है—

- आपात् की उद्घोषणा के अधीन भारत सरकार को किसी राज्य को किसी भी विषय पर निर्देश देने की शक्ति प्राप्त हो जाती है। राज्य सरकार निलंबित नहीं होती है, पर वह संघ की कार्यपालिका के पूर्ण नियंत्रण में आ जाती है।
- जब उद्घोषणा लागू होगी, तब संसद् विधि द्वारा लोकसभा की अवधि एक वर्ष तक बढ़ा सकती है, पर यह

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

अवधि उद्घोषणा समाप्त होने पर 6 माह से आगे नहीं बढ़ाई जा सकती है।

- राष्ट्रीय आपात की उद्घोषणा लागू रहने के दौरान राज्य सूची के विषय में विधान बनाने का अधिकार मिल जाता है।
- आपात उद्घोषणा के दौरान बनाया गया कानून आपातकाल की समाप्ति के 6 माह बाद अप्रभावी हो जाता है।
- आपात की उद्घोषणा के दौरान राष्ट्रपति संवैधानिक उपचारों का अधिकार तथा अनुच्छेद-19 को निलंबित कर सकता है।
- आपात उद्घोषणा के दौरान भी अनुच्छेद-20 और 21 द्वारा दी गई स्वतंत्रता को स्थगित नहीं किया जा सकेगा।

देश में अब तक तीन बार राष्ट्रीय स्तर पर बाह्य आपात अवस्था लगाई जा चुकी हैं।

संवैधानिक तंत्र की विफलता से आपात

भारतीय संविधान के अनुच्छेद-356 में कहा गया है कि यदि राष्ट्रपति को राज्यपाल की रिपोर्ट के माध्यम से या अन्यथा वह संतुष्ट हो जाते हैं कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है, जिसमें किसी राज्य विशेष का शासन संविधान के उपबंधों के अनुसार नहीं चलाया जा सकता, तो राष्ट्रपति उद्घोषणा द्वारा-

- उस राज्य की कार्यपालिका के सभी या आंशिक कार्य स्वयं ले सकेंगे, केवल उच्च न्यायालय की शक्तियों को छोड़कर।
- ऐसी उद्घोषणा द्वारा संघ न्यायिक कृत्यों को छोड़कर राज्य प्रशासन की सभी शक्तियों पर नियंत्रण प्राप्त कर लेता है अर्थात् राज्य विधानमंडल की शक्तियों का प्रयोग संसद् द्वारा किया जा सकेगा।

जब उद्घोषणा द्वारा विधानमंडल निलंबित कर दिया गया हो, तब—

- संसद् उस राज्य के लिए विधान बनाने की शक्ति राष्ट्रपति या अन्य किसी प्राधिकारी को दे सकती है।
- जब लोकसभा का सत्र न चल रहा हो तब संसद् द्वारा व्यय की मंजूरी दिए जाने तक राष्ट्रपति राज्य की संचित निधि से व्यय प्राधिकृत कर सकेंगे।

अनुच्छेद-356 के अधीन की गई आपात उद्घोषणा का उद्घोषणा की तिथि से दो माह के भीतर संसदीय अनुमोदन अनिवार्य है, अन्यथा यह उद्घोषणा प्रभावी नहीं रहेगी। परंतु यदि यह उद्घोषणा तब की जाती है, जब लोकसभा का विघटन हो गया हो अथवा लोकसभा का विघटन उद्घोषणा की तिथि के 2 माह के भीतर हो गया हो तथा इस उद्घोषणा का अनुमोदन राज्यसभा द्वारा तय कर दिया गया हो, लेकिन लोकसभा द्वारा अनुमोदन नहीं हो पाया हो, तो यह उद्घोषणा उस तिथि से लोकसभा द्वारा उसके पुनर्गठन के बाद की पहली बैठक के 30 दिनों के भीतर अवश्य अनुमोदित हो जानी चाहिए, अन्यथा यह उद्घोषणा प्रभावी नहीं रहेगी।

इस प्रकार संसदीय अनुमोदन प्राप्त उद्घोषणा उस तिथि से 6 माह की अवधि के भीतर निष्प्रभावी हो जाएगी, जिस तिथि को उद्घोषणा जारी की गई थी। जाहिर है कि किसी राज्य में धारा-356 के अधीन राष्ट्रपति शासन की अवधि 6 मास की होती है, लेकिन संसद् इस अवधि को संकल्प पारित कर पुन: 6 मास के लिए बढ़ा सकती है। इस प्रकार उक्त अवधि को छह-छह मास के लिए बार-बार बढ़ाया जा सकता है, किंतु यह कुल अवधि तीन वर्ष से अधिक नहीं हो सकती है।

अब तक अनेक बार अनुच्छेद-356 का प्रयोग किया जा चुका है। कहते हैं कि संविधान के इस अनुच्छेद का सबसे अधिक दुरुपयोग हुआ है। उच्च न्यायालय तथा उच्चतम न्यायालय द्वारा इन निर्णयों या आदेशों का पुनर्विलोकन के कारण राष्ट्रपति शासन संबंधी परम्परा स्थिर हो रही है तथा विधान- सभा में बहुमत सिद्ध करना अंतिम उपाय उभर रहा है।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

वित्तीय आपात

अनुच्छेद-360 के अनुसार यदि राष्ट्रपति को यह विश्वास हो जाता है कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है, जिससे भारत या उसके राज्य-क्षेत्र के किसी भाग का वित्तीय स्थायित्व संकट में है तो वह पूरे भारत या राज्य विशेष में वित्तीय आपात की उद्घोषणा कर सकता है।

इस अवधि के दौरान, जिसमें यह उद्घोषणा प्रवृत्त रहती है—राष्ट्रपति संघ के कार्यकलाप के संबंध में सेवा करनेवाली सभी या किसी वर्ग के व्यक्तियों के जिनके अंतर्गत उच्चतम तथा उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश भी हैं, वेतनों और भत्तों में कमी करने के लिए निर्देश देने में सक्षम होगा।

इस अवधि में पारित किसी भी धन अथवा वित्त विधेयक को राष्ट्रपति के विचारार्थ आरक्षित रखना होगा।

ऐसी उद्घोषणा सामान्यतया दो माह के लिए लागू रहेगी, इस अवधि के समाप्त होने से पहले ही संसद् के दोनों सदनों के संकल्पों द्वारा उसे अनुमोदित किया जाना अनिवार्य है। यदि दो माह के भीतर ही लोकसभा का विघटन हो जाए, तो पुनर्गठित लोकसभा की प्रथम बैठक के तीस दिनों के भीतर ही उद्घोषणा का अनुमोदन करनेवाला संकल्प पारित होना अनिवार्य है। राष्ट्रपति उद्घोषणा करने के पश्चात् किसी भी समय उसे वापस ले सकते हैं।

देश में अब तक एक बार भी वित्तीय आपात नहीं लगाया गया है। राज्य सरकारों की वित्तीय अनिमितताओं तथा वित्तीय दुर्बलता को दृष्टिगोचर करके भविष्य में इस अनुच्छेद का प्रयोग भी हो सकता है।

आपातकाल में केंद्र और राज्यों के वित्तीय संबंध

जब अनुच्छेद-352(1) के अधीन आपात की उद्घोषणा होती है, तब राष्ट्रपति निर्देश दे सकते हैं कि वह उद्घोषणा जिस वित्तीय वर्ष में समाप्त होती है, उस समय तक संघ और राज्यों के बीच करों के विभाजन और सहायता अनुदान से संबंधित सभी या कुछ उपबंध निलंबित रहेंगे।

जब राष्ट्रपति द्वारा अनुच्छेद-360(1) के अधीन वित्तीय आपात की उद्घोषणा की जाती है, तब वह संघ और राज्यों को यह निर्देश दे सकते हैं कि-

- वे वित्तीय उपयोग के औचित्य संबंधी ऐसे सिद्धांतों और अन्य रक्षा के उपायों का पालन करें, जो निर्देश में उल्लिखित किए गए हैं।
- राज्य के कार्यकलाप के संबंध में सेवा करने वाले सभी व्यक्तियों के वेतन और भत्ते कम कर दिए जाएँ। इसमें सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय के न्यायाधीश भी सम्मिलित हैं।
- राज्य के विधानमंडल द्वारा पारित किए जाने के पश्चात् सभी धन और वित्त विधेयक राष्ट्रपति के विचारार्थ आरक्षित किए जाएँ।

❑

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

25. संविधान का संशोधन

(भाग-20, अनुच्छेद-368)

भारतीय संविधान की रचना में तत्कालीन प्राय: सभी योग्य राजनीतिज्ञों, प्रतिष्ठित सामाजिक कार्यकर्ताओं, अर्थशास्त्रियों, वकीलों आदि को संविधान-सभा में प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया था। इसलिए इसमें प्राय: सभी क्षेत्रों के कल्याण की भावना अनुस्यूत है, फिर भी संविधान के रचनाकारों को इस बात का आभास था कि भविष्य में देश, समाज आदि परिस्थितियों में समयानुकूल बदलाव आने पर संविधान में संशोधन की आवश्यकता पड़ सकती है। यह सुरक्षा-वाल्व की भांति कार्य करता है।

इस संदर्भ में संविधान-सभा में विस्तृत चर्चा हुई थी, जिसके आधार पर संविधान के 20वें भाग में विशिष्ट प्रावधानों के अंतर्गत समय की आवश्यकताओं के अनुरूप परिवर्तन / संशोधन करने की व्यवस्था की गई। संविधान में संशोधन की एक निश्चित प्रक्रिया का समावेश किया गया है, जिसके आधार पर समय-समय पर भारतीय संविधान में संशोधन होते रहे हैं।

संविधान-संशोधन की प्रक्रिया प्राय: हर वर्ष किसी-न-किसी रूप में जारी रहती है। इन संशोधनों के द्वारा कभी कुछ प्रावधानों को जोड़ा गया है या कभी मूल प्रावधानों को हटाया तक गया है। यहाँ गौरतलब है कि संविधान में सभी संशोधन तब किए गए हैं, जब सामाजिक, राजनीतिक संदर्भ में तनाव तथा दबाव महसूस किए गए। अत: उसी के आधार पर संशोधनों के लिए यथोचित पृष्ठभूमि बनाई गई।

यद्यपि संशोधन की यह पद्धति सटीक एवं समीचीन है, किंतु फिर भी कुछ आलोचक संविधान में संशोधन को उचित नहीं मानते। उनका कहना है कि संविधान-सभा ने संविधान में संशोधन की पद्धति को साधारण बहुमत से पारित किया था और संविधान-सभा के सदस्य सार्वजनिक मताधिकार द्वारा निर्वाचित नहीं हुए थे। फिर भी सार्वजनिक मताधिकार द्वारा निर्वाचित सांसदों से गठित भविष्य की संसदों को संविधान में परिवर्तन या संशोधन के लिए एक जटिल पद्धति अपनानी पड़ेगी।

इस संदर्भ में डॉ. भीमराव अंबेडकर का कथन है कि संविधान में संशोधन की पद्धति ऑस्ट्रेलिया के संविधान की तरह जटिल नहीं रखी गई है। दूसरी बात, संविधान-सभा का कोई दलगत हित या स्वार्थ नहीं है। यह पद्धति वास्तव में राष्ट्रीय हित पर आधारित है।

संशोधन-पद्धति पर टिप्पणी करते हुए पं. जवाहरलाल नेहरू ने भी कहा था—''संविधान में हम जितना स्थायित्व ला सकेंगे, उतना लाएँगे, किंतु यदि संविधान को कठोर बना दिया जाए, तो उससे राष्ट्र का विकास ही रुक जाता है, उससे जीवित और सक्रिय जनता के सारे गुण अवशोषित हो जाते हैं।''

संविधान में संशोधन-पद्धति द्वारा संशोधन करने का अधिकार प्राय: संसद् को ही दिया गया है, राज्यों को नहीं।

यहाँ गौरतलब है कि भारतीय संविधान न तो अमेरिकी संविधान या स्विस संविधान की तरह क्लिष्ट है और न ही इसमें ब्रिटेन के संविधान की तरह सरलता ही है। इंग्लैंड में पार्लियामेंट जब चाहे, तब नया कानून बनाकर संविधान में संशोधन कर सकती है, क्योंकि (पार्लियामेंट) एक सार्वभौम संस्था है।

अमेरिका में कांग्रेस के दोनों सदनों द्वारा दो तिहाई बहुमत से प्रस्ताव पारित करके राज्यों की दो तिहाई व्यवस्थापिकाओं द्वारा कांग्रेस को एक सम्मेलन आमंत्रित करने का निवेदन-पत्र भेजा जाता है। दोनों ही स्थितियों में तीन चौथाई राज्यों के विधानमंडलों द्वारा या सम्मेलन में राज्यों के तीन चौथाई मतों से यह प्रस्ताव पारित होने

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

पर एक संशोधन हुआ माना जाता है।

इस प्रकार भारतीय संविधान के रचनाकारों ने संविधान में संशोधन के लिए मध्यवर्ती मार्ग अपनाया है।

अनुच्छेद-368 में विहित संशोधन की प्रक्रिया की कठोरता या नम्यता का प्रश्न तब तक ढका रहा, जब तक कांग्रेस पार्टी का केंद्र और राज्य के विधानमंडलों पर पूर्ण नियंत्रण रहा। इस असाधारण तथ्य के कारण वे अनुच्छेद-368 (2) में दोहरे बहुमत के रक्षोपाय को भेद सके और 50 वर्षों में 83 संशोधन कर सके। दोहरे बहुमत की कठोरता उन कठिनाइयों से प्रकट होती है, जो जनता सरकार (1977-78) के समक्ष आई, जब उसने 42वें संशोधन के अलोकतांत्रिक लक्षणों को समाप्त करने के लिए संशोधन विधेयक पारित करना चाहा। जाग्रत लोकमत ने उन्हें इसी आधार पर समर्थन दिया था। यह ध्यान देने योग्य है कि—

- अनुच्छेद-368(2) में यह अपेक्षा है कि संविधान संशोधन विधेयक संसद् के प्रत्येक सदन में दोहरे बहुमत से पारित किया जाना चाहिए। जनता सरकार को राज्यसभा में ऐसा बहुमत नहीं था। वह दोनों सदनों का 'संयुक्त अधिवेशन' नहीं बुला सकती थी जिसकी व्यवस्था सामान्य विधान की दशा में अनुच्छेद-108 में की गई है।
- दोहरे बहुमत की अपेक्षा का दृष्टांत सितंबर, 1977 में राज्यसभा में जनता पार्टी की सदस्य-संख्या से दिया जा सकता है। राज्यसभा की कुल सदस्य संख्या (सामान्यत:) 250 है। अनुच्छेद-368(2) के प्रथम भाग के अधीन संविधान संशोधन विधेयक पारित होने के लिए कम-से-कम 126 सदस्यों द्वारा मतदान करना आवश्यक है। जनता पार्टी के राज्यसभा में सामान्यत: 41 सदस्य थे, इसलिए वे विधेयक पारित करने के लिए अपनी सदस्य-संख्या का अवलंब नहीं ले सकते थे।

अनुच्छेद-368(2) का दूसरा भाग इससे भी अधिक कठोर है। उसमें यह अपेक्षा है कि संविधान संशोधन विधेयक के मतदान की तारीख को उपस्थित और वास्तव में मतदान करने वाले सदस्यों में से दो तिहाई सदस्य उस विधेयक के पक्ष में मतदान करें। अतएव विधेयक तभी पारित हो सकता था, जब 168 सदस्य उसके पक्ष में मतदान करें। जनता पार्टी के केवल 41 सदस्य थे, अतएव उनके लिए यह संभव नहीं था।

इस कारण जनता पार्टी द्वारा प्रस्तावित संशोधन विधेयक का भाग्य कांग्रेस पार्टी के हाथ में था। कांग्रेस (ओ) विरोध न करे, इसलिए जनता सरकार ने अपने प्रस्तावों को दो विधेयकों में बाँट दिया। पहले चरण में कम विवादास्पद प्रस्ताव एक विधेयक में सम्मिलित किए, जिसे 43वें संशोधन अधिनियम के रूप में 1977 में पारित किया गया। दूसरे विधेयक को (45वाँ विधेयक जो 44वाँ संशोधन अधिनियम, 1978 बना) कड़े विरोध का सामना करना पड़ा, क्योंकि इस विधेयक के महत्त्वपूर्ण भागों को व्यर्थ करने के उद्देश्य से कांग्रेस (ओ) और कांग्रेस (आई) में गठबंधन हो गया। इस प्रकार जनमत संग्रह का उपबंध करने के लिए अनुच्छेद-368 का संशोधन करनेवाले खंड को पारित नहीं किया जा सका।

जब जनवरी, 1980 में श्रीमती इंदिरा गांधी सत्ता में आईं तो उन्हें भी इसी कठिनाई का सामना करना पड़ा। 1984 तक वे संविधान में कोई अधिष्ठायी संशोधन नहीं कर सकीं, जब तक कि राज्यसभा में उन्हें अपेक्षित बहुमत नहीं प्राप्त हो गया।

कांग्रेस (आई) ने नगरपालिका और पंचायत से संबंधित उपबंध करने के लिए संविधान का संशोधन करने के लिए दो विधेयक (64वाँ और 65वाँ संविधान संशोधन विधेयक, 1989) पुन:स्थापित किए थे। ये दोनों लोकसभा में 10 अगस्त, 1989 को पारित हो गए, किंतु राज्यसभा में 13 अक्तूबर, 1989 को केवल दो मत कम होने के कारण पारित नहीं हो सके।

संविधान (64वाँ संशोधन) विधेयक, 1990 जिससे पंजाब के संबंध में अनुच्छेद-356 का संशोधन किया जाना

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

था, राज्यसभा में 28 मार्च, 1990 को पारित हो गया।

लोकसभा में (30 मार्च, 1990) विधेयक पर विचार किए जाने के प्रस्ताव पर 236 मत पक्ष में थे (5 विपक्ष में)। अपेक्षित बहुमत (सदन की कुल सदस्य-संख्या का बहुमत) के अभाव में प्रस्ताव स्वीकृत नहीं हुआ। संशोधन के लिए नया विधेयक लाना पड़ा।

संविधान (75वाँ) संशोधन विधेयक, 1990 भी इसी प्रकार (1 अक्तूबर, 1990) लोकसभा में पारित नहीं हो सका। यह भी पंजाब के संबंध में अनुच्छेद-356 का संशोधन करने के लिए था। 249 मत पक्ष में और 3 विपक्ष में पड़े। शीघ्र ही 76वाँ संशोधन विधेयक 4 अक्तूबर, 1990 को लोकसभा में पारित कराया गया। यह राज्यसभा से पारित होकर 67वाँ संशोधन अधिनियम, 1990 बना (5 अक्तूबर, 1990 से)। अगस्त, 1993 में संविधान (80वाँ) संशोधन विधेयक, 1993 को सरकार ने आस्थगित कर दिया क्योंकि उनके पास आवश्यक 2/3 बहुमत नहीं था। अतएव अनुच्छेद-368(2) द्वारा विहित प्रक्रिया अपने आपमें नम्य नहीं कही जा सकती।

संशोधन-पद्धति

संशोधन-पद्धति को तीन भागों में विभाजित किया जा सकता है—

- संविधान के कुछ अंश संसद् के दोनों सदनों के साधारण बहुमत से ही संशोधित किए जा सकते हैं, जैसे—नए राज्यों का संगठन या वर्तमान राज्यों का पुनर्गठन (अनुच्छेद-4), नागरिकता (अनुच्छेद-11), राज्यों में द्वितीयक सदनों की स्थापना या वर्तमान द्वितीयक सदनों का अंत (अनुच्छेद-169), अनुसूचित क्षेत्र और जातियों के प्रशासन संबंधी उपबंध (परिशिष्ट-5)।

विडंबना यह है कि इन विषयों में परिवर्तन या संशोधन को संशोधन की श्रेणी में नहीं रखा गया। यद्यपि ये विषय काफी महत्त्वपूर्ण हैं।

- भारतीय संविधान में वास्तविक संशोधन संबंधी अनुच्छेद-368 है। इस अनुच्छेद के आधार पर निम्नलिखित विषयों से संबंधित संशोधनों के लिए व्यवस्था की गई है—

क. राष्ट्रपति पद का निर्वाचन, संघ या राज्यों की कार्यपालिका शक्ति।

ख. उच्च और उच्चतम न्यायालय संबंधी उपबंध, केंद्र और राज्यों के बीच विधायी शक्तियों का वितरण

ग. सातवीं अनुसूची में कोई सूची

घ. राज्यों का संसद् में प्रतिनिधित्व।

ङ संविधान में संशोधन की पद्धति।

इन पाँचों विषयों में संशोधन के लिए तीन शर्तें अनिवार्य हैं—

- संसद् के दोनों सदनों के उपस्थित और मत देने वाले कम से कम दो तिहाई सदस्यों का बहुमत।
- दोनों सदनों की सदस्य-संख्या का बहुमत।
- आधे या आधे से अधिक राज्यों का मत चाहिए। राज्य किसी संशोधन प्रस्ताव पर अपना मत कितने समय में व्यक्त करेंगे, इस संबंध में संविधान में कोई अवधि निर्धारित नहीं की है। यह अवधि संसद् द्वारा निर्धारित की जा सकती है।
- संविधान के शेष अंशों में निम्नलिखित दो शर्तें अनिवार्य हैं—

क. सदनों की कुल संख्या का बहुमत।

ख. संसद् के दोनों सदनों में उपस्थित और मत देनेवाले कम से कम दो तिहाई सदस्यों का बहुमत।

संविधान में संशोधन निर्धारित करनेवाले विधेयक को उसके वाक्यांशों में पारित किया जाता है अर्थात् विधेयक के

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

प्रत्येक वाक्यांश पर संसद् का अभिमत मिलना चाहिए। उच्चतम न्यायालय ने भी इस संबंध में यही निर्णय दिया।

राष्ट्रपति संविधान में संशोधन विधेयक को पुन: संसद् में विचारार्थ वापस भेज सकते हैं या नहीं, इस संबंध में संविधान में कोई स्पष्ट निर्देश नहीं है, फिर भी व्यवहारत: यह माना जाता है कि राष्ट्रपति को इस विधेयक पर हस्ताक्षर करने ही पड़ते हैं। संविधान में संशोधन संबंधी प्रस्ताव राज्यों में नहीं, केवल संसद् में ही प्रस्तुत किया जा सकता है।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

26. विभिन्न आयोग

शासन तथा व्यवस्था से संबंधित विविध कार्यों में पारदर्शिता एवं निष्पक्षता लाने के लिए हमारे संविधान में कुछ स्वतंत्र और निष्पक्ष आयोगों को स्थान दिया गया है। इन आयोगों की स्थिति एवं उनके कार्यों की शर्तें प्राय: स्वतंत्र न्यायालय के समान रखी गई हैं। ये आयोग हैं—

1. लोक सेवा आयोग (संघ और राज्यों के लिए अलग-अलग)।
2. निर्वाचन आयोग।
3. वित्त आयोग।

लोक सेवा आयोग

भारतीय संविधान का अनुच्छेद-315 संघ एवं प्रत्येक राज्य के लिए लोक सेवा आयोग का उपबंध करता है। वैसे दो या अधिक राज्यों द्वारा अपने लिए संयुक्त लोक सेवा आयोग का गठन किया जा सकता है।

संघ लोक सेवा आयोग

संविधान में केंद्रीय सरकार के अंतर्गत सिविल पदों पर ग्रुप ए और गुरप बी की भर्ती तथा विभिन्न सेवा संबंधी मामलों में सलाह देने के लिए एक स्वतंत्र निकाय के रूप में संघ लोक सेवा आयोग की व्यवस्था की गई है। आयोग की स्वतंत्रता बनाए रखने के लिए यह व्यवस्था की गई है कि सदस्य अपनी नियुक्ति के समय सरकारी सेवा में हों। उसके आयोग में नियुक्ति के बाद वह सरकारी सेवा से सेवानिवृत्त माना जाएगा।

संगठन

संविधान के अनुच्छेद-316 में लोक सेवा आयोग के संगठन का दिशा-निर्देश है, जिसके अनुसार इस आयोग में एक अध्यक्ष और सात अन्य सदस्य होते हैं। आयोग के सदस्यों की योग्यता आदि पर संविधान ने स्पष्ट नियम-निर्देश नहीं दिए हैं। परंपरा के आधार पर यह मान लिया जाता है कि आयोग के सदस्य की आयु 35 वर्ष से कम न हो और भारत सरकार अथवा राज्य सरकार के अधीन किसी उच्च पद पर कम-से-कम 10 वर्ष तक सेवारत रहा हो।

सदस्यों की नियुक्ति

संघ लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष एवं सदस्यों की नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा की जाती है।

पदमुक्ति

सामान्यत: संघ लोक सेवा आयोग के सदस्यों का कार्यकाल 6 वर्ष का होता है और आयु-सीमा 65 वर्ष रखी गई है। इनमें से जो भी स्थिति पहले आती है, तदनुकूल सदस्य को सेवानिवृत्त कर दिया जाता है। वैसे व्यक्तिगत कारणों से कोई भी सदस्य अपने पद से कभी भी त्यागपत्र दे सकता है।

सदस्यों की पदच्युति

संघ लोक सेवा आयोग के सदस्यों को भ्रष्टाचार आदि के आरोप में पद से मुक्त किया जा सकता है, इसके लिए

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

शर्त यह है कि उच्चतम न्यायालय द्वारा जाँच करा लेने के पश्चात् आरोप सिद्ध हो जाए। वैसे राष्ट्रपति किसी भी सदस्य को निम्नलिखित परिस्थितियों में सेवामुक्त कर सकते हैं—

- वह दिवालिया घोषित हो चुका हो।
- अपने कार्यकाल में वह कोई अन्य वैतनिक कार्य करने लगा हो।
- मानसिक या शारीरिक दुर्बलता के कारण पद धारण करने योग्य न रहा हो।

संयुक्त लोक सेवा आयोग

यूँ तो संविधान के अंतर्गत केंद्र तथा राज्यों के अलग-अलग सेवा आयोगों की व्यवस्था की गई है, किंतु यदि दो या दो से अधिक राज्यों के विधानमंडल चाहें तो संयुक्त लोक सेवा आयोग का भी गठन संसद् की अनुमति से किया जा सकता है। इसके सदस्यों एवं अध्यक्ष की नियुक्ति राष्ट्रपति करते हैं। ये 6 वर्ष तक या 62 वर्ष की आयु तक (जो भी पहले हो) अपने पद पर बने रह सकते हैं। इस संगठन में सदस्यों की योग्यताएँ, नियुक्तियाँ, कार्यकाल, सदस्यों की पदच्युति आदि संघ लोक सेवा आयोग के समान ही हैं।

राज्य लोक सेवा आयोग

केंद्र में लोक सेवा आयोग की स्थापना के समान राज्यों में राज्य लोक सेवा आयोग के गठन की व्यवस्था की गई है। इसके सदस्यों तथा अध्यक्ष की नियुक्ति राज्यपाल द्वारा की जाती है। ये अपने पद पर 6 वर्ष तक या 62 वर्ष की आयु (जो भी पहले हो) तक अपने पद पर बने रह सकते हैं। इस संगठन में सदस्यों की योग्यताएँ, नियुक्तियाँ, कार्यकाल, सदस्यों की पदच्युति आदि संघ लोक सेवा आयोग के समान ही हैं।

पदमुक्ति

- राज्य लोक सेवा आयोग के सदस्य और अध्यक्ष स्वेच्छा से अपने पद से त्याग-पत्र देने पर पदमुक्त हो सकते हैं।
- इन्हें कदाचार के आधार पर अपने पद से राष्ट्रपति के आदेश द्वारा हटाया जा सकता है या राष्ट्रपति के निर्देश पर सर्वोच्च न्यायालय जाँच करके इन्हें हटाने की रिपोर्ट राष्ट्रपति को दे सकता है।
- यदि कोई सदस्य दिवालिया घोषित हो जाता है या अपने कार्यकाल के दौरान कोई अन्य वैतनिक नौकरी करता है या राष्ट्रपति की राय में मानसिक या शारीरिक दुर्बलता के कारण पद के लिए अयोग्य हो जाता है, तो उसे राष्ट्रपति अपने आदेश से हटा सकते हैं (इसके लिए उच्चतम न्यायालय द्वारा जाँच आवश्यक नहीं है)।

कार्य

- संघ एवं राज्य लोक सेवा आयोगों का यह कर्तव्य है कि वे क्रमशः संघ एवं राज्य की सेवाओं में नियुक्ति के लिए परीक्षाओं का संचालन करें।
- दो या अधिक राज्यों द्वारा निवेदन किए जाने पर संघ लोक सेवा आयोग संयुक्त भर्ती के लिए नियम बनाने में सहयोग करेगा।
- संघ या राज्य को अपने लोक सेवा आयोगों में निम्नलिखित बातों में परामर्श लेना अनिवार्य है—

  क. लोक पदों पर भर्ती की रीतियों से संबद्ध सभी विषयों पर

  ख. नियुक्ति, पदोन्नति, स्थानांतरण आदि की उपयुक्तता के बारे में

  ग. अनुशासनिक विषयों पर

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

घ. सेवा के दौरान हुई क्षति की पूर्ति की राशि के संबंध में।

व्यय-भार

संघ या राज्य के लोक सेवा आयोगों का व्यय क्रमश: संघ या राज्य की संचित निधि पर भारित होता है।

चुनाव आयोग

सन् 1951 में पहली बार संविधान (अनुच्छेद-324) के अंतर्गत संसद्, राज्य विधानमंडलों के गठन तथा राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति पदों का निर्वाचन कराने के लिए एक निर्वाचन आयोग की व्यवस्था की गई।

सन् 1952 में हुए आम चुनाव के संचालन हेतु इस आयोग में दो प्रादेशिक आयुक्तों की नियुक्ति की गई थी, किंतु बाद में इन प्रादेशिक निर्वाचन आयुक्तों की कोई विशेष उपयोगिता प्रतीत नहीं हुई। इसीलिए दूसरे आम चुनाव के समय प्रादेशिक निर्वाचन आयुक्तों की व्यवस्था निरस्त कर दी गई। यहाँ गौरतलब है कि यह पद संवैधानिक पद नहीं है, बल्कि इसका उल्लेख जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम में किया गया है। सन् 1956 में प्रादेशिक निर्वाचन आयुक्तों के स्थान पर उपनिर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति की गई। सन् 1957, 1962 और 1967 के चुनावों का संचालन करने के पश्चात् सन् 1969 में मध्यावधि चुनावों के समय केवल एक ही निर्वाचन आयुक्त रह गया। उपनिर्वाचन आयुक्त के अतिरिक्त मुख्य आयुक्त की सहायता के लिए सचिव, अपर सचिव, शोध अधिकारी आदि की भी व्यवस्था की गई है।

सन् 1966 में निर्वाचन संबंधी विधि में परिवर्तन करके यह प्रावधान किया गया कि मुख्य निर्वाचन आयुक्त के अधिकारों को उपनिर्वाचन आयुक्त, आयुक्त के सचिव आदि को भी यथासंभव हस्तांतरित कर दिया जाए।

संविधान के अनुच्छेद-324 में यह प्रावधान है कि मुख्य निर्वाचन आयुक्त की सहायता के लिए अन्य आयुक्तों की नियुक्ति भी की जा सकती है। इसी व्यवस्था के अंतर्गत 16 अक्तूबर, 1989 में राष्ट्रपति आर. वेंकटरमन ने निर्वाचन आयोग को विस्तार देते हुए दो अन्य निर्वाचन आयुक्तों एस.एस. धनोवा और वी.एस. सहगल की भी नियुक्ति की।

संसदीय चुनाव की पूर्वसंध्या पर इन दोनों निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति को लेकर राजनीतिक दलों द्वारा कुछ विवाद उठाया गया। फलस्वरूप 2 जनवरी, 1990 को राष्ट्रपति ने इन दोनों चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति को निरस्त कर दिया।

सन् 1991 में एक अधिनियम पारित कर यह व्यवस्था की गई कि चुनाव आयोग तीन सदस्यीय होगा और चुनाव आयोग का कोई भी निर्णय बहुमत से लिया जाएगा। इसके साथ ही निर्वाचन आयोग की सलाह से राष्ट्रपति प्रादेशिक आयुक्त भी नियुक्त कर सकते हैं।

1 अक्तूबर, 1993 को एक बार पुन: अधिसूचना जारी करके निर्वाचन आयोग को बहुसदस्यीय बनाया गया, जिसके अनुसार आयोग में मुख्य चुनाव आयुक्त के अतिरिक्त दो अन्य चुनाव आयुक्त भी होंगे। इस अधिसूचना के माध्यम से मुख्य चुनाव आयुक्त एवं अन्य चुनाव आयुक्त (सेवा-शर्त) अधिनियम, 1991 में संशोधन किया गया।

इस संशोधन के बाद वेतन एवं अन्य सेवा-शर्तों की दृष्टि से अन्य चुनाव आयुक्त तथा मुख्य चुनाव आयुक्त सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश के समकक्ष हो गए। अध्यादेश के अंतर्गत मुख्य चुनाव आयुक्त तथा अन्य चुनाव आयुक्तों के बीच कार्य-विभाजन को भी परिभाषित किया गया, जिसके आधार पर केवल पद-नाम को छोड़कर अन्य सभी क्षेत्रों में मुख्य चुनाव आयुक्त तथा अन्य दो चुनाव आयुक्तों में कोई अंतर नहीं रह गया। किसी मामले में निर्णय एकमत न होने की स्थिति में बहुमत के आधार पर लेने का निर्देश दिया गया।

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

इस प्रकरण में यह उल्लेखनीय है कि 27 अक्तूबर, 1993 को तत्कालीन मुख्य निर्वाचन आयुक्त टी.एन. शेषन ने 2 नए चुनाव आयुक्तों की नियुक्ति और उन्हें मुख्य चुनाव आयुक्त के समकक्ष अधिकार देने से संबंधित राष्ट्रपति के अध्यादेश की वैधता को सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती दी, जिस पर विचार करते हुए 14 जुलाई, 1995 को उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ ने राष्ट्रपति के अध्यादेश को वैध घोषित कर दिया।

भारत के मुख्य निर्वाचन आयुक्त

नाम :सुकुमार सेन

पदावधि :21 मार्च, 1950-19 दिसंबर, 1958

नाम :के वी के सुंदरम

पदावधि :20 दिसंबर, 1958-30 सितंबर, 1967

नाम :एस पी सेन वर्मा

पदावधि :1 अक्टूबर, 1967-30 सितंबर, 1972

नाम :डॉ. नगेंद्र सिंह

पदावधि :1 अक्टूबर, 1972-6 फरवरी, 1973

नाम :टी स्वामीनाथन

पदावधि :7 फरवरी, 1973-17 जून, 1977

नाम :एस एल शकधर

पदावधि :18 जून, 1977-17 जून, 1982

नाम :आर के त्रिवेदी

पदावधि :18 जून, 1983-31 दिसंबर, 1985

नाम :आर वी एस पेरिशास्त्री

पदावधि :1 जनवरी, 1986-25 नवंबर, 1990

नाम :श्रीमति वी एस रमादेवी

पदावधि :1 जनवरी, 1986-25 नवंबर, 1990

नाम :टी एन शेषन

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

पदावधि :12 दिसंबर, 1990-11 दिसंबर, 1996

नाम :एम एस गिल

पदावधि :12 दिसंबर, 1996-13 जून, 2001

नाम :जे एम लिंगदोह

पदावधि :14 जून, 2001-7 फरवरी, 2004

नाम :टी एस कृष्णामूर्ति

पदावधि :8 फरवरी, 2004-15 मई, 2005

नाम :वीवी टंडन

पदावधि :16 मई, 2005-29 जून, 2006

नाम :एन गोपालस्वामी

पदावधि :30 जून, 2006-20 अप्रैल, 2009

नाम :नवीन चावला

पदावधि :21 अप्रैल, 2009-29 जुलाई, 2010

नाम :एस वाई कुरैशी

पदावधि :30 जुलाई, 2010-10 जून, 2012

नाम :वी एस सम्पत

पदावधि :11 जून, 2012-15 जनवरी, 2015

नाम :एच एस ब्रह्म

पदावधि :16 जनवरी, 2015-18 अप्रैल, 2015

नाम :नसीम जैदी

पदावधि :19 अप्रैल, 2015-अगस्त 2017

निर्वाचन आयुक्त की सेवा-शर्तें और पदावधि वही होंगी, जो संसद् विधि द्वारा विहित करे, परंतु निर्वाचन आयुक्त को उनके पद से उसी रीति से और उन्हीं आधारों पर हटाया जा सकेगा, जिस रीति से और जिन आधारों पर सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश को हटाया जा सकता है अर्थात् निर्वाचन आयुक्तों को संसद् के प्रत्येक सदन द्वारा पारित विशेष बहुमत से और साबित कदाचार या असमर्थता के आधार पर ही हटाया जा सकता है।

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

कार्यकाल

वर्तमान प्रावधान के अनुसार, सामान्य परिस्थितियों में मुख्य चुनाव आयुक्त का कार्यकाल पदग्रहण करने की तारीख से 6 वर्ष तक होता है, परंतु 62 वर्ष की आयु पूरी कर लेने पर 6 वर्ष से पहले ही वे सेवानिवृत्त हो जाएँगे।

निर्वाचन आयोग के कार्य

- प्रत्येक जनगणना के बाद निर्वाचन-क्षेत्रों का सीमांकन करने के लिए परिसीमन आयोग का गठन करना।
- मतदाता-सूचियाँ तैयार करना।
- विभिन्न राजनीतिक दलों को मान्यता प्रदान करना।
- राजनीतिक दलों को चुनाव चिह्न आवंटित करना।
- चुनाव तथा उपचुनाव कराना।
- राजनीतिक दलों के लिए आचार-संहिता तैयार करना।
- राजनीतिक दलों को आकाशवाणी तथा दूरदर्शन पर प्रचार की सुविधा उपलब्ध कराना।
- उम्मीदवारों द्वारा चुनाव-खर्च की राशि सुनिश्चित करवाना।
- परिस्थिति एवं आवश्यकता के अनुसार चुनाव रद्द करना।
- मतदाताओं को राजनीतिक प्रशिक्षण देना।
- चुनाव-याचिकाओं के संबंध में सरकार को परामर्श देना।

इसके अलावा चुनाव आयोग के अद्र्धन्यायिक कार्य भी हैं, जैसे—सांसदों की अयोग्यता के संबंध में राष्ट्रपति को, विधायकों की अयोग्यता के संबंध में राज्यपाल को परामर्श देना और दागी मंत्रियों को चिह्नित करना, उन्हें चुनाव के अयोग्य घोषित करना/करवाना, उम्मीदवारों द्वारा संपत्ति घोषित करवाना आदि।

वित्त आयोग

वित्त आयोग की परिकल्पना भारतीय संविधान के अनुच्छेद-280 में की गई है। वैसे अनुच्छेद-270, 273 और 275 भी वित्त आयोग के गठन का उपबंध करते हैं। इसके अनुसार राष्ट्रपति स्वविवेक से हर पाँच वर्ष बाद एक वित्त आयोग का गठन करेंगे। आयोग में अध्यक्ष के साथ-साथ चार अन्य सदस्यों की संवैधानिक व्यवस्था है।

वित्त आयोग का अध्यक्ष ऐसा व्यक्ति होगा, जिसे सार्वजनिक कार्यों का व्यापक अनुभव हो। शेष चार सदस्य अग्रलिखित क्षेत्रों में विशेष योग्यता रखनेवाले होने चाहिए— एक व्यक्ति उच्च न्यायालय के न्यायाधीश या ऐसा व्यक्ति जो इस प्रकार नियुक्त होने के लिए अर्हित हो, दूसरा व्यक्ति, जिसे सरकार की वित्त लेखाओं का विशेष ज्ञान हो; तीसरा व्यक्ति जिसे वित्तीय विषयों और प्रशासन के बारे में व्यापक अनुभव हो तथा चौथा व्यक्ति, जिसे अर्थशास्त्र का विशेष ज्ञान हो।

भारतीय संविधान में वित्त आयोग के कतिपय कार्य सुनिश्चित किए गए हैं। वस्तुत: विधिक उपबंधों के द्वारा वित्त आयोग अपनी कार्य-प्रक्रिया के निर्धारण के लिए स्वयं अधिकृत है तथा वह अपने कृत्यों के निर्वहन में एक असैनिक न्यायालय की तरह कार्य कर सकता है।

अब तक बने वित्त आयोग

वित्त आयोग :पहला

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

अध्यक्ष :केसी नियोगी

नियुक्ति :1951

रिपोर्ट जमा :1952

रिपोर्ट अवधि क्रियांवयन :1952-57

वित्त आयोग :दूसरा

अध्यक्ष :के सन्थानम

नियुक्ति :1956

रिपोर्ट जमा :1957

रिपोर्ट अवधि क्रियांवयन :1957-62

वित्त आयोग :तीसरा

अध्यक्ष :ए के चंदा

नियुक्ति :1960

रिपोर्ट जमा :1961

रिपोर्ट अवधि क्रियांवयन :1962-66

वित्त आयोग :चौथा

अध्यक्ष :डॉ. पी वी राजमन्नार

नियुक्ति :1964

रिपोर्ट जमा :1965

रिपोर्ट अवधि क्रियांवयन :1966-69

वित्त आयोग :पांचवां

अध्यक्ष :महावीर त्यागी

नियुक्ति :1968

रिपोर्ट जमा :1969

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

रिपोर्ट अवधि क्रियांवयन :1969-74

वित्त आयोग :छठा

अध्यक्ष :ब्रह्मानंद रेड्डी

नियुक्ति :1972

रिपोर्ट जमा :1973

रिपोर्ट अवधि क्रियांवयन :1974-79

वित्त आयोग :सातवां

अध्यक्ष :जे एम सेलात

नियुक्ति :1977

रिपोर्ट जमा :1978

रिपोर्ट अवधि क्रियांवयन :1979-84

वित्त आयोग :आठवां

अध्यक्ष :वाई वी चह्वाण

नियुक्ति :1982

रिपोर्ट जमा :1984

रिपोर्ट अवधि क्रियांवयन :1984-89

वित्त आयोग :नौवा

अध्यक्ष :एन के पी साल्वे

नियुक्ति :1987

रिपोर्ट जमा :1989

रिपोर्ट अवधि क्रियांवयन :1989-95

वित्त आयोग :दसवां

अध्यक्ष :के सी पंत

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

नियुक्ति :1992

रिपोर्ट जमा :1994

रिपोर्ट अवधि क्रियांवयन :1995-2000

वित्त आयोग :ग्यारहवां

अध्यक्ष :ए एम खुसरो

नियुक्ति :1998

रिपोर्ट जमा :2000

रिपोर्ट अवधि क्रियांवयन :2000-05

वित्त आयोग :बारहवां

अध्यक्ष :डॉ सी रंगराजन

नियुक्ति :2002

रिपोर्ट जमा :2004

रिपोर्ट अवधि क्रियांवयन :2005-2010

वित्त आयोग :तेरहवां

अध्यक्ष :डॉ विजय केलकर

नियुक्ति :2007

रिपोर्ट जमा :2009

रिपोर्ट अवधि क्रियांवयन :2010-2025

वित्त आयोग :चौदहवां

अध्यक्ष :डॉ वाई वी रेड्डी

नियुक्ति :2013

रिपोर्ट जमा :2014

रिपोर्ट अवधि क्रियांवयन :2015-20

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

वित्त आयोग के कार्य

इसके कार्यों में संघ और राज्यों के बीच विभाजन योग्य करों के शुद्ध आगमों का वितरण, देश की संचित निधि में से राज्यों के राजस्व में सहायता अनुदान को शासित करने वाले सिद्धांत सुनिश्चित करना एवं सुदृढ़ वित्त के हित में राष्ट्रपति द्वारा आयोग को सौंपे गए किसी अन्य विषय के बारे में उसे सिफारिश करना प्रमुख हैं।

राष्ट्रपति वित्त आयोग की संस्तुतियों को वित्त मंत्री के माध्यम से संसद् के समक्ष रखते हैं। अब तक कुल 12 वित्त आयोगों का गठन हो चुका है, जिनमें 11वें वित्त आयोग तक के द्वारा अपनी-अपनी संस्तुतियाँ प्रस्तुत की जा चुकी हैं। 12वें वित्त आयोग का गठन सी. रंगराजन की अध्यक्षता में किया गया था, जिसकी सिफारिशें सन् 2005 से 2010 के लिए प्रभावी होंगी। अनुच्छेद-282 के तहत केंद्र सरकार को अपने विवेक के अनुसार अपेक्षाकृत निर्धन राज्यों को विशिष्ट अनुदान देने का भी अधिकार प्राप्त है। इस प्रकार का अनुदान योजना आयोग की संस्तुति पर दिया जाता है।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

27. जम्मू एवं कश्मीर की शासन-व्यवस्था

(भाग-21, अनुच्छेद-370)

हमारे देश का जम्मू एवं कश्मीर ही एक ऐसा राज्य है, जिसका अपना अलग संविधान है। यह राज्य भारतीय संविधान द्वारा भी अनुशासित एवं विशेषाधिकार प्राप्त है। यहाँ की आबादी प्राय: मुसलिम-बाहुल्य है। पहले यह राज्य एक रियासत के रूप में था, जिसका शासन एक हिंदू राजा हरीसिंह के हाथों में था। भारत को स्वतंत्र करते समय अंग्रेजों ने रियासतों को यह छूट दी थी कि वे स्वेच्छा से भारत संघ में सम्मिलित होना चाहें तो हो सकती हैं, अन्यथा वे स्वतंत्र रूप से भी अपनी व्यवस्था बनाए रख सकती हैं।

सन् 1947 में स्वाधीनता-प्राप्ति और भारत-विभाजन के दौरान जम्मू एवं कश्मीर रियासत ने भारत या पाकिस्तान, किसी भी राज्य में मिलने की अपेक्षा स्वतंत्र रहना उचित समझा था, किंतु अक्तूबर, 1947 में पाकिस्तान द्वारा उकसाए गए कबाइलियों ने जब कश्मीर पर हमला किया, तब जम्मू एवं कश्मीर के महाराज हरीसिंह ने इस रियासत का विलय भारत में करने की घोषणा 26 अक्तूबर, 1947 को कर दी। साथ ही आक्रमणकारियों के विरुद्ध भारत सरकार से संरक्षण की माँग की।

भारत सरकार ने अत्यंत उदारतापूर्वक महाराज हरीसिंह का प्रस्ताव स्वीकार करते हुए जम्मू एवं कश्मीर का विलय भारत में कर लिया। यह विलय अन्य रियासतों के समान ही विधिवत् किया गया था। विलय-पत्र के अंतर्गत भारत सरकार ने वहाँ की सुरक्षा, विदेश संबंध एवं संचार के संबंध में अधिकार प्राप्त कर लिए थे। इस प्रकार उक्त समझौते के आधार पर जम्मू एवं कश्मीर का संचार तथा वैदेशिक कार्य भारत सरकार के हाथों में आ गया। अन्य मामलों के लिए महाराज हरीसिंह स्वतंत्र थे।

अनुच्छेद-370

संविधान के अनुच्छेद-370 के अंतर्गत राष्ट्रपति को यह भी अधिकार दिया गया है कि जम्मू एवं कश्मीर की वैदेशिक नीति, संचार आदि व्यवस्था के संबंध में मिले अधिकारों के आधार पर राष्ट्रपति जम्मू एवं कश्मीर के बारे में आदेश जारी करके उसकी संवैधानिक स्थिति में परिवर्तन कर दें।

जम्मू एवं कश्मीर की सरकार से परामर्श करके केंद्र सरकार ने सन् 1950 में 'संविधान आदेश-1950' निकाला था। सन् 1954 में यह आदेश रद्द करके संविधान आदेश पुन: निकाला गया, फिर सन् 1955, 56, 63 और 65 में इसमें संशोधन किए गए। इनके आधार पर जम्मू-कश्मीर को भारत के अधिकाधिक निकट लाने का प्रयास किया गया। इन संशोधनों का सारांश है—

- सन् 1965 के संशोधन में यह प्रावधान रखा गया था कि संसद् जम्मू-कश्मीर के बारे में आपातकाल में कानून बना सकेगी।
- राज्य के नाम या सीमा में परिवर्तन तथा किसी अंतरराष्ट्रीय समझौते को लागू करने के संबंध में संसद् उस राज्य सरकार की सहमति के बिना कोई कदम नहीं उठाएगी।
- संविधान में प्रदत्त नागरिकों के मौलिक अधिकार राज्य के समस्त नागरिकों को दिए गए हैं, लेकिन साथ ही यह शर्त भी लगाई गई है कि 15 वर्षों तक राज्य की सुरक्षा के हित में मूल अधिकारों पर ऐसा प्रतिबंध लगाया जा सकता है, जो वहाँ की विधानसभा की राय में उचित है।
- बाहरी आक्रमण होने पर राष्ट्रपति द्वारा की गई आपातकालीन घोषणा जम्मू-कश्मीर राज्य पर लागू हो सकेगी,

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

किंतु वित्त संबंधी आदि घोषणाएँ लागू नहीं होंगी।

● अब जम्मू-कश्मीर में नियंत्रक महालेखा परीक्षक तथा अखिल भारतीय सेवाओं का कार्यक्षेत्र, चुनाव आयोग का क्षेत्राधिकार आदि भी केंद्रीय सरकार के अधीन बढ़ गए हैं।

● जम्मू एवं कश्मीर के सदर-ए-रियासत को राज्यपाल और उस (राज्य) के प्रधान को 'मुख्यमंत्री' कहा जाने लगा है। यह परिवर्तन 3 अप्रैल, 1965 को संविधान में किए गए संशोधन के आधार पर हुआ है। सर्वोच्च न्यायालय के भी अधिकार क्षेत्र में अब यह राज्य आ गया है।

जम्मू एवं कश्मीर का संविधान : एक नजर में

भाग :I.

विषयवस्तु :प्रारंभिक

आवंटित धाराएं :01-Feb

भाग :II.

विषयवस्तु :राज्य

आवंटित धाराएं :03-May

भाग :III.

विषयवस्तु :स्थाई निवासी

आवंटित धाराएं :06-Oct

भाग :IV.

विषयवस्तु :राज्य के नीति निदेशक तत्व

आवंटित धाराएं :Nov-25

भाग :V.

विषयवस्तु :कार्यपालिका

आवंटित धाराएं :26-45

भाग :VI.

विषयवस्तु :राज्य विधायिका

आवंटित धाराएं :46-92

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

भाग :VII.

विषयवस्तु :उच्च न्यायालय

आवंटित धाराएं :93-113

भाग :VIII.

विषयवस्तु :वित्त, सम्पत्ति एवं संविदाएं

आवंटित धाराएं :114-123

भाग :IX.

विषयवस्तु :जनसेवाएं

आवंटित धाराएं :124-137

भाग :X.

विषयवस्तु :चुनाव

आवंटित धाराएं :138-142

भाग :XI.

विषयवस्तु :अन्यान्य प्रावधान

आवंटित धाराएं :143-146

भाग :XII.

विषयवस्तु :संविधान संशोधन

आवंटित धाराएं :147

भाग :XIII.

विषयवस्तु :परिवर्ती प्रावधान

आवंटित धाराएं :148-158

संविधान की धारा-370 द्वारा जम्मू-कश्मीर को दिए गए विशेषाधिकार अन्य राज्यों की जनता की आँखों की किरकिरी बने हुए हैं, जिसके कारण इसकी काफी आलोचना भी होती रहती है। देश की एकता एवं अखंडता के संदर्भ में भी यह अनुच्छेद विरोधाभासी है। जब जम्मू एवं कश्मीर का विलय अन्य रियासतों की तरह भारत में हो ही

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

चुका था, तब किसी विशेषाधिकार का क्या औचित्य है? इस प्रकार क्या अन्य राज्यों को भी विशेषाधिकार नहीं दिए जाने चाहिए?

जम्मू-कश्मीर संविधान की प्रस्तावना

जम्मू एवं कश्मीर को भारतीय संविधान द्वारा दिए गए विशेषाधिकार के मद्देनजर यहाँ उसके अपने संविधान पर भी गौर कर लेना अप्रासंगिक नहीं होगा, क्योंकि उसकी संविधान-सभा द्वारा उक्त विलय की पुष्टि हो चुकी है जिसका निर्वाचन भी वहाँ की जनता ने ही किया था। वहाँ के संविधान की प्रस्तावना में यह बात स्पष्ट रूप से स्वीकार की गई है। यह प्रस्तावना इस प्रकार है—

''हम जम्मू-कश्मीर के लोग, 26 अक्तूबर, 1947 के दिन इस राज्य के भारतीय संघ के एक अखंड भाग के रूप में वर्तमान संबंध को और अधिक सुस्पष्ट करने के निमित्त और अपने को न्याय, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्वतंत्रता, विचार की अभिव्यक्ति की, विश्वास की, धर्म की और पूजा की,

समता, स्थिति की और अवसर की,

प्राप्त करने तथा सबमें,

बंधुत्व, जिससे व्यक्ति की गरिमा और राष्ट्र की एकता सुनिश्चित रहे, नवंबर, 1956 के इस संविधान को स्वीकार करते हैं, कानून का रूप देते हैं और अपने को संविधान अर्पित करते हैं।''

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

28. संविधान समीक्षा आयोग : एक दृष्टि में

संविधान की सफलता और प्रासंगिकता को लेकर समय-समय पर विभिन्न प्रश्न उठते रहे हैं, जैसे सन् 1950 से, जब से संविधान लागू हुआ है, संविधान के निर्देशों का परिपालन सही ढंग से हुआ है या नहीं? क्या संविधान की अपेक्षाओं के अनुरूप देश की आर्थिक एवं सामाजिक प्रगति अपेक्षित रूप में हुई है या नहीं?

क्या संविधान की अपेक्षाओं के अनुरूप देश में एकता और अखंडता आ सकी? क्या देश में राजनीतिक स्थायित्व आ सका है? संविधान में लिंग, जाति, धर्म आदि की दृष्टि से समानता का उद्घोष होने के अनंतर देश में जातिवाद, संप्रदायवाद आदि क्यों बढ़ते जा रहे हैं? सभी नागरिकों को समय पर न्याय मिलता है या नहीं?

ये प्रश्न इसलिए भी उठते रहे हैं, क्योंकि संविधान लागू होने के बाद एक ही वर्ष में संशोधन-प्रक्रिया शुरू हो गई थी, जो आज भी जारी है। संविधान में संशोधन की व्यवस्था जहाँ उसकी एक विशेषता है, वहीं उससे यह प्रश्न भी उठता है कि बार-बार संशोधन की आवश्यकता ही क्यों पड़ती है? ऐसे ही अनेक प्रश्नों के संदर्भ में समय-समय पर संविधान की समीक्षा की जाती रही है। सन् 1950 से लेकर 1987 तक 6 प्रमुख समीक्षाएँ हो चुकीहैं।

पहली समीक्षा

यह आश्चर्य की बात है कि सन् 1950-51 में ही संविधान की समीक्षा की नौबत आ गई। इसे किसी सद्य: प्रकाशित पुस्तक की समीक्षा से नहीं जोड़ा जा सकता है, क्योंकि संविधान सद्य: प्रकाशित पुस्तक नहीं, देश का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण एवं सम्माननीय दस्तावेज है। इस समीक्षा के परिणामस्वरूप 9वीं अनुसूची सामने आई।

दूसरी समीक्षा

दूसरी बार संविधान की समीक्षा सन् 1954 में की गई। कांग्रेस कार्यसमिति के एक उपसमिति द्वारा की गई इस समीक्षा के फलस्वरूप न्यायपालिका-विरोधी भावनाएँ सामने आईं, जिन्हें तत्कालीन प्रधानमंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने संविधान में सम्मिलित नहीं होने दिया।

तीसरी समीक्षा

संविधान की तीसरी समीक्षा सन् 1967 के गोलकनाथ फैसले से आरंभ हुई, जिसके परिणामस्वरूप 24वाँ संविधान संशोधन अधिनियम पारित हुआ और संसद् को संविधान में संशोधन करने की शक्ति प्रदान की गई। यह समीक्षा केशवानंद भारती मामले में सर्वोच्च न्यायालय के बुनियादी संरचना सिद्धांत के साथ समाप्त हुई।

चौथी समीक्षा

संविधान की चौथी समीक्षा स्वर्णसिंह समिति ने सन् 1976 में की। इस समीक्षा के परिणामस्वरूप 42वाँ संविधान संशोधन किया गया।

पाँचवीं समीक्षा

भारतीय जनता पार्टी के शासन में की गई पाँचवीं समीक्षा के माध्यम से 43वें व 44वें संशोधन किए गए।

छठी समीक्षा

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

छठी बार संविधान की समीक्षा आठवें दशक में की गई। यह समीक्षा न्यायाधीश आर.एस. सरकारिया ने की थी। सन् 1987 में प्रस्तुत की गई उनकी रिपोर्ट केंद्र-राज्य संबंधों पर उत्कृष्ट दस्तावेज बताया जाता है; किंतु खेद है कि यह अब तक प्राय: उपेक्षित है।

संविधान समीक्षा आयोग

इन समीक्षाओं के बाद संविधान को लागू हुए 50 वर्ष पूरे होने पर केंद्रीय सरकार ने संविधान की समीक्षा के लिए 11 सदस्यीय एक राष्ट्रीय आयोग का गठन किया। इस संदर्भ में 22 फरवरी, 2000 को अधिसूचना जारी की गई।

23 फरवरी, 2000 को संसद् के संयुक्त अधिवेशन में राष्ट्रपति के.आर. नारायणन ने कहा, ''संविधान के मूल ढाँचे और उसकी प्रमुख विशेषताओं में फेर-बदल किए बिना यह आवश्यक हो गया है कि पिछले 50 वर्षों के अनुभव की जाँच की जाए, ताकि संविधान में निहित आदर्शों को बेहतर रूप से प्राप्त किया जा सके और यही कारण है कि सरकार ने व्यापक आधारवाले संविधान समीक्षा आयोग का गठन किया है।''

इस आयोग के अध्यक्ष थे—न्यायाधीश एम.एम. वेंकटचलैया। आयोग के अन्य सदस्य इस प्रकार थे—न्यायमूर्ति बी.पी. जीवन रेड्डी, न्यायमूर्ति आर.एस. सरकारिया, न्यायमूर्ति कोंडापल्ली पुनैया, सोली सोराबजी, के. पाराशरन, पी.ए. संगमा, सुभाष कश्यप, सी.आर. ईरानी, आबिद हुसैन तथा श्रीमती सुमित्रा कुलकर्णी।

केंद्रीय विधि मंत्रालय के तहत विधायी विभाग के सचिव रघुवीर सिंह को आयोग का सचिव नियुक्त किया गया।

यहाँ गौरतलब है कि यह समीक्षा भारतीय जनता पार्टी के नेतृत्ववाले राष्ट्रीय जनतांत्रिक गठबंधन के चुनाव घोषणा-पत्र का परिणाम थी।

संविधान समीक्षा अयोग की पहली बैठक 23 मार्च, 2000 को संपन्न हुई, जिसमें समीक्षा के लिए निम्नलिखित 8 क्षेत्रों की पहचान की गई—

1. दल-बदल।
2. गरीबी उन्मूलन पर संवैधानिक प्रावधान।
3. अनुच्छेद 356 एवं राज्यपालों की नियुक्ति तथा बरखास्तगी।
4. सत्ता का विकेंद्रीयकरण एवं पंचायती राज।
5. मूल अधिकारों का विस्तार।
6. नीति-निदेशक सिद्धांत।
7. मूल कर्तव्य।
8. वित्तीय एवं मौद्रिक नीतियाँ।

विशेषज्ञ समितियाँ

इन महत्त्वपूर्ण मुद्दों की जाँच-पड़ताल के लिए आयोग ने 10 विशेषज्ञ समितियों का भी गठन किया।

क्षेत्र :1. संसदीय प्रजातंत्र एवं उसकी

विशेषज्ञ समिति के सह-अध्यक्ष :न्यायमूर्ति बी.पी. जीवन रेड्डी जवाबदेही को सुदृढ़ करना

क्षेत्र :2. चुनाव सुधार

विशेषज्ञ समिति के सह-अध्यक्ष :सुभाष कश्यप

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

क्षेत्र :3. सामाजिक-आर्थिक परिवर्तन की गति

विशेषज्ञ समिति के सह-अध्यक्ष :न्यायमूर्ति के. रामास्वामी एवं विकास तथा निर्धनता निवारण

क्षेत्र :4. केंद्र-राज्य संबंध

विशेषज्ञ समिति के सह-अध्यक्ष :न्यायमूर्ति आर.एस. सरकारिया

क्षेत्र :5. मौलिक अधिकारों का विस्तार

विशेषज्ञ समिति के सह-अध्यक्ष :सोली सोराबजी

क्षेत्र :6. पंचायती राज संस्थाओं को सुदृढ़

विशेषज्ञ समिति के सह-अध्यक्ष :पी.ए. संगमा करना

क्षेत्र :7. मूलभूत कर्तव्यों को प्रभावी बनाना

विशेषज्ञ समिति के सह-अध्यक्ष :सी.आर. ईरानी

क्षेत्र :8. नीति निदेशक सिद्धांतों को लागू करना

विशेषज्ञ समिति के सह-अध्यक्ष :के. पाराशरन

क्षेत्र :9. मौद्रिक एवं राजकोषीय नीतियों पर

विशेषज्ञ समिति के सह-अध्यक्ष :आबिद हुसैन वैधानिक नियंत्रण

क्षेत्र :10. साक्षरता संवर्द्धन, रोजगार-सृजन एवं

विशेषज्ञ समिति के सह-अध्यक्ष :सुमित्रा कुलकर्णी सामाजिक सुरक्षा

इस आयोग ने 31 मार्च, 2000 को केंद्रीय विधि मंत्री श्री अरुण जेटली को अपना प्रतिवेदन प्रस्तुत किया। 1976 पृष्ठीय इस प्रतिवेदन में 249 सिफारिशें की गई हैं। आयोग ने 58 अनुशंसाएँ संविधान में संशोधन करने, 86 अनुशंसाएँ विधायी कार्यवाई करने और अन्य 106 अनुशंसाएँ कार्यकारी कार्यवाई के माध्यम से कार्यान्वित करने का भी सुझाव दिया है।

आयोग की प्रमुख सिफारिशें

- प्रधानमंत्री का लोकसभा से प्रत्यक्ष चुनाव,
- वैकल्पिक नेता,
- चुनाव सुधार,
- मौलिक अधिकारों और मौलिक कर्तव्यों का विस्तार,
- निर्दलीय प्रत्याशियों पर रोक लगाने की सिफारिश,

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

- नियंत्रक एवं महालेखा का कार्यकाल घटाने का सुझाव,
- दल-बदल,
- प्रेस की स्वतंत्रता,
- राष्ट्रीय न्यायिक आयोग,
- अपराधी किस्म के लोगों को चुनाव लड़ने से रोकना,
- एक से अधिक निर्वाचन-क्षेत्रों से चुनाव लड़ने का निषेध,
- मंत्रिमंडलों के आकार की कानूनी सीमा,
- प्रधानमंत्री पद को लोकपाल के क्षेत्राधिकार से बाहर,
- न्यायाधीशों की सेवानिवृत्ति की आयु।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

29. क्रमवार संविधान संशोधन

पहला संशोधन (1950)

इस संशोधन द्वारा सामाजिक तथा शैक्षणिक दृष्टि से पिछड़े हुए नागरिक वर्गों या अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों की उन्नति के लिए विशेष उपबंध किए गए। (अनुच्छेद-19) नए आधारों पर नागरिकों की स्वतंत्रता प्रतिबंधित की गई। संपत्ति के अधिकार को सीमित किया गया। नौवीं अनुसूची में शामिल अधिनियमों को इस आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकती कि वे भाग-4 द्वारा प्रदत्त लोगों के मौलिक अधिकारों का अतिक्रमण करते हैं। अनुच्छेद-31(क) और 31(ख) तथा नौवीं अनुसूची को शामिल किया गया।

दूसरा संशोधन (1952)

इसके द्वारा लोकसभा चुनावों के लिए प्रतिनिधित्व का संशोधित अनुपात पुन: अवधारित या समायोजित किया गया।

तीसरा संशोधन (1954)

इस संशोधन द्वारा सूची के कुछ विषयों—बाह्य सामग्री, पशुओं का चारा, रूई, पटसन आदि को समवर्ती सूची में शामिल कर दिया गया। समवर्ती सूची में यह 33वीं प्रविष्टि है। इस तरह यह अनुच्छेद-369 के अनुरूप हो सकता है।

चौथा संशोधन (1955)

इस संशोधन द्वारा यह निश्चय किया गया कि केंद्रीय सरकार अथवा राज्य सरकार लोक-कल्याण के लिए किसी की संपत्ति क्षतिपूर्ति देकर ले सकेगी और क्षतिपूर्ति की मात्रा पर विचार करने का अधिकार न्यायालयों को नहीं होगा।

पाँचवाँ संशोधन (1955)

यह अनुच्छेद-3 का संशोधन है। इसके द्वारा राष्ट्रपति को यह अधिकार दे दिया गया कि वह राज्य विधानमंडलों द्वारा अपने-अपने राज्यों के क्षेत्र, सीमाओं आदि पर प्रभाव डालनेवाले प्रस्तावित केंद्रीय नियमों के बारे में अपने विचार भेजने के लिए एक समय-सीमा निश्चित कर दें, जिसके भीतर राज्य सरकार अपने विचार लिखित रूप में केंद्रीय सरकार के पास भेज दे। मूल विधान में समय निश्चित नहीं था।

छठा संशोधन (1956)

इसके द्वारा अंतरराज्यीय व्यापार तथा उद्योग के क्रय-विक्रय करों के संबंध में अनुच्छेद-269 तथा 286 में कुछ परिवर्तन करते हुए संघीय सूची में शामिल कर दिया गया। इसके साथ ही उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीशों की संख्या में वृद्धि की गई।

7वाँ संशोधन (1956)

इसके द्वारा अनेक महत्त्वपूर्ण परिवर्तन किए गए। इस संशोधन द्वारा राज्यों का अ, ब, स और द वर्गों में

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

विभाजन समाप्त कर उन्हें 14 राज्यों और 6 केंद्रशासित क्षेत्रों में विभक्त कर दिया गया। इनके द्वारा लोकसभा की अधिकतम सदस्य-संख्या 520 होगी और किसी राज्य की विधान परिषद् की सदस्य-संख्या विधानसभा की सदस्य-संख्या से एक तिहाई से अधिक नहीं होगी।

8वाँ संशोधन (1960)

इसके द्वारा अनुसूचित वर्गों व ऐंग्लो-इंडियन समुदाय के लिए विशेष प्रतिनिधित्व संबंधी व्यवस्था को 10 वर्ष आगे तक के लिए बढ़ा दिया गया तथा यह निश्चित किया गया कि ऐंग्लो-इंडियन का पश्चिम बंगाल की विधानसभा में 2 और अन्य राज्यों की विधानसभाओं में एक प्रतिनिधि नामजद किया जा सकता है।

9वाँ संशोधन (1960)

सितंबर, 1985 में हुए नेहरू-नूर समझौते के अनुसार, भारत और पाकिस्तान के बीच प्रदेशों की जो अदला-बदली होनी थी, उसे प्रभावी रूप देने के लिए यह संशोधन किया गया।

10वाँ संशोधन (1961)

इस संशोधन द्वारा पुर्तगालियों की अधीनता से मुक्त हुए क्षेत्रों—दादर तथा नागर हवेली को केंद्रशासित प्रदेश के रूप में शामिल किया गया।

11वाँ संशोधन (1961)

इसके अनुसार राष्ट्रपति के चुनाव हेतु संसद् के दोनों सदनों की संयुक्त बैठक बुलाने की आवश्यकता नहीं रही।

12वाँ संशोधन (1962)

इसके द्वारा गोवा, दमन और दीव का एकीकरण 20 दिसंबर, 1961 से भारतीय संघ में कर दिया गया।

13वाँ संशोधन (1962)

इसके द्वारा भारतीय संघ के 16वें राज्य की नगालैंड के रूप में व्यवस्था की गई। इसी संबंध में संविधान में अनुच्छेद-371(क) जोड़ा गया।

14वाँ संशोधन (1963)

इसके द्वारा भारतीय संघ के कुछ केंद्रशासित क्षेत्रों—हिमाचल प्रदेश, गोवा, दमन और दीव, पुदुचेरी और मणिपुर के लिए विधानसभाओं की व्यवस्था की गई। यह भी निश्चित किया गया कि केंद्रशासित क्षेत्र लोकसभा में अधिकाधिक 25 सदस्य भेज सकतेहैं।

15वाँ संशोधन (1963)

इसके द्वारा उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का कार्यकाल 60 वर्ष तक के स्थान पर 62 वर्ष कर दिया गया। इसके साथ ही उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों का स्थानांतरण एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय में करने की व्यवस्था भी की गई।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

16वाँ संशोधन (1963)

देश की राजनीतिक एकता को बनाए रखने की दृष्टि से इस संशोधन द्वारा राज्यों को यह अधिकार प्रदान किया गया कि वे देश की प्रभुता तथा अखंडता के हित में मौलिक अधिकारों के प्रयोग पर उचित प्रतिबंध लगाते हुए आवश्यक कानून बना सकते हैं। यह निश्चित किया गया कि संसद्, विधानमंडलों के उम्मीदवारों तथा सर्वोच्च व उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को देश की प्रभुता व अखंडता बनाए रखने की शपथ लेनी होगी।

17वाँ संशोधन (1964)

इसके द्वारा सरकार को प्रतिकार के रूप में बाजार मूल्य दिए बिना ऐसी भूमि का अर्जन करने से रोक दिया गया है, जिस पर कोई व्यक्ति स्वयं खेती कर रहा है और जो उस समय भूमि रखने के लिए लागू सीमा के भीतर है।

18वाँ संशोधन (1966)

इसके द्वारा पंजाब का भाषायी आधार पर पुनर्गठन करते हुए दो राज्यों—पंजाब व हरियाणा का गठन किया गया और 1 नवंबर, 1966 से चंडीगढ़ के संघीय क्षेत्र का गठन किया गया।

19वाँ संशोधन (1966)

इस संशोधन द्वारा चुनाव संबंधी विवादों का निर्णय करने के लिए स्थापित किए जानेवाले अधिकरणों का अंत कर दिया गया और अब चुनाव याचिकाओं की सुनवाई सीधे उच्च न्यायालय में होने लगी। उक्त संशोधन के अनुसार, उच्च न्यायालय के निर्णयों की अपील सर्वोच्च न्यायालय में की जा सकती है।

20वाँ संशोधन (1966)

इस संशोधन द्वारा संविधान में नया अनुच्छेद-233(क) जोड़ा गया और राज्यपाल द्वारा की गई नियुक्तियों को विधिमान्य बना दिया गया। यह संशोधन चंद्रमोहन बनाम उत्तर प्रदेश सरकार के मामले में दिए गए एक निर्णय के कारण आवश्यक हुआ था।

21वाँ संशोधन (1966)

इस संशोधन द्वारा अष्टम सूची में सिंधी भाषा को शामिल किया गया।

22वाँ संशोधन (1969)

इस संशोधन द्वारा संसद् को यह अधिकार दिया गया कि वह असम राज्य के अंतर्गत कुछ कबाइली क्षेत्रों को मिलाकर नए स्वशासित राज्य की स्थापना कर उसके लिए व्यवस्थापिका तथा मंत्रिपरिषद् के गठन की व्यवस्था करे। इस व्यवस्था के अनुसार 'मेघालय' राज्य की स्थापना हुई।

23वाँ संशोधन (1970)

इस संशोधन द्वारा निम्नलिखित व्यवस्थाएँ की गईं : (1) नगालैंड में अनुसूचित जातियों के लिए वही व्यवस्था की गई, जो असम राज्य में की गई थी। (2) राज्यपाल को विधानसभा में केवल एक ऐंग्लो-इंडियन को मनोनीत करने का अधिकार होगा। (3) अनुसूचित जातियों के लिए संरक्षण की अवधि संविधान लागू होने से 30 वर्ष तक के

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

लिए कर दी गई।

24वाँ संशोधन (1971)

यह संशोधन गोलकनाथ के मामले में उत्पन्न स्थिति के संदर्भ में पारित किया गया था। इसके आधार पर संसद् को यह अधिकार होगा कि वह संविधान के किसी भी उपबंध में, जिसमें मौलिक अधिकार भी सम्मिलित हैं, संशोधन कर सके। इस संशोधन विधेयक में यह भी कहा गया है कि अब कोई संविधान विधेयक संसद् के दोनों सदनों द्वारा पारित होकर जब राष्ट्रपति के समक्ष उनकी अनुमति के लिए रखा जाए, तो उन्हें उस पर अपनी अनुमति दे देनी चाहिए।

25वाँ संशोधन (1971)

यह संशोधन संपत्ति के अधिकार से संबंधित अनुच्छेद-31 को संशोधित कर तथा अनुच्छेद-31(ग) के बाद कुछ शब्दों को जोड़कर इनकी व्यवस्था करता है कि संपत्ति के सार्वजनिक दृष्टि से अर्जन और उसके मुआवजे की राशि को न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती।

26वाँ संशोधन (1971)

इस संशोधन के द्वारा अनुच्छेद-291, 292 का लोप किया गया। अनुच्छेद-363(क) अंत:स्थापित किया गया। अनुच्छेद-366(22) का संशोधन किया गया। इस अधिनियम से देसी रियासतों के शासकों की मान्यता समाप्त करके उनकी निजी थैली (पर्स) भी समाप्त कर दी गई।

27वाँ संशोधन (1971)

भारतीय संसद् द्वारा उत्तरी-पूर्वी क्षेत्र पुनर्गठन अधिनियम पारित कर संविधान में 27वाँ संशोधन किया गया है। इस संशोधन द्वारा उत्तर-पूर्वी क्षेत्र पाँच राज्यों—असम, नगालैंड, मेघालय, मणिपुर और त्रिपुरा तथा दो केंद्रशासित क्षेत्रों—मिजोरम एवं अरुणाचल प्रदेश का गठन किया गया है। इसके साथ ही क्षेत्र के इन 5 राज्यों और दो केंद्रशासित क्षेत्रों के प्रशासन में समन्वय और सहयोग के लिए पूर्वोत्तर सीमांत परिषद् की स्थापना भी की गई है।

28वाँ संशोधन (1972)

इस संशोधन द्वारा आईपीएस अधिकारियों के लिए विशेषाधिकरों को समाप्त कर धारा 312 (अ) को जोड़ दिया गया है और संसद् को यह अधिकार दे दिया गया है कि वह परतंत्रता काल की आई.सी.एस. सेवाओं की शर्तों में संशोधन कर सकती है। इस प्रकार आई. सी. एस. के विशेषाधिकारों को समाप्त करने का मार्ग प्रशस्त किया गया।

29वाँ संशोधन (1972)

इस संशोधन द्वारा सन् 1961 में जो केरल भूमि सुधार अधिनियम पारित किए गए थे, उन्हें संविधान की 9वीं अनुसूची में सम्मिलित कर लिया गया है और इस प्रकार इन अधिनियमों के विरुद्ध केरल के उच्च न्यायालय और भारत के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा जो निर्णय दिए गए थे, वे अब अवैध हो गए।

30वाँ संशोधन (1972)

इस संशोधन द्वारा संविधान की 133वीं धारा में संशोधन किया गया है। विधान की इस धारा में यह व्यवस्था थी

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

कि उन सभी दीवानी विवादों की अपीलें सर्वोच्च न्यायालय में की जा सकेंगी, जिनमें विवादग्रस्त धनराशि 20 हजार रुपए या इससे अधिक होगी। इसके साथ ही विधि आयोग की सिफारिश पर दीवानी विवादों की अपील के संबंध में धनराशि की सीमा हटा दी गई और यह निश्चित किया गया कि उच्च न्यायालय से सर्वोच्च न्यायालय में ऐसे सभी दीवानी विवादों की अपीलें की जा सकेंगी, जिनमें उच्च न्यायालय द्वारा यह प्रमाणित कर दिया जाए कि इस विवाद में कानून की व्याख्या से संबंधित सारभूत प्रश्न अंतर्ग्रस्त हैं।

31वाँ संशोधन (1973)

लोकसभा के गठन से संबंधित यह संशोधन विधेयक 26 अप्रैल, 1973 को प्रस्तावित किया गया और सन् 1974 में इसे कानून का रूप प्राप्त हुआ। इसके द्वारा लोकसभा की अधिकतम सदस्य-संख्या 547 निश्चित की गई। इन 547 निर्वाचित सदस्यों में से 525 भारतीय संघ के विभिन्न राज्यों के प्रतिनिधि होंगे और 20 सदस्य केंद्रशासित क्षेत्रों के प्रतिनिधि। ऐंग्लो-इंडियन वर्ग के प्रतिनिधि के रूप में राष्ट्रपति के द्वारा 2 सदस्य मनोनीत किए जाते हैं।

32वाँ संशोधन (1974)

सन् 1972-73 में भारतीय संघ के एक राज्य आंध्र प्रदेश के दो भागों (आंध्र प्रदेश) की एकता को बनाए रखने के लिए 6-सूत्रीय प्रस्ताव रखा गया। इस प्रस्ताव को कार्यरूप में परिणत करने के लिए संविधान में 32वाँ संशोधन किया गया।

33वाँ संशोधन (1974)

इस संशोधन द्वारा यह व्यवस्था की गई कि राज्य विधानमंडलों और संसद्-सदस्यों के ऐसे त्यागपत्रों को स्वीकृति नहीं दी जाएगी, जो दबाव में आकर या विवशत: या इच्छा के विपरीत दिए गए हों। उनके द्वारा की गई जाँच के आधार पर उसे यह विश्वास हो कि त्यागपत्र वास्तविक या स्वैच्छिक नहीं है।

34वाँ संशोधन (1974)

इस संवैधानिक संशोधन द्वारा विभिन्न राज्यों द्वारा पारित किए गए 20 भूमि सुधार कानूनों को संविधान की नौवीं अनुसूची में सम्मिलित कर उन्हें संरक्षण प्रदान किया गया।

35वाँ संशोधन (1974)

इस संवैधानिक संशोधन द्वारा संविधान के संघात्मक स्वरूप में मूलभूत परिवर्तन कर सिक्किम को भारतीय संघ के सह-राज्य का दर्जा प्रदान किया गया।

36वाँ संशोधन (1975)

35वें संवैधानिक संशोधन द्वारा जो व्यवस्था की गई थी, उसे सिक्किम की जनता की माँग पर 36वें संवैधानिक संशोधन द्वारा परिवर्तित कर दिया गया और भारतीय संघ के 22वें राज्य के रूप में अब सिक्किम का प्रवेश किया गया। सिक्किम राज्य से लोकसभा का एक प्रतिनिधि जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होगा व राज्यसभा के लिए एक प्रतिनिधि सिक्किम राज्य की विधानसभा द्वारा आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर चुना जाएगा।

37वाँ संशोधन (1975)

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

इस संवैधानिक संशोधन द्वारा अरुणाचल प्रदेश में गोवा, पुदुचेरी व मिजोरम प्रदेश के समान ही लोकप्रिय शासन की व्यवस्था की गई। इसके अनुसार अरुणाचल प्रदेश में एक लोकप्रिय मंत्रिमंडल व 50 सदस्यों की विधानसभा होगी।

38वाँ संशोधन (1975)

इस अधिनियम द्वारा संविधान के अनुच्छेद-123, 213 और 352 में संशोधन करके यह उपबंध किया गया कि इन अनुच्छेदों में उल्लिखित राष्ट्रपति या राज्यपाल के संवैधानिक निर्णय को किसी न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकेगी।

39वाँ संशोधन (1975)

इस संशोधन द्वारा यह व्यवस्था की गई है कि राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, लोकसभा अध्यक्ष और प्रधानमंत्री—इन चार पदाधिकारियों के निर्वाचन को उच्च न्यायालय या सर्वोच्च न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकेगी। संशोधन में व्यवस्था की गई कि इन सभी से संबंधित चुनाव-विवादों की सुनवाई के लिए संसद् के द्वारा एक समिति का गठन किया जाएगा और संसद् द्वारा इस संबंध में किए गए व्यवस्थापन को किसी न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकेगी।

40वाँ संशोधन (1976)

इस संशोधन द्वारा केंद्रीय सरकार और राज्य सरकारों के 64 कानूनों को संविधान की नौवीं अनुसूची में स्थान देकर उन्हें संवैधानिक संरक्षण प्रदान किया गया है। ये कानून भूमि सुधार, शहरी भूमि-सीमाकरण, आवश्यक वस्तुओं के वितरण, बंधक श्रम की समाप्ति और तस्करों तथा विदेशी मुद्रा का घोटाला करनेवालों के विरुद्ध कार्यवाही आदि से संबंधित हैं।

41वाँ संशोधन (1976)

इस संशोधन द्वारा राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष और सदस्यों की सेवानिवृत्ति आयु 60 वर्ष के स्थान पर 62 वर्ष कर दी गई है।

42वाँ संशोधन (1976)

यह सर्वाधिक व्यापक और विशद् संशोधन है। इसके द्वारा संविधान के विभिन्न प्रावधानों को इस प्रकार संशोधित किया गया—

- संविधान की उद्देशिका में 'धर्मनिरपेक्ष', 'समाजवादी' तथा 'अखंडता' शब्द जोड़े गए।
- मौलिक अधिकार की तुलना में निदेशक तत्त्वों को प्रधानता दी गई तथा कुछ नए नीति-निदेशक तत्त्व जोड़े गए।
- अधिकारों के साथ-साथ कर्तव्यों की व्यवस्था करते हुए नागरिकों के 10 मूल कर्तव्य जोड़े गए।
- राष्ट्रपति मंत्रिपरिषद् की सलाह मानने के लिए बाध्य होंगे। इनकी स्थिति केवल औपचारिक प्रधान मात्र की होगी।
- न्यायपालिका के अधिकारों में कटौती करते हुए संवैधानिक संशोधन की वैधता पर न्यायालय के क्षेत्राधिकार को सीमित करने का प्रयत्न किया गया।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

- आपात्काल की उद्घोषणा पूरे देश के किसी एक भाग के लिए भी की जा सकती है। यह प्रावधान भी किया गया कि आपातकाल एक बार में एक वर्ष के लिए लागू किया जा सकता है।
- विधानसभाओं का कार्यकाल 5 वर्ष के स्थान पर 6 वर्ष कर दिया गया।
- इस संशोधन द्वारा चार विषय राज्य सूची से निकालकर समवर्ती सूची में जोड़ दिए गए।
- इस संशोधन में किए गए किसी भी संशोधन को न्यायालय में इस आधार पर चुनौती नहीं दी जा सकेगी कि अनुच्छेद-368 द्वारा बताई गई प्रक्रिया को नहीं अपनाया गया है।

43वाँ संशोधन (1977)

इसके द्वारा 42वें संशोधन की कुछ आपत्तिजनक व्यवस्थाओं, विशेषतया न्यायपालिका से संबंधित व्यवस्थाओं को रद्द कर दिया गया। जैसे—संसद् की वह शक्ति समाप्त कर दी गई कि वह राष्ट्रविरोधी समुदायों और गतिविधियों पर नियंत्रण लगा सके। वास्तव में 42वें संशोधन के द्वारा शासक दल के प्रभाव में इस अधिकार का दुरुपयोग किया जा सकता था।

42वें संशोधन के द्वारा सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय के क्षेत्राधिकार तथा शक्ति में कमी कर दी गई थी और न्यायालय पुनर्विलोकन की प्रक्रिया को कठिन बना दिया गया था। 43वें संशोधन द्वारा 42वें संशोधन की उपर्युक्त व्यवस्थाओं को रद्द कर दिया गया तथा सर्वोच्च न्यायालय एवं उच्च न्यायालयों की शक्ति और न्यायिक पुनर्विलोकन के संबंध में पुन: वही व्यवस्था कर दी गई, जो 42वें संवैधानिक संशोधन के पूर्व थी।

44वाँ संशोधन (1978)

42वें संशोधन के द्वारा किए गए निम्नलिखित अवांछनीय परिवर्तनों को समाप्त कर दिया गया—

- इस संशोधन द्वारा संपत्ति के मूल अधिकार को रद्द कर दिया गया। अब संपत्ति अधिकार कानूनी अधिकार है, मूल अधिकार नहीं।
- व्यक्ति के जीवन और शारीरिक स्वाधीनता के अधिकार को शासन द्वारा आपातकाल में भी स्थगित नहीं किया जा सकेगा।
- आपात्काल की उद्घोषणा राष्ट्रपति तभी कर सकेंगे, जब मंत्रिमंडल लिखित रूप से ऐसा परामर्श दे। संसद् द्वारा दो तिहाई मत से इसका अनुमोदन भी होना चाहिए।
- राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, लोकसभाध्यक्ष के चुनाव संबंधी विवादों की सुनवाई का अधिकार उच्च न्यायालय तथा सर्वोच्च न्यायालय को दिया गया।
- संविधान संशोधन को न्यायालयों में चुनौती दी जा सकेगी तथा संविधान की आधारभूत विशेषताओं में परिवर्तन जनमत के आधार पर होगा।
- राष्ट्रपति शासन की अधिकतम अवधि एक वर्ष हो सकती है तथा राज्य विधानसभाओं की कार्यवाहियों को प्रकाशित करने की स्वतंत्रता दी गई।

45वाँ संशोधन (1980)

अनुसूचित जातियों और जनजातियों के लिए आरक्षण की अवधि 25 जनवरी, 1980 को समाप्त होनेवाली थी। अत: 45वें संशोधन द्वारा आरक्षण-अवधि को अगले 10 वर्षों तक के लिए बढ़ा दिया गया।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

46वाँ संशोधन (1982)

इस संशोधन द्वारा कुछ वस्तुओं के संबंध में बिक्री-कर की समान व्यवस्था को अपनाया गया।

47वाँ संशोधन (1982)

इस संशोधन द्वारा 14 और भूमि-सुधार कानूनों को संविधान की नौवीं अनुसूची में इस उद्देश्य से शामिल किया गया। इस प्रकार अब संविधान की नौवीं अनुसूची में 202 अधिनियम हो गए। न्यायालय में इनकी वैधता को चुनौती नहीं दी जा सकेगी।

48वाँ संशोधन (1984)

यह संशोधन समिति और सामाजिक राजनीतिक उद्देश्य से किया गया केवल पाँच राज्य तथा उसकी वर्तमान स्थिति के संबंध में है। पंजाब में 6 अक्टूबर, 1983 को राष्ट्रपति शासन लागू किया गया था और 44वें संविधान संशोधन (1978) के अनुसार राष्ट्रपति शासन की अधिकतम अवधि एक वर्ष ही हो सकती है। इस संदर्भ में 6 अक्तूबर, 1984 को पंजाब में राष्ट्रपति शासन समाप्त करना पड़ता, लेकिन पंजाब में स्थिति को देखते हुए 6 अक्तूबर, 1984 के बाद भी राष्ट्रपति शासन जारी रखने की आवश्यकता पड़ी। अत: संविधान के अनुच्छेद-365 में परिवर्तन कर यह व्यवस्था की गई कि पंजाब में राष्ट्रपति शासन अधिकतम दो वर्ष की अवधि तक अर्थात् जरूरी होने पर 6 अक्तूबर, 1985 तक के लिए लागू रखा जा सकता है।

49वाँ संशोधन (1984)

इस संशोधन के आधार पर संविधान की छठवीं अनुसूची के अंतर्गत त्रिपुरा में स्वायत्तशासी जिला परिषद् की स्थापना की गई। इस संशोधन से पहले अनुसूची असम, मेघालय और मणिपुर पर लागू होती है तथा ऐसे प्रशासनिक ढाँचे की व्यवस्था करती है, जिससे जनजातियों की विशेष परंपराओं की रक्षा हो तथा उनके आर्थिक हितों का संवर्द्धन हो। यह संशोधन छठवीं अनुसूची को त्रिपुरा तक विस्तृत कर देता है।

जनजातीय क्षेत्र स्वायत्त जिला परिषद् अधिनियम, 1979 के अधीन त्रिपुरा में 'स्वायत्तशासी जिला परिषद्' कार्य कर रही है। 49वें संशोधन द्वारा जनजातियों की आकांक्षाओं के अनुरूप इसे संवैधानिक मान्यता प्रदान की गई।

50वाँ संशोधन (1984)

इस संशोधन द्वारा संविधान के अनुच्छेद-33 को संशोधित करते हुए राज्य-संपत्ति की सुरक्षा का दायित्व निभानेवाले सुरक्षा बलों, गुप्तचर संगठनों में लगे हुए व्यक्तियों और विभिन्न सैन्य बलों के दूरसंचार कार्य में लगे हुए व्यक्तियों के मौलिक अधिकारों को प्रतिबंधित कर दिया गया। इन सुरक्षा बलों में अधिक अनुशासन की आवश्यकता को दृष्टि में रखते हुए ऐसा किया गया। इस संशोधन से पहले सशस्त्र बलों या लोक व्यवस्था बनाए रखने का भार वहन करनेवाले बलों से संबद्ध सदस्यों के मौलिक अधिकारों को सीमित करने का ही प्रावधान था।

51वाँ संशोधन (1984)

इस संशोधन द्वारा अनुच्छेद-330 और अनुच्छेद-332 को संशोधित किया गया। अनुच्छेद-330 को संशोधित करते हुए मेघालय, नगालैंड, अरुणाचल प्रदेश और मिजोरम की अनुसूचित जनजातियों को लोकसभा में आरक्षण प्रदान किया गया। इसी प्रकार अनुच्छेद-332 को संशोधित करके नगालैंड और मेघालय की विधानसभाओं में

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

जनजातियों के लिए आरक्षण की व्यवस्था की गई।

52वाँ संशोधन (1985)

इस संशोधन द्वारा संविधान के अनुच्छेद-101, 102, 190 और 191 में संशोधन किया गया तथा संविधान में दसवीं अनुसूची जोड़ी गई। इसके अधीन चुनाव के बाद संसद् या विधानसभा के किसी सदस्य की सदस्यता निम्नलिखित परिस्थितियों में समाप्त हो जाएगी—

- यदि वह स्वेच्छा से अपने दल से त्यागपत्र दे दे।
- वह अपने दल या उसके द्वारा प्राधिकृत व्यक्ति की पूर्वानुमति के बिना सदन में उसके किसी निर्देश के विरुद्ध मतदान करता है या मतदान में अनुपस्थित रहता है (किंतु आदेश यदि 15 दिनों के अंदर दल उल्लंघन के लिए क्षमा कर दे, तो उसकी सदस्यता पर कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।)
- यदि कोई निर्दलीय निर्वाचित सदस्य किसी राजनीतिक दल में सम्मिलित हो जाता है।
- यदि कोई मनोनीत सदस्य शपथ लेने के 6 माह के बाद किसी राजनीतिक दल में सम्मिलित हो जाता है।

अपवाद: निम्नलिखित परिस्थितियों में दल छोड़ना दल-परिवर्तन नहीं माना जाएगा और विधानमंडल की सदस्यता समाप्त नहीं होगी—(1) यदि किसी राजनीतिक दल के विभाजन पर उस दल के एक तिहाई सांसद या विधायक दल छोड़ दें। (2) यदि किसी दल का विलय किसी अन्य दल में होने की स्थिति में उस दल के कम-से-कम दो तिहाई सदस्य उसकी स्वीकृति दे दें। दल-बदल पर उठे किसी भी प्रश्न पर अंतिम निर्णय सदन के पीठासीन अधिकारी का होगा और किसी भी न्यायालय को उसमें हस्तक्षेप करने का अधिकार नहीं होगा। इस विधेयक को कार्यान्वित करने के लिए सदन के अध्यक्ष को नियम बनाने का अधिकार होगा।

53वाँ संशोधन (1986)

केंद्रशासित क्षेत्र मिजोरम को इस संशोधन द्वारा पूर्ण राज्य्का दर्जा प्रदान किया गया। मिजोरम की सांस्कृतिक विशिष्टता को बनाए रखने की दृष्टि से उसे विशेष स्थिति भी प्रदान की गई।

54वाँ संशोधन (1986)

इससे केंद्रशासित क्षेत्र अरुणाचल प्रदेश को भारतीय संघ के अंतर्गत राज्य का दर्जा प्रदान किया गया। अरुणाचल प्रदेश में शांति और व्यवस्था बनाए रखने की दृष्टि से अरुणाचल प्रदेश राज्य के राज्यपाल को कुछ विशेष अधिकार प्राप्त होंगे।

55वाँ संशोधन (1986)

इस संशोधन द्वारा सर्वोच्च न्यायालय और उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की सेवा-शर्तों (वेतन, भत्ते, पेंशन और ग्रेच्युटी) में उल्लेखनीय सुधार किया गया।

56वाँ संशोधन (1987)

गोवा जिले को दमन और दीव से अलग करके उसे पूर्ण राज्य का दर्जा प्रदान किया गया। इस प्रकार अब भारतीय संघ में 25 राज्य हो गए।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

57वाँ संशोधन (1987)

इस संशोधन द्वारा अरुणाचल प्रदेश, मेघालय, मिजोरम और नगालैंड की विधानसभाओं में अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटों का आरक्षण किया गया।

58वाँ संशोधन (1987)

इस संशोधन द्वारा संविधान में नया अनुच्छेद-394 जोड़ा गया, जो यह उपबंधित करता है कि हिंदी भाषा में अनूदित भारतीय संविधान का वही अर्थ होगा, जो संविधान की अंग्रेजी भाषा का है।

59वाँ संविधान (1988)

इसके द्वारा संविधान के अनुच्छेद-352 में संशोधन कर निम्नलिखित प्रावधान किए गए—

- आंतरिक गड़बड़ी के आधार पर पंजाब या उसके किसी भाग में 2 वर्ष तक के लिए आपातस्थिति लागू की जा सकेगी।
- पंजाब में आपातस्थिति तीन वर्ष तक बढ़ाई जा सकेगी।
- आपातस्थिति लागू होने पर संविधान में उल्लिखित मूल अधिकार स्वत: निलंबित हो जाएँगे।

60वाँ संशोधन (1988)

इस संशोधन द्वारा अनुच्छेद-276 के खंड-2 में संशोधन करके राज्यों को व्यक्तियों की वृत्तियों, व्यापारों, आजीविकाओं और नियोजनों पर कर लगाने की सीमा को 250 रुपए से बढ़ाकर 2500 कर दिया गया। खंड-2 के 'परंतुक' का लोप कर दिया गया। इसका उद्‌देश्य राज्यों को अपने आय के स्रोत बढ़ाने के लिए सक्षम बनाना है। आजीविका पर करों की वृद्‌धि से राज्यों को अतिरिक्त आय जुटाने में सहायता मिलेगी।

61वाँ संशोधन (1989)

इस संशोधन द्वारा अनुच्छेद-326 में संशोधन करके मतदाताओं की आयु-सीमा को 21 वर्ष से घटाकर 18 वर्ष कर दिया गया।

62वाँ संशोधन (1989)

इस संशोधन द्वारा लोकसभा और विधानसभाओं में अनुसूचित जातियों, जनजातियों और ऐंग्लो-इंडियन वर्ग के लिए स्थानों के आरक्षण की अवधि 10 वर्ष और बढ़ा दी गई। इसके अनुसार, अन्य समुदायों के लिए 40 वर्षों से चली आ रही नीति को जारी रखा जाएगा। नौकरियों में आरक्षण से इस विधेयक का कोई संबंध नहीं है। नौकरियों में आरक्षण की व्यवस्था संविधान के अनुच्छेद-15(4), 16(4) और 335 में है, पर आरक्षण की कोई समय-सीमा संविधान में निर्धारित नहीं है।

63वाँ संशोधन (1989)

इस संशोधन द्वारा संविधान के 59वें संशोधन को, जिसके द्वारा पंजाब में आपात स्थिति लागू करने और मूल अधिकारों को निलंबित करने का उपबंध किया गया, निरस्त कर दिया गया।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

64वाँ संशोधन (1990)

इस संशोधन द्वारा अनुच्छेद-356 के खंड-4 के साथ 5 को जोड़कर पंजाब में राष्ट्रपति शासन की अवधि बढ़ाई गई।

65वाँ संशोधन (1990)

इसके द्वारा अनुच्छेद-338 में संशोधन करके अनुसूचित जाति एवं जनजाति आयोग को संवैधानिक दर्जा दिया गया। आयोग के अध्यक्ष एवं उपाध्यक्ष को क्रमश: कैबिनेट मंत्री तथा राज्यमंत्री का दर्जा दिया गया।

66वाँ संशोधन (1990)

इसके द्वारा संविधान की नौवीं अनुसूची में विभिन्न विधानमंडलों द्वारा पारित भूमि-सुधार अधिनियमों को जोड़ा गया। इस अनुसूची में शामिल अधिनियमों की संख्या पहले 202 थी, जो अब 257 हो गई।

67वाँ संशोधन (1990)

इस संशोधन द्वारा अनुच्छेद-356(4) में संशोधन करके पंजाब में राष्ट्रपति शासन की अवधि को 5 वर्ष तक बढ़ाया गया।

68वाँ संशोधन (1991)

इसके द्वारा अनुच्छेद-356(4) में संशोधन करके पंजाब में राष्ट्रपति शासन की अवधि को 4 वर्ष तक बढ़ाया गया।

69वाँ संशोधन (1991)

इस संशोधन द्वारा संविधान में नए अनुच्छेद-239 (क) तथा 239 (क-ख) जोड़कर दिल्ली में विधानसभा तथा मंत्रिमंडल के गठन की व्यवस्था की गई।

70वाँ संशोधन (1992)

इस संशोधन द्वारा राष्ट्रपति के निर्वाचन मंडल में पुदुचेरी तथा दिल्ली संघ राज्य-क्षेत्रों की विधानसभाओं के सदस्यों को शामिल करने की व्यवस्था की गई।

71वाँ संशोधन (1992)

इसके द्वारा संविधान की अनुसूची में 3 नई भाषाओं-कोंकणी, मणिपुरी तथा नेपाली को जोड़ा गया।

72वाँ संशोधन (1993)

इसके द्वारा लोकसभा तथा राज्य विधानसभाओं के निर्वाचन-क्षेत्रों के सीमांकन के लिए परिसीमन आयोग के गठन की व्यवस्था की गई।

73वाँ संशोधन (1993)

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

इसके द्वारा पंचायती राज की संस्थाओं को संवैधानिक मान्यता प्रदान करके पंचायतों के गठन तथा पंचायतों में आरक्षण के संबंध में प्रावधान किया गया। इस संशोधन द्वारा संविधान में ग्यारहवीं अनुसूची भी जोड़ी गई।

74वाँ संशोधन (1993)

इस संशोधन के द्वारा नगरीय संस्थाओं को संवैधानिक मान्यता प्रदान कर उनके गठन तथा उनमें आरक्षण के लिए प्रावधान किया गया। जिला नियोजन समिति का भी प्रावधान किया गया। इसके द्वारा संविधान में बारहवीं अनुसूची भी जोड़ी गई।

75वाँ संशोधन (1993)

इसके द्वारा त्रिपुरा विधानसभा जनजातियों के 20 स्थानों के आरक्षण का प्रावधान किया गया और इसके द्वारा किराया अधिकरण को गठिन करने के लिए प्रावधान कियागया।

76वाँ संशोधन (1994)

इसके द्वारा तमिलनाडु के आरक्षण अधिनियम को संविधान की नौवीं अनुसूची में शामिल किया गया।

77वाँ संशोधन (1995)

सन् 1955 से ही अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति वर्ग के लोगों को पदोन्नतियों में आरक्षण की सुविधा दी जा रही है, लेकिन 'इंदिरा साहनी और अन्य बनाम भारत सरकार और अन्य' के मुकदमे में 16 नवंबर, 1992 को उच्चतम न्यायालय ने अपने निर्णय में यह कहा कि संविधान के अनुच्छेद-16(4) के अंतर्गत नियुक्तियों अथवा पदों का आरक्षण केवल शुरू में की जानेवाली नियुक्ति पर लागू होता है तथा इसे पदोन्नतियों के मामले में आरक्षण पर लागू नहीं किया जा सकता है। इस फैसले से अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के हितों पर विपरीत प्रभाव पड़ेगा। चूँकि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों का राज्यों की नौकरियों में प्रतिनिधित्व अभी उस स्तर तक नहीं पहुँचा है, जिस स्तर पर होना चाहिए था। अत: अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए पदोन्नति में आरक्षण प्रदान करने की वर्तमान छूट को जारी रखना आवश्यक है। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के हितों की रक्षा के प्रति सरकार की वचनबद्धता को देखते हुए सरकार ने अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए पदोन्नतियों में आरक्षण की वर्तमान नीति को जारी रखने का फैसला किया है। इसके लिए यह जरूरी था कि संविधान के अनुच्छेद-16 में एक नई धारा-4(क) जोड़कर उसमें संशोधन किया जाए, ताकि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति को पदोन्नतियों में आरक्षण प्रदान किया जा सके। यह कानून उपर्युक्त उद्देश्य पूरा करने के लिए है।

78वाँ संशोधन (1995)

नौवीं अनुसूची में शामिल कानूनों में कुछ मूलभूत कानूनों के साथ-साथ कई अन्य कानूनों को भी शामिल किया गया, ताकि यह निश्चित किया जा सके कि लागू होने पर ये कानून मुकदमेबाजी से प्रभावित नहीं होंगे।

79वाँ संशोधन (1999)

इसके अंतर्गत लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में अनुसूचित जाति एवं जनजातियों के लिए आरक्षित स्थानों

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

की अवधि को 25 जनवरी, 2000 से अगले 10 वर्ष के लिए और बढ़ा दिया गया।

80वाँ संशोधन (2000)

दसवें वित्त आयोग की सिफारिशों के आधार पर संविधान (80वाँ संशोधन) अधिनियम, 2000 में संघ और राज्यों के बीच करों से एकत्र राजस्व बाँटने के बारे में संवैधानिक योजना पर अमल करने की व्यवस्था की गई है। इस योजना के अनुसार, आयकर विशेषत: उत्पादन-शुल्कों तथा रेल-यात्री किरायों पर कर के बदले अनुदानों के लिए अब तक राज्य सरकारों को केंद्रीय करों तथा शुल्कों से एकत्र कुल राजस्व का जितना हिस्सा मिलता था, अब उसका 29 प्रतिशत तक भाग राज्यों को दिया जाएगा।

81वाँ संशोधन (2000)

इस संशोधन के द्वारा व्यवस्था की गई है कि संविधान के अनुच्छेद-16 की किसी भी व्यवस्था के अधीन अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए वर्ष में जितने रिक्त सरकारी पद आरक्षित हैं यदि वे पद उस वर्ष नहीं भरे जाते हैं, तो उनपर आगामी वर्ष में जो नियुक्तियाँ की जाएँगी, उन्हें पृथक् वर्ग की नियुक्ति समझा जाएगा तथा उस वर्ग की नियुक्तियों को संबद्ध नियुक्ति वर्ष के कुल पदों के पचास प्रतिशत आरक्षित पदों की अधिकतम सीमा निर्धारित करने के लिए शामिल नहीं किया जाएगा।

82वाँ संशोधन (2000)

इस संशोधन के तहत राज्यों को सरकारी नौकरियों में आरक्षित रिक्त स्थानों की भर्ती हेतु प्रोन्नतियों के मामलों में अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के अभ्यर्थियों के लिए न्यूनतम प्राप्तांकों में छूट प्रदान करने की अनुमति प्रदान की गई।

83वाँ संशोधन (2000)

इस संशोधन के द्वारा पंचायतों में अनुसूचित जाति के लिए आरक्षण करने की आवश्यकता नहीं है।

84वाँ संशोधन (2001)

इस कानून द्वारा संविधान के अनुच्छेद-82 और 170(3) की शर्तों में संशोधन किया गया है, ताकि वर्ष 1991 की जनगणना के दौरान सुनिश्चित की गई आबादी के आधार पर प्रत्येक राज्य के लिए आवंटित लोकसभा सीटों और राज्यों की विधानसभा सीटों की संख्या में कोई परिवर्तन किए बगैर राज्यों के निर्वाचन क्षेत्रों को परिवर्तित तथा पुनर्गठित किया जा सके। इसमें अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के निर्वाचन-क्षेत्र भी शामिल हैं।

ऐसा विभिन्न निर्वाचन-क्षेत्रों में आबादी/मतदाताओं की संख्या में अनियमित वृद्धि के कारण पैदा हुए असंतुलन को दूर करने के लिए किया गया है। इसमें वर्ष 1991 की जनगणना के दौरान सुनिश्चित की गई आबादी के आधार पर राज्यों की विधानसभाओं और लोकसभा के लिए आरक्षित, अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति की सीटों की संख्या भी फिर से निर्धारित की जा सकेंगी।

85वाँ संशोधन (2001)

इस कानून द्वारा संविधान के अनुच्छेद-16(4-क) में संशोधन किया गया है, ताकि अनुसूचित जाति और

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

अनुसूचित जनजाति के सरकारी कर्मचारियों को आरक्षण नियमों के तहत पदोन्नति के मामले में आनुषंगिक वरीयता प्रदान की जा सके। इसे 17 जून, 1995 से प्रभावी माना गया है।

86वाँ संशोधन (2002)

यह संशोधन अनुच्छेद-21 के बाद 21 (क) के रूप में जोड़ा गया है, जिसके अनुसार 6 से 14 वर्ष तक की उम्र के सभी बच्चों को विधि द्वारा निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा की व्यवस्था राज्य द्वारा दी जाएगी।

87वाँ संशोधन (2003)

इस संशोधन द्वारा निर्वाचन-क्षेत्रों के पुनर्निर्धारण का प्रावधान किया गया है। अब सन् 2001 की जनगणना के आधार पर अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के निर्वाचन-क्षेत्रों के सहित अन्य निर्वाचन-क्षेत्रों का राज्यों को आवंटित स्थानों की पूर्वसंख्या में बगैर कोई परिवर्तन किए राज्यों में लोकसभा के निर्वाचन-क्षेत्रों को परिवर्तित एवं पुनर्गठित किया जा सकेगा।

88वाँ संशोधन (2003)

इस संशोधन के अनुसार, केंद्रीय करों की निबल प्राप्तियों का 29 प्रतिशत भाग राज्यों को हस्तांतरित किया जाएगा। इस विधेयक द्वारा संविधान के अनुच्छेद-268, 270 तथा 272 में संशोधन किया जाएगा। यह विधेयक एक अप्रैल, 1996 से प्रभावी हुआ।

89वाँ संशोधन (2003)

इस संशोधन के माध्यम से अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों के लिए आरक्षित बकाया रिक्तियों को आरक्षण की 50 प्रतिशत की सीमा से बाहर रखने के लिए प्रावधान किए गए हैं। इसके साथ ही राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग के गठन का प्रावधान भी किया गया है।

90वाँ संशोधन (2003)

इसमें निर्वाचन-क्षेत्रों की सीमा तय करने के लिए परिसीमन आयोग का गठन करने तथा सन् 2026 तक लोकसभा व विधानसभा की सीटों की संख्या यथावत् रखने का प्रावधान है।

91वाँ संशोधन (2003)

इस संशोधन के बाद सरकारी विभागों में कार्यरत अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के कर्मचारियों को पदोन्नति में भूतलक्षी प्रभाव से आरक्षण संबंधी प्रावधान किया गया।

92वाँ संशोधन (2003)

इस संशोधन के द्वारा आठवीं अनुसूची में संशोधन करते हुए बोडो, डोगरी, मैथिली एवं संथाली भाषाएँ शामिल की गईं, जिससे इस सूची में 22 भाषाएँ हो गईं।

93वाँ संशोधन (2005)

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

इसमें एससी/एसटी व ओबीसी बच्चों के लिए गैर-सहायता प्राप्त स्कूलों में 25 प्रतिशत सीटें आरक्षित रखने का प्रावधान किया गया।

97वाँ संशोधन (2011)

इसमें संविधान के भाग-9 में भाग-9 (ख) जोड़ा गया और हर नागरिक को कोऑपरेटिव सोसाइटी के गठन का अधिकार दिया गया एवं सहकारी समितियों के उचित संचालन की व्यवस्था की गई।

117वाँ संशोधन (2011)

इस विधेयक के तहत भारतीय संविधान के अनुच्छेद-16 (4-क) के स्थान पर नया प्रावधान होगा। इस विधेयक में प्रावधान किया गया है कि संविधान के तहत अधिसूचित सभी एससी और एसटी को भी पिछड़ा माना जाएगा। संविधान के अनुच्छेद- 335 के तहत एससी और एसटी के दावों का प्रशासन की कुशलता बरकरार रखने के साथ तालमेल रहना चाहिए।

119वाँ संशोधन (2015)

इस ऐतिहासिक संशोधन के अंतर्गत भारत और बांग्लादेश के बीच कुछ बस्तियों और भूमि क्षेत्रों के आदान-प्रदान को मंजूरी दी गई। बांग्लादेश के पास भारत की ऐसी 111 रिहाइशी बस्तियाँ हैं, जबकि पश्चिम बंगाल, असम, त्रिपुरा और मेघालय में बांग्लादेश की 51 बस्तियाँ (इन्क्लेव) पड़ती हैं।

121वाँ संशोधन (2015)

उच्चतम न्यायालय और देश के विभिन्न राज्यों के उच्च न्यायालयों में न्यायाधीशों की नियुक्ति के लिए संविधान के अनुच्छेद-124(2) और 217 के निर्वचन पर आधारित 'कॉलेजियम' व्यवस्था की जगह अब 'न्यायिक नियुक्ति आयोग' का गठन किया गया। (इस विधेयक को सदन में प्रस्तुत किए जाने में 121वाँ क्रम होने के कारण इसे 121वाँ संविधान संशोधन विधेयक, 2014 कहा गया है, किंतु वास्तविक संविधान संशोधन के अनुक्रम में इसका क्रम 99वाँ होगा। अत: अधिनियम बनने के बाद इस संविधान संशोधन को 99वाँ संविधान संशोधन अधिनियम, 2014 कहा जाएगा।)

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

परिशिष्ट-1

अनुच्छेदवार संविधान का विषय निरूपण

भाग-1

संघ और उसका राज्य-क्षेत्र

1. संघ का नाम और राज्य-क्षेत्र
2. नए राज्यों का गठन या स्थापना
3. नए राज्यों का गठन और वर्तमान राज्यों के क्षेत्रों, सीमाओं या नामों में परिवर्तन
4. पहली अनुसूची और चौथी अनुसूची के संशोधन तथा अनुपूरक, आनुषंगिक और पारिणामिक विषयों का उपबंध करने के लिए अनुच्छेद 2 और 3 के अधीन बनाई गई विधियाँ।

भाग-2

नागरिकता

5. संविधान के प्रारंभ पर नागरिकता
6. पाकिस्तान से भारत को प्रव्रजन करनेवाले कुछ व्यक्तियों के नागरिकता के अधिकार
7. पाकिस्तान को प्रव्रजन करनेवाले कुछ व्यक्तियों के नागरिकता के अधिकार
8. भारत के बाहर रहनेवाले भारतीय उद्‍भव के कुछ व्यक्तियों के नागरिकता के अधिकार
9. विदेशी राज्य की नागरिकता स्वेच्छा से अर्जित करनेवाले व्यक्तियों को नागरिक न होना
10. नागरिकता के अधिकारों का बना रहना
11. संसद् द्वारा नागरिकता के अधिकार का विधि द्वारा विनियमन किया जाना।

भाग-3

मूल अधिकार

12. परिभाषा
13. मूल अधिकारों से असंगत या उनका अल्पीकरण करनेवाली विधियाँ।

समता का अधिकार

14. विधि के समक्ष समता
15. धर्म, मूल वंश, जाति, लिंग या जन्म-स्थान के आधार पर विभेद का प्रतिषेध
16. लोक-नियोजन के विषय में अवसर की समता

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

17. अस्पृश्यता का अंत
18. उपाधियों का अंत।

स्वातंत्र्य अधिकार

19. वाक्-स्वातंत्र्य आदि विषयक कुछ अधिकारों का संरक्षण
20. अपराधों के लिए दोष-सिद्धि के संबंध में संरक्षण
21. प्राण और दैहिक स्वतंत्रता का संरक्षण
22. कुछ दशाओं में गिरफ्तारी और निरोध से संरक्षण।

शोषण के विरुद्ध अधिकार

23. मानव से दुर्व्यापार और बलात् श्रम का प्रतिषेध
24. कारखानों आदि में बालकों के नियोजन का प्रतिषेध।

धर्म की स्वतंत्रता का अधिकार

25. अंत:करण की और धर्म के अबाध रूप से मानने, आचरण और प्रचार करने की स्वतंत्रता
26. धार्मिक कार्यों के प्रबंध की स्वतंत्रता
27. किसी विशिष्ट धर्म की अभिवृद्धि के लिए करों के बारे में स्वतंत्रता
28. कुछ शिक्षण संस्थाओं में धार्मिक शिक्षा या धार्मिक उपासना में उपस्थित होने के बारे में स्वतंत्रता।

संस्कृति और शिक्षा संबंधी अधिकार

29. अल्पसंख्यक वर्गों के हितों का संरक्षण
30. शिक्षण संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन करने का अल्पसंख्यक वर्गों का अधिकार
31. निरसित।

कुछ विषयों की व्यावृत्ति

31 क. संपदाओं भूमि आदि के अर्जन के लिए उपबंध करनेवाली विधियों को सरंक्षा
31 ख. कुछ अधिनियमों और विनियमों का विधिमान्यकरण
31 ग. कुछ निदेशक तत्त्वों को प्रभावी करनेवाली विधियों की संरक्षा
31 घ. निरसित।

संवैधानिक उपचारों का अधिकार

32. इस भाग द्वारा प्रदत्त अधिकारों को प्रवर्तित कराने के लिए उपचार
33. इस भाग द्वारा प्रदत्त अधिकारों का, सशस्त्र, बलों आदि को लागू होने में, संशोधन करने की संसद् की शक्ति
34. जब किसी क्षेत्र में सेना विधि प्रवृत्त है तब इस भाग द्वारा प्रदत्त अधिकारों पर प्रतिबंध
35. इस भाग के उपबंधों को प्रभावी करने के लिए विधान।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

भाग-4

राज्य की नीति के निदेशक तत्त्व

36. परिभाषा
37. इस भाग में अंतर्विष्ट तत्त्वों का लागू होना
38. राज्य लोक-कल्याण की अभिवृद्धि के लिए सामाजिक व्यवस्था बनाएगा
39. राज्य द्वारा अनुसरणीय कुछ नीति तत्त्व
39 क. समान न्याय और नि:शुल्क विधिक सहायता
40. ग्राम पंचायतों का संगठन
41. कुछ दशाओं में काम, शिक्षा और लोक-सहायता पाने का उपबंध
42. काम की न्यायसंगत और मानवोचित दशाओं का तथा प्रसूति सहायता का उपबंध
43. कर्मकारों के लिए निर्वाह मजदूरी आदि
43 क. उद्योगों के प्रबंध में कर्मकारों का भाग लेना
44 नागरिकों के लिए एक समान नागरिक संहिता
45. बालकों के लिए नि:शुल्क और अनिवार्य शिक्षा का उपबंध
46. अनुसूचित जातियों, अनुसूचित जनजातियों और अन्य दुर्बल वर्गों के शिक्षा और अर्थ संबंधी हितों की अभिवृद्धि
47. पोषाहार स्तर और जीवन-स्तर को ऊँचा करने तथा लोक-स्वास्थ्य का सुधार करने का राज्य का कर्तव्य
48. कृषि और पशुपालन का संगठन
48 क. पर्यावरण का संरक्षण एवं संवर्धन और वन तथा वन्य जीवों की रक्षा
49. राष्ट्रीय महत्त्व के स्मारकों, स्थानों और वस्तुओं का संरक्षण
50. कार्यपालिका से न्यायपालिका का पृथक्करण
51. अंतरराष्ट्रीय शांति और सुरक्षा की अभिवृद्धि।

भाग-4 क

मूल कर्तव्य

51 क. मूल कर्तव्य।

भाग-5

संघ

अध्याय-1 : कार्यपालिका, राष्ट्रपति और उपराष्ट्रपति

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

52. भारत का राष्ट्रपति
53. संघ की कार्यपालिका शक्ति
54. राष्ट्रपति का निर्वाचन
55. राष्ट्रपति के निर्वाचन की रीति
56. राष्ट्रपति की पदावधि
57. पुनर्निर्वाचन के लिए पात्रता
58. राष्ट्रपति निर्वाचित होने के लिए अर्हताएँ
59. राष्ट्रपति के पद के लिए शर्तें
60. राष्ट्रपति द्वारा शपथ या प्रतिज्ञान
61. राष्ट्रपति पर महाभियोग चलाने की प्रक्रिया
62. राष्ट्रपति के पद में रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचन करने का समय और आकस्मिक रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचित व्यक्ति की पदावधि
63. भारत का उपराष्ट्रपति
64. उपराष्ट्रपति का राज्यसभा का पदेन सभापति होना
65. राष्ट्रपति के पद में आकस्मिक रिक्ति के दौरान या उसकी अनुपस्थिति में उपराष्ट्रपति का राष्ट्रपति के रूप में कार्य करना या उसके कृत्यों का निर्वहण
66. उपराष्ट्रपति का निर्वाचन
67. उपराष्ट्रपति की पदावधि
68. उपराष्ट्रपति के पद में रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचन करने का समय और आकस्मिक रिक्ति को भरने के लिए निर्वाचित व्यक्ति की पदावधि
69. उपराष्ट्रपति द्वारा शपथ या प्रतिज्ञान
70. अन्य आकस्मिकताओं में राष्ट्रपति के कृत्यों का निर्वहण
71. राष्ट्रपति या उपराष्ट्रपति के निर्वाचन से संबंधित या संयुक्त विषय
72. क्षमा आदि और कुछ मामलों में दंडादेश के निलंबन, परिहार या लघुकरण की राष्ट्रपति की शक्ति
73. संघ की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार।

मंत्रिपरिषद्

74. राष्ट्रपति को सहायता और सलाह देने के लिए मंत्रिपरिषद्
75. मंत्रियों के बारे में अन्य उपबंध।

भारत का महान्यायवादी

76. भारत का महान्यायवादी।

सरकारी कार्य का संचालन

77. भारत सरकार के कार्य का संचालन
78. राष्ट्रपति को जानकारी देने आदि के संबंध में प्रधानमंत्री के कर्तव्य।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

अध्याय-2 : संसद्

79. संसद् का गठन
80. राज्यसभा की संरचना
81. लोकसभा की संरचना
82. प्रत्येक जनगणना के पश्चात् पुन:समायोजन
83. संसद् के सदनों की अवधि
84. संसद् की सदस्यता के लिए अर्हता
85. संसद् के सत्र, सत्रावसान और विघटन
86. सदनों में अभिभाषण का और उनको संदेश भेजने का राष्ट्रपति का अधिकार
87. राष्ट्रपति का विशेष अभिभाषण
88. सदनों के बारे में मंत्रियों और महान्यायवादी के अधिकार।

संसद् के अधिकारी

89. राज्यसभा का सभापति और उपसभापति
90. उपसभापति का पद रिक्त होना, पद-त्याग और पद से हटाया जाना
91. सभापति के पद के कर्तव्यों का पालन करने या सभापति के रूप में कार्य करने का उपसभापति या अन्य व्यक्ति की शक्ति
92. जब सभापति या उपसभापति को पद से हटाने का कोई संकल्प विचाराधीन है, तब उसका पीठासीन न होना
93. लोकसभा का अध्यक्ष और उपाध्यक्ष
94. अध्यक्ष और उपाध्यक्ष का पद रिक्त होना, पद-त्याग और पद से हटाया जाना
95. अध्यक्ष पद के कर्तव्यों का पालन करने या अध्यक्ष के रूप में कार्य करने की उपाध्यक्ष या अन्य व्यक्ति की शक्ति
96. जब अध्यक्ष या उपाध्यक्ष को पद से हटाने का कोई संकल्प विचाराधीन है, तब उसका पीठासीन न होना
97. सभापति और उपसभापति तथा उपाध्यक्ष और अध्यक्ष के वेतन एवं भत्ते
98. संसद् का सचिवालय।

कार्य-संचालन

99. सदस्यों द्वारा शपथ या प्रतिज्ञान
100. सदनों में मतदान, रिक्तियों के होते हुए भी सदनों की कार्य करने की शक्ति और गणपूर्ति।

सदस्यों की निरर्हताएँ

101. स्थानों का रिक्त होना
102. सदस्यता के लिए अयोग्ताएं
103. सदस्यों की अयोग्यताओं से संबंधित प्रश्नों पर निर्णय
104. अनुच्छेद 99 के अधीन शपथ लेने या प्रतिज्ञान करने से पहले या अर्हित न होते हुए या अयोग्य किए जाने पर बैठने और मत देने के लिए शास्ति।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

संसद् और उसके सदस्यों की शक्तियाँ, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियाँ

105. संसद् के सदस्यों की तथा उनके सदस्यों और समितियों की शक्तियाँ, विशेषाधिकार आदि
106. सदस्यों के वेतन और भत्ते।

विधायी प्रक्रिया

107. विधेयकों के पुर:स्थापन और पारित किए जाने के संबंध में उपबंध
108. कुछ दशाओं में दोनों सदनों की संयुक्त बैठक
109. धन विधेयकों के संबंध में विशेष प्रक्रिया
110. धन विधेयक की परिभाषा
111. विधेयकों पर अनुमति।

वित्तीय विषयों के संबंध में प्रक्रिया

112. वार्षिक वित्तीय विवरण
113. संसद् में प्राक्कलनों के संबंध में प्रक्रिया
114. विनियोग विधेयक
115. अनुपूरक, अतिरिक्त या अधिक अनुदान
116. लेखानुदान, प्रत्ययानुदान और अपवादानुदान
117. वित्त विधेयकों के बारे में विशेष उपबंध।

साधारणतया प्रक्रिया

118. प्रक्रिया के नियम
119. संसद् में वित्तीय कार्य संबंधी प्रक्रिया का विधि द्वारा नियमन—
120. संसद् में प्रयोग की जानेवाली भाषा
121. संसद् में चर्चा पर रोक
122. न्यायालयों द्वारा संसद् की काररवाइयों की जाँच न किया जाना।

अध्याय-3 : राष्ट्रपति की विधायी शक्तियाँ

123. संसद् के विश्रांतिकाल में अध्यादेश जारी करने की राष्ट्रपति की शक्ति।

अध्याय-4 : संघ की न्यायपालिका

124. उच्चतम न्यायालय की स्थापना और गठन
125. न्यायाधीशों के वेतन आदि
126. कार्यकारी मुख्य न्यायमूर्ति की नियुक्ति
127. तदर्थ न्यायाधीशों की नियुक्ति
128. उच्चतम न्यायालय की बैठकों में सेवानिवृत्त न्यायाधीशों की उपस्थिति

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

129. उच्चतम न्यायालय का अभिलेख न्यायालय होना
130. उच्चतम न्यायालय का स्थान
131. उच्चतम न्यायालय की आरंभिक अधिकारिता
131क. निरसित
132. कुछ मामलों में उच्च न्यायालयों से अपीलों में उच्चतम न्यायालय की अपीली अधिकारिता
133. उच्च न्यायालयों से सिविल विषयों से संबंधित अपीलों में उच्चतम न्यायालय की अपीलीय अधिकारिता
134. दांडिक विषयों में उच्चतम न्यायालयों की अपीलीय अधिकारिता
134क. उच्चतम न्यायालयों में अपील के लिए प्रमाण-पत्र
135. विद्यमान विधि के अधीन संघीय न्यायालय की अधिकारिता और शक्तियों का उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रयोग
136. अपील के लिए उच्चतम न्यायालय की विशेष आज्ञा
137. निर्णयों या आदेशों का उच्चतम न्यायालय द्वारा पुनर्विलोकन
138. उच्चतम न्यायालय की अधिकारिता की वृद्धि
139. कुछ रिट निकालने की शक्तियों का उच्चतम न्यायालय को प्रदान किया जाना
139क. कुछ मामलों का अंतरण
140. उच्चतम न्यायालय की आनुषंगिक शक्तियाँ
141. उच्चतम न्यायालय द्वारा घोषित विधि का सभी न्यायालयों पर आबद्ध कर होना
142. उच्चतम न्यायालय की डिक्रियों और आदेशों का प्रर्वतन और प्रकटीकरण आदि के बारे में आदेश
143. उच्चतम न्यायालय से परामर्श करने की राष्ट्रपति की शक्ति
144. सिविल और न्यायिक प्राधिकारियों द्वारा उच्चतम न्यायालय की सहायता में कार्य किया जाना
145. न्यायालय के नियम आदि
146. उच्चतम न्यायालय के अधिकारी और सेवक तथा व्यय
147. निर्वचन।

अध्याय-5 : भारत का नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक

148. भारत का नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक
149. नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक के कर्तव्य और शक्तियाँ
150. संघ के और राज्यों के लेखाओं का प्रारूप
151. संपरीक्षक प्रतिवेदन।

भाग-6

राज्य

अध्याय-1 : साधारण

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

152. परिभाषा।

अध्याय-2 : कार्यपालिका

153. राज्यों के राज्यपाल
154. राज्य की कार्यपालिका शक्ति
155. राज्यपाल की नियुक्ति
156. राज्यपाल की पदावधि
157. राज्यपाल नियुक्त होने के लिए अर्हताएँ
158. राज्यपाल के पद के लिए शर्तें
159. राज्यपाल द्वारा शपथ या प्रतिज्ञान
160. कुछ आकस्मिकताओं में राज्यपाल के दायित्वों का निर्वहण
161. क्षमा आदि की और कुछ मामलों में दंडादेश के निलंबन, परिहार या लघुकरण की राज्यपाल की शक्ति
162. राज्य की कार्यपालिका शक्ति का विस्तार।

मंत्रिपरिषद्

163. राज्यपाल को सहायता और सलाह देने के लिए मंत्रिपरिषद्
164. मंत्रियों के बारे में अन्य उपबंध

राज्य का महाधिवक्ता

165. राज्य का महाधिवक्ता।

सरकारी कार्य का संचालन

166. राज्य की सरकार के कार्य का संचालन
167. राज्यपाल को जानकारी देने आदि के संबंध में मुख्यमंत्री के कर्तव्य।

अध्याय-3 : राज्य का विधानमंडल

168. राज्यों के विधानमंडलों का गठन
169. राज्यों में विधान परिषदों की समाप्ति या सृजन
170. विधानसभाओं की संरचना
171. विधान परिषदों की संरचना
172. राज्यों के विधानमंडलों की अवधि
173. राज्य के विधानमंडल की सदस्यता के लिए अर्हता
174. राज्य के विधानमंडल के सत्र, सत्रावसान और विघटन
175. सदन या सदनों में अभिभाषण का और उनको संदेश भेजने का राज्यपाल का अधिकार
176. राज्यपाल का विशेष अभिभाषण

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

177. सदनों के बारे में मंत्रियों और महाधिवक्ता के अधिकार।

राज्य के विधानमंडल के अधिकारी

178. विधानसभा का अध्यक्ष और उपाध्यक्ष

179. अध्यक्ष और उपाध्यक्ष का पद रिक्त होना, पद-त्याग और पद से हटाया जाना

180. अध्यक्ष पद के कर्तव्यों का पालन करने या अध्यक्ष के रूप में कार्य करने की उपाध्यक्ष या अन्य व्यक्ति की शक्ति

181. जब अध्यक्ष या उपाध्यक्ष को पद से हटाने का कोई संकल्प विचाराधीन है, तब उसका पीठासीन न होना

182. विधान परिषद् का सभापति और उपसभापति

183. सभापति और उपसभापति का पद रिक्त होना, पद-त्याग और पद से हटाया जाना

184. सभापति पद के कर्तव्यों का पालन करने या सभापति के रूप में कार्य करने की उपसभापति या अन्य व्यक्ति की शक्ति

185. जब सभापति या उपसभापति को पद से हटाने का कोई संकल्प विचाराधीन है, तब उसका पीठासीन न होना

186. अध्यक्ष और उपाध्यक्ष तथा सभापति और उपसभापति के वेतन एवं भत्ते

187. राज्य के विधानमंडल का सचिवालय।

कार्य-संचालन

188. सदस्यों द्वारा शपथ या प्रतिज्ञान

189. सदनों में मतदान, रिक्तियों के होते हुए भी सदनों का कार्य करने की शक्ति और गणपूर्ति।

सदस्यों की निरर्हताएँ

190. स्थानों का रिक्त होना

191. सदस्यता के लिए अयोग्यताएं

192. सदस्यों की अयोग्यताओं से संबंधित प्रश्नों पर निर्णय

193. अनुच्छेद 188 के अधीन शपथ लेने या प्रतिज्ञा करने से पहले अथवा अर्हित न होते हुए या अयोग्य किए जाने पर बैठने और मत देने के लिए शास्ति।

राज्यों के विधानमंडलों और उनके सदस्यों की शक्तियाँ, विशेषाधिकार और उन्मुक्तियाँ

194. विधानमंडलों के सदनों की तथा उनके सदस्यों और समितियों की शक्तियाँ, विशेषाधिकार आदि

195. सदस्यों के वेतन और भत्ते।

विधायी प्रक्रिया

196. विधेयकों के पुर:स्थापन और पारित किए जाने के संबंध में उपबंध

197. धन विधेयकों से भिन्न विधेयकों के बारे में विधान परिषद् की शक्तियों पर निर्बंधन

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

198. धन विधेयकों के संबंध में विशेष प्रक्रिया
199. 'धन-विधेयक' की परिभाषा
200. विधेयकों पर अनुमति
201. विचार के लिए आरक्षित विधेयक।

वित्तीय विषयों के संबंध में प्रक्रिया

202. वार्षिक वित्तीय विवरण
203. विधानमंडल में प्राक्कलनों के संबंध में प्रक्रिया
204. विनियोग विधेयक
205. अनुपूरक, अतिरिक्त या अधिक अनुदान
206. लेखानुदान, प्रत्ययानुदान और अपवादानुदान
207. वित्त विधेयकों के बारे में विशेष उपबंध।

साधारणतया प्रक्रिया

208. प्रक्रिया के नियम
209. राज्य के विधानमंडल में वित्तीय कार्य संबंधी प्रक्रिया का विधि द्वारा विनियमन
210. विधानमंडल में प्रयोग की जानेवाली भाषा
211. विधानमंडल में चर्चा पर निषेध
212. न्यायालयों द्वारा विधानमंडल की कारवाइयों की जाँच न किया जाना।

अध्याय-4 : राज्यपाल की विधायी शक्ति

213. विधानमंडल के विश्रांतिकाल में अध्यादेश जारी करने की राज्यपाल की शक्ति

अध्याय-5 : राज्यों के उच्च न्यायालय

214. राज्यों के लिए उच्च न्यायालय
215. उच्च न्यायालयों का अभिलेख न्यायालय होना
216. उच्च न्यायालयों का गठन
217. उच्च न्यायालयों के न्यायाधीश की नियुक्ति और उसके पद की शर्तें
218. उच्चतम न्यायालय से संबंधित कुछ उपबंधों का उच्च न्यायालयों में लागू होना
219. उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों द्वारा शपथ या प्रतिज्ञान
220. स्थायी न्यायाधीश रहने के पश्चात् विधि-व्यवसाय पर प्रतिबंध
221. न्यायाधीशों के वेतन आदि
222. किसी न्यायाधीश का एक उच्च न्यायालय से दूसरे उच्च न्यायालय को स्थानान्तरण
223. कार्यकारी मुख्य न्यायमूर्ति की नियुक्ति
224. अपर और कार्यकारी न्यायाधीशों की नियुक्ति

Novels English & Hind

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

224 क. उच्च न्यायालयों की अधिकारिता
225. विद्यमान उच्च न्यायालयों की अधिकारिता
226. कुछ रिट निकालने की उच्च न्यायालय की शक्ति
227. सभी न्यायालयों की देखे-रेख
228. कुछ मामलों का उच्च न्यायालय को हस्तान्तरण
229. उच्च न्यायालयों के अधिकारी और सेवक तथा व्यय
230. उच्च न्यायालयों की अधिकारिता का संघ राज्य-क्षेत्रों पर विस्तार
231. दो या अधिक राज्यों के लिए एक ही उच्च न्यायालय की स्थापना।

अध्याय-6 : अधीनस्थ न्यायालय

232. जला न्यायाधीशों की नियुक्ति
233. कुछ जिला न्यायाधीशों की नियुक्तियों का और उनके द्वारा दिए गए निर्णयों आदि का विधिमान्यकरण
234. न्यायिक सेवा में जिला न्यायाधीशों से भिन्न व्यक्तियों की भरती
235. अधीनस्थ न्यायालयों पर नियंत्रण
236. निर्वाचन
237. कुछ वर्ग या वर्गों के मजिस्ट्रेटों पर इस अध्याय के उपबंधों का लागू होना।

भाग-7

पहली अनुसूची के भाग 'ख' के राज्य

238. [निरसित]

भाग-8

संघ राज्य-क्षेत्र

239. संघ राज्य-क्षेत्रों का प्रशासन
239. क. कुछ संघ राज्य-क्षेत्रों के लिए स्थानीय विधानमंडलों या मंत्रिपरिषदों का या दोनों का सृजन
239 कक. दिल्ली के संबंध में विशेष उपबंध
239 कख. संवैधानिक तंत्र के विफल हो जाने की दशा में उपबंध
239 ख. विधानमंडल के विश्रांतिकाल में अध्यादेश प्रख्यापित करने की प्रशासक की शक्ति
240. कुछ संघ राज्य-क्षेत्रों के लिए विनियम बनाने की राष्ट्रपति की शक्ति
241. संघ राज्य-क्षेत्रों के लिए उच्च न्यायालय
242. [निरसित]।

भाग-9

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

पंचायतें

243. परिभाषाएँ
243 क. ग्रामसभा
243 ख. पंचायतों का गठन
243 ग. पंचायतों की संरचना
243 घ. पंचायतों में आरक्षण
243 ङ. पंचायतों की अवधि आदि
243 च. सदस्यता के लिए आयोग्यताएं
243 छ. पंचायतों की शक्तियाँ, प्राधिकार और उत्तरदायित्व
243 ज. पंचायतों द्वारा कर लगाने की शक्तियाँ और उनकी निधियाँ
243 झ. वित्तीय स्थिति के पुनर्विलोकन के लिए वित्त आयोग का गठन
243 ञ. पंचायतों के लेखाओं की संपरीक्षा
243 ट. पंचायतों के लिए निर्वाचन
243 ठ. संघ राज्य-क्षेत्रों का लागू होना
243 ड. इस भाग का कतिपय क्षेत्रों को लागू न होना
243 ढ. विद्यमान विधियों और पंचायतों का बना रहना
243 ण. निर्वाचन संबंधी मामलों में न्यायालयों के हस्तक्षेप का वर्जन।

भाग-9 क

नगरपालिकाएँ

243 त. परिभाषाएँ
243 थ. नगरपालिकाओं का गठन
243 द. नगरपालिकाओं की संरचना
243 ध. वार्ड समितियों आदि का गठन और संरचना
243 न. स्थानों का आरक्षण
243 प. नगरपालिकाओं की अवधि आदि
243 फ. सदस्यता के लिए अयोग्यताएं
243 ब. नगरपालिकाओं आदि की शक्तियाँ, प्राधिकार और उत्तरदायित्व
243 भ. नगरपालिकाओं द्वारा कर लगाने की शक्ति और उनकी निधियाँ
243 म. वित्त आयोग
243 य. नगरपालिकाओं के लेखाओं की संपरीक्षा
243 य क. नगरपालिकाओं के लिए निर्वाचन
243 य ख. संघ राज्य-क्षेत्रों को लागू होना
243 य ग. इस भाग का कतिपय क्षेत्रों को लागू होना

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

243 य घ. जिला योजना के लिए समिति

243 य ङ. महानगर योजना के लिए समिति

243 य च. विद्यमान विधियों और नगरपालिकाओं का बना रहना

243 य छ. निर्वाचन संबंधी मामलों में न्यायालयों के हस्तक्षेप का वर्जन।

भाग-10

अनुसूचित और जनजाति क्षेत्र

244. अनुसूचित क्षेत्रों और जनजाति क्षेत्रों का प्रशासन

244 क. असम के कुछ जनजाति क्षेत्रों को समाविष्ट करनेवाला एक स्वशासी राज्य बनाना और उसके लिए स्थानीय विधानमंडल या मंत्रिपरिषद् का या दोनों का सृजन।

भाग-11

संघ और राज्यों के बीच संबंध

अध्याय-1 : विधायी संबंध विधायी शक्तियों का वितरण

245. संसद् द्वारा और राज्यों के विधानमंडलों द्वारा बनाई गई विधियों का विस्तार

246. संसद् द्वारा और राज्यों के विधानमंडलों द्वारा बनाई गई विधियों की विषय-वस्तु

247. कुछ अतिरिक्त न्यायालयों की स्थापना का उपबंध करने की संसद् की शक्ति

248. अवशिष्ट विधायी शक्तियाँ

249. राज्य-सूची के विषय के संबंध में राष्ट्रीय हित में विधि बनाने की संसद् की शक्ति

250. यदि आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में हो तो राज्य-सूची विषय के संबंध में विधि बनाने की संसद् की शक्ति

251. संसद् द्वारा अनुच्छेद 249 और अनुच्छेद 250 के अधीन बनाई गई विधियों और राज्यों के विधानमंडलों द्वारा बनाई गई विधियों में असंगति

252. दो या अधिक राज्यों के लिए उनकी सहमति से विधि बनाने की संसद् की शक्ति और ऐसी विधि का किसी अन्य राज्य द्वारा अंगीकृत किया जाना

253. अंतरराष्ट्रीय करारों को प्रभावी करने के लिए विधान

254. संसद् द्वारा बनाई गई विधियों और राज्यों के विधानमंडलों द्वारा बनाई गई विधियों में असंगति।

255. सिफारिशों और पूर्व स्वीकृति के बारे में अपेक्षाओं को केवल प्रक्रिया के विषय मानना।

अध्याय-2 : प्रशासनिक संबंध साधारण

256. राज्यों की और संघ की बाध्यता

257. कुछ दशाओं में राज्यों पर संघ का नियंत्रण

258. कुछ दशाओं में राज्यों को शक्ति प्रदान करने आदि की संघ की शक्ति

Novels English & Hind

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

258 क. संघ को कृत्य सौंपने की राज्य को शक्ति

259. निरसित

260. भारत के बाहर के राज्य-क्षेत्रों के संबंध में संघ की अधिकारिता

261. सार्वजनिक कार्य, अभिलेख और न्यायिक कारवाइयाँ।

जल संबंधी विवाद

262. अंतरराज्यिक नदियों या नदी-घाटी के जल संबंधी विवादों का न्याय-निर्णयन।

राज्यों के बीच समन्वय

263. अंतरराज्य परिषद् के संबंध में उपबंध।

भाग-12

वित्त, संपत्ति, संविदाएँ और वाद

अध्याय-1 : वित्त

साधारण

264. निर्वचन

265. विधि के प्राधिकार के बिना करों का अधिरोपण न किया जाना

266. भारत और राज्यों की संचित निधियाँ और लोक लेखे

267. आकस्मिकता निधि।

संघ और राज्यों के बीच राजस्वों का वितरण

268. संघ द्वारा लगाये जानेवाले किंतु राज्यों द्वारा संगृहीत और विनियोजित किए जानेवाले शुल्क

269. संघ द्वारा उद्गृहीत और संगृहीत किंतु राज्यों को सौंपे जानेवाले कर

270. संघ द्वारा उद्गृहीत और संगृहीत तथा संघ और राज्यों के बीच वितरित किए जानेवाले कर

271. कुछ शुल्कों और करों पर संघ को प्रयोजनों के लिए अधिभार

272. कर जो संघ द्वारा लगाये और संगृहीत किए जाते हैं तथा जो संघ और राज्यों के बीच विकसित किए जा सकेंगे।

273. जूट और जूट उत्पादों पर निर्यात शुल्क के स्थान पर अनुदान

274. ऐसे कराधान पर जिसमें राज्य पर प्रभाव डालनेवाले विधेयकों के लिए राष्ट्रपति की पूर्व सिफारिश की अपेक्षा

275. कुछ राज्यों को संघ से अनुदान

276. पेशों; व्यापारों, आजीविकाओं और नौकरियों पर कर

277. व्यावृत्ति

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

278. निरसित
279. 'शुद्ध आगम' आदि की गणना
280. वित्त आयोग
281. वित्त आयोग की सिफारिश।

प्रकीर्ण वित्तीय उपबंध

282. संघ या राज्य द्वारा अपने राजस्व से किए जानेवाले व्यय
283. संचित निधियों, आकस्मिकता निधियों और लोक लेखाओं में जमा धनराशियों की अभिरक्षा आदि झ्र
284. लोक सेवकों और न्यायालयों द्वारा प्राप्त वादकर्ताओं की जमा राशियों और अन्य धनराशियों की अभिरक्षा
285. संघ की संपत्ति को राज्य के कराधान से छूट
286. माल के क्रय या विक्रय पर कर के अधिरोपण के बारे में निर्बंधन
287. विद्युत् पर करों से छूट
288. जल या विद्युत् के संबंध में राज्यों द्वारा कराधान की कुछ दशाओं में छूट
289. राज्यों की संपत्ति और आय को संघ के कराधान से छूट
290. कुछ व्ययों और पेंशनों के संबंध में समायोजन
290 क. कुछ देवस्वम् निधियों को वार्षिक संदाय
291. निरसित।

अध्याय-2 : उधार लेना

292. भारत सरकार द्वारा उधार लेना
293. राज्यों द्वारा उधार लेना।

अध्याय-3 : संपत्ति, संविदाएँ, अधिकार, दायित्व, बाध्यताएँ और वाद

294. कुछ दशाओं में संपत्ति, आस्तियों, अधिकारों, दायित्व और बाध्यताओं का उत्तराधिकार
295. अन्य दशाओं में संपत्ति, आस्तियों, अधिकारों, दायित्वों और बाध्यताओं का उत्तराधिकार
296. राजगामी या व्यपगत या स्वामी-विहीन होने से प्रोद्भूत संपत्ति
297. राज्य-क्षेत्रीय सागर-खंड या महाद्वीपीय तट भूमि में स्थित मूल्यवान् चीजों और अनन्य आर्थिक क्षेत्र के संपत्ति स्रोतों का संघ में निहित होना
298. व्यापार करने आदि की शक्ति
299. संविदाएँ
300. वाद और कार्यवाइयाँ।

अध्याय-4 : संपत्ति का अधिकार

300 क. विधि के प्राधिकार के बिना व्यक्तियों को संपत्ति से वंचित न किया जाना।

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

भाग-13

भारत के राज्य-क्षेत्र के भीतर व्यापार

वाणिज्य और समागम

301. व्यापार, वाणिज्य और लेन-देन की स्वतंत्रता
302. व्यापार, वाणिज्य और लेन-देन पर प्रतिबंध अधिरोपित करने की संसद् की शक्ति
303. व्यापार और वाणिज्य के संबंध में संघ और राज्यों की विधायी शक्तियों पर प्रतिबंध
304. राज्यों के बीच व्यापार, वाणिज्य और लेन-देन पर प्रतिबंध
305. विद्यमान विधियों और राज्य के एकाधिकार का उपबंध करनेवाली विधियों को छूट
306. निरसित
307. अनुच्छेद 301 से अनुच्छेद 304 के प्रयोजनों को कार्यान्वित करने के लिए प्राधिकारी की नियुक्ति।

भाग-14

संघ और राज्यों के अधीन सेवाएँ

अध्याय-1 : सेवाएँ

308. निर्वचन
309. संघ या राज्य की सेवा करनेवाले व्यक्तियों की भरती और सेवा की शर्तें
310. संघ या राज्य की सेवा करनेवाले व्यक्तियों की पदावधि
311. संघ या राज्य के अधीन सिविल हैसियत में नियोजित व्यक्तियों का पदच्युत किया जाना, पद से हटाया जाना या पद में अवनत किया जाना
312. अखिल भारतीय सेवाएँ

312 क. कुछ सेवाओं के अधिकारियों की सेवा की शर्तों में परिवर्तन करने या उन्हें प्रतिसंहृत करने की संसद् की शक्ति

313. संक्रमणकालीन उपबंध
314. निरसित।

अध्याय-2 : लोक सेवा उद्योग

315. संघ और राज्यों के लिए लोक सेवा आयोग
316. सदस्यों की नियुक्ति और पदावधि
317. लोक सेवा आयोग के किसी सदस्य का हटाया जाना और निलंबित किया जाना
318. आयोग के सदस्यों और कर्मचारियों की सेवा की शर्तों के बारे में विनियम बनाने की शक्ति

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

319. आयोग के सदस्यों द्वारा ऐसे सदस्य न रहने पर पद धारण करने के संबंध में रोक
320. लोक सेवा आयोगों के कृत्य
321. लोक सेवा आयोगों के कृत्यों का विस्तार करने की शक्ति
322. लोक सेवा आयोगों के व्यय
323. लोक सेवा आयोगों के प्रतिवेदन।

भाग-14 क

अधिकरण

323 क. प्रशासनिक अधिकरण
323 ख. अन्य विषयों के लिए अधिकरण।

भाग-15

निर्वाचन

324. निर्वाचनों के अधिकरण, निदेशन और नियंत्रण का निर्वाचन आयोग में निहित होना
325. धर्म, मूल वंश, जाति या लिंग के आधार पर किसी व्यक्ति का निर्वाचक नामावली में सम्मिलित किए जाने के लिए अपात्र न होना और उसके द्वारा किसी विशेष निर्वाचक नामावली में सम्मिलित किए जाने का दावा न किया जाना
326. लोकसभा और राज्यों की विधानसभाओं के लिए निर्वाचनों का वयस्क मताधिकार के आधार पर होना
327. विधानमंडलों के लिए निर्वाचनों के संबंध में उपबंध करने की संसद् की शक्ति
328. किसी राज्य के विधानमंडल के लिए निर्वाचनों के संबंध में उपबंध करने हेतु उस विधानमंडल की शक्ति
329. निर्वाचन संबंधी मामलों में न्यायालयों के हस्तक्षेप का वर्जन

भाग-16

कुछ वर्गों के संबंध में विशेष उपबंध

330. लोकसभा में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थानों का आरक्षण
331. लोकसभा में आंग्ल-भारतीय समुदाय का प्रतिनिधित्व
332. राज्यों की विधानसभाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थानों का आरक्षण
333. राज्यों की विधानसभाओं में आंग्ल-भारतीय समुदाय का प्रतिनिधित्व
334. स्थानों के आरक्षण और विशेष प्रतिनिधित्व का पचास वर्ष के पश्चात् न रहना
335. सेवाओं और पदों के लिए अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के दावे
336. कुछ सेवाओं में आंग्ल-भारतीय समुदाय के लिए विशेष उपबंध
337. आंग्ल-भारतीय समुदाय के फायदे के लिए शैक्षिक अनुदान के लिए विशेष उपबंध

Novels English & Hind

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

338. राष्ट्रीय अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति आयोग
339. अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन और अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के बारे में संघ का निर्माण
340. पिछड़े वर्गों की दशाओं के अन्वेषण के लिए आयोग की नियुक्ति
341. अनुसूचित जातियाँ
342. अनुसूचित जनजातियाँ।

भाग-17

राजभाषा

अध्याय-1 : संघ की भाषा

343. संघ की राजभाषा
344. राजभाषा के संबंध में आयोग और संसद् की समिति।

अध्याय-2 : प्रादेशिक भाषाएँ

345. राज्य की राजभाषा या राजभाषाएँ
346. एक राज्य और दूसरे राज्य के बीच या किसी राज्य और संघ के बीच पत्रादि की राजभाषा
347. किसी राज्य की जनसंख्या के किसी अनुभाग द्वारा बोली जानेवाली भाषा के संबंध में विशेष उपबंध।

अध्याय-3 : उच्चतम न्यायालय, उच्च न्यायालयों आदि की भाषा

348. उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों में तथा अधिनियमों, विधेयकों आदि के लिए प्रयोग की जानेवाली भाषा
349. भाषा से संबंधित कुछ विधियाँ जारी करने के लिए विशेष प्रक्रिया।

अध्याय-4 : विशेष निदेश

350. शिकायत के निवारण के लिए आवेदन में प्रयोग की जानेवाली भाषा
350. क. प्राथमिक स्तर पर मातृभाषा में शिक्षा की सुविधाएँ
350 ख. भाषाई अल्पसंख्यक वर्गों के लिए विशेष अधिकारी
351. हिंदी भाषा के विकास के लिए निदेश।

भाग-18

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

आपात उपबंध

352. आपात की उद्घोषणा
353. आपात की उद्घोषणा का प्रभाव
354. जब आपात की उद्घोषणा प्रवर्तन में है तब राजस्वों के वितरण संबंधी उपबंधों का लागू होना
355. बाह्य आक्रमण और आंतरिक अशांति से राज्य की संरक्षा करने का संघ का कर्तव्य
356. राज्यों में संवैधानिक तंत्र के विफल हो जाने की दशा में उपबंध
357. अनुच्छेद 356 के अधीन की गई उद्घोषणा के अधीन विधायी शक्तियों का प्रयोग
358. आपात के दौरान अनुच्छेद 19 के उपबंधों के प्रयोग का निलंबन
359. आपात के दौरान भाग-3 द्वारा प्रदत्त अधिकारों का निलंबन
360. वित्तीय आपात के बारे में उपबंध।

भाग-19

प्रकीर्ण

361. राष्ट्रपति, राज्यपालों और राजप्रमुखों का संरक्षण
361. क. संसद् और राज्यों के विधानमंडलों की कारखाइयों के प्रकाशन का संरक्षण
362. निरसित
363. कुछ संधियों, करारों आदि से उत्पन्न विवादों में न्यायालयों के हस्तक्षेप का वर्जन
363. क. देशी राज्यों के शासकों की दी गई मान्यता की संपत्ति और निजी थैलियों का अंत
364. महापत्तनों और विमान क्षेत्रों के बारे में विशेष उपबंध
365. संघ द्वारा किए गए निदेशों का अनुपालन करने में या उनको प्रभावी करने में असफलता का प्रभाव
366. परिभाषाएँ
367. व्याख्या

भाग-20

संविधान का संशोधन

368. संविधान का संशोधन करने की संसद् की शक्ति और उसके लिए प्रक्रिया।

भाग-21

अस्थायी, संक्रमणकालीन और विशेष उपबंध

369. राज्य-सूची के कुछ विषयों के संबंध में विधि बनाने की संसद् की इस प्रकार अस्थायी शक्ति मानो वे समवर्ती सूची के विषय हों

370. जम्मू एवं कश्मीर राज्य के संबंध में अस्थायी उपबंध

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

371. महाराष्ट्र और गुजरात राज्यों के संबंध में विशेष उपबंध
371. क. नगालैंड राज्य के संबंध में विशेष उपबंध
371. ख. असम राज्य के संबंध में विशेष उपबंध
371. ग. मणिपुर राज्य के संबंध में विशेष उपबंध
371. घ. आंध्र प्रदेश राज्य के संबंध में विशेष उपबंध
371. ङ. सिक्किम राज्य के संबंध में विशेष उपबंध
371. च. मिजोरम राज्य के संबंध में विशेष उपबंध
371. छ. अरुणाचल प्रदेश राज्य के संबंध में विशेष उपबंध
371. ज. गोवा राज्य के संबंध में विशेष उपबंध
372. विद्यमान विधियों का प्रवृत्त बने रहना और उनका अनुकूलन
374. संघीय न्यायालय के न्यायाधीशों के और संघीय न्यायालय में या सपरिषद् हिज मैजेस्टी के समक्ष लंबित कार्यवाइयों के बारे में उपबंध
375. संविधान के उपबंधों के अधीन रहते हुए न्यायालयों, प्राधिकारियों और अधिकारियों का कृत्य करते रहना
376. उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के बारे में उपबंध
377. भारत के नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक के बारे में उपबंध
378. लोक सेवा आयोगों के बारे में उपबंध
378. क. आंध्र प्रदेश विधानसभा की अवधि के बारे में विशेष उपबंध
379-91. निरसित
392. कठिनाइयों को दूर करने की राष्ट्रपति की शक्ति।

भाग-22

संक्षिप्त नाम, प्रारंभ, हिंदी में प्राधिकृत पाठ और निरसन

393. संक्षिप्त नाम
394. प्रारंभ
394. क. हिंदी भाषा में प्राधिकृत पाठ
395. निरसन।

संविधान की अनुसूचियाँ

वर्तमान संविधान में निम्नलिखित 12 अनुसूचियाँ हैं—

प्रथम अनुसूची—इसमें भारतीय संघ के घटक राज्यों और संघीय क्षेत्रों का उल्लेख है।

द्वितीय अनुसूची—इसमें भारतीय राज्य-व्यवस्था के विभिन्न पदाधिकारियों, यथा—राष्ट्रपति, राज्यपाल, लोकसभा अध्यक्ष और उपाध्यक्ष, राज्यसभा के सभापति और उपसभापति आदि के वेतन-भत्ते, पेंशन आदि का उल्लेख किया गया है। इस सूची में उल्लिखित पदों पर संवैधानिक गरिमा प्राप्त है।

तृतीय अनुसूची—इसमें विभिन्न पदाधिकारियों जैसे—राष्ट्रपति, उपराष्ट्रपति, मंत्री आदि द्वारा ग्रहण की जानेवाली शपथ का उल्लेख है।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

चतुर्थ अनुसूची— राज्यसभा में विभिन्न राज्यों एवं संघीय क्षेत्रों के प्रतिनिधित्व का विवरण दिया गया है।

पंचम अनुसूची— इसमें विभिन्न अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों के प्रशासन एवं नियंत्रण के बारे में उल्लेख है।

षष्ठम अनुसूची— इसमें असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम राज्यों के जनजाति क्षेत्रों के प्रशासन के संबंध में प्रावधान हैं।

सप्तम अनुसूची— इसमें संघ-सूची, राज्य-सूची और समवर्ती-सूची के विषयों का उल्लेख है।

अष्टम अनुसूची— भारत की 18 भाषाओं का उल्लेख इसमें किया गया है। आरंभ में इस सूची के अंतर्गत केवल 14 भाषाएँ थीं। सन् 1967 में सिंधी को और 1992 में कोंकड़ी, मणिपुरी तथा नेपाली भाषाओं को इस सूची में स्थान दिया गया।

नवम अनुसूची— यह अनुसूची प्रथम संविधान-संशोधन अधिनियम (1951) द्वारा जोड़ी गई। इसके अंतर्गत कृषि भूमि पर जोत सीमा, भूमि तथा संपत्ति के अधिग्रहण की विधियों का उल्लेख किया गया है। इस अनुसूची में सम्मिलित विधियों को न्यायालय में चुनौती नहीं दी जा सकती। इस अनुसूची में विभिन्न अधिनियमों को सम्मिलित किया जाता रहा है। आज इस अनुसूची में 284 से अधिक अधिनियमों को स्थान मिल गया है।

दशम अनुसूची— यह अनुसूची संविधान में 52वें संविधान-संशोधन (1985) द्वारा जोड़ी गई है। इसमें दल-बदल निषेध से संबंधित प्रावधानों का उल्लेख है।

एकादश अनुसूची— यह अनुसूची 73वें संविधान संशोधन (1993) द्वारा जोड़ी गई है। इसी के आधार पर पंचायती राज व्यवस्था को संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया है। इस अनुसूची में पंचायती राज संस्थाओं को प्रदान किए गए 29 विषयों (अनुच्छेद 243 छ) का उल्लेख है।

द्वादश अनुसूची— यह अनुसूची 74वें संविधान-संशोधन (1993) के आधार पर जोड़ी गई है। इस अनुसूची में नगरीय, स्थानीय, स्वशासन संस्थाओं का उल्लेख कर उन्हें संवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया है। इसमें नगरीय स्थानीय निकायों को प्रदत्त 18 विषयों (अनुच्छेद 243 ब) का उल्लेख है।

संविधान का परिशिष्ट भाग

वर्तमान संविधान में तीन परिशिष्ट भागों का भी समावेश है। वे हैं—

परिशिष्ट-1 : संविधान (जम्मू एवं कश्मीर को लागू होना) आदेश, 1954।

परिशिष्ट-2 : संविधान के उन अपवादों और उपांतरणों के जिनके अधीन संविधान जम्मू एवं कश्मीर राज्य को लागू होता है, वर्तमान पाठ के प्रति निर्देश से, पुन:कथन।

परिशिष्ट-3 : संविधान (44वाँ संशोधन) अधिनियम, 1978 से उद्धरण।

परिशिष्ट—3 : संविधान (44वाँ संशोधन) अधिनियम, 1978 से उद्धरण।

❑

Novels English & Hindi

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

परिशिष्ट-2

भारत के उपप्रधानमंत्री

उपप्रधानमंत्री	अवधि
सरदार वल्लभभाई पटेल	15 अगस्त, 1947 से 15 दिसंबर, 1950
मोरारजी देसाई	13 मार्च, 1967 से 19 जुलाई, 1969
जगजीवन राम	24 जनवरी, 1979 से 28 जुलाई, 1979
वाई.बी. चव्हाण	28 जुलाई, 1979 से 14 जनवरी, 1980
चौधरी देवी लाल	02 दिसंबर, 1989 से 01 अगस्त, 1990
चौधरी देवी लाल	10 नवंबर, 1990 से 21 जून, 1991
लालकृष्ण आडवाणी	29 जून, 2002 से 22 मई, 2004

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

परिशिष्ट-3

पदेन वरीयता अनुक्रम

क्रम पद

1. राष्ट्रपति
2. उपराष्ट्रपति
3. प्रधानमंत्री
4. राज्यों के राज्यपाल (अपने-अपने राज्य में)
5. पूर्व राष्ट्रपति

5 (क). उपप्रधानमंत्री

6. भारत के मुख्य न्यायाधीश

6 (क). लोकसभा अध्यक्ष

7. केंद्रीय मंत्रिमंडल के मंत्री, राज्यों के मुख्यमंत्री अपने-अपने राज्य में, उपाध्यक्ष योजना आयोग, भूतपूर्व प्रधानमंत्री, राज्यसभा और लोकसभा में विपक्ष के नेता

7 (क). भारत-रत्न से सम्मानित व्यक्ति

8. भारत स्थित विदेशों के असाधारण तथा पूर्णाधिकारी राजदूत तथा राष्ट्रमंडल देशों के उच्चायुक्त, राज्यों के मुख्यमंत्री अपने-अपने राज्य के बाहर, राज्यों के राज्यपाल अपने-अपने राज्य से बाहर

9. उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश

9 (क). मुख्य निर्वाचन आयुक्त, भारत के नियंत्रक सह महालेखा परीक्षक।

10. राज्यसभा के उपसभापति, राज्यों के उप-मुख्यमंत्री, लोकसभा के उपाध्यक्ष, योजना आयोग के सदस्य, केंद्र के राज्य मंत्री

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

परिशिष्ट-4

महिलाओं हेतु प्रमुख संवैधानिक प्रावधान

संविधान के अनुच्छेद महिलाओं के लिए उपयोगी प्रावधान

अनुच्छेद 14 इस अनुच्छेद द्वारा राज्य किसी भी व्यक्ति को कानून के समक्ष समानता या कानून के समान संरक्षण से वंचित नहीं करेगा, चाहे वह महिला हो या पुरुष।

अनुच्छेद 15 (3) इसके अंतर्गत महिलाओं एवं बच्चों को कुछ विशेष सुविधाएँ प्रदान की गई हैं।

अनुच्छेद 16 लोक सेवाओं में बिना भेदभाव के अवसर की समानता।

अनुच्छेद 19 समान रूप से अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता।

अनुच्छेद 23-24 नारी क्रय-विक्रय तथा बेगार प्रथा पर रोक।

अनुच्छेद 39 (घ) इसके अंतर्गत स्त्री-पुरुष दोनों को समान कार्य के लिए समान वेतन की व्यवस्था।

अनुच्छेद 42 महिलाओं के लिए प्रसूति सहायता।

अनुच्छेद 47 लोक स्वास्थ्य में सुधार करना।

अनुच्छेद 51 क (ङ) प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य होगा कि वह ऐसी प्रथाओं का त्याग करे, जो स्त्रियों के सम्मान के विरुद्ध हैं।

अनुच्छेद 243 घ (न) पंचायती राज एवं नगरीय संस्थाओं में संविधान के भाग 9 तथा 9क में महिलाओं हेतु आरक्षण की व्यवस्था।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

परिशिष्ट-5

महिलाओं से संबंधित प्रमुख अधिनियम

अधिनियमों का विवरण उद्देश्य/प्रावधान

1. बागान श्रम अधिनियम, 1951 महिला कर्मियों को अपने बच्चों को दूध पिलाने के लिए अवकाश दिया जाना।

2. खान अधिनियम, 1952 खानों में महिलाओं के नियोजन पर रोक लगाना।

3. विशेष विवाह अधिनियम, 1954 इसके अंतर्गत कोई महिला अपना धर्म बदले बिना किसी भी धर्म के व्यक्ति से विवाह कर सकती है।

4. हिंदू उत्तराधिकार अधिनियम, अधिनियम में प्रावधान किया गया
1956 है कि महिलाओं को भी पैतृक संपत्ति में अधिकार दिया जाए।

5. अनैतिक व्यापार निवारण वेश्यागृह चलाने या परिसर को
अधिनियम, 1956 वेश्यागृह के रूप में प्रयुक्त करने देने पर दंड की व्यवस्था।

6. प्रसूति प्रसुविधा अधिनियम, कार्य दिवस के 80 दिन पूर्ण होने
1961 पर महिला कर्मियों को गर्भपात हेतु आवश्यक रूप से अवकाश तथा चिकित्सा की व्यवस्था।

7. ठेका श्रम अधिनियम, 1970 महिला श्रमिकों से चाय बागानों में प्रात: 6 बजे से सायं 7 बजे के बीच 9 घंटे से अधिक काम कराने पर प्रतिबंध।

8. समान पारिश्रमिक अधिनियम, समान कार्य के लिए महिलाओं को
1976 भी पुरुषों के समान पारिश्रमिक की व्यवस्था।

9. बाल-विवाह निषेध अधिनियम, संविधान द्वारा निर्धारित कम उम्र
1976 की बालिकाओं के विवाह पर प्रतिबंध।

10. अंतरराज्यिक प्रवासी कर्मकार कुछ विशेष नियोजनों में महिलाओं
अधिनियम, 1979 के लिए अलग से शौचालय एवं स्नानघरों की व्यवस्था करना।

11. वेश्यावृत्ति-निवारण अधिनियम, महिलाओं को अनैतिक कार्यों में
1986 दुरुपयोग करनेवालों पर प्रतिबंध।

12. स्त्री अशिष्ट निरूपण निषेध महिलाओं के अश्लील प्रदर्शन पर
अधिनियम 1986 प्रतिबंध लगाना।

13. दहेज निषेध संशोधन विवाह में दहेज के लेने-देने पर
अधिनियम, 1986 प्रतिबंध की व्यवस्था।

14. सती निषेध अधिनियम, महिलाओं को पति की मृत्यु के
1987 बाद सती होने पर प्रतिबंध।

15. राष्ट्रीय महिला आयोग इस अधिनियम द्वारा वर्ष 1992 में
अधिनियम, 1990 'महिला राष्ट्रीय आयोग' की स्थापना की गई।

16. 73वाँ व 74वाँ संशोधन महिलाओं को त्रि-स्तरीय पंचायतों

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

अधिनियम, 1992 व नगरपालिकाओं में एक-तिहाई आरक्षण की व्यवस्था।

17. प्रसव पूर्व निदान तकनीक गर्भावस्था में बालिका भ्रूण की
अधिनियम, 1994 पहचान करने पर रोक लगाने की व्यवस्था।

18. घरेलू हिंसा से महिलाओं की पति या साथ रहनेवाले किसी भी पुरुष
सुरक्षा हेतु अधिनियम, 2005 या उसके संबंधियों की हिंसा या प्रताड़ना से पत्नी या साथ रह रही किसी भी महिला को सुरक्षा प्रदान करना। अधिनियम के अंतर्गत ताने मारने से लेकर शारीरिक, यौन, भावनात्मक या आर्थिक शोषण करना या धमकी देना भी अपराध माना गया है।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

परिशिष्ट-6

बालकों हेतु प्रमुख संवैधानिक प्रावधान

संविधान का अनुच्छेद उद्देश्य/प्रावधान

अनुच्छेद 21 (क) राज्य 6 से 14 वर्ष की आयु के सभी बालकों को विधि द्वारा निर्धारित प्रक्रिया के अनुसार नि:शुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा प्रदान करेगा। (86वें संविधान संशोधन, 2002 द्वारा जोड़ा गया।)

अनुच्छेद 24 14 वर्ष की आयु से कम के बच्चों को किसी भी कारखाने, खदान या अन्य खतरनाक व्यवसाय में लगाने पर प्रतिबंध।

अनुच्छेद 39 (ङ) सरकार द्वारा अपनी नीति का इस प्रकार संचालन करना कि सुनिश्चित रूप से बालकों की सुकुमार अवस्था का दुरुपयोग न हो।

अनुच्छेद 39 (च) सरकार द्वारा यह सुनिश्चित करना कि बालकों को स्वतंत्र और गरिमामय वातावरण में स्वास्थ्य विकास के अवसर और सुविधाएँ उपलब्ध हों तथा बालकों को शोषण से मुक्त रखा गया हो।

अनुच्छेद 45 राज्य 6 वर्ष की आयु से नीचे के सभी बालकों हेतु शिक्षा का प्रावधान करेगा। (86वाँ संविधान संशोधन, 2002)।

अनुच्छेद 51 क (ट) प्रारंभिक शिक्षा को सर्वव्यापी बनाने के उद्देश्य से अभिभावकों के लिए यह कर्तव्य निर्धारित किया गया है कि वे 6 से 14 वर्ष के अपने बच्चों को शिक्षा का अवसर प्रदान करें। (86वाँ संविधान संशोधन, 2002)।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

परिशिष्ट-7

बालकों से संबंधित प्रमुख अधिनियम

क्रम अधिनियमों का विवरण उद्देश्य/प्रावधान

1. कारखाना अधिनियम, 1948 बच्चों को अस्वस्थकर परिस्थितियों में श्रम पर लगाना प्रतिबंधित किया गया।

2. फैक्टरी (संशोधन) 17 वर्ष से छोटे बच्चों को फैक्टरी में रात

अधिनियम, 1954 की शिफ्टों में काम कराने पर रोक लगाई गई।

3. शिशु अधिनियम, 1961 बच्चों को श्रमसाध्य या खतरनाक कार्यों में सेवा-नियोजन पर प्रतिबंध।

4. बाल श्रम प्रतिबंध अधिनियम, 14 वर्ष से कम आयु के बालकों के

1986 नियोजन के बारे में प्रावधान किया गया। खतरनाक कामों में बालकों को नहीं लगाया जा सकता, परंतु अन्य कामों में बालकों का नियोजन स्वीकार्य है।

5. किशोर न्याय अधिनियम, बच्चों के हित के लिए तथा उपेक्षित

1986 एवं अपचारी बच्चों की देखभाल, विकास एवं पुनर्वास के (यथा संशोधित, 2000) साथ-साथ समुचित न्याय-व्यवस्था सुनिश्चित करने हेतु प्राथमिक कानून।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

परिशिष्ट-8

अल्पसंख्यक हेतु संवैधानिक प्रावधान

अनुच्छेद 29 (1) भारत के राज्य क्षेत्र या उसके किसी भाग के निवासी नागरिकों के किसी अनुभाग को, जिसकी अपनी विशेष भाषा, लिपि या संस्कृति है, उसे बनाए रखने का अधिकार होगा।

अनुच्छेद 29 (2) राज्य द्वारा पोषित या राज्य निधि से सहायता पाने वाली किसी शिक्षण संस्था में प्रवेश से किसी भी नागरिक को केवल धर्म, मूल वंश, जाति, भाषा या इनमें से किसी आधार पर वंचित नहीं किया जाएगा।

अनुच्छेद 30 (1) धर्म या भाषा पर आधारित सभी अल्पसंख्यक वर्गों को अपनी रुचि की शिक्षा संस्थाओं की स्थापना और प्रशासन का अधिकार होगा।

अनुच्छेद 302 (2) शिक्षा संस्थाओं को सहायता देने में राज्य किसी शिक्षा संस्था के विरुद्ध इस आधार पर विभेद नहीं करेगा कि वह धर्म या भाषा पर आधारित किसी अल्पसंख्यक वर्ग के प्रबंध में है।

अनुच्छेद 350 (ख) भाषायी अल्पसंख्यक वर्गों के लिए एक विशेष अधिकारी होगा, जिसे राष्ट्रपति नियुक्त करेगा।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

परिशिष्ट-9

अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों से संबंधित संवैधानिक प्रावधान

संविधान के अनुच्छेद अनुसूचित जाति/जनजातियों हेतु उपयोगी प्रावधान

अनुच्छेद 15 (4) नागरिकों के सामाजिक व शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों या अनुसूचित जातियों एवं अनुसूचित जनजातियों की उन्नति के लिए विशेष प्रावधान।

अनुच्छेद 16 (4) राज्य द्वारा किसी पिछड़े वर्ग के नागरिकों के पक्ष में नियुक्तियों या पदों में आरक्षण के लिए प्रावधान करना, जिसे राज्य की राय में राज्य के अंतर्गत सेवाओं में पर्याप्त रूप से प्रतिनिधित्व नहीं दिया गया हो।

अनुच्छेद 46 राज्य द्वारा जनता के दुर्बल वर्गों, विशेष रूप से अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के शैक्षिक व आर्थिक हितों का विशेष ध्यान रखकर बढ़ावा देना और सामाजिक अन्याय एवं सभी प्रकार के शोषण से उनकी रक्षा करना।

अनुच्छेद 164 झारखंड, छत्तीसगढ़, मध्य प्रदेश और उड़ीसा में जनजातीय मामलों को देखने के लिए विशेष तौर पर मंत्री की नियुक्ति का प्रावधान।

अनुच्छेद 243 (घ) व (न) पंचायतों व नगरपालिकाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए सीटों का आरक्षण किया गया है।

अनुच्छेद 244 (1) असम, मेघालय, त्रिपुरा एवं मिजोरम राज्यों से भिन्न किसी राज्य के अनुसूचित क्षेत्रों और अनुसूचित जनजातियों के प्रशासन और नियंत्रण के लिए पाँचवीं अनुसूची में विनिर्दिष्ट प्रावधान।

अनुच्छेद 244 (2) असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम राज्यों में जनजातीय क्षेत्रों के प्रशासन के लिए छठी अनुसूची में विनिर्दिष्ट प्रावधान।

अनुच्छेद 275 (1) अनुसूचित जनजातियों के कल्याण को बढ़ावा देने के लिए प्रत्येक वर्ष भारत की संचित निधि से सहायता, अनुदान तथा अनुसूचित क्षेत्र का प्रशासन।

अनुच्छेद 330 लोकसभा में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थानों का आरक्षण।

अनुच्छेद 332 राज्यों की विधानसभाओं में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के लिए स्थानों का आरक्षण।

अनुच्छेद 335 प्रशासन की दक्षता के अनुरक्षण से सामंजस्य रखने को ध्यान में रखते हुए संघ या किसी राज्य के मामलों के संबंध में सेवाओं तथा पदों पर नियुक्तियों में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों के व्यक्तियों के दावे।

अनुच्छेद 338 अनुसूचित जातियों के लिए 'राष्ट्रीय अनुसूचित जाति आयोग' के गठन का प्रावधान।

अनुच्छेद 338 (क) अनुसूचित जनजातियों के लिए 'राष्ट्रीय अनुसूचित जनजाति आयोग' के गठन का प्रावधान।

अनुच्छेद 339 अनुसूचित क्षेत्रों के प्रशासन और अनुसूचित जनजातियों के कल्याण के बारे में संघ का नियंत्रण।

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks
Novels English & Hindi

अनुच्छेद 340 सामाजिक और शैक्षिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों की दशाओं की तथा उन कठिनाइयों की जिनके अंतर्गत वे श्रम करते हैं, की जाँच करने के लिए एक आयोग की नियुक्ति और ऐसी कठिनाइयों को दूर करने तथा उनकी दशाओं में सुधार लाने के लिए सिफारिश करना।

अनुच्छेद 341 अनुसूचित जातियाँ समझे जाने के लिए जातियों या जनजातियों को विनिर्दिष्ट करना।

अनुच्छेद 342 अनुसूचित जनजातियाँ समझे जाने के लिए जनजातियों या जनजातीय समुदायों को विनिर्दिष्ट करना।

अनुच्छेद 366 (24) 'अनुसूचित जातियों' से ऐसी जातियों, मूल वंश या जनजातियाँ अथवा ऐसी जातियों, मूल वंशों या जनजातियों के भाग अभिप्रेत हैं, जिन्हें संविधान के अनुच्छेद 341 के अधीन अनुसूचित जातियाँ समझा जाता है।

अनुच्छेद 366 (25) 'अनुसूचित जनजातियों' से ऐसी जनजातियाँ या जनजाति समुदाय अथवा ऐसी जनजातियों या जनजाति समुदायों के भाग अभिप्रेत हैं, जिन्हें संविधान के अनुच्छेद 342 के अधीन अनुसूचित जनजातियाँ समझा जाता है।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hind

परिशिष्ट-10

भारतीय संविधान एवं विकलांगों के अधिकार

अनुच्छेद 15 (1) के अनुसार सरकार विकलांगों सहित किसी भी नागरिक के साथ जाति, धर्म, लिंग, मूल, जन्म-स्थान आदि के आधार पर भेदभाव नहीं करेगी।

अनुच्छेद 15 (2) के अनुसार किसी भी व्यक्ति को (चाहे वह विकलांग क्यों न हो) किसी सार्वजनिक स्थल, दुकान, होटल, रेस्तराँ, मनोरंजन स्थल पर प्रवेश से नहीं रोका जा सकता। उसे कुएँ, तालाब, स्नानघर, सड़क या किसी भी सार्वजनिक सुविधा के प्रयोग से वंचित नहीं किया जा सकता।

अनुच्छेद 17 के अंतर्गत विकलांगों सहित कोई भी व्यक्ति अस्पृश्य नहीं माना जाएगा। इस अनुच्छेद द्वारा छुआछूत को संज्ञेय अपराध माना गया है।

अनुच्छेद 19 के अनुसार सामान्य लोगों की तरह विकलांगों को भी विचार अभिव्यक्त करने की स्वतंत्रता है।

अनुच्छेद 21 के अनुसार हर व्यक्ति को जीने का और स्वतंत्रता का अधिकार है।

अनुच्छेद 23 के अंतर्गत विकलांगों सहित किसी भी व्यक्ति को खरीदा या बेचा नहीं जा सकता। उससे बेगारी भी नहीं कराई जा सकती है।

अनुच्छेद 24 के तहत बालकों से काम लेना, चाहे वे स्वस्थ हों या विकलांग, निषिद्ध है। 14 वर्ष से कम उम्र का बालक किसी फैक्टरी, खान या किसी खतरनाक काम में नहीं लगाया जा सकता।

अनुच्छेद 25 के अंतर्गत हर व्यक्ति, चाहे वह विकलांग क्यों न हो, धार्मिक स्वतंत्रता का अधिकार है। इसके अंतर्गत, विकलांग व्यक्ति किसी भी धर्म में आस्था व्यक्त कर सकते हैं। वे अपने धर्म का प्रचार-प्रसार और धार्मिक गतिविधियों में योगदान भी कर सकते हैं।

अनुच्छेद 27 के अनुसार किसी विकलांग व्यक्ति को किसी धर्म के प्रचार-प्रसार या दूसरे धार्मिक समूह के खर्चे की पूर्ति के लिए या किसी प्रकार का धन देने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता।

- **अनुच्छेद** 29 के अंतर्गत किसी भी विकलांग को कोई भी भाषा, लिपि या संस्कृति अपनाने से नहीं रोका जा सकता। वह अपनी भाषा, लिपि, संस्कृति को स्वेच्छा से अपना सकता है।

अनुच्छेद 32 के अनुसार यदि मौलिक अधिकारों का हनन हो तो सामान्य व्यक्तियों की तरह विकलांग जन भी उच्च न्यायालय तथा सर्वोच्च न्यायालय का दरवाजा खटखटा सकते हैं।

❑

https://rb.gy/zxhwdo
https://t.me/indianmythologybooks

Novels English & Hindi

परिशिष्ट-11

संसद् में बजट

लोक-कल्याणकारी गणतंत्र होने के कारण हमारे देश की सरकार का मानव जीवन के लगभग हर हिस्से में दखल है। कानून व्यवस्था और सीमाओं की रक्षा से लेकर शिक्षा और स्वास्थ्य जैसी सामाजिक सेवाओं के अलावा रोजगार, आवास और दूसरी जरूरी आधारभूत जरूरतें पूरी करने का जिम्मा सरकार निभाती है।

स्पष्ट है, इन जिम्मेदारियों को पूरा करने के लिए सरकार को संसाधनों की जरूरत है और ये जरूरतें प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष करों, दीर्घकालिक व अल्पावधि ऋणों से पूरी की जाती हैं। लेकिन उत्पाद शुल्क, सीमा शुल्क और कंपनियों व व्यक्तिगत स्तर पर लगनेवाला आय कर ही राजस्व संग्रह का प्रमुख स्रोत है। यही वे सब क्रियाकलाप हैं, जिनके लिए जरूरत पड़ती है—बजट की।

वेस्टमिंस्टर मॉडल पर स्थापित हमारी संसदीय व्यवस्था में संविधान के अंतर्गत चुने गए प्रतिनिधियों को आय और व्यय के फैसले लेने का अधिकार दिया गया है; लेकिन यह अधिकार वे संसद् की अनुमति से ही उपयोग कर सकते हैं। इसके लिए संविधान के अनुच्छेद 265 में कहा गया है कि कानूनी प्रावधान के बिना कोई भी कर नहीं लगाया जा सकता और न ही उसकी उगाही की जा सकती है।

इसके साथ ही संविधान के अनुच्छेद 266 में कहा गया है कि संसदीय अनुमति के बिना कोई भी व्यय नहीं किया जा सकता। इसलिए हर वित्त वर्ष के लिए वार्षिक वित्तीय लेखा-जोखा संसद् के सामने रखा जाना जरूरी है। संविधान में सरकार को संसद् के प्रति जवाबदेह बनाया गया है। इस तरह 1 अप्रैल से शुरू होनेवाले हर वर्ष का जो लेखा-जोखा सरकार संसद् के दोनों सदनों के समक्ष रखती है, वही बजट कहलाता है। इसे पेश करने की एक निश्चित प्रक्रिया होती है। यह वित्त मंत्री के बजट भाषण से शुरू होती है और विनियोग विधेयक पारित होने पर समाप्त होती है।

वित्त मंत्री द्वारा बजट पेश करने के दिन बजट के हिस्से में पेश वित्त विधेयक में कर संबंधी प्रावधान होते हैं और बजट पेश करने के 75 दिन की अवधि के अंदर बजट को पारित करना होता है।

स्वतंत्र भारत का पहला बजट 26 नवंबर, 1947 को पेश किया गया था। पहले वित्त मंत्री षड्मुखम् चेट्टी द्वारा पेश इस बजट में 197.39 करोड़ रुपए के व्यय और 171.15 करोड़ रुपए की आय का घाटे का बजट था।

यह बजट 15 अगस्त, 1947 से 31 मार्च, 1948 तक की साढ़े सात माह की अवधि के लिए था।

नेहरूजी ने तय किया था बजट दिवस

गैर-हिंदी भाषी होने के बावजूद सी.डी. देशमुख ने वित्त मंत्री रहते हुए 1955-56 का बजट पेश करने में पहले इस बात को सुनिश्चित किया कि बजट के सभी पेपर हिंदी में भी छपें। पहले ये सिर्फ अंग्रेजी में ही छपते थे।

इसके बाद पं. नेहरू ने खुद इस महत्त्वपूर्ण विभाग का कामकाज सँभाला। कम ही लोगों को ज्ञात होगा कि उन्होंने 1958-59 का बजट पेश किया था। उस बजट को पेश करते हुए उन्होंने घोषणा की थी कि अगले वर्ष से बजट 28 फरवरी के दिन ही पेश किया जाएगा।

❑❑❑